तुलसी-ग्रन्थावली

प्रथम भाग

सम्पादक–

पण्डित महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य "वीर"

ज्ञानपुर-बनारस राज्य ।

प्रकाशक–

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग ।

सम्वत् १९८१ वि०

[प्रथम संस्करण] [मूल्य ४)

प्रस्तावना

परम पूजनीय कविशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी से भारत के प्रायः सभी प्रान्तों के लोग थोड़ा बहुत अवश्य ही परिचित हैं। आप काव्य-गगन-मंडल में अगणित कवि रूपी चमकीले तारों के बीच मध्याह्न-कालीन प्रचंड मार्त्तण्ड के समान प्रकाशमान हैं। गोस्वामीजी एक अद्वितीय चरित्रवाले आदर्श नर-रत्न, परमोच्चश्रेणी के साधु, नीति के श्रेष्ठ पथ-प्रदर्शक, धर्माचार के उत्तेजक, दार्शनिक गम्भीर तत्वों को सरस सरल शब्दावली में समझानेवाले उपदेशक, श्रीरामचन्द्रजी के अनन्य भक्त और भविष्य के गर्भ में छिपी हुई घटनाओं के बतलानेवाले सुयोग्य महात्मा थे। उन्होंने अपने इष्टदेव रामचन्द्रजी के पादपद्म में अविचल प्रेम का नेम लेकर अनुपम कवित्व-शक्ति द्वारा दुखियों का दुःख दूर करने, दुखियों को अधिक सुखी बनाने, धर्म-विरोध की ज्वाला शान्त करने, ईश्वर-विमुखी अधर्मी प्राणियों को सन्मार्ग पर लाने, धर्म-जिज्ञासुओं की तृष्णा बुझाने, वर्तमान तथा भविष्य के युवकों एवम् उदार-चेताओं को देखने, विचारने और अनुभव करने की योग्यता प्रदान करने तथा उन्हें परम उत्साही, साहसी, पक्का धार्मिक बनाने में जीवन-पर्य्यन्त अविश्रान्त उद्योग किया और उसमें पूर्ण सफल हुए। यद्यपि इन्होंने कोई नवीन सम्प्रदाय नहीं स्थापित किया, तो भी राम-नाम में विश्वास उत्पन्न करानेवाला इनसे बढ़कर कोई नहीं हुआ। लाखों, करोड़ों मनुष्य इनके प्रतिपादित मार्ग पर अपना जीवन निर्भर कर उसी को वेद-शास्त्र और ईश्वर-वाक्य समझते हैं।

जिस समय गोस्वामीजी का जन्म हुआ था, उस समय देश में तरह तरह के अन्याय और अत्याचार का प्राबल्य था। इसके सिवा मत-मतान्तरों के झगड़ों से लोगों की बुद्धि भ्रान्त हो रही थी। वैष्णव, शैव और शाक्त आदि विविध पथवाले सब एक दूसरे को नीचा दिखाने ही में अपने इष्टदेव की उपासना, धर्म्मज्ञता और ईश्वर की प्रसन्नता समझते थे। ऐसी विकट स्थिति में स्वदेशियों के सच्चे धर्म-मार्ग अटल रखने के लिये प्रयत्न कर सफलता प्राप्त करनी आसान बात नहीं थी। पर गुसाँईजी के सदुपदेशों को सभी सम्प्रदाय के अनुयायिओं ने भेदभाव त्याग कर आदर-पूर्वक ग्रहण करने में आनाकानी नहीं की। आज तक उसी प्रकार प्रत्येक मतानुयायी उनके ग्रन्थों की सत् शिक्षा से लाभान्वित हो रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे।

कवि-कुल कमल-दिवाकर भक्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी परमादरणीय, अनुकरणीय और अपनी अनुपम कविता से साहित्य-संसार में अभूतपूर्व आदर्श उपस्थित करनेवाले अद्वितीय नररत्न हैं। इस बात को बड़े बड़े धुरन्धर विद्वान् और धार्मिक पुरुषों ने मुक्तकंठ से स्वीकार किया है। इनकी जोड़ का महात्मा समस्त संसार में कदाचित कोई भी न मिलेगा।

इनके रचित ग्रन्थों की संख्या निश्चित करने में बड़ा मतभेद है। किसी किसी ने उनकी संख्या बढ़ाते बढ़ाते ३०-३२ तक पहुँचा दी है, पर गोसाँई जी के शिष्य परम्परा से सम्बन्ध रखनेवाले मिर्जापुर निवासी पण्डित रामगुलामजी द्विवेदी ने उनके ग्रन्थों की संख्या १२ निश्चित की है। इन्होंने रामचरितमानस को क्षेपक रहित करके सर्व प्रथम विशुद्ध रूप प्रदान किया और अन्यान्य ग्रन्थों का भी विशुद्ध संग्रह कर सर्वसाधारण को सुलभ कर दिया। आप रामायण के मार्मिक ज्ञाता तथा गोस्वामी जी के शेष ग्रन्थों के भी स्पष्ट वक्ता थे।

भिन्न भिन्न विद्वानों ने गोसाँईजी के ग्रन्थों की संख्या क्यों बढ़ाई है? इसका ठीक ठीक पता लगाना बड़ा कठिन है। इसके अतिरिक्त तीन तुलसीदास नाम के कवि हो गये हैं और कितने ही कवियों ने कविता की पुस्तकें लिख कर गोस्वामीजी के नाम से प्रसिद्ध कर दिया है। सम्भव है ग्रन्थों की गणना में मत भेद का यही कारण हो। जो हो, पर द्विवेदीजी ने केवल ग्यारह ग्रन्थों की गणना इस प्रकार की है—

क०—रामलला-नहछू विराग सन्दीपनिहूँ, बरवै बनाय बिरमाई मति साँई की।
पारबती-जानकी के मङ्गल ललित गाय, रम्य रामआज्ञा रची कामधेनु नाँई की॥
दोहा औ कवित्त गीतबद्ध कृष्ण कथा कही, रामायन बिनै महँ बात सब ठाँई की।
जग में सुहानी जगदीसहू के मन मानी, सन्त सुखदानी बानी तुलसी गुसाँई की॥

१ रामलला नहछू	५ जानकी-मङ्गल	९ गीतावली-रामायण
२ वैराग्य सन्दीपिनी	६ रामाज्ञा-प्रश्नावली	१० कृष्ण-गीतावली
३ बरवै-रामायण	७ दोहावली	११ रामचरितमानस
४ पार्वती-मङ्गल	८ कवित्त-रामायण	१२ विनय-पत्रिका

इन बारहों ग्रन्थों को पंडित रामगुलामजी की प्रतियों के आधार पर लाला छक्कनलाल रामायणी ने प्रथम सम्वत १९४३ विक्रमाब्द में काशी के सरस्वती नामक लेथो यंत्रालय में मुद्रित कराया था, जिसकी एक प्रति अद्यावधि हमारे पास विद्यमान है। इन्हीं बारहों को काशी की नागरी प्रचारिणी सभा ने मुख्य गिनाया है और हाल ही में उसका संस्करण पाइका टाइप में निकाला है। इन ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

(१) रामलला नहछू—इसमें २० सोहरछंद हैं और चारों भाइयों के यज्ञोपवीत के समय का नहछू वर्णन है।

(२) वैराग्य-सन्दीपिनी—दोहा, सोरठा और चौपाई सब मिला कर इसमें ६२ छन्द हैं। सन्त-स्वभाव, सन्तमहिमा और शान्ति का ओजस्वी वर्णन है।

(३) बरवै-रामायण—सातों कांड रामायण की कथा संक्षिप्त किन्तु भावपूर्ण बरवा छन्द में वर्णन की गयी है, इसमें छन्द संख्या कुल ६९ है।

(४) पार्वती-मंगल—इसमें हसगति, मंगल और हरिगीतिका सब मिला कर ९० छन्द हैं, शिव-पार्वती का विवाह विस्तार के साथ वर्णित है। यह ग्रन्थ मि० फालगुन सुदी ५ सम्वत १९४३ में बना था।

(५) जानकी-मङ्गल—इसमें छन्द-संख्या १२० है। पार्वती-मंगल के समान राम जानकी के विवाह की कथा वर्णित है, किन्तु रामचरितमानस की तरह इसमें फुलवारी का वर्णन नहीं है और परशुरामजी का आगमन विवाह के पीछे कहा गया है।

(६) रामाज्ञा प्रश्नावली—इसमें सात सर्ग हैं और प्रत्येक सर्ग में ४९। ४९ दोहे हैं तथा सात सात दोहों का सप्तक है। रामायण के ढंग पर संक्षेप में रामचरित वर्णन है और साथ ही प्रश्न निकालने की रीति लिखी गयी है।

(७) दोहावली—इसमें दोहा और सोरठा सब मिलाकर ५७३ छन्द संख्या है। नाम माहात्म्य, वेदान्त, ज्योतिष, राजनीति, भक्ति की दृढ़ता, उपासना आदि मनोहर वर्णन है।

(८) कवित्त-रामायण—यह ग्रन्थ सवैया, कवित्त, झूलना और छप्पय छन्दों में पूरा हुआ है,

कुल ३६९ छन्द हैं। हनुमान-वाहुक उत्तर कांड के अन्तर्गत है। इसमें क्रम से सातों कांडों में रामायण की कथा का उल्लेख है और उत्तरकांड में विविध उपयोगी शिक्षा-पूर्ण बातें तथा शिवजी की स्तुति का वर्णन है।

(९) गीतावली-रामायण—इसकी रचना ब्रजभाषा में बड़ी ही मधुर और कर्ण-सुखद हुई है। राग रागिनियों में गाने योग्य ३३१ पद हैं उनमें सातों काण्ड रामायण की कथा माधुर्य-पूर्ण वर्णन है।

(१०) कृष्ण-गीतावली—उपर्युक्त ढंग पर इसमें श्रीकृष्ण भगवान का ललित चरित्र ब्रजभाषा में वर्णन किया गया है। इसकी छन्द संख्या ६१ है।

(११) रामचरित-मानस—इस महाकाव्य की जितनी प्रशंसा की जाय वह थोड़ी है। धार्मिक और नैतिक उपदेशों की उत्कृष्टता, दार्शनिक विद्वत्ता, भावगम्भीरता, आध्यात्मिक तत्वों की सरल और सुगम विवेचना, चरित्र-चित्रण की अलौकिक शक्ति का चमत्कार, पात्र-संगठन की अनुपम शक्ति और प्राकृतिक-दृश्य वर्णन की अद्वितीय योग्यता आदि कहाँ तक कहें, एक आदर्श काव्य में जो जो गुण होने चाहिए, वह सब इसमें कूट कूट कर भरे हैं। इस ग्रन्थ का प्रचार संसार भर में है और सभी श्रेणी के विद्वान् इसे आदर की दृष्टि से देखते हैं।

(१२) विनय-पत्रिका—यह पुस्तक भी रामायण के समान अपने विषय की अद्वितीय ही है। इसमें २७९ गाने के पद हैं। ईश्वर महिमा, भग्न हृदयोद्गार, शान्ति प्रदर्शन और आदर्श जीवन बनाने के उपदेशों का लहराता हुआ पीयूप सागर कहें तो अत्युक्ति नहीं है। भक्ति विषय का प्रतिपादन करनेवाला सर्वोत्तम ग्रन्थ आज तक इसकी बराबरी का कदाचित ही कोई लिखा गया हो।

गोस्वामीजी के उपर्युक्त बारहों ग्रंथों के कठिन शब्दों के अर्थ सहित और मोटे टाइप में प्रकाशित कराने का हमने इसलिये प्रयत्न किया है जिसमें बालक वृद्ध सब आसानी से पढ़ सकें और इस काव्य रसामृत के आस्वादन से जीवन सार्थक कर रामचन्द्र जी के पाद-पद्म के अनुरागी बनें। तुलसी ग्रन्थावली के प्रथम भाग में ग्यारह ग्रन्थ औरद्वितीय भाग में केवल रामचरित मानस रहेगा। दूसरा भाग भी छप रहा है, समयान्तर में वह भी पाठकों के दृष्टिगोचर होगा। यद्यपि शुद्धता की ओर विशेष ध्यान रक्खा गया है, तो भी प्रूफरीडरों की अदलाबदली के कारण कुछ अशुद्धियाँ हो ही गयी हैं, उन्हें सुधार कर पाठकगण पढ़ेंगे।

मि० चैत्र कृष्ण ११ शुक्रवार,
सम्वत् १९८१ वि०

सज्जनों का कृपाकांक्षी
महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य "वीर"
ज्ञानपुर-बनारस राज्य।

तुलसीग्रन्थावली के प्रथम भाग की ग्रन्थ-सूची।

PRINTED AT THE BELVEDERE PRESS, ALLAHABAD, BY E. HALL.

तुलसी-ग्रन्थावली



कवि सम्राट तुलसीदासजी।

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदासकृत

रामलला-नहछू

सोहर-छन्द

आदि सारदा गनपति गौरि मनाइय हो।
　　रामलला कर नहछू गाइ सुनाइय हो॥
जेहि गाये सिधि होय परमनिधि पाइय हो।
　　कोटि जनम कर पातक दूरि सो जाइय हो॥१॥
कोटिन्ह बाजन बाजहिं दसरथ के गृह हो।
　　देवलोक सब देखहिं आनँद अति हिय हो॥
नगर सोहावन लागत बरनि न जाते हो।
　　कौसल्या के हर्ष न हृदय समाते हो॥२॥
आलेहि बाँस के माँड़व मनिगन पूरन हो।
　　मोतिन्ह झालरि लागि चहूँ दिसि झूलन हो॥
गङ्गाजल कर कलस तौ तुरित मँगाइय हो।
　　जुबतिन्ह मङ्गल गाइ राम अन्हवाइय हो॥३॥
गजमुकता हीरा मनि चौक पुराइय हो।
　　देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइय हो॥
कनकखम्भ चहुँ ओर मध्य सिंहासन हो।
　　मानिकदीप बराय बैठि तेहि आसन हो॥४॥
बनि बनि आवति नारि जानि गृह मायन हो।
　　बिहँसत आउ लोहारिनि हाथ बरायन हो॥
अहिरिनि हाथ दहेंड़ि सगुन लेइ आवइ हो।
　　उनरत जोबन देखि नृपति मन भावइ॥५॥

आदि=प्रारम्भ, शुरू। आले=टटके, हरे। गजमुकता=गजमोती। मानिक=लाल। मायन=मँडवा, उत्सव। बरायन=लोह का छल्ला, मुन्दरी। उनरत=उठता हुआ, उछलता हुआ। जोबन=कुच, जवानी।

रूपसलोनि तँबोलिनि बीरा हाथहि हो ।
जाकी ओर बिलोकहि मन तेहि साथहि हो ॥
दरजिनि गोरे गात लिहे कर जोरा हो ।
केसरि परम लगाइ सुगन्धन बोरा हो ॥६॥

मोचिनि बदन-सकोचिनि हीरा माँगन हो ।
पनहि लिहे कर सोभित सुन्दर आँगन हो ॥
बतिया कै सुघरि मलिनियाँ सुन्दर गातहि हो ।
कनक-रतन-मनि-मौर लिहे मुसुकातहि हो ॥७॥

कटि कै छीन बरिनियाँ छाता पानिहि हो ।
चन्द्रवदनि मृगलोचनि सब रसखानिहि हो ॥
नैन बिसाल नउनियाँ भौंह चमकावइ हो ।
देइ गारी रनिवासहि प्रमुदित गावइ हो ॥८॥

कौसल्या की जेठि दीन्ह अनुसासन हो ।
नहछू जाइ करावहु बैठि सिँघासन हो ॥
गोद लिहे कौसल्या बैठी रामहि वर हो ।
सोभित दूलह राम सीस पर आँचर हो ॥९॥

नाउनि अति गुनखानि तौ बेगि बोलाई हो ।
करि सिँगार अति लोनि तौ बिहँसति आई हो ॥
कनक चुनिन सौँ लसित नहरनी लिये कर हो ।
आनँद हिय न समाइ देखि रामहि वर हो ॥१०॥

काने कनक-तरी वर बेसरि सोहइ हो ।
गजमुकता कर हार कंठमनि मोहइ हो ॥

लोनि=सुन्दरी । जोरा=जामा । छीन=खिन्न, पतली । जेठि=बड़ी, अवस्था में श्रेष्ठ । अनुसासन
ा। कनक=सुवर्ण, सोना । चुनिन=चुन्नी शब्द का बहुवचन, छोटे छोटे बहुत से नग । लसित=
त । नहरनी=नाखून काटने का औज़ार । कनकतरी=सोने का तरिवन, कर्णफूल, कान का एक
। बेसरि=नाक का भूषण । हार=माला ।

कर-कङ्कन कटि-किङ्किनि नूपुर बाजइ हो।
    रानी कै दीन्हीं तौ सारी अधिक बिराजइ हो ॥११॥
काहे रामजिउ साँवर लछिमन गोर हो
    कीदहुँ रानि कौसिलहि परिगा भोर हो ॥
राम अहहिँ दसरथ कै लछिमन आन क हो।
    भरत सत्रुहन भाइ तौ श्रीरघुनाथ क हो ॥१२॥
आज अवधपुर आनँद नहछू राम क हो।
    चलहु नयन भरि देखिय सोभा धाम क हो ॥
अति बड़भाग नउनियाँ छुअइ नख हाथ सोँ हो।
    नैनन्ह करत गुमान तौ श्रीरघुनाथ सोँ हो ॥१३॥
जो पग नाउनि धोवइ राम धोवावइँ हो।
    सो पगधूरि सिद्ध मुनि दरसन पावइँ हो ॥
अतिसय पुहुप क माल राम उर सोहहिँ हो।
    तिरछी चितवनि आनँद मुनि मुख जोहहिँ हो ॥१४॥
नख काटत मुसुकाहिँ बरनि नहिँ जातहि हो।
    पदुमराग-मनि मानहुँ कोमल गातहि हो ॥
जावक रचिक अँगुरियन्ह मृदुल सुठारी हो।
    प्रभु कर चरन प्रछालि तौ अति सुकुमारी हो ॥१५॥
भइ निवछावरि बहु बिधि जो जस लायक हो।
    तुलसिदास बलिजाउँ देखि रघुनायक हो ॥
राजन दीन्हे हाथी रानिन्ह हार हो।
    भरिगे रतन पदारथ सूप हजार हो ॥१६॥

कङ्कन=चूड़ा, ढरकौआ। किङ्किनि=करधनी, जेहर। नूपुर=घुघुरू। बिराजइ=सोहती है। कीदहुँ=कैधौँ, न जाने। भोर=भूल, अन्तर। नहछू=व्रतबन्ध और विवाह की एक रस्म जिसमें वर का नाखून कटता और पावों में महावर लगाया जाता है। पुहुप=फूल। पदुमराग=माणिक, लाल। जावक=महावर। सुठारी=सुडौल, सुघार। प्रछालि=धोकर।

भरि गाड़ी निवछावरि नाउ लिआवइ हो ।
परिजन करहिँ निहाल असीसत आवइ हो ॥
तापर करहिँ सुमौज बहुत दुख खोवहिँ हो ।
होइ सुखी सब लोग अधिक सुख सोवहिँ हो ॥१७॥
गावहिँ सब रनिवास देहिँ प्रभु गारी हो ।
रामलला सकुचाहिँ देखि महँतारी हो ॥
हिलिमिलि करत सवाँग सभा रसकेलि हो ।
नाउनि मन हरषाइ सुगन्धन मेलि हो ॥१८॥
दूलह कै महँतारि देखि मन हरषइ हो ।
कोटिन्ह दीन्हेउ दान मेघ जनु बरषइ हो ।
रामलला कर नहछू अति सुख गाइय हो ।
जेहि गाये सिधि होइ परमनिधि पाइय हो ॥१९॥
दसरथ राउ सिँघासन बैठि बिराजहिँ हो ।
तुलसिदास बलि जाहि देखि रघुराजहिँ हो ॥
जे यह नहछू गावइँ गाइ सुनावइँ हो ।
रिद्धि-सिद्धि-कल्यान-मुक्ति नर पावइँ हो ॥२०॥

इतिशुभम् ।

निहाल=सब प्रकार से सन्तुष्ट और प्रसन्न। मौज=आनन्द। हिलिमिलि=मिलजुल कर। सवाँग=स्वाँग, नकल। रसकेलि=आनन्द से हँसी मजाक। मेलि=तर होकर। परमनिधि=महान् ऐश्वर्य।

वैराग्य-सन्दीपनी

दोहा।

राम वाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥१॥
तुलसी मिटै न मोह-तम, किये कोटि गुनग्राम।
हृदय-कमल फूलै नहीं, बिनु रबिकुल-रबिराम ॥२॥
सुनत लखत स्रुति नयन बिनु, रसना बिनु रस लेत।
बास नासिका बिनु लहै, परसै बिना निकेत ॥३॥

सोरठा।

अज अद्वैत अनाम, अलखरूप गुन रहित जो।
मायापति सोइ राम, दास हेतु नरतनु धरेउ ॥४॥

दोहा।

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान।
पाप पुन्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान ॥५॥
तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रय ताप।
सान्ति होइ जब सान्तिपद, पावै रामप्रताप ॥६॥
तुलसी बेद-पुरान-मत, पूरन सास्त्र-बिचार।
यह बिराग-सान्दीपिनी, अखिल ज्ञान को सार ॥७॥

सन्त स्वभाव वर्णन

दो०-सरल-बरन भाषा-सरल, सरल अर्थमय मानि।
तुलसी सरलै सन्तजन, ताहि परी पहिचानि ॥८॥

कल्यानमय=कल्याण रूप। मोहतम=अज्ञानान्धकार। गुनग्राम=चतुराई। रस=स्वाद। अज=अजन्मा। अद्वैत=अनुपम। अनाम=नाम रहित। अलख=अप्रत्यक्ष। त्रयताप=दैहिक, दैविक, भौतिक। अखिल=सम्पूर्ण।

चौ०-अति सीतल अतिही सुखदाई। सम दम रामभजन अधिकाई॥
जड़ जीवन को करै सचेता। जग माहीं बिचरत एहि हेता॥९॥

दो०-तुलसी ऐसे कहुँ कहूँ, धन्य धरनि बहु सन्त।
परकाजै परमारथी, प्रीति लिये निबहन्त॥१०॥
की मुख पट दीन्हें रहै, यथा अर्थ भाषन्त।
तुलसी या संसार में, सो बिचारजुत सन्त॥११॥
बोलै बचन बिचारि कै, लीन्हें सन्त सुभाव।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पन्थ देत नहिं पाव॥१२॥
सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि।
तुलसी यह मत सन्त को, बोलै समता माहिं॥१३॥

चौ०-अति अनन्य-गति इन्द्रीजीता। जाको हरि बिनु कतहुँ न चीता॥
मृगतृष्ना सम जग जिय जानी। तुलसी ताहि सन्त पहिचानी॥१४॥

दो०-एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
राम-रूप-स्वाती-जलद, चातक तुलसीदास॥१५॥
सो जन जगत जहाज है, जाके राग न दोष।
तुलसी तृषना त्यागि कै, गहेउ सील सन्तोष॥१६॥
सील गहिन सब की सहनि, कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिये एहि रहनि, सन्त जनन को काम॥१७॥
निज सङ्गी निज सम करत, दुर्जन मन दुख दून।
मलयाचल हैं सन्तजन, तुलसी दोष बिहून॥१८॥
कोमल बानी सन्त की, स्रवै अमृतमय आय।
तुलसी ताहि कठोर मन, सुनत मयन होइ जाय॥१९॥
अनुभव सुख उतपति करत, भवभ्रम धरै उठाइ।
ऐसी बानी सन्त की, जो उर भेदै आइ॥२०॥

अनन्य=एक से सम्बन्ध रखनेवाला, एकनिष्ठ। चीता=चित्त। बिहून=नाश, भस्म। स्रवै=बहै, चुवै। मयन=मक्खन, कामदेव।

सीतल बानी सन्त की, ससिहू ते अनुमान ।
तुलसी कोटि तपनि हरै, जो कोउ धारै कान ॥२१॥
चौ०—पाप ताप सब सूल नसावै । मोहअन्ध रबिबचन बहावै ॥
तुलसी ऐसे सद्गुरु साधू । बेद मध्य गुन बिदित अगाधू ॥२२॥
दो०—तन करि मन करि बचन करि, काहू दूषत नाहिँ ।
तुलसी ऐसे सन्तजन, रामरूप जग माहिँ ॥२३॥
मुख देखत पातक हरै, परसत कर्म बिलाहिँ ।
बचन सुनत मन मोहगत, पूरब भाग मिलाहिँ ॥२४॥
अति कोमल अरु बिमल रुचि, मानस मैं मल नाहिँ ।
तुलसी रत मन होइ रहै, अपने साहिब माहिँ ॥२५॥
जाके मन ते उठि गई, तिल तिल तृष्ना चाहि ।
मनसा बाचा कर्मना, तुलसी बन्दत ताहि ॥२६॥
कञ्चन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पषान ।
तुलसी ऐसे सन्तजन, पृथिवी ब्रह्म समान ॥२७॥
चौ०-कञ्चनको मृतिका करि मानत। कामिनि काष्ठ सिला पहिचानत ॥
तुलसी भूलि गयो रस एहा । ते जन प्रगट राम की देहा ॥२८॥
दो०--अकिञ्चन इन्द्रियदमन, रमन राम एकतार ।
तुलसी ऐसे सन्तजन, बिरले या संसार ॥२९॥
अहम्बाद मैं तैं नहीं, दुष्ट सङ्ग नहिं कोइ ।
दुख ते दुख नहिं ऊपजै, सुख ते सुख नहिँ होइ ॥३०॥
सम कञ्चन काँचै गिनत, सत्रु मित्र सम दोइ ।
तुलसी या संसार मैं, कहत सन्तजन सोइ ॥३१॥
बिरले बिरले पाइये, मायात्यागी सन्त ।
तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनन्त ॥३२॥

रत=तत्पर । चाहि=अपेक्षा से अधिक । अकिञ्चन=परिग्रहत्यागी, आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह न करनेवाला । अहम्बाद=डींग हाँकना । बिरले=कोई एक । केकी=मुरैला ।

मैं तैं मेट्यो मोहतम, उगो आतमा-भानु ।
सन्तराज सो जानिये, तुलसी या सहिदानु ॥३३॥

सन्त-महिमा वर्णन

सो०—को बरनै मुख एक, तुलसी महिमा सन्त की ।
जिन्ह के बिमल बिवेक, सेष महेस न कहि सकत ॥१॥
दो०—महि पत्री करि सिन्धु मसि, तरु लेखनी बनाइ ।
तुलसी गनपति सोँ तदपि, महिमा लिखी न जाइ ॥२॥
धन्य धन्य माता पिता, धन्य पुत्र वर सोइ ।
तुलसी जो रामहि भजै, जैसेहु कैसेहु होइ ॥३॥
तुलसी जाके बदन तें, धोखेउ निकसत राम ।
ताके पग की पगतरी, मेरे तनु को चाम ॥४॥
तुलसी भगत सुपच भलो, भजै रैनि दिन राम ।
ऊँचो कुल केहि काम को, जहाँ न हरि को नाम ॥५॥
अति ऊँचे भूधरनि पर, भुजगन के अस्थान ।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ॥६॥
चै०—अति अनन्य जो हरि को दासा । रटै नाम निसिदिन प्रतिस्वासा ॥
तुलसी तेहि समान नहिं कोई । हम नीके देखा सब लोई ॥७॥
जदपि साधु सबही बिधि हीना । तद्यपि समता के न कुलीना ॥
यह दिन रैनि नाम उच्चरै । वह नित मान-अगिनि मैं जरै ॥८॥
दो०—दासरता एक नाम सोँ, उभय लोक सुख त्यागि ।
तुलसी न्यारे ह्वै रहै, दहै न दुख की आगि ॥९॥

आतमाभानु=आत्मज्ञान रूपी सूर्य्य। सहिदानु=पहचान, चिन्हारी। पत्री=चिट्ठी, कागज। मसि=स्याही। लेखनी=कलम। पगतरी=पनही, जूती। सुपच=मेहतर। लोई=लोग। कुलीन=अच्छे-कुलवाले। मान=अभिमान। रता=प्रेम, तत्परता।

शान्ति-वर्णन

दो०–रैनि को भूषन इन्दु है, दिवस को भूषन भानु।
दास को भूषन भक्ति है, भक्ति को भूषन ज्ञानु ॥१॥
ज्ञान को भूषन ध्यान है, ध्यान को भूषन त्याग।
त्याग को भूषन सान्तिपद, तुलसी अमल अदाग ॥२॥
चौ०–अमल अदाग सान्तिपद सारा। सकल कलेसन करत प्रहारा॥
तुलसी उर धारै जौं कोई। रहै अनन्द-सिन्धु महँ सोई ॥३॥
बिबिध पापसम्भव जो तापा। मिटहिं दोष दुख दुसह कलापा॥
परम सान्ति-सुख रहै समाई। तहँ उतपात न भेदै आई ॥४॥
तुलसी ऐसे सीतल सन्ता। सदा रहैं एहि भाँति एकन्ता॥
कहा करैं खल लोग भुजङ्गा। कीन्हेउँ गरलसील जो अङ्गा ॥५॥
दो०–अति सीतल अतिही अमल, सकल कामनाहीन।
तुलसी ताहि अतीत गनि, बृत्ति सान्ति लयलीन ॥६॥
चौ०–जो कोइ कोप भरे मुख बैना। सनमुख हतै गिरा सर-पैना॥
तुलसी तऊ लेस रिस नाहीं। सो सीतल कहिये जग माहीं ॥७॥
दो०–सात दीप नव खंड लौं, तीनि लोक जग माहिं।
तुलसी सान्ति समान सुख, अपर दूसरो नाहिं ॥८॥
चौ०–जहाँ सान्ति सतगुरु की दई। तहाँ क्रोध की जर जरि गई॥
सकल कामबासना बिलानी। तुलसी यहै सान्ति सहिदानी ॥९॥
तुलसी सुखद सान्ति को सागर। सन्तन गायो करन उजागर॥
तामैं तन मन रहै समोई। अहं-अगिनि नहिं दाहै कोई ॥१०॥
दो–अहङ्कार की अगिनि मैं, दहत सकल संसार।
तुलसी बाँचे सन्तजन, केवल सान्ति अधार ॥११॥

इन्दु=चन्द्रमा। प्रहार=घात, चोट पहुँचाना। कलाप=समूह। भेदै=छेदै। गरलसील=विष का हद। अतीत=त्यागी। पैना=चोखा, तेज़। लेस=ज़रा भी। समोई=सम्मिलित।

महासान्ति-जल परसि कै, सान्त भये जन जोय ।
अहं-अगिनि ते नहिं दहै, कोटि करै जौं कोय ॥१२॥
तेज होत तन तरनि को, अचरज मानत लोइ ।
तुलसी जो पानी भया, बहुरि न पावक होइ ॥१३॥
जद्यपि सीतल सम सुखद, जग मैं जीवन प्रान ।
तदपि सान्ति-जल जनि गनौ, पावक तेज प्रमान ॥१४॥
चौ०—जरै बरै अरु खीझि खिझावै । राग द्वेष महँ जनम गँवावै ॥
सपनेहुँ सान्ति नहीं उन देही । तुलसी जहाँ जहाँ ब्रत एही ॥१५॥
दो०—सोइ पंडित सोइ पारखी, सोई सन्त सुजान ।
सोई सूर सचेत सो, सोई सुभट प्रमान ॥१६॥
सोइ ज्ञानी सोइ गुनीजन, सोई दाता ध्यानि ।
तुलसी जाके चित भई, राग द्वेष की हानि ॥१७॥
चौ०—राग द्वेष की अगिनि बुझानी । काम क्रोध बासना नसानी ॥
तुलसी जबहिँ सान्ति गृह आई । तब उर ही उर फिरी दोहाई ॥१८॥
दो०—फिरी दोहाई राम की, गे कामादिक भाजि ।
तुलसी ज्यौं रबि के उदय, तुरत जात तम लाजि ॥१९॥
यह बिराग-सन्दीपिनी, सुजन सुचित सुनि लेहु ।
अनुचित बचन बिचारि कै, जस सुधारि तस देहु ॥२०॥

इतिशुभम्

बरवै-रामायण

बालकांड

केस-मुकुत सखि मरकत, मनिमय होत।
हाथ लेत पुनि मुकता, करत उदोत ॥१॥
सम सुबरन सुखमाकर, सुखद न थोर।
सीय अङ्ग सखि कोमल, कनक कठोर ॥२॥
सिय-मुख सरद-कमल जिमि, किमि कहि जाइ।
निसि मलीन वह निसिदिन, यह बिगसाइ ॥३॥
बड़े नयन कटि भृकुटी, भाल बिसाल।
तुलसी मोहत मनहि मनोहर बाल ॥४॥
चम्पक-हरवा अँग मिलि, अधिक सोहाइ।
जानि परै सिय हियरे, जब कुँभिलाइ ॥५॥
सिय तुव अङ्ग रङ्ग मिलि, अधिक उदोत।
हार बेलि पहिरावौं, चम्पक होत ॥६॥
साधु सुसील सुमति सुचि, सरल सुभाव।
राम नीतिरत काम कहाँ यह पाव ?॥७॥
कुङ्कुम तिलक भाल स्रुति, कुंडल लोल।
काकपच्छ मिलि सखि कस लसत कपोल ॥८॥
भाल तिलक सर सोहत, भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल, चन्द समान ॥९॥

केस=बाल। मुकुत=मुक्ता, मोती। मरकतमनि=पन्ना, ज़मुर्रद। उदोत=प्रकाश, उजाला। सुखमाकर=शोभा की खान। कनक=सुवर्ण। बिगसाइ=प्रफुल्लित। कुङ्कुम=केसर। स्रुति=कान। कुंडल=बाली। लोल=चंचल। कमान=धनुष।

तुलसी बङ्क बिलोकनि, मृदु मुसुकानि ।
कस प्रभु नयन कमल अस, कहउँ बखानि ॥१०॥
कामरूप सम तुलसी, राम सरूप ।
को कवि समसरि करै परै भवकूप ॥११॥
चढ़त दसा यह उतरत,-जात निदान ।
कहौं न कबहूँ करकस, भौंह कमान ॥१२॥
नित्य नेम कृत अरुन उदय जब कीन ।
निरखि निसाकर नृप-मुख, भये मलीन ॥१३॥
कमठपीठ-धनु सजनी, कठिन अँदेस ।
तमकि ताहि ये तोरिहि, कहब महेस ॥१४॥
नृप निरास भये निरखत, नगर उदास ।
धनुष तोरि हरि सब कर, हरेउ हरास ॥१५॥
का घूँघट मुख मूँदहु, नवला नारि ।
चाँद सरग पर सोहत, यहि अनुहारि ॥१६॥
गरब करहु रघुनन्दन, जनि मन माँह ।
देखहु आपनि मूरति, सिय कै छाँह ॥१७॥
उठी सखी हँसि मिस करि, कहि मृदु बैन ।
सिय रघुबर के भये उनीदे नैन ॥१८॥
सींक धनुष हित सिखन सकुचि प्रभु लीन ।
मुदित माँगि इक धनुही, नृप हँसि दीन ॥१९॥

अयोध्याकांड

सात दिवस भये साजत, सकल बनाउ ।
का पूछहु सुठि राउर, सरल सुभाउ ॥२॥

समसरि=बराबरी। निदान=अन्त में, आख़िरकार। करकस=कठिन। अरुन=सूर्य्य। निसाकर=चन्द्रमा। अँदेस=असमञ्जस, अन्देसा। तमकि=क्रोध से भर कर। हरास=ह्रास, दुःख। मिस=बहाना। उनीदे= निद्रित। सुठि=अत्यन्त। सरल=सीधा।

राजभवन सुख बिलसत, सिय सँग राम ।
बिपिन चले तजि राज सु, बिधि बड़ बाम ॥२१॥
कोउ कह नर नारायन, हरि हर कोउ ।
कोउ कह बिहरत बन मधु,-मनसिज दोउ ॥२२॥
तुलसी भइ मति बिथकित, करि अनुमान ।
राम लखन के रूप न, देखेउ आन ॥२३॥
तुलसी जनि पग धरहु गङ्ग महँ साँच ।
निगा नाँग करि नितहि नचाइहि नाँच ॥२४॥
सजल कठौता कर गहि, कहत निषाद ।
चढ़हु नाव पग धोइ करहु जनि बाद ॥२५॥
कमल कंटकित सजनी, कोमल पाइ ।
निसि मलीन यह प्रफुलित, नित दरसाइ ॥२६॥

(वालमीकि-वचन)

द्वै भुजकर हरि रघुबर, सुन्दर बेष ।
एक जीभ कर लछिमन, दूसर सेष ॥२७॥

अरण्यकांड

बेद नाम कहि अँगुरिन, खंडि अकास ।
पठयो सूपनखाहि लखन के पास ॥२८॥
हेमलता सिय मूरति, मृदु मुसुकाइ ।
हेम हरिन कहँ दीन्हेउ, प्रभुहि देखाइ ॥२९॥
जटा-मुकुट कर-सर-धनु, सङ्ग मरीच ।
चितवनि बसति कनखियन, अँखियन बीच ॥३०॥

सु=श्रेष्ठ, उत्तम । मधु=वसन्त । मनसिज=कामदेव । विथकित=थकी हुई । निगा=निरा ? । नाँग=नंगा । बाद=विवाद, कहासुनी । कंटकित= काँटे दार । वेदनाम=श्रुति, कान । अकास =नाक । हेमलता= सोने की वेल । हेम=सुवर्ण । कनखियन=दूसरों की दृष्टि बचा कर देखने का ढंग ।

(राम-वाक्य)

कनकसलाक कला-ससि, दीप-सिखाउ ।
तारा सिय कहँ लछिमन, मोहि बताउ ॥३१॥
सीय बरन सम केतकि, अति हिय हारि ।
किहेसि भँवर कर हरवा, हृदय बिदारि ॥३२॥
सीतलता ससि की रहि, सब जग छाइ ।
अगिनि ताप है हम कहँ सँचरत आइ ॥३३॥

किष्किन्धाकांड

स्याम गौर दोउ मूरति, लछिमन राम ।
इन तें भइ सित कीरति, अति अभिराम ॥३४॥
कुजनपाल गुन-बरजित, अकुल अनाथ ।
कहहु कृपानिधि राउर, कस गुनगाथ ॥३५॥

सुन्दरकांड

बिरह-आगि-उर ऊपर, जब अधिकाइ ।
ये अँखियाँ दोउ बैरिनि, देहिं बुझाइ ॥३६॥
डहकु न है उजियरिया, निसि नहिं घाम ।
जगत जरत अस लागु मोहि बिनु राम ॥३७॥
अब जवीन कै है कपि, आस न कोइ ।
कनगुरिया कै मुँदरी, कङ्कन होइ ॥३८॥
राम सुजस कर चहुँ जुग, होत प्रचार ।
असुरन कहँ लखि लागत, जग अँधियार ॥३९॥

कनकसलाक=सोने की सलाई । कला=अंश, हुनर । सिखा=लौ । तारा=तरई । केतकि=सुवर्णकेतकी, पीले फूलवाली केतकी । हरवा=हार, माला । विदार=फाड़ कर, चीर कर । सँचरत=व्यवहार करता है, वर्तता है । सित=शुक्ल, सफ़ेद । अभिराम=आनन्ददायक, सुखदाई । कुजन=दुर्जन । डहकु=ठगु, धोखा दे ।

(कपि-वाक्य)

सिय-बियोग-दुख केहि बिधि, कहउँ बखानि।
फूलबान ते मनसिज, बेधत आनि ॥४०॥
सरद-चाँदनी सँचरत, चहुँ दिसि आनि।
बिधुहि जोरि कर बिनवति, कुलगुरु जानि ॥४१॥

लङ्काकांड

बिबिध बाहिनी बिलसति, सहित अनन्त।
जलधि सरिस को कहै राम भगवन्त ॥४२॥

उत्तरकांड

चित्रकूट पय-तीर सो, सुरतरु-बास।
लखन-राम-सिय सुमिरहु, तुलसीदास ॥४३॥
पय नहाइ फल खाहु परिहरिय आस।
सीय-राम-पद सुमिरहु, तुलसीदास ॥४४॥
स्वारथ परमारथ हित, एक उपाय।
सीय-राम-पद तुलसी, प्रेम बढ़ाय ॥४५॥
काल कराल बिलोकहु, होइ सचेत।
रामनाम जपु तुलसी, प्रीति समेत ॥४६॥
सङ्कट सोच बिमोचन, मङ्गल-गेह।
तुलसी रामनाम पर, करिय सनेह ॥४७॥
कलि नाहिँ ज्ञान बिराग न, जोग समाधि।
रामनाम जपु तुलसी, नित निरुपाधि ॥४८॥

बिधु=चन्द्रमा। बाहिनी=सेना। बिलसति=सोहती है। अनन्त=लक्ष्मण, समूह। सुरतरु=कल्पवृक्ष। पय=पयस्विनी नदी। कराल=भीषण। बिमोचन=छुड़ानेवाला। समाधि=आराम, चैन, ध्यान। निरुपाधि=विना उपद्रव।

रामनाम दुइ आखर, हिय हित जानु ।
राम लखन सम तुलसी, सिखब न आन ॥४९॥
माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम ।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि विधि बाम ॥५०॥
रामनाम जपु तुलसी, होइ बिसोक ।
लोक सकल कल्यान नीक परलोक ॥५१॥
तप तीरथ मख दान नेम उपवास ।
सब ते अधिक राम जपु, तुलसीदास ॥५२॥
महिमा रामनाम कै, जान महेस ।
देत परमपद कासी, करि उपदेस ॥५३॥
जान आदिकबि तुलसी, नामप्रभाउ ।
उलटा जपत कोल ते, भये रिषिराउ ॥५४॥
कलसजोनि जिय जानेउ, नामप्रताप ।
कौतुक सागर सोखेउ, करि जिय जाप ॥५५॥
तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि ।
वेद पुरान पुकारत, कहत पुरारि ॥५६॥
रामनाम पर तुलसी, नेह निबाहु ।
एहि ते अधिक न एहि सम, जीवनलाहु ॥५७॥
दोष दुरित दुख दारिद, दाहक नाम ।
सकल सुमङ्गल-दायक, तुलसी राम ॥५८॥
केहि गनती महँ गिनती, जस बनघास ।
राम जपत भये तुलसी, तुलसीदास ॥५९॥
आगम निगम पुरान कहत करि लीक ।
तुलसी नाम राम कर, सुमिरन नीक ॥६०॥

आखर=अक्षर, वाक्य। सिखब=सीखने की बात। बिसोक=शोक रहित। परमपद=मोक्ष। आदिकबि=वालमीकिमुनि। कोल=भिल्ल आदि वनवासी मनुष्य। कलसजोनि=कुम्भज, अगस्त्यमुनि। दुरित=पाप। आगम=शास्त्र। निगम=वेद। लीक=लकीर, निशान।

सुमिरहु नाम राम कर, सेवहु साधु ।
तुलसी उतरि जाहु भव,-उदधि अगाधु ॥६१॥
कामधेनु हरिनाम कामतरु राम ।
तुलसी सुलभ चारिफल, सुमिरत नाम ॥६२॥
तुलसी कहत सुनत सब, समुझत कोय ।
बड़े भाग अनुराग राम सन होय ॥६३॥
एकहि एक सिखावत, जपत न आप ।
तुलसी राम प्रेम कर, बाधक पाप ॥६४॥
मरत कहत सब सब कहँ, सुमिरहु राम ।
तुलसी अब नहिं जपत समुझि परिनाम ॥६५॥
तुलसी रामनाम जपु, आलस छाँडु ।
रामविमुख कलिकाल को भयो न भाँडु ॥६६॥
तुलसी रामनाम सम, मित्र न आन ।
जो पहुँचाव रामपुर, तनु अवसान ॥६७॥
नाम भरोस नाम बल, नाम सनेहु ।
जनम जनम रघुनन्दन, तुलसिहि देहु ॥६८॥
जनम जनम जहँ जहँ तनु, तुलसिहि देहु ।
तहँ तहँ राम निबाहिब, नाम सनेहु ॥६९॥

इति शुभम्

बाधक=बाधा डालनेवाला । भाँडु=भाँड़, बरतन । अवसान=अन्त, अखीर ।

पार्वती-मङ्गल

हंसगति - छन्द

बिनयि गुरुहि गुनिगनहि, गिरिहि गननाथहि ।
हृदय आनि सियराम, धरे धनु भाथहि ॥
गावउँ गौरि-गिरीस, बिबाह सुहावन ।
पाप नसावन पावन, मुनि मन भावन ॥१॥
कवित-रीति नहिं जानउँ कबि न कहावउँ ।
सङ्करचरित सुसरित मनहिं अन्हवावउँ ॥
पर अपबाद बिबाद बिदूषित बानिहि ।
पावनि करउँ सो गाइ भवेस-भवानिहि ॥२॥
जय सम्बत फागुन सुदि पाँचै गुरु दिन ।
अस्विनि बिरचेउँ मङ्गल सुनि सुख छिन छिन ॥
गुननिधान हिमवान धरनिधर धुर धनि ।
मैना तासु घरनि घर त्रिभुवन तियमनि ॥३॥
कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर ।
लीन्ह जाइ जगजननि जनम जिन्ह के घर ॥
मङ्गलखानि भवानि प्रगट जब तें भइ ।
तब तें रिधि सिधि सम्पति गिरिगृह नित नइ ॥४॥

हरिगीतिका-छन्द

नित नव सकल कल्यान मङ्गल मोद मय मुनि मानहीं ।
ब्रह्मादि सुर नर नाग अति अनुराग भाग बखानहीं ॥

भवेस=शिव । धरनिधर=पर्वत । धुर=शीर्ष, प्रधान ।

पितु मातु प्रिय परिवार हरषहिँ, निरखि पालहिँ लालहीँ ।
सित-पाख बाढ़ति चन्द्रिका जनु, चन्द्रभूषन भालहीँ ॥५॥

कुँवरि सयानि बिलोकि मातु पितु सोचहिँ ।
गिरिजा जोग जुरिहि बर अनुदिन लोचहिँ ॥
एक समय हिमवान भवन नारद गये ।
गिरिबर मैना मुदित मुनिहि पूजत भये ॥६॥
उमहिँ बोलि रिषि-पगन मातु मेलति भइ ।
मुनि मन कीन्ह प्रनाम बचन आसिष दइ ॥
कुँवरि लागि पितु काँध ठाढ़ि भइ सोहइ ।
रूप न जाइ बखानि जान जोइ जोहइ ॥७॥
अति सनेह सतिभाय पाँय परि पुनि पुनि ।
कह मैना मृदु बचन सुनिय बिनती मुनि ॥
तुम तिभुवन तिहुँकाल बिचार बिसारद ।
पारबती अनुरूप कहिय बर नारद ॥८॥
मुनि कह चौदह भुवन फिरउँ जग जहँ जहँ ।
गिरिबर सुनिय सरहना राउरि तहँ तहँ ॥
भूरि भाग तुम सरिस कतहुँ कोउ नाहिन ।
कछु न अगम सब सुगम भयो बिधि दाहिन ॥९॥

छं०—दाहिन भये बिधि सुगम सब सुनि, तजहु चित चिन्ता नई ।
बर प्रथम बिरवा बिरँचि बिरचो, मङ्गला मङ्गलमई ॥
बिधिलोक चरचा चलति राउरि, चतुर चतुरानन कही ।
हिमवानकन्या जोग बर बाउर बिबुध बन्दित सही ॥१०॥

मोरेहु मन अस आव मिलिहि बर बाउर ।
लखि नारद-नारदी उमहिँ सुख भा उर ॥

सितपाख=शुक्लपक्ष । चन्द्रिका=चाँदनी । लोचहिं=आलोचना करते हैं । सरहना=प्रशंसा । बिरवा=वृक्ष । नारदी=नारदपना ।

सुनि सहमे परि पाँइ कहत भये दम्पति ।
गिरिजहि लागि हमार जिवन सुख सम्पति ॥११॥

नाथ कहिय सोइ जतन मिटइ जेहि दूषन ।
दोष-दलन मुनि कहेउ बालबिधु-भूषन ॥

अवसि होइ सिधि साहस फलै सुसाधन ।
कोटि कलपतरु सरिस सम्भु-अवराधन ॥१२॥

तुम्हरे आस्रम अबहिँ ईस तप साधहि ।
कहिय उमहिँ मन लाइ जाइ अवराधहि ॥

कहि उपाउ दम्पतिहि मुदित मुनिबर गये ।
अति सनेह पितु मातु उमहिँ सिखवत भये ॥१३॥

सजि समाज गिरिराज दीन्ह सब गिरिजहि ।
बदत जननि जगदीस जुवति जिनि सिरजहि ॥

जननि जनक उपदेस महेसहि सेवहि ।
अति आदर अनुराग भगति मन भेवहि ॥१४॥

छं०–भेवहि भगति मन बचन करम अनन्यगति हर-चरन की ।
गौरव सनेह सकोच सेवा, जाइ केहि बिधि बरनकी ॥
गुन-रूप-जोवन सींव सुन्दरि, निरखि छोभ न हर हिये ।
ते धीर अछत बिकार हेतु जे, रहत मनसिज बस किये ॥१५॥

देव देखि भल समउ मनोज बुलायेउ ।
कहेउ करिय सुरकाज साज सजि धायेउ ॥

बामदेव सन काम बाम होइ बरतेउ ।
जग-जय-मद निदरेसि हर पायेसि फर तेउ ॥१६॥

रति पतिहीन मलीन बिलोकि बिसूरति ।
नीलकंठ मृदुसील कृपामय मूरति ॥

फर=फल । बिसूरति=शोक करती है । नीलकंठ=शिव ।

आसुतोष परितोष कीन्हबर दीन्हेउ।
सिव उदास तजि बास अनत गम कीन्हेउ ॥१७॥

उमा नेह बस बिकल देह सुधि बुधि गइ।
कलपबेलि बन बढ़त बिषम हिम जनु दइ॥

समाचार सब सखिन जाइ घर घर कहे।
सुनत मातु पितु परिजन दारुन दुख दहे ॥१८॥

जाइ देखि अति प्रेम उमहिं उर लावहिं।
बिलपहिं बाम बिधातहि दोष लगावहिं॥

जो न होहिं मङ्गलमग सुर बिधि बाधक।
तौ अभिमत फल पावहिं करि स्रम साधक ॥१९॥

छ०—साधक कलेस सुनाइ सब गौरिहि निहोरत धाम को।
को सुनइ काहि सोहाइ घर चित चहत चन्द्रललाम को॥
समुझाइ सबहि दृढ़ाइ मन पितु मातु आयसु पाइ कै।
लागी करन पुनि अगम तप तुलसी कहै किमि गाइ कै ॥२०॥

फिरेउ मातु पितु परिजन लखि गिरिजा पन।
जेहि अनुराग लाग चित सोइ हित आपन॥

तजेउ भोग जिमि रोग लोग अहिगन जनु।
मुनि-मनसहु तें अगम तपहि लायउ मन ॥२१॥

सकुचहिं बसन बिभूषन परसत जो बपु।
तेहि सरीर हर-हेतु अरम्भेउ बड़ तपु॥

पूजहि सिवहि समय तिहुँ करहि निमज्जन।
देखि प्रेम ब्रत नेम सराहहिं सज्जन ॥२२॥

नींद न भूख पियास सरिस निसि बासर।
नयननीर मुख-नाम पुलकतन हिय-हर॥

आसुतोष=तुरन्त प्रसन्न होनेवाले। साधक=साधना करने वाले। चन्द्रललाम=शिव। धवल=उज्वल। कल=सुन्दर।

कन्द-मूल-फल असन कबहुँ जल पवनहिं ।
सूखे बेल के पात खात दिन गवनहिं ॥२३॥
नाम अपरना भयउ परन जब परिहरे ।
नवल धवल कल कीरति सकल भुवन भरे ॥
देखि सराहहिं गिरिजहि मुनिबर मुनि-बहु ।
अस तप सुना न दीख कबहुँ काहू कहुँ ॥२४॥
छं०-काहू न देख्यो कहहिं यह तप, जोग-फल फल चारि का ।
नहिं जानि जाइ न कहति चाहति काहि कुधर-कुमारिका ॥
बटुबेष पेषन प्रेमपन ब्रत-नेम ससिसेखर गये ।
मनसहिं समरपेउ आपु गिरिजहि, बचन मृदु बोलत भये ॥२५॥
देखि दसा करुनाकर हर दुख पायउ ।
मोर कठोर सुभाउ हृदय अस आयउ ॥
बंस प्रसंसि मातु पितु कहि सब लायक ।
अमिय बचन बटु बोलेउ सुनि सुखदायक ॥२६॥
देवि करउँ कछु बिनय सो बिलग न मानब ।
कहउँ सनेह सुभाय साँच जिय जानब ॥
जनमि जगत जस प्रगटिहु मातु-पिता कर ।
तीयरतन तुम उपजिहु भव-रतनागर ॥२७॥
अगम न जग कछु तुम्ह कहँ मोहि अस सूझइ ।
बिनु कामना कलेस कलेस न बूझइ ॥
जौं बर लागि करहु तप तौ लरिकाइय ।
पारस जौ घर मिलइ तौ मेरु कि जाइय ? ॥२८॥
मोरे जान कलेस करिय बिनु काजहि ।
सुधा कि रोगिहि चाहहि रतन कि राजहि ? ॥

कुधर कुमारिका=पार्वती। पेषन=देखने के लिये। ससिसेखर=शिव।

लखि न परेउ तप कारन बटु हिय हारेउ ।
सुनि प्रिय-बचन सखी मुख गौरि निहारेउ ॥२९॥

छं०—गौरी निहारेउ सखीमुख रुख-पाइ तेहि कारन कहा ।
तप करहिं हर-हित सुनि बिहँसि बटु, कहत मुरुखाई महा ॥
जेहिं दीन्ह अस उपदेस बरेहु, कलेस करि बर बावरो ।
हित लागि कहउँ सुभाय सोँ, बड़ बिषम बैरी रावरो ॥३०॥

कहहु काह सुनि रीझिहु बर अकुलीनहिं ।
अगुन अमान अजाति मातु-पितु हीनहिं ॥
भीख माँगि भव खाहिँ चिता नित सोवहिँ ।
नाचहिँ नगन पिसाच पिसाचिनि जोवहिँ ॥३१॥

भाँग धतूर अहार छार लपटावहिँ ।
जोगी जटिल सरोष भोग नहिँ भावहिँ ॥
सुमुखि सुलोचनि ! हर मुख-पञ्च तिलोचन ।
बामदेव फुर नाम काम-मद-मोचन ॥३२॥

एकउ हरहिं न बर गुन कोटिक दूषन ।
नरकपाल गजखाल ब्याल-बिष-भूषन ॥
कहँ राउर गुन सील सरूप सुहावन ।
कहाँ अमङ्गल बेष बिसेष भयावन ॥३३॥

जो सोचहि ससिकलहि सो सोचहि रौरेहि ।
कहा मोर मन धरि न बरिय बर बौरेहि ॥
हिये हेरि हठ तजहु हठै दुख पैहहु ।
ब्याह समय सिख मोरि समुझि पछितैहहु ॥३४॥

छं०—पछिताब भूत पिसाच प्रेत जनेत ऐहहिँ साजि कै ।
जमधार सरिस निहारि सब नर,-नारि चलिहहिँ भाजि कै ॥

भव=शिव । जनेव=बरात ।

गजअजिन दिब्य दुकूल जोरत, सखी हँसि मुख मोरि कै।
कोउ प्रगट कोउ हिय कहहिं मिलवत, अमिय माहुर घोरि कै॥३५॥

तुमहिँ सहित असवार बसह जब होइहहिँ।
निरखि नगर नर नारि बिहँसि मुख गोइहहिँ॥

बटु करि कोटि कुतर्क जथारुचि बोलइ।
अचल-सुता मन अचल बयारि कि डोलइ? ॥३६॥

साँच सनेह साँचि रुचि जो हठि फेरइ।
सावन-सरित सिन्धुरुख सूप सोँ घेरइ॥

मनि बिनु फनि जलहीन मीन तनु त्यागइ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ॥३७॥

करनकटुक बटु बचन बिसिष सम हिय हये।
अरुन नयन चढ़ि भृकुटि अधर फरकत भये॥

बोली फिरि लखि सखिहि काँप तनु थरथर।
आलि बिदा करु बटुहि बेगि बड़ बरबर॥३८॥

कहुँ तिय होहिँ सयानि सुनहिँ सिख राउरि।
बौरेहि के अनुराग भइउँ बड़ि बाउरि॥

दोषनिधान इसान सत्य सब भाखेउ।
मेटि को सकइ सो आँक जो बिधि लिखि राखेउ॥३९॥

को करि वाद बिबाद बिषाद बढ़ावइ?
मीठ काह कबि कहहिँ जाहि जोइ भावइ॥

भइ बड़ि बार आलि कहुँ काज सिधारहि।
बकि जनि उठइ बहोरि कुजुगुति सँवारहि॥४०॥

छं०—जनि कहहि कछु बिपरीत जानत, प्रीति रीति न बात की।
सिव-साधु-निन्दक मन्द अति जो, सुनै सोउ बड़ पातकी॥

गज अजिन=गज चर्म। बटु=ब्राह्मण। अचलसुता=पारवती। बरबर=बकवादी। आँक=लेख।

सुनि बचन सोधि सनेह तुलसी, साँच अबिचल पावनो।
भये प्रगट करुनासिन्धु सङ्कर, भाल चन्द्र सुहावनो ॥४१॥

सुन्दर गौर सरीर भूति भलि सोहइ।
लोचन भाल बिसाल बदन मन मोहइ॥
सैलकुमारि निहारि मनोहर मूरति।
सजल नयन हिय हरष पुलकतनु पूरति ॥४२॥

पुनि पुनि करइ प्रनाम न आवत कछु कहि।
देखौं सपन कि सौंतुख ससिसेखर सहि॥
जैसे जनम दरिद्र महामनि पावइ।
पेखत प्रगट प्रभाव प्रतीति न आवइ ॥४३॥

सफल मनोरथ भयउ गौरि सोहइ सुठि।
घर तें खेलन मनहुँ अबहिं आई उठि॥
देखि रूप अनुराग महेस भये बस।
कहत बचन जनु सानि सनेह सुधारस ॥४४॥

हमहिं आजु लगि कनउड़ काहु न कीन्हेउ।
पारबती तप प्रेम मोल मोहिं लीन्हेउ॥
अब जो कहहु सो करउँ बिलम्ब न यहि घरि।
सुनि महेस मृदु बचन पुलकि पाँयन परि ॥४५॥

ह० छं०—परि पाँय सखिमुख कहि जनायो, आप बाप-अधीनता।
परितोषि गिरिजहि चले बरनत, प्रीति नीति प्रबीनता॥
हर हृदय धरि घर गौरि गवनी, कीन्ह बिधि मनभावनो।
आनन्द प्रेम समाज मङ्गल,-गान बाज बधावनो ॥४६॥

सिव सुमिरे मुनि सात आइ सिर नाइन्हि।
कीन्ह सम्भु सनमान जनमफल पाइन्हि॥

सौंतुख=प्रत्यक्ष। ससिसेखर=शिव। पेखत=देखत। कनउड़=एहसान से दबइल।

सुमिरहिँ सुकृत तुम्हहिँ जन तेइ सुकृतीबर।
नाथ जिन्हहिँ सुधि करिय तिन्हहिँ सम तेइ हर ॥४७॥

सुनि मुनि-बिनय महेस परम सुख पायउ।
कथा प्रसङ्ग मुनीसन्ह सकल सुनायउ ॥
जाहु हिमाचल-गेह प्रसङ्ग चलायहु।
जो मन मान तुम्हार तौ लगन लिखायहु ॥४८॥

अरुन्धती मिलि मैनहि बात चलाइहि।
नारि कुसल एहि काज काज बनिआइहि ॥
दुलहिनि उमा ईस बर साधक ये मुनि।
बनिहि अवसि यह काज गगन भइ अस धुनि ॥४९॥

भयउ अकनि आनन्द महेस मुनीसन्ह।
देहिँ सुलोचनि सगुन कलस लिय सीसन्ह ॥
सिव सोँ कहे दिन ठाउँ बहोरि मिलन जहँ।
चले मुदित मुनिराज गये गिरिबर पहँ ॥५०॥

ह० छं०–गिरिगेह गे अति नेह आदर, पूजि पहुनाई करी।
घरबात घरनि समेत कन्या, आनि सब आगे धरी ॥
सुख पाइ बात चलाइ सुदिन सोधाइ गिरिहि सिखाइ कै।
रिषिसात प्रातहि चले प्रमुदित, ललित लगन लिखाइ कै ॥५१॥

बिप्रबृन्द सनमानि पूजि कुलगुरु सुर।
परेउ निसानहिँ घाउ चाउ चहुँदिसि पुर ॥
गिरि बन सरित सिन्धु सर सुनइ जो पायउ।
सब कहँ गिरिबरनायक नेवति पठायउ ॥५२॥

धरि धरि सुन्दर बेष चले हरषित हिये।
कँचन चीर उपहार हार मनिगन लिये ॥

काज=विवाह की वातचीत। अकनि=सुन कर। पहुनाई=मेहमानदारी। ललित=सुन्दर। कँचन=कञ्चन, सोना।

कहेउ हरषि हिमवान बितान बनावन।
हरषित लगीं सुआसिनि मङ्गल गावन ॥५३॥
तोरन कलस चँवर धुज बिबिध बनाइन्हि।
हाट पटोरन्हि छाय सफल तरु लाइन्हि ॥
गौरी नैहर केहि बिधि कहहु बखानिय ?
जनु रितुराज मनोज-राज रजधानिय ॥५४॥
ह० छं०—जनु राजधानी मदन की बिरची चतुर बिधि औरही।
रचना बिचित्र बिलोकि लोचन, बिथक ठौरहि ठौरही ॥
एहि भाँति ब्याह समाज सजि गिरिराज मग जोवन लगे।
तुलसी लगन लै दीन्ह मुनिन्ह महेस आनँद-रँग-मगे ॥५५॥
बेगि बुलाइ बिरञ्चि बँचाइ लगन तब।
कहेन्हि बियाहन चलहु बुलाइ अमर सब ॥
बिधि पठये जहँ तहँ सब सिवगन धावन।
सुनि हरषहिं सुर कहहिं निसान बजावन ॥५६॥
रचहिं बिमान बनाइ सगुन पावहिं भले।
निज निज साज समाज साजि सुरगन चले ॥
मुदित सकल सिवदूत भूतगन गाजहिं।
सूकर महिष स्वान खर बाहन साजहिं ॥५७॥
नाचहिं नानारङ्ग तरङ्ग बढ़ावहिं।
अज उलूक वृक नाद गीत गन गावहिं ॥
रमानाथ सुरनाथ साथ सब सुरगन।
आये जहँ बिधि सम्भु देखि हरषे मन ॥५८॥
मिले हरिहि हर हरषि सुभाखि सुरेसहि।
सुर निहारि सनमानेउ मोद महेसहि ॥

पटोरन्हि=रेशमी वस्त्र। अमर=देवता। गाजहिं=प्रसन्न होते हैं। महिष=भैंसा। बाहन=सवारी। अज=बकरा। वृक=भेड़िया।

बहु बिधि बाहन जान बिमान बिराजहिँ।
चली बरात निसान गहागह बाजहिँ ॥५९॥

ह० छं०–बाजहिँ निसान सुगान नभचढ़ि, बसह बिधुभूषन चले।
बरषहिँ सुमन जय जय करहिँ सुर, सगुन सुभ मङ्गल भले॥
तुलसी बराती भूत प्रेत पिसाच पसुपति सँग लसे।
गजछाल व्याल कपाल-माल बिलोकि बर सुर हरि हँसे ॥६०॥

बिबुध बोलि हरि कहेउ निकट पुर आयउ।
आपन आपन साज सबहिँ बिलगायउ॥
प्रमथनाथ के साथ प्रमथगन राजहिँ।
बिबिध भाँति मुख बाहन बेष बिराजहिँ ॥६१॥
कमठखपर मढ़ि खाल निसान बजावहिँ।
नरकपाल जल भरि भरि पियहिँ पियावहिँ॥
बर अनुहरति बरात बनी हरि हँसि कहा।
सुनि हिय हँसत महेस केलि कौतुक महा ॥६२॥
बड़ विनोद मग मोद न कछु कहि आवत।
जाइ नगर नियरानि बरात बजावत॥
पुर खरभर उर हरषेउ अचल अखंडल।
परब उदधि उमगेउ जनु लखि बिधुमंडल ॥६३॥
प्रमुदित गे अगवान बिलोकि बरातहि।
भभरे बनइ न रहत न बनइ परातहि॥
चले भाजि गज बाजि फिरहिँ नहिँ फेरत।
बालक भभरि भुलान फिरहिँ घर हेरत ॥६४॥
दीन्ह जाइ जनवास सुपास किये सब।
घर घर बालक बात कहन लागे तब॥

जान=रथ। गहागह=धूम के साथ। बसह=बैल। बिधुभूषन=शिव। पसुपति=शिव। गजछाल=गजचर्म। भभरे=डरे।

प्रेत बेताल बराती भूत भयानक ।
बरद चढ़ा बर बाउर सबइ सुबानक ॥६५॥
कुसल करइ करतार कहहिँ हम साँचिय ।
देखब कोटि बियाह जियत जो बाँचिय ॥
समाचार सुनि सोच भयउ मन मैनहिँ ।
नारद के उपदेस कवन घर गे नहिँ ? ॥६६॥
ह० छं०–घरघाल चालक कलहप्रिय कहियत परम परमारथी ।
तैसी बरेखी कीन्हि पुनि मुनिसात स्वारथ सारथी ॥
उर लाइ उमहिँ अनेक बिधि जलपति जननि दुख मानई ॥
हिमवान कहेउ इसान महिमा, अगम निगम न जानई ॥६७॥
सुनि मैना भइ सुमन सखी देखन चली ।
जहँ तहँ चरचा चलइ हाट चौहट गली ॥
श्रीपति सुरपति बिबुध बात सब सुनि सुनि ।
हँसहिँ कमल कर जोरि मोरि मुख पुनि पुनि ॥६८॥
लखि लौकिक गति सम्भु जानि बड़ सोहर ।
भये सुन्दर सतकोटि मनोज मनोहर ॥
नील निचोल छाल भइ फनि मनि भूषन ।
रोम रोम पर उदित रूपमय पूषन ॥६९॥
गन भये मङ्गलबेष मदन-मन- मोहन ।
सुनत चले हिय हरषि नारि नर जोहन ॥
सम्भु सरद-राकेस नखतगन सुरगन ।
जनु चकोर चहुँ ओर बिराजहिँ पुरजन ॥७०॥
गिरिबर पठये बोलि लगन बेरा भइ ।
मङ्गल अरघ पाँवड़े देत चले लइ ॥

सुवानक=अच्छा बनाव । चालक=धूर्त । बरेखी=वर की इच्छा । इसान=शिव । सुमन=प्रसन्न । सोहर=मंगल, उत्सव । निचोल=वस्त्र । पूषन=सूर्य ।

होहिं सुमङ्गल सगुन सुमन बरषहिं सुर ।
गहगहे गान निसान मोद मङ्गल पुर ॥७१॥

पहिलिहि पँवरिसुसामध भा सुखदायक ।
इत बिधि उत हिमवान सरिस सब लायक ॥
मनि चामीकर चारु थार सजि आरति ।
रति सिहाहिं लखि रूप गान सुनि भारति ॥७२॥

भरी भाग अनुराग पुलकतन मुदमन ।
मदनमत्त गजगवनि चलीं बर परिछन
बर बिलोकि बिधुगौर सुअङ्ग उजागर ।
करति आरती सासु मगन सुखसागर ॥७३॥

ह० छं–सुखसिन्धु मगन उतारि आरति, करि निछावरि निरखि कै ।
मग अरघ बसन प्रसून भरि लेइ, चलीं मंडप हरखि कै ॥
हिमवान दीन्हेउ उचित आसन, सकल सुर सनमानि कै ।
तेहि समय साज समाज सब राखे सुमंडप आनि कै ॥७४॥

अरघ देइ मनिआसन बर बैठायउ ।
पूजि कीन्ह मधुपर्क अमी अँचवायउ ॥
सपतरिपिन्ह बिधि कहेउ बिलम्ब न लाइय ।
लगन बेर भइ बेगि बिधान बनाइय ॥७५॥

थापि अनल हर बरहि बसन पहिरायउ ।
आवहु दुलहिनि बेगि समउ अब आयउ ॥
सखो सुआसिनि सङ्ग गौरि सुठि सोहति ।
प्रगट रूपमय मूरति जनु जग मोहति ॥७६॥

भूषन बसन समय सम सोभा सो भली ।
सुखमा बेलि नवल जनु रूप फलनि फली ॥

चामीकर=सुवर्ण। बिधु=चन्द्रमा। मधुपर्क=घी और मधु एक एक भाग तथा दही तीन भाग मिलाने से मधुपर्क कहाता है। सुआसिनि=सुहागिनी।

कहहु काहि पटतरिय गौरि गुन रूपहि ।
सिन्धु कहिय केहि भाँति सरिस सर कूपहि ॥७७॥
आवत उमहिँ बिलोकि सीस सुर नावहिँ ।
भये कृतारथ जनम जानि सुख पावहिँ ॥
बिप्र बेदधुनि करहिँ सुभासिष कहिकहि ।
गान निसान सुमन झरि अवसर लहि लहि ॥७८॥
बर दुलहिनिहि बिलोकि सकल मन रहसहिँ ।
साखोच्चार समय सब सुर मुनि बिहँसहिँ
लोक बेद बिधि कीन्ह लीन्ह जल कुस कर ।
कन्यादान सँकलप कीन्ह धरनीधर ॥७९॥
पूजे कुलगुरु देव कलस सिल सुभ घरी ।
लावा होम बिधान बहुरि भाँवरि परी ॥
बन्दन बन्दि ग्रन्थि बिधि करि धुव देखेउ ।
भा बिबाह सब कहहिँ जनमफल पेखेउ ॥८०॥
ह० छं०—पेखेउ जनमफल भा बियाह उछाह उमगहिँ दस दिसा ।
नीसान गान प्रसून झरि तुलसी सुहावनि सो निसा ॥
दाइज बसन मनि धेनु धन हय, गय सुसेवक सेवकी ॥
दीन्हीं मुदित गिरिराज जे गिरिजहि पियारी पेव की ॥८१॥
बहुरि बराती मुदित चले जनवासहि ।
दूलह दुलहिनि गे तब हास अवासहि ॥
रोकि द्वार मैना तब कौतुक कीन्हेउ ।
करि लहकौरि गौरि हर बड़ सुख दीन्हेउ ॥८२॥
जुआ खेलावत गारि देहिँ गिरिनारिहि ।
अपनी ओर निहारि प्रमोद पुरारिहि ॥

रहसहिँ=प्रसन्न होते हैं। गय=हाथी। पेव=प्रेम। अवास=घर, कोहबर का गेह। लहकौरि=
गुड़ या बतासे का ग्रास।

सखी सुआसिनि सासु पाउ सुख सब बिधि ।
जनवासहि बर चलेउ सकल मङ्गलनिधि ॥८३॥

भइ जेवनार बहोरि बुलाइ सकल सुर ।
बैठाये गिरिराज धरम-धरनी-धुर ॥
परुसन लगे सुआर बिबुध जन जेवहिँ ।
देहिँ गारि बर नारि मोद मन भेवहिँ ॥८४॥

करहिँ सुमङ्गल गान सुघर सहनाइन्ह ।
जेइँ चले हरि दुहिन सहित सुर भाइन्ह ॥
भूधर भोर बिदा कर साज सजायउ ।
चले देव सजि जान निसान बजायउ ॥८५॥

सनमाने सुर सकल दीन्ह पहिरावनि ।
कीन्हि बड़ाई बिनय सनेह सुहावनि ॥
गहि सिव-पद कह सासु बिनय मृदु मानबि ।
गौरि सजीवनिमूरि मोरि जिय जानबि ॥८६॥

भेँटि बिदा करि बहुरि भेँटि पहुँचावहिँ ।
हुँकरि हुँकरि सुलवाइ धेनु जनु धावहिँ ॥
उमा मातु मुख निरखि नयन जल मोचहिँ ।
नारि जनम जग जाय सखी कहि सोचहिँ ॥८७॥

भेँटि उमहिँ गिरिराज सहित सुत परिजन ।
बहु समुझाइ बुझाइ फिरे बिलखित मन ॥
सङ्कर गौरि समेत गये कैलासहि ।
नाइ नाइ सिर देव चले निज बासहि ॥८८॥

उमा महेस बियाह-उछाह भुवन भरे ।
सब के सकल मनोरथ बिधि पूरन करे ॥

सुआर=रसोईदार। दुहिन=ब्रह्मा। लवाइ=तुरन्त की ब्याई हुई गौ।

प्रेमपाट पट डोरि गौरि-हर गुन मनि।
मङ्गल हार रचेउ कवि मति मृगलोचनि ॥८९॥
ह० छं०—मृगनयनि बिधुबदनी रचेउ मनि,-मञ्जु मङ्गल हार सो।
उर धरहु जुबतीजन बिलोकि तिलोक-सोभा-सार सो ॥
कल्यान काज उछाह ब्याह सनेह सहित जो गाइहैं।
तुलसी उमा-सङ्कर-प्रसाद प्रमोद मन प्रिय पाइहैं ॥९०॥

इति शुभम्

जानकी-मङ्गल

मंगल छंद

गुरु गनपति गिरिजापति गौरि गिरापति ।
सारद सेष सुकवि स्रुति संत सरल मति ॥
हाथ जोरि करि बिनय सबहि सिर नावौं ।
सिय-रघुबीर-बिवाह यथामति गावौं ॥१॥
सुभ दिन रच्यौ स्वयंबर मंगलदायक ।
सुनत स्रवन हिय बसहिं सीय-रघुनायक ॥
देस सुहावन पावन बेद बखानिय ।
भूमितिलक सम तिरहुत त्रिभुवन जानिय ॥२॥
तहँ बस नगर जनकपुर परम उजागर ।
सीय लच्छि जहँ प्रगटी सब सुखसागर ॥
जनक नाम तेहि नगर बसै नरनायक ।
सब गुनअवधि न दूसर पटतर लायक ॥३॥
भयउ न होइहि है न जनक सम नरवइ ।
सीय सुता भै जासु सकल मङ्गलमइ ॥
नृप लखि कुँवरि सयानि बोलि गुरु परिजन ।
करि मत रचेउ स्वयंबर सिवधनु धरि पन ॥४॥
ह० छं०—पन धरेउ सिवधनु रचि स्वयंबर, अति रुचिर रचना बनी ।
जनु प्रगटि चतुरानन देखाई, चतुरता सब आपनी ॥
पुनि देस देस सँदेस पठयउ, भूप सुनि सुख पावहीं ।
सब साजि साजि समाज राजा, जनक-नगरहिं आवहीं ॥५॥

उजागर=विख्यात। लच्छि=लक्ष्मी। पटतर=बराबरी।

रूप सील बय बंस बिरुद बल दल भले ।
मनहुँ पुरंदरनिकर उतरि अवनी चले ॥
दानव देव निसाचर किन्नर अहिगन ।
सुनि धरि धरि नृपबेष चले प्रमुदित मन ॥६॥

एक चलहिँ एक बीच एक पुर पैठहिँ ।
एक धरहिँ धनु धाइ नाइ सिर बैठहिँ ॥
रंगभूमि पुर कौतुक एक निहारहिँ ।
ललकि लोभाहिँ नयन मन फेरि न पारहिँ ॥७॥

जनकहि एक सिहाहिँ देखि सनमानत ।
बाहर भीतर भीर न बनै बखानत ॥
गान निसान कोलाहल कौतुक जहँ तहँ ।
सीय-बियाह-उछाह जाइ कहि का पहँ ? ॥८॥

गाधिसुवन तेहि अवसर अवध सिधायउ ।
नृपति कीन्ह सनमान भवन लै आयउ ॥
पूजि पहुनई कीन्हि पाइ प्रिय पाहुन ।
कहेउ भूप मोहिँ सरिस सुकृत किये काहु न ॥९॥

ह० छं०-काहू न कीन्हेउ सुकृत सुनि मुनि, मुदित नृपहि बखानहीं ।
महिपाल मुनि को मिलनसुख महिपाल मुनि मन जानहीं ॥
अनुराग भाग सोहाग सील, सरूप बहु भूषन भरीं ।
हिय हरषि सुतन्ह समेत रानी, आइ ऋषिपायन्ह परीं ॥१०॥

कौसिक दीन्हि असीस सकल प्रमुदित भईं ।
सींची मनहुँ सुधारस कलपलता नईं ॥
रामहिँ भाइन्ह सहित जबहिँ मुनि जोहेउ ।
नैन नीर तनु पुलक रूप मन मोहेउ ॥११॥

बय=अवस्था । पुरन्दर=इन्द्र । ललकि=ललचाकर । कोलाहल=हल्लागुल्ला ।

परसि कमलकर सीस हरषि हिय लावहिँ ।
प्रेमपयोधि-मगन मुनि पार न पावहिँ ॥
मधुर मनोहर मूरति सादर चाहहिँ ।
बार बार दसरथ के सुकृत सराहहिँ ॥१२॥

राउ कहेउ कर जोरि सुबचन सुहावन ॥
भयउँ कृतारथ आजु देखि पद पावन ॥
तुम्ह प्रभु पूरनकाम चारि-फल-दायक ॥
तेहि ते बूझत काज डरौँ मुनिनायक ॥१३॥

कौसिक सुनि नृपबचन सराहेउ राजहि ।
धर्मकथा कहि कहेउ गयउ जेहि काजहि
जबहिँ मुनीस महीसहि काज सुनायउ ।
भयउ सनेह-सत्य-बस उतर न आयउ ॥१४॥

ह० छं०-आयउ न उतरु बसिष्ठ लखि बहु, भाँति नृप समुझायऊ ।
कहि गाधिसुत तपतेज कछु रघुपतिप्रभाउ जनायऊ ॥
धीरज धरेउ गुरुबचन सुनि कर,-जोरि कह कोसलधनी ।
करुनानिधान सुजान प्रभु सौँ, उचित नहिँ बिनती घनी ॥१५॥

नाथ मोहिँ बालकन्ह सहित पुर परिजन ।
राखनहार तुम्हार अनुग्रह घर बन ॥
दीन बचन बहु भाँति भूप मुनि सन कहे ।
सौँपि राम अरु लखन पाँयपंकज गहे ॥१६॥

पाइ मातु-पितु-आयसु गुरु पाँयन परे ।
कटि निषंग पट पीत, करनि सर धनु धरे ॥
पुरवासी नृप रानिन संग दिये मन ।
बेगि फिरेउ करि काज कुसल रघुनंदन ॥१७॥

कटि=कमर । निषंग=तरकस ।

ईस मनाइ असीसहिँ जय जस पावहु ।
न्हात खसै जनि बार, गहरु जनि लावहु ॥
चलत सकल पुरलोग वियोग बिकल भये ।
सानुज भरत सप्रेम राम पाँयन नये ॥१८॥
होहिँ सगुन सुभ मंगल जनु कहि दीन्हेउ ।
राम लखन मुनि साथ गवन तब कीन्हेउ ॥
स्यामल गौर किसोर मनोहरतानिधि ।
सुखमा सकल सकेलि मनहुँ बिरचे बिधि ॥१९॥
ह० छं०—बिरचे बिरंचि बनाइ बाँची, रुचिरता रंचौ नहीं ।
दसचारि भुवन निहारि देखि बिचारि नहिँ उपमा कहीं ।
रिषि संग सोहत जात मग छबि, बसति सो तुलसी हिये ।
कियो गमन जनु दिननाथ उत्तर, संग मधु माधव लिये ॥२०॥
गिरि तरु बेलि सरित सर बिपुल बिलोकहिँ ।
धावहिँ बाल सुभाय बिहँग मृग रोकहिँ ॥
सकुचहिँ मुनिहि सभीत बहुरि फिरि आवहिँ ।
तोरि फूल फल किसलय माल बनावहिँ ॥२१॥
देखि बिनोद प्रमोद प्रेम कौसिक उर ।
करत जाहिँ घन छाँह सुमन बरषहिँ सुर ॥
बधी ताड़का राम जानि सब लायक ।
बिद्या-मंत्र-रहस्य दिये मुनिनायक ॥२२॥
मग-लोगन्ह के करत सफल मन लोचन ।
गये कौसिक आस्रमहिँ बिप्र-भय-मोचन ॥
मारि निसाचर-निकर यज्ञ करवायउ ।
अभय किये मुनिबृन्द जगत जस गायउ ॥२३॥

खसै=बीतै, चलाजाय। गहरु=विलम्ब । रंचौ=थोड़ी भी। दिननाथ=सूर्य। मधु=वसन्त। माधव=बैशाख। किसलय=कोमल पत्ते।

बिप्र साधु सुरकाज महामुनि मन धरि।
रामहिँ चले लिवाइ धनुषमख मिसु करि॥
गौतमनारि उधारि पठै पतिधामहिँ।
जनकनगर लै गयउ महामुनि रामहिँ॥२४॥

ह० छं०-लै गयउ रामहिँ गाधिसुवन बिलोकि पुर हरषे हिये।
सुनि राउ आगे लेन आयउ, सचिव गुरु भूसुर लिये॥
नृप गहे पाँय असीस पाई, मान आदर अति किये।
अवलोकि रामहिँ अनुभवत मनु, ब्रह्मसुख सौगुन दिये॥२५॥

देखि मनोहर मूरति मन अनुरागेउ।
बँधेउ सनेह बिदेह, बिराग बिरागेउ॥
प्रमुदित हृदय सराहत भल भवसागर।
जहँ उपजहिँ अस मानिक, बिधि बड़ नागर॥२६॥

पुन्यपयोधि मातुपितु ये सिसु सुरतरु।
रूप-सुधा-सुख देत नयन अमरनि बरु॥
केहि सुकृती के कुँवर कहिय मुनिनायक।
गौर स्याम छबिधाम धरे धनुसायक॥२७॥

विषयविमुख मन मोर सेइ परमारथ।
इन्हहिं देखि भयो मगन जानि बड़ स्वारथ॥
कहेउ सप्रेम पुलकि मुनि सुनि महिपालक।
ये परमारथरूप ब्रह्ममय बालक॥२८॥

पूषन-बंस-बिभूषन दसरथनन्दन।
नाम राम अरु लखन सुरारिनिकंदन॥
रूप सील बय बंस राम परिपूरन।
समुझि कठिन पन आपन लाग बिसूरन॥२९॥

मनु=मानो। नागर=चतुर। सुरारि=राक्षस। निकन्दन=नाशक। बिसूरन=सोच करना।

ह० छं०-लागे बिसूरन समुझि पन मन, बहुरि धीरज आनि कै।
लै चलि देखावन रंगभूमि अनेक बिधि सनमानि कै॥
कौसिक सराही रुचिर रचना, जनक सुनि हरषित भये।
तब राम लखन समेत मुनि कहँ, सुभग सिंहासन दये॥३०॥

राजत राजसमाज जुगल रघुकुलमनि।
मनहुँ सरदविधु उभय नखत धरनीधनि॥
काकपच्छ सिर सुभग सरोरुहलोचन।
गौर स्याम सत-कोटि काम-मद-मोचन॥३१॥

तिलक ललित सर भृकुटी काम-कमानै।
स्रवन बिभूषन रुचिर देखि मन मानै॥
नासा चिबुक कपोल अधर रद सुंदर।
बदन सरद-बिधु-निन्दक सहज मनोहर॥३२॥

उर बिसाल बृषकंध सुभग भुज अति बल।
पीत बसन उपबीत कंठ मुकुताफल॥
कटि निषंग कर-कमलन्हि धरे धनुसायक।
सकल अंग मनमोहन जोहन लायक॥३३॥

राम-लखन-छबि देखि मगन भये पुरजन।
उर आनँद जल लोचन प्रेम पुलक तन॥
नारि परस्पर कहहिं देखि दुहुँ भाइन्ह।
लहेउ जनम फल आजु जनमि जग आइन्ह॥३४॥

ह० छं०-जग जनमि लोचनलाहु पाये, सकल सिवहि मनावहीं।
बर मिलै सीतहि साँवरो हम, हरषि मंगल गावहीं॥
एक कहहिं कुँवर किसोर कुलिस-कठोर सिवधनु है महा।
किमि लेहिं बालमराल मंदर, नृपहिं अस काहु न कहा॥३५॥

काकपच्छ=कुल्ला, जुल्फ़। चिबुक=ठोढ़ी। बदन=मुख। कुलिस=वज्र। मराल=हंस।

भे निरास सब भूप बिलोकत रामहिँ ।
पन परिहरि सिय देब जनक बर श्यामहिँ ॥
कहहिँ एक भलि बात, ब्याह भल होइहि ।
बर दुलहिनि लगि जनक अपन पन खोइहि ॥३६॥

सुचि सुजान नृप कहहिँ हमहिँ अस सूझइ ।
तेज प्रताप रूप जहँ तहँ बल-बूझइ ॥
चितइ न सकहु रामतन गाउ बजावहु ।
बिधि बस बलउ लजान सुमति न लजावहु ॥३७॥

अवसि राम के उठत सरासन टूटिहि ।
गवनिहि राजसमाज नाक असि फूटिहि ॥
कस न पियहु भरि लोचन रूप-सुधा-रसु ।
करहु कृतारथ जनम होहु कत नरपसु ॥३८॥

दुहुँ दिसि राजकुमार बिराजत मुनिबर ।
नील पीत पाथोज बीच जनु दिनकर ॥
काकपच्छ रिषि परसत पानि सरोजनि ।
लाल कमल जनु लालत बालमनोजनि ॥३९॥

ह०छं०—मनसिज मनोहर मधुर मूरति, कस न सादर जोवहू ।
बिनु काज राजसमाज महँ तजि, लाज आपु बिगोवहू ।
सिख देइ भूपनि साधुभूप अनूप छबि देखन लगे ।
रघुबंस कैरवचंद चितइ चकोर जिमि लोचन ठगे ॥४०॥

पुर-नर-नारि निहारहिँ रघुकुलदीपहि ।
दोस नेहबस देहिँ बिदेह महीपहि ॥
एक कहहिँ भल भूप देहु जनि दूषन ।
नृप न सोह बिनु बचन नाक बिनु भूषन ॥४१॥

सुधारसु=अमृतरस। पाथोज=कमल। मनसिज=कामदेव। बिगोवहू=नष्ट करते

हमरे जान जनेस बहुत भल कीन्हेउ।
पनमिस लोचनलाहु सबन्हि कहँ दीन्हेउ ॥
अस सुकृती नरनाह जो मन अभिलाषिहि।
सो पुरइहि जगदीस पैज पन राखिहि ॥४२॥

प्रथम सुनत जो राउ राम-गुन-रूपहि।
बोलि ब्याहि सिय देत दोष नहिँ भूपहि ॥
अब करि पैज पंच महँ जो पन त्यागै।
बिधिगति जानि न जाइ, अजसु जग जागै ॥४३॥

अजहुँ अवसि रघुनन्दन चाप चढ़ाउब।
ब्याह उछाह सुमङ्गल त्रिभुवन गाउब ॥
लागि झरोखन्ह झाँकहिँ भूपतिभामिनि।
कहत बचन रद लसहिँ दमक जनु दामिनि ॥४४॥

ह०छंद–जनु दमक दामिनि रूप रति मृदु, निदरि सुन्दरि सोहहीं।
मुनि ढिग देखाये सखिन्ह कुँवर बिलोकि छबि मन मोहहीं ॥
सियमातु हरषी निरखि सुखमा, अति अलौकिक राम की।
हिय कहति कहँ धनु कुँवर कहँ बिपरीत गति बिधि बाम की ॥४५॥

कहि प्रिय बचन सखिन्ह सन रानि बिसूरति।
कहाँ कठिन सिवधनुष कहाँ मृदु मूरति ॥
जो बिधि लोचनअतिथि करत नहिँ रामहिँ।
तौ कोउ नृपहि न देत दोस परिनामहिँ ॥४६॥

अब असमंजस भयउ न कछु कहि आवै।
रानिहि जानि ससोच सखी समुझावै ॥
देबि! सोच परिहरिय, हरष हिय आनिय।
चाप चढ़ाउब राम बचन फुर मानिय ॥४७॥

जनेस=राजा। रद=दाँत। दमक=चमक। बिसूरति=सोच करती है।

तीनि काल कर ज्ञान कौसिकहि करतल ।
सो कि स्वयंबर आनहि बालक बिनु बल ? ॥
मुनिमहिमा सुनि रानिहि धीरज आयउ ।
तब सुबाहु-सूदन-जस सखिन सुनायउ ॥४८॥

सुनि जिय भयउ भरोस रानि हिय हरखइ ।
बहुरि निरखि रघुबरहि प्रेम मन करखइ ॥
नृप रानी पुरलोग रामतन चितवहिं ।
मंजु मनोरथ कलस भरहिं अरु रितवहिं ॥४९॥

ह०-छं०-रितवहिं भरहिं धनु निरखि छिन छिन, निरखि रामहिं सोचहीं
नर नारि हरष-विषाद बस हिय, सकल सिवहि सकोचहीं ॥
तब जनक आयसु पाइ कुलगुरु, जानकिहि लै आयऊ ।
सिय रूपरासि निहारि लोचनलाहु लोगन्हि पायऊ ॥५०॥

मङ्गल भूषन बसन मंजु तन सोहहिं ।
देखि मूढ़ महिपाल मोहबस मोहहिं ॥
रूपरासि जेहि ओर सुभाय निहारइ ।
नील-कमल-सर-स्रेनि मयन जनु डारइ ॥५१॥

छिन सीतहि छिन रामहिं पुरजन देखहिं ।
रूप सील वय बंस बिसेष बिसेषहिं
राम दीख जब सीय सीय रघुनायक ।
दोउतन तकि तकि मयन सुधारत सायक ॥५२॥

प्रेम प्रमोद परस्पर प्रगटत गोपहिं ।
जनु हिरदय गुन-ग्राम-थूनि थिर रोपहिं ॥
रामसीय वय समौ सुभाय सुहावन ।
नृप जोवन छवि पुरइ चहत जनु आवन ॥५३॥

करतल=मुट्ठी में । करखइ=खींचता है । सकोचहीं=विनती करता है । मयन=कामदेव । थूनि=टेक, थम्भ ।

सो छबि जाइ न बरनि देखि मन मानै ।
सुधापान करि मूक कि स्वाद बखानै ? ॥
तब बिदेहपन बंदिन्ह प्रगटि सुनायउ ।
उठे भूप आमरषि सगुन नहिँ पायउ ॥५४॥

ह० छं०—नहिँ सगुन पायेउ रहे मिसु करि, एक धनु देखन गये ॥
टकटोरि कपि ज्यौँ नारियर सिर, नाइ सब बैठत भये ॥
इक करहिँ दाप न चाप सज्जन, बचन जिमि टारे टरै ।
नृप नहुष ज्योँ सब के बिलोकत बुद्धिबल बरबस हरै ॥५५॥

देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।
नृपसमाज जनु तुहिन बनजबन मारेउ ॥
कौसिक जनकहि कहेउ देहु अनुसासन ।
देखि भानु-कुल-भानु इसान-सरासन ॥५६॥

मुनिबर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलहि ।
तदपि उचित आचरत पाँच भल बोलहि ॥
बान बान जिमि गयउ गवहिँ दसकन्धर ।
को अवनीतल इन्ह सम बीरधुरंधर ॥५७॥

पारबती-मन सरिस अचल धनुचालक ।
हहिँ पुरारि तेउ एक-नारिब्रत-पालक ॥
सो धनु कहि अवलोकन भूप किसोरहि ।
भेद कि सिरिस सुमन कनकुलिस कठोरहि ॥५८॥

रोम रोम छबि निन्दति सोम मनोजनि ।
देखिय मूरति मलिन करिय मुनि सो जनि ॥
मुनि हँसि कहेउ जनक यह मूरति सो हइ ।
सुमिरत सकृत मोहमल सकल बिछोहइ ॥५९॥

आमरषि=क्रोध करके, ईर्ष्या करके। दाप=क्रोध। बान=बाणासुर। सोम=चन्द्रमा। मनोज=कामदेव।

ह० छं०—सब मल-बिछोहनि जानि मूरति, जनक कौतुक देखहू ।
धनुसिन्धु नृप-बल जल बढ़्यो रघुबरहि कुम्भज लेखहू ॥
सुनि सकुचि सोचहिँ जनक गुरु पद, बन्दि रघुनन्दन चले ।
नहिँ हरष हृदय बिषाद कछु भये सगुन सुभ मङ्गल भले ॥६०॥

बरिसन लगे सुमन सुर दुन्दुभि बाजहिँ ।
मुदित जनक पुर-परिजन नृपगन लाजहिँ ॥
महि महिधरनि लखन कह बलहि बढ़ावन ।
राम चहत सिवचापहि चपरि चढ़ावन ॥६१॥

गये सुभाय राम जब चाप समीपहि ।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपहि ॥
कहि न सकति कछु सकुचनि सिय हिय सोचइ ।
गौरि गनेस गिरीसहि सुमिरि सकोचइ ॥६२॥

होति बिरह-सर मगन देखि रघुनाथहि ।
फरकि बाम भुज नयन देहिँ जनु हाथहि ॥
धीरज धरति सगुन बल रहत सो नाहिँन ।
बर किसोर धनु घोर दइउ नहिँ दाहिन ॥६३॥

अन्तरजामी राम मरम सब जानेउ ।
धनु चढ़ाइ कौतुकहिँ कान लगि तानेउ ॥
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भञ्जेउ ।
जनु मृग-राज-किसोर महा गज गञ्जेउ ॥६४॥

ह०छं०—गञ्जेउ सो गर्जेउ घोर धुनि सुनि, भूमि भूधर लरखरे ।
रघुबीर जस-मुकुता बिपुल सब, भुवन पटु पेटक भरे ॥
हित मुदित अनहित रुदित मुख छबि कहत कबि धनुजाग की ।
जनु भोर चक्क चकोर कैरव, सघन कमल तड़ाग की ॥६५॥

गञ्जेउ=नाश किया । लरखरे=हिले, काँपे । पटु=सुन्दर । पेटक=पिटारा । रुदित=रोते हैं । धनुजाग=धनुषयज्ञ ।

नभ पुर मङ्गल गान निसान गहागहे ।
देखि मनोरथ सुरतरु ललित लहालहे ।
तब उपरोहित कहेउ सखी सब गावत ॥
चलीं लेवाइ जानकिहि भा मनभावत ॥६६॥

कर-कमलनि जयमाल जानकी सोहइ ।
बरनि सकै छबि अतुलित अस कबि को हइ ।
सीय सनेह-सकुच-बस पियतन हेरइ ।
सुरतरु रुख सुरबेलि पवन जनु फेरइ ॥६७॥

लसत ललित करकमल माल पहिरावत ।
कामफन्द जनु चन्दहि बनज फँदावत ॥
राम-सीय छबि निरुपम निरुपम सो दिन ।
सुखसमाज लखि रानिन्ह आनँद छिन छिन ॥६८॥

प्रभुहि माल पहिराइ जानकिहि लै चली ।
सखी मनहुँ बिधु-उदय मुदित कैरव-कली ॥
बरषहिं बिबुध प्रसून हरषि कहि जय जय ।
सुख सनेह भरे भुवन राम गुरु पहिं गय ॥८९॥

ह०छं०—गये राम गुरु पहिं राउ रानी नारि नर आनँद भरे ।
जनु तृषित करि-करिनी-निकर सीतल सुधासागर परे ॥
कौसिकहि पूजि प्रसंसि आयसु पाइ नृप सुख पायऊ ।
लिखि लगन तिलक समाज सजि कुलगुरुहि अवध पठायऊ॥७०॥

गुनि गन बोलि कहेउ नृप माँड़व छावन ।
गावहिं गीत सुआसिनि बाज बधावन ॥
सीय-राम-हित पूजहिं गौरि गनेसहि ।
परिजन पुरजन सहित प्रमोद नरेसहि ॥७१॥

सुरबेलि=कल्पलता । बनज=कमल । सुआसिनि=सौभाग्यवती स्त्रियाँ ।

प्रथम हरदिबेदन करि मङ्गल गावहिँ।
करि कुलरीति कलस थपि तेल चढ़ावहिँ॥
गे मुनि अवध बिलोकि सुसरित नहायउ।
सतानन्द सत-कोटि-नाम-फल पायउ॥७२॥

नृप सुनि आगे आइ पूजि सनमानेउ।
दीन्हि लगन कहि कुसल राउ हरषानेउ।
सुनि पुर भयउ अनन्द बधाव बजावहिँ।
सजहिँ सुमङ्गल कलस बितान बनावहिँ॥७३॥

राउ छाँड़ि सब काज साज सब साजहिँ।
चलेउ बरात बनाइ पूजि गनराजहिँ॥
बाजहिँ ढोल निसान सगुन सुभ पाइन्हि।
सियनैहर जनकौर नगर नियराइन्हि॥७४॥

ह०छं०-नियरानि नगर बरात हरषी, लेन अगवानी गये।
देखत परस्पर मिलत मानत प्रेमपरिपूरन भये॥
आनन्द पुर कौतुक कोलाहल, बनत सो बरनत कहाँ।
लै दियो तहँ जनवास सकल सुपास नित नूतन जहाँ॥७५॥

गे जनवासहि कौसिक रामलखन लिये।
हरषे निरखि बरात प्रेम प्रमुदित हिये।
हृदय लाइ लिये गोद मोद अति भूपहि।
कहि न सकहिँ सत सेष अनन्द अनूपहि॥७६॥

राय कौसिकहि पूजि दान बिप्रन्ह दिये।
राम सुमङ्गल हेतु सकल मङ्गल किये॥
ब्याह-बिभूषन-भूषित भूषन-भूषन।
बिस्वबिलोचन बनजबिकासक पूषन॥७७॥

बितान=चँदोवा, मंडप। निसान=नगारा। जनकौर=जनक नगर। भूषन भूषन=अलंकारों के गहना।। पूषन=सूर्य। आराम=बगीचा।

मध्य बरात बिराजत अति अनुकूलेउ ।
मनहुँ काम आराम कलपतरु फूलेउ ॥
पठई भेंट बिदेह बहुत बहु भाँतिन्ह ।
देखत देव सिहाहिँ अनन्द बरातिन्ह ॥७८॥

वेदबिहित कुलरीति कीन्हि दुहुँ कुलगुर ।
पठई बोलि बरात जनक प्रमुदित उर ॥
जाइ कहेउ पगु धारिय मुनि अवधेसहि ।
चले सुमिरि गुरु गौरि गिरीस गनेसहि ॥७९॥

ह०छं०—चले सुमिरि गुरु सुर सुमन बरषहिँ परे बहु बिधि पाँवड़े ।
सनमानि सब बिधि जनक दसरथ, किये प्रेम कनावड़े ॥
गुन सकल सम समधी परस्पर, मिलत अति आनँद लहे ।
जय धन्य जय जय धन्य धन्य बिलोकि सुर नर मुनि कहे ॥८०॥

तीनि लोक अवलोकहिँ नहिँ उपमा कोउ ।
दसरथ जनक समान जनक दसरथ दोउ ॥
सजहिँ सुमङ्गल साज रहस रनिवासहिँ ।
गान करहिँ पिकबैनि सहित परिहासहिँ ॥८१॥

उमा रमादिक सुरतिय सुनि प्रमुदित भईं ।
कपट नारि-बर-बेष बिरचि मंडप गईं ॥
मङ्गल आरति साजि बरहिँ परिछन चलीं ।
जनु बिगसीं रबि-उदय कनक-पङ्कज-कलीं ॥८२॥

नख सिख सुन्दर रामरूप जब देखहिँ ।
सब इंद्रिन्ह महँ इंद्रबिलोचन लेखहिँ ॥
परम प्रीति कुलरीति करहिँ गजगामिनि ।
नहिँ अघाहिँ अनुराग भाग भरि भामिनि ॥८३॥

पाँवड़ा=पायन्दाज, पैर के नीचे बिछानेवाला वस्त्र। कनावड़े=एहसान से दबइल। रहस=आनन्द। बिगसीं=प्रफुल्लित हुईं।

नेगचारु कहँ नागरि गहरु लगावहिँ ।
निरखि निरखि आनन्द सुलोचनि पावहिँ ॥
करि आरती निछावरि बरहिँ निहारहिँ ।
प्रेममगन प्रमदागन तनु न सम्हारहिँ ॥८४॥

ह० छं०—नहिँ तनु सम्हारहिँ छबि निहारहिँ, निमिषरिपु जनु रन जये ।
चक्कवै-लोचन रामरूप-सुराज-सुख भोगी भये ॥
तब जनक सहित समाज राजहि, उचित रुचिरासन दये ।
कौसिक बसिष्ठहि पूजि पूजे राउ दै अम्बर नये ॥८५॥

देत अरघ रघुबीरहि मंडप लै चलीँ ।
करहिँ सुमङ्गल गान उमँगि आनँद अलीँ ॥
बर बिराज मंडप महँ बिस्व बिमोहइ ।
ऋतु बसन्त बनमध्य मदन जनु सोहइ ॥८६॥

कुल-व्यवहार बेदबिधि चाहिय जहँ जस ।
उपरोहित दोउ करहिँ मुदित मन तहँ तस ॥
बरहि पूजि नृप दीन्ह सुभग सिंहासन ।
चलीँ दुलहिनिहिँ ल्याइ पाइ अनुसासन ॥८७॥

जुवति जुत्थ महँ सीय सुभाइ बिराजइ ।
उपमा कहत लजाइ भारती भाजइ ॥
दुलह दुलहिनिन्ह देखि नारि नर हरषहिँ ।
छिन छिन गान निसान सुमन सुर बरषहिँ ॥८८॥

लै लै नाउँ सुआसिनि मङ्गल गावहिँ ।
कुँवर कुँवरि हित गनपति गौरि पुजावहिँ ॥
अगिनि थापि मिथिलेस कुसोदक लीन्हेउ ।
कन्यादान बिधान सङ्कलप कीन्हेउ ॥८९॥

प्रमदा=स्त्री । अम्बर=वस्त्र । अनुसासन=आज्ञा । सुआसिनि=सौभाग्यवती । कुसोदक=कुशा और जल ।

ह०छं०-सङ्कल्पि सिय रामहिँ समर्पी, सील सुख सोभामई ।
जिमि सङ्करहि गिरिराज गिरिजा, हरिहि श्री सागर दई ॥
सिन्दूरबन्दन होम लावा, होन लागी भाँवरी ।
सिलपोहनी करि मोहनी मन, हर्यौ मूरति साँवरी ॥९०॥

यहि बिधि भयो बिबाह उछाह तिहूँ पुर ।
देहिँ असीस मुनीस सुमन बरषहिँ सुर ॥
मन भावत बिधि कीन्ह मुदित भामिनि भइँ ।
बर दुलहिनिहि लेवाइ सखी कोहबर गइँ ॥९१॥

निरखि निछावरि करहिँ बसन मनि छिन छिन ।
जाइ न बरनि बिनोद मोदमय सो दिन ॥
सियभ्राता के समय भोम तहँ आयउ ।
दुरीदुरा करि नेग सुनात जनायउ ॥९२॥

चतुर नारिबर कुँवरिहि रीति सिखावहिँ ।
देहिँ गारि लहकौरि समौ सुख पावहिँ ॥
जुआ खेलावत कौतुक कीन्ह सयानिन्ह ।
जीति-हारि-मिस देहिँ गारि दुहु रानिन्ह ॥९३॥

सीयमातु मन मुदित उतारति आरति ।
को कहि सकइ अनन्द मगन भइ भारति ॥
जुबति जूथ रनिवास रहस-बस यहि बिधि ।
देखि देखि सिय राम सकल मङ्गलनिधि ॥९४॥

ह०छं०-मङ्गलनिधान बिलोकि लोयन,-लाहु लूटति नागरी ।
दइ जनक तीनिहु कुँवरि कुँवर बिबाहि सुनि आनँदभरी ॥
कल्यान मो कल्यान पाइ बितान छबि मन मोहई ।
सुरधेनु ससि सुरमनि सहित मानहुँ कलपतरु सोहई ॥९५॥

दुरीदुरा=छिपीछिपा । लहकौरि=घीशकर का जलपान । लोयन=लोचन ।

जनक-अनुज-तनया दुइ परम मनोरम ।
    जेठि भरत कहँ ब्याहि रूप रति सय सम ॥
सिय लघुभगिनि लखन कहँ रूप-उजागरि ।
    लखन-अनुज श्रुतिकीरति सब-गुन-आगरि ॥९६॥

रामबिवाह समान ब्याह तीनिउ भये ।
    जीवनफल लोचनफल बिधि सब कहँ दये ॥
दाइज भयउ बिबिध बिधि जाइ न सो गनि ।
    दासी दास बाजि गज हेम बसन मनि ॥९७॥

दान मान परमान प्रेम पूरन किये ।
    समधी सहित बरात बिनय बस करि लिये ॥
गे जनवासेहि राउ सङ्ग सुत सुतबहु ।
    जनु पाये फल चारि सहित साधन चहु ॥९८॥

चहुँ प्रकार जेँवनार भई बहु भाँतिन्ह ।
    भोजन करत अवधपति सहित बरातिन्ह ॥
देहिँ गारि बर नारि नाम लै दुहुँ दिसि ।
    जेँवत बढ़ेउ अनन्द सोहावनि सो निसि ॥९९॥

ह०छं०–सो निसि सोहावनि मधुर गावनि, बाजने बाजहिँ भले ।
    नृप कियो भोजन पान पाइ प्रमोद जनवासहि चले ॥
    नट भाट मागध सूत जाचक जस प्रतापहिँ बरनहीं ।
    सानन्द भूसुर-वृन्द मनि गज देत मन करषै नहीं ॥१००॥

करि करि बिनय कछुक दिन राखि बरातिन्ह ।
    जनक कीन्ह पहुनाई अगनित भाँतिन्ह ॥
प्रात बरात चलिहि सुनि भूपतिभामिनि ।
    परि न बिरहबस नींद बीति गइ जामिनि ॥१०१॥

हेम=सोना । जामिनि=रात्रि । खरभर=खलभली । करषै=खिंचे, सिकुड़े ।

खरभर नगर नारि नर बिधिहि मनावहिँ ।
बार बार ससुरारि राम जेहि आवहिँ ॥
सकल चलन के साज जनक साजत भये ।
भाइन्ह सहित राम तब भूपभवन गये ॥१०२॥

सासु उतारि आरती करहिं निछावरि ।
निरखि निरखि हिय हरषहिँ मूरति साँवरि ॥
माँगेउ बिदा राम तब सुनि करुना भरी ।
परिहरि सकुच सप्रेम पुलकि पायन्ह परी ॥१०३॥

सीय सहित सब सुता सौँपि कर जोरहिँ ।
बार बार रघुनाथहिँ निरखि निहोरहिँ ॥
तात तजिय जनि छोह मया राखबि मन ।
अनुचर जानब राउ सहित पुर परिजन ॥१०४॥

ह०छं०–जन जानि करब सनेह बलि कहि, दीन बचन सुनावहीँ ।
अति प्रेम बारहिँ बार रानी, बालकन्हि उर लावहीँ ॥
सिय चलत पुरजन नारि हय गय, बिहँग मृग ब्याकुल भये ।
सुनि बिनय सासु प्रबोधि तब रघुबंसमनि पितु पहिँ गये ॥१०५॥

परेउ निसानहिँ घाउ राउ अवधहि चले ।
सुरगन बरषहिँ सुमन सगुन पावहिँ भले ॥
जनक जानकिहि भेँटि सिखाइ सिखावन ॥
सहित सचिव गुरु बन्धु चले पहुँचावन ॥१०६॥

प्रेम पुलकि कह राय फिरिय अब राजन ।
करत परस्पर बिनय सकल गुनभाजन ॥
कहेउ जनक कर जोरि कीन्ह मोहिँ आपन ॥
रघु-कुल-तिलक सदा तुम्ह उथपनथापन ॥१०७॥

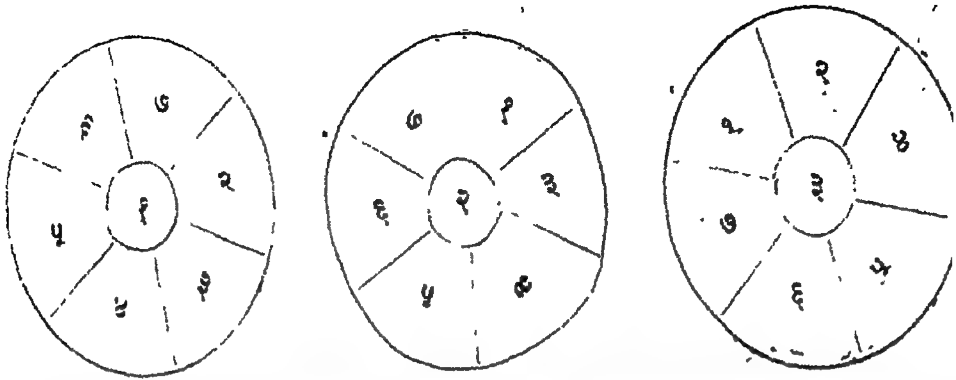
घाउ=चोट । उथपन थापन=विनष्ट को स्थापित करनेवाले ।

बिलग न मानब मोर जो बोलि पठायउँ ॥
प्रभुप्रसाद जस जाति सकल सुख पायउँ ॥
पुनि बसिष्ठ आदिक मुनि बन्दि महीपति ।
गहि कौसिक के पाँय कीन्हि बिनती अति ॥१०८॥
भाइन्ह सहित बहोरि बिनव रघुबीरहि ।
गदगद कंठ नयन जल उर धरि धीरहि ॥
कृपासिन्धु सुखसिन्धु सुजान-सिरोमनि ।
तात! समय सुधि करबि छोह छाड़ब जनि ॥१०९॥
ह० छं०–जनि छोह छाँड़ब बिनय सुनि, रघुबीर बहु बिनती करी ।
मिलि भेंटि सहित सनेह फिरेउ बिदेह मन धीरज धरी ।
सो समो कहत न बनत कछु सब, भुवन भरि करुना रहे ।
तब कीन्ह कोसलपति पयान निसान बाजे गहगहे ॥११०॥
पन्थ मिले भृगुनाथ हाथ फरसा लिये ।
डाटहिँ आँखि देखाइ कोप दारुन किये ॥
राम कीन्ह परितोष रोष रिस परिहरि ।
चले सौंपि सारङ्ग सुफल लोचन करि ॥१११॥
रघुबर-भुज-बल देखि उछाह बरातिन्ह ।
मुदित राउ लखि सन्मुख बिधि सब भाँतिन्ह ॥
एहि बिधि ब्याहि सकल सुत जग जस छायउ ।
मगलोगनि सुख देत अवधपति आयउ ॥११२॥
होहिँ सुमङ्गल सगुन सुमन सुर बरषहिँ ।
नगर कोलाहल भयउ नारि नर हरषहिँ ॥
घाट बाट पुर द्वार बजार बनावहिँ ।
बीथी सींचि सुगन्ध सुमङ्गल गावहिँ ॥११३॥
चौकैं पूरैं चारु कलस ध्वज साजहिँ ।
बिबिध प्रकार गहगहे बाजन बाजहिँ ॥

भृगुनाथ=परसुराम। सारङ्ग=धनुष। गहगहे=गम्भीर ध्वनि के साथ। बीथी=गली।

बन्दनवार बितान पताका घर घर।
रोपैं सफल सपल्लव मङ्गल तरुवर ॥११४॥
ह० छं०–मङ्गल बिटप मंजुल बिपुल दधि दूब अच्छत रोचना।
भरि थार आरति सजहिं सब सारङ्ग-सावक-लोचना॥
मन मुदित कौसल्या सुमित्रा सकल भूपति-भामिनी।
सजि साजि परिछन चलीं रामहिं मत्त-कुञ्जरगामिनी ॥११५॥
बधुन्ह सहित सुत चारिउ मातु निहारहिं
बारहिं बार आरती मुदित उतारहिं॥
करहिं निछावरि छिन छिन मङ्गल मुद भरीं।
दुलह दुलहिनिन्ह देखि प्रेम-पय-निधि परीं ॥११६॥
देत पाँवड़े अरघ चलीं लै सादर।
उमगि चलेउ आनंद भुवन भुइँ बादर॥
नारि उहार उघारि दुलहिनिन्ह देखहिं।
नैनलाहु लहि जनम सफल करि लेखहिं ॥११७॥
भवन आनि सनमानि सकल मङ्गल किये।
बसन कनक मनि धेनु दान बिप्रन्ह दिये॥
जाचक कीन्ह निहाल असीसहिं जहँ तहँ।
पूजे देव पितर सब राम-उदय कहँ ॥११८॥
नेगचार करि दीन्ह सबहि पहिरावनि।
समधी सकल सुआसिनि गुरुतिय पावनि॥
जोरी चारि निहारि असीसत निकसहिं।
मनहुँ कुमुद बिधु-उदय मुदित मन बिकसहिं ॥११९॥
ह० छं०–बिकसहिं कुमुद जिमि देखि बिधु भइ, अवध सुख सोभामई।
एहि जुगुति राजबिबाह गावहिं, सकल कबि कीरति नई॥
उपवीत ब्याह उछाह जे सिय, राम मङ्गल गावहीं।
तुलसी सकल कल्यान ते नर, नारि अनुदिन पावहीं ॥१२०॥

गहगहे=गम्भीर। बितान=मण्डप। रोचन=हल्दी। सारंग=मृग। सावक=बच्चा।



रामाज्ञा-प्रश्नावली से प्रश्न निकालने की रीति

इस पुस्तक में उनचास उनचास दोहे के सात सर्ग हैं। प्रति सर्ग में सात सात दोहों के सात सात सप्तक और प्रत्येक सप्तक में एक से सात पर्यन्त क्रमशः उनकी संख्याएँ हैं। रामाज्ञा का निर्माण गोस्वामीजी ने केवल सगुन विचार के लिये किया है। इच्छितकार्य्य के फलाफल जानने के अर्थ यह सब के लिये सुगम और सच्चा ज्योतिष है। इससे निकाला हुआ प्रश्नोत्तर बहुत सत्य होता है। चाहे किसी कार्य के लिये प्रश्न करना हो, सब प्रकार के प्रश्न इससे किये जा सकते हैं। प्रश्नोत्तर निकालने की रीति ग्रन्थकर्त्ता ने सप्तम सर्ग के सातवें सप्तक में इस प्रकार से वर्णन की है—

अच्छे दिन में सन्ध्यासमय पुष्पार्पण द्वारा पुस्तक को निमंत्रित कर सनियम रह कर दूसरे दिन प्रातःकाल आदर और प्रीति के साथ पोथी का पूजन करके सगुन का विचार करना चाहिये। ऊपर जो कोष्ठक बनाये गये हैं किसी एक अंक पर क्रम से तीनों में एक एक बार उँगली रक्खे। प्रथम बार के अंक को सर्ग, दूसरी बार को सप्तक तथा तीसरी बार को दोहा जानना चाहिये। जैसे—प्रश्नकर्त्ता ने पहली बार ४ दूसरी बार ४ और तीसरी बार भी ४ के अंक पर उँगली रक्खी तो पहला अंक सर्ग, दूसरा सप्तक और तीसरा दोहा है अर्थात् चौथे सर्ग के चौथे सप्तक का चौथा दोहा—"मङ्गलमूरति मोदनिधि, मधुर मनोहर वेष। राम-अनुग्रह पुत्रफल, होइहि सगुन विशेष" यह प्रश्नोत्तर निकला जो सन्तान सम्बन्धी प्रश्न के लिये श्रेष्ठ फलदायक है। इसी प्रकार समस्त सगुन निकालने चाहियें।

ग्रन्थकर्त्ता का कथन है कि जिसके हृदय में जैसी प्रीति और विश्वास है श्रद्धालु प्राणी को सगुन का फल एक, दो वा तीन दिन अथवा तीन मास में सत्य होगा। उन्होंने यह भी कहा है कि जो जिस कार्य के लिये प्रश्न करे; तदनुकूल दोहा निकलने से सगुन का फल अवश्यम्भावी जानना। प्रतिकूल दोहा निकलने पर समझना चाहिये प्रश्नोत्तर रामचन्द्रजी की इच्छा के अन्तर्गत है, उसका फलाफल कुछ भी नहीं है।

इसके अतिरिक्त भी कुछ विद्वानों ने प्रश्नोत्तर निकालने के लिये भिन्न प्रकार की शैली वर्णन की है। यथा—

दोहा—अष्टोत्तर सत कमलफल, मुट्ठी तीनि प्रमान।
सप्त सप्त तजि सेष को, राखै सब बिलगान ॥१॥

प्रथम सर्ग जो सेष रह, दूजे सप्तक होइ।
तीजे दोहा जानिये, सगुन बिचारब सोइ ॥२॥

१०८ कमल के फल लेकर प्रश्नकर्त्ता उसमें से क्रमशः तीन बार एक एक मुट्ठी निकाल कर अलग अलग रक्खे। पहले प्रथम मुट्ठी के बीजों को सात का भाग देकर जो अन्त में शेष रहे उसको सर्ग जाने। उसी प्रकार दूसरी मुट्ठी के कमलगट्टे को सप्तक और तीसरी मुट्ठीवाले को दोहा जान कर सगुन फल निकाले। जैसे—प्रश्नकर्त्ता ने पहली मुट्ठी में ३७ दूसरी में २८ और तीसरी में २४ कमल-गट्टे उठाये, प्रत्येक में सात का भाग देने पर प्रथम में २ शेष बचा वह सर्ग है। दूसरी मुट्ठी में ७ शेष रहा वह सप्तक और तीसरी में ३ शेष रहा वह दोहा है। दूसरे सर्ग में सातवें सप्तक का तीसरा दोहा—"बिटप बेलि फूलहिँ फलहिँ, सीतल सुखद समीर। मुदित बिहँग मृग मधुपगन, बनपालक दोउ बोर" यह प्रश्नोत्तर निकला जो कृषि आदि की वृद्धि और रक्षा सम्बन्ध में श्रेष्ठ है।

इन दोनों रीतियों में प्रथम सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि ग्रन्थकर्त्ता ने उसी का प्रतिपादन किया है और दूसरी मध्यम है पर प्रश्नोत्तर दोनों से ठीक ठीक निकलता है।

रामाज्ञा-प्रश्नावली

प्रथमसर्ग

पहिला-सप्तक

(१)

दोहा—बानि बिनायक अम्ब रबि, गुरु हर रमा रमेस।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, मङ्गल देस बिदेस॥

(२)

गुरु सरसइ सिन्धुरबदन, ससि सुरसरि सुरगाइ।
सुमिरि चलहु मग मुदित मन, होइहि सुकृत सहाइ॥

(३)

गिरा गौरि गुरु गनप हर, मङ्गल मङ्गल मूल।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, होइ ईस अनुकूल॥

(४)

भरत भारती रिपुदवन, गुरु गनेस बुधबार।
सुमिरत सुलभ सुधरम-फल, बिद्या बिनय बिचार॥

(५)

सुरगुरु गुरु सिय राम गन, राउ गिरा उर आनि।
जो कछु करिय सो होइ सुभ, खुलहिं सुमङ्गल खानि॥

(६)

सुक्र सुमिरि गुरु सारदा, गनप लखन हनुमान।
करिय काज सब साज भल, निपटहि नीक निदान॥

बानि=वाणी, सरस्वती। बिनायक=गणेश। अम्ब=पार्वती। रमा=लक्ष्मी। रमेस=विष्णु। सरसइ=सरस्वती। सिन्धुरबदन=गणेश। ससि=चन्द्रमा वा सोमवार। सुरगाइ=कामधेनु। गिरा=वाणी। गनप=गणेश। मङ्गल=मङ्गलवार। भारती=सरस्वती। सुरगुरु=बृहस्पति। गनराउ=गणेश। निपटहि=केवल ही। निदान=आखिर, अन्त में।

(७)

तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरि लखन हनुमान ।
काज बिचारेहु सो करहु, दिन दिन बड़ कल्यान ॥

प्रथमसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०—दसरथ राज न ईति भय, नहिँ दुख दुरित दुकाल ।
प्रमुदित प्रजा प्रसन्न सब, सब सुख सदा सुकाल ॥

(२)

कौसल्यापद नाइ सिर, सुमिरि सुमित्रा पाय ।
करहु काज मङ्गल कुसल, बिधि हरि सम्भु सहाय ॥

(३)

बिधिबस बन मृगया फिरत, दीन्ह अन्धमुनि साप ।
सो सुनि बिपति बिषाद बड़, प्रजहि सोक सन्ताप ॥

(४)

सुत हित बिनती कीन्हि नृप, कुलगुरु कहा उपाउ ।
होइहि भल सन्तान सुनि, प्रमुदित कोसलराउ ॥

(५)

पुत्रजाग करवाइ रिषि, राजहि दीन्ह प्रसाद ।
सकल सुमङ्गल-मूल जग, भूसुर आसिरबाद ॥

(६)

राम जनम घर घर अवध, मङ्गलगान निसान ।
सगुन सुहावन होइ सुत, मङ्गल-मोद निधान ॥

(७)

राम भरत सानुज लखन, दसरथ बालक चारि ।
तुलसी सुमिरत सगुन सुभ, मङ्गल कहब पचारि ॥

तुलसी=कवि । तुलसी=क्षुप विशेष जो विष्णु को प्रिय है । ईति=पीड़ा, दुःख, खेती को हानि पहुँचानेवाले उपद्रव । दुरित=पाप । मृगया=शिकार । पुत्रजाग=पुत्रकामेष्टियज्ञ जो पुत्रप्राप्ति की इच्छा से किया जाता है ।

प्रथमसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

दो०–भूप भवन भाइन्ह सहित, रघुबर बाल-बिनोद।
सुमिरत सब कल्यान जग, पग पग मङ्गल मोद॥

(२)

करनबेध चूड़ाकरन, स्रीरघुबर उपबीत।
समय सकलकल्यानमय, मञ्जुल मङ्गल गीत॥

(३)

भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभसाज सब, मिलहि सुमङ्गल साथ॥

(४)

राम लखन कौसिक सहित, सुमिरहु करहु पयान।
लच्छि लाभ जय जगत जस, मङ्गल सगुन प्रमान॥

(५)

मुनि मखपाल कृपाल प्रभु, चरन-कमल उर आनु।
तजहु सोच सङ्कट मिटिहि, सत्य सगुन जिय जानु॥

(६)

हानि मीच दारिद दुरित, आदि अन्तगत बीच।
राम-बिमुख अघ आपने, गये निसाचर नीच॥

(७)

सिला साप मोचन चरन, सुमिरहु तुलसीदास।
तजहु सोच सङ्कट मिटिहि, पूजिहि मन कै आस॥

प्रथमसर्ग का चौथा-सप्तक

(१)

दो०–सीय-स्वयम्बर समउ भल, सगुन साध सब काज।
कीरति बिजय बिबाह बिधि, सकल सुमङ्गल साज॥

करनबेध=कर्णवेध, कनछेदन। चूड़ाकरन=मुंडन। उपवीत=जनेऊ, उपनयन संस्कार। सिला= अहिल्या, गौतमी। मोचन=छुड़ानेवाला, मुक्त करनेवाला। साध=साध्य, होने योग्य।

(२)

राजत राज-समाज महँ, राम भञ्जि भवचाप।
सगुन सुहावन लाभ बड़, जय पर-सभा प्रताप ॥

(३)

लाभ मोद मङ्गल अवधि, सिय रघुबीर बिबाह।
सकल सिद्धिदायक समउ, सुभ सब काज उछाह ॥

(४)

कोसलपालक बाल उर, सिय मेली जयमाल।
समउ सुहावन सगुन भल, मुद मङ्गल सब काल ॥

(५)

हरषि बिबुध बरषहिँ सुमन, मङ्गल गान निसान।
जय जय रबि-कुल-कमल रबि, मङ्गल-मोद निधान ॥

(६)

सतानन्द पठये जनक, दसरथ सहित समाज।
आये तिरहुति सगुन सुभ, भये सिद्ध सब काज ॥

(७)

दसरथ पूरन परब-बिधु, उदित समय संयोग।
जनकनगर सर कुमुदगन, तुलसी प्रमुदित लोग ॥

प्रथमसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०—मन मलीन मानी महिप, कोक कोकनद बृन्द।
सुहृद-समाज चकोर चित, प्रमुदित परमानन्द ॥

(२)

तेहि अवसर रावन-नगर, असगुन असुभ अपार।
होहिँ हानि-भय-मरन-दुख,-सूचक बारहि बार ॥

भञ्जि=तोड़ कर। शिवचाप=कोदंड, शंकरजी का धनुष। परसभा=दूसरे की सभा। परब-बिधु=पूर्णिमा के चन्द्रमा। मानी=अभिमानी। कोक=चकवापक्षी। कोकनद=कमल।

(३)

मधु माधव दसरथ जनक, मिलब राज रितुराज ।
सगुन सुबन नव दल सुतरु, फूलत फलत सुकाज ॥

(४)

बिनय-पराग सुप्रेम रस, सुमन सुभग सम्बाद ।
कुसुमित काज रसाल तरु, सगुन सुकोकिल-नाद ॥

(५)

उदित भानुकुल-भानु लखि, लुके उलूक नरेस ।
गये गँवाइ गरूर पति, धनु मिस हये महेस ॥

(६)

चारि चारु दसरथ कुँवर, निरखि मुदित पुर लोग ।
कोसलेस मिथिलेस को, समउ सराहन जोग ॥

(७)

एक बितान बिबाहि सब, सुवन सुमङ्गल रूप ।
तुलसी सहित समाज सुख, सुकृत-सिन्धु दोउ भूप ॥

प्रथमसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०-दाइज भयउ अनेक बिधि, सुनि सिहाहिँ दिसिपाल ।
सुख सम्पति सन्तोषमय, सगुन सुमङ्गल-माल ॥

(२)

बर दुलहिनि सब परसपर, मुदित पाइ मनकाम ।
चारु चारि जोरी निरखि, दुहुँ समाज अभिराम ॥

(३)

चारिउ कुँवर बियाहि पुर, गवने दसरथ राउ ।
भये मञ्जु मङ्गल सगुन, गुरु-सुर सम्भु पसाउ ॥

मधु=चैत्रमास। माधव=वैशाख। रितुराज=वसन्त। पराग=धूलि। रस=मकरन्द। रसाल=आम। हये=मारे गये। बितान=मंडप, माँड़व। दाइज=दैजा, दहेज। माला=समूह। अभिराम=आनन्द देनेवाला। मञ्जु=सुन्दर। पसाउ=प्रसाद, कृपा।

(४)

पन्थ परसुधर आगमन, समय सोच सब काहु ।
राजसमाज विषाद बड़, भयबस मिटा उछाहु ॥

(५)

रोष कलुष लोचन भृकुटि, पानि परसु धनु बान ।
काल कराल बिलोकि मुनि, सब समाज बिलखान ॥

(६)

प्रभुहि सौंपि सारङ्ग मुनि, दीन्ह सुआसिरबाद ।
जय-मङ्गल-सूचक सगुन, राम राम सम्बाद ॥

(७)

अवध अनन्द बधावनो, मङ्गल गान निसान ।
तुलसी तोरन कलस पुर, चँवर पताक बितान ॥

प्रथमसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०-साजि सुमङ्गल आरती, रहस बिबस रनिवास ।
मुदित मातु परिछन चलीं, उमगत हृदय हुलास ॥

(२)

करहिं निछावरि आरती, उमगि उमगि अनुराग ।
बर दुलहिनि अनुरूप लखि, सखी सराहहिं भाग ॥

(३)

मुदित नगर नर नारि सब, सगुन सुमङ्गल-मूल ।
जय धुनि मुनि सुर दुन्दुभी, बाजहिं बरषहिं फूल ॥

(४)

आये कोसलपाल पुर, कुसल समाज समेत ।
समउ सुनत सुमिरत सुखद, सकल सिद्धि सुभ देत ॥

कलुष=दोष, मलिनता । कराल=भयंकर । सारङ्ग=विष्णु का धनुष । रामराम=रामचन्द्र और परशुराम । निसान=दुन्दुभी । तोरन=बन्दनवार । पताक=पताका, ध्वजा । बितान=मंडप । रहस=प्रसन्नता, खुशी । हुलास=आनन्द ।

(५)

रूप सील बय बंसगुन, सम बिबाह भये चारि।
मुदित राउ रानी सकल, सानुकूल त्रिपुरारि॥

(६)

बिधि हरि हर अनुकूल अति, दसरथ राजहि आज।
देखि सराहत सिद्ध सुर, सम्पति समउ समाज॥

(७)

सगुन प्रथम उनचास सुभ, तुलसी अति अभिराम।
सब प्रसन्न सुर भूमिसुर, गोगन गङ्गा राम॥

द्वितीयसर्ग

का

पहिला-सप्तक

(१)

दो०—समय राम जुबराज कर, मङ्गल-मोद निकेतु।
सगुन सुहावन सम्पदा, सिद्धि सुमङ्गल हेतु॥

(२)

सुरमाया-बस केकयी, कुसमय कीन्हि कुचालि।
कुटिल नारि मिस होइ छल, अनभल आजु कि कालि॥

(३)

कुसमय कुसगुन कोटि सम, राम सीय बनबास।
अनरथ अनभल अवधिजग, जानब सरबस-नास॥

(४)

सोचत पुर परिजन सकल, बिकल राउ रनिवास।
छल मलीन मन तीय मिस, बिपति बिषाद बिनास॥

(५)

लखन-राम-सिय बनगमन, सकल अमङ्गल-मूल।
सोच पोच सन्ताप सब, कुसमय संसय सूल॥

बय=अवस्था। मिस=बहाना, हीला। पोच=बुरा, ख़राब। सूल=शूल, पीड़ा।

(६)

प्रथम बास सुरसरि-निकट, सेवा कीन्हि निषाद।
कहब सुभासुभ सगुनफल, बिसमय हरष बिषाद॥

(७)

चले नहाइ प्रयाग प्रभु, लखन सीय रघुराज।
तुलसी जानब सगुन फल, होइहि साधु-समाज॥

द्वीतियसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०—सीय राम लोने लखन, तापस-बेष अनूप।
तप तीरथ जप जाग हित, सगुन सुमङ्गल-रूप॥

(२)

सीता लखन समेत प्रभु, जमुना उतरि नहाइ।
चले सकल सङ्कट समन, सगुन सुमङ्गल पाइ॥

(३)

अवध सोक-सन्ताप-बस, बिकल सकल नर नारि।
बाम बिधाता राम बिनु, माँगत मीचु पुकारि॥

(४)

लखन सीय रघुबंसमनि, पथिक पाय उर आनि।
चलहु अगम मग सुगम सुभ, सगुन सुमङ्गल खानि॥

(५)

ग्राम नारि नर मुदित मन, लखन राम सिय देखि।
होइ प्रीति पहिचान बिनु, मान बिदेस बिसेखि॥

(६)

बन मुनिगन रामहिँ मिलहिँ, मुदित सुकृतफल पाइ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, अभिमत होइ अघाइ॥

लोने=सुघर, सुन्दर। समन=नाश। मान=प्रतिष्ठा, इज्ज़त। अभिमत=वाञ्छित, इच्छित फल।

(७)

चित्रकूट पयतीर प्रभु, बसे भानुकुल भानु।
तुलसी तप जप जोग हित, सगुन सुमङ्गल जानु॥

द्वितीयसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

दो०-हंस बंस-अवतंस जब, कीन्ह बास पय-पास।
तापस साधक सिद्ध मुनि, सब कहँ सगुन सुपास॥

(२)

बिटप बेलि फूलहिं फलहिं, जल थल बिमल बिसेखि।
मुदित किरात बिहङ्ग मृग, मङ्गल मूरति देखि॥

(३)

सींचति सीय सरोज कर, बये बिटप बट बेलि।
समय सुकाल किसान हित, सगुन सुमङ्गल केलि॥

(४)

हय हाँके फिरि दखिन दिसि, हेरि हेरि हिहिनात।
भये निषाद बिषाद-बस, अवध सुमन्तहि जात॥

(५)

सचिव सोच ब्याकुल सुनत, असगुन अवध प्रबेस।
समाचार सुनि सोक-बस, माँगी मीचु नरेस॥

(६)

राम राम कहि राम सिय, रामसरन भये राउ।
सुमिरहु सीताराम अब, नाहिंन आन उपाउ॥

(७)

रामबिरह दसरथ मरन, मुनि मन अगम सुमीचु।
तुलसी मङ्गल मरन-तरु, सुचि सनेह जल सींचु॥

हंसवंस=सूर्य्यवंश। अवतंस=भूषण, तिलक। पय=पयस्विनी नदी। बये=बोये, ल
बेलि=लता, वँवरि। केलि=क्रीड़ा, प्रसन्नता।

द्वितीय सर्ग का चौथा-सप्तक

(१)

दो०-धीर बीर रघुबीर प्रिय, सुमिरि समीर कुमार।
अगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि बिचार॥

(२)

सुमिरि सत्रुसूदन-चरन, सगुन सुमङ्गल मानि।
पर पुर बाद-बिबाद जय, जूझ जुआ जय जानि॥

(३)

सेवक सखा सुबन्धु हित, सगुन बिचारु बिसेखि।
भरत नाम गुनगन बिमल, सुमिरि सत्य सब लेखि॥

(४)

साहिब समरथ सील निधि, सेवत सुलभ सुजान।
राम सुमिरि सेइय सुप्रभु, सगुन कहब कल्यान॥

(५)

सुकृत सील सोभा अवधि, सीय सुमङ्गल खानि।
सुमिरि सगुन तियधरम हित, कहबसुमङ्गल जानि॥

(६)

ललित लखन मूरति हृदय, आनि धरे धनु बान।
करहु काज सुभ सगुन सब, मुद मङ्गल कल्यान॥

(७)

राम नाम पर राम ते, प्रीति प्रतीति भरोस।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन सुमङ्गल कोस॥

द्वितीयसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०-गुरु आयसु आये भरत, निरखि नगर नर नारि।
सानुज सोचत पोच बिधि, लोचन मोचत बारि॥

जूझ=युद्ध, लड़ाई। जय=जीत, विजय। सुकृत=पुण्य, उत्तम कृत्य। सील=सदाचार, हद। अवधि=सीमा। ललित=सुन्दर, मनोहर। पर=परे, श्रेष्ठ। कोस=भण्डार, ख़ज़ाना। पोच=निकृष्ट, ख़राब। मोचत=बहाते, डालते।

(२)

भूप-मरन प्रभु-बन-गवन, सब बिधि अवध अनाथ ।
रोवत समुझि कुमातु-कृत, मींजि हाथ धुनि माथ ॥

(३)

बेद-बिहित पितु-करम करि, लिये सङ्ग सब लोग ।
चले चित्रकूटहिँ भरत, ब्याकुल राम-बियोग ॥३॥

(४)

रामदरस हिय हरष बड़, भूपति मरन बिषाद ।
सोचत सकल समाज सुनि, राम भरत सम्बाद ॥

(५)

सुनि सिख आसिष पाँवरी, पाइ नाइ पद माथ ।
चले अवध सन्ताप-बस, बिकल लोग सब साथ ॥

(६)

भरत नेम-ब्रत-धरम सुभ, राम-चरन अनुराग ।
सगुन समुझि साहस करिय, सिद्ध होइ जप-जाग ॥

(७)

चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय लखन समेत ।
रामनाम-जप जापकहि, तुलसी अभिमत देत ॥

द्वितीय सर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०–पय पावनि बनभूमि भलि, सैल सुहावन पीठ ।
रागिहि सीठ बिसेषि थल, बिषय बिरागिहि मीठ ॥

(२)

फटिकसिला मन्दाकिनी, सिय रघुबीर बिहार ।
रामभगत-हित सगुन सुभ, भूतल भगति-भँडार ॥

बिहित=ठीक, करनेयोग्य । पाँवरी=खड़ाऊँ । अभिमत=इष्ट, मनोनीत । रागी=विषयी । सीठ=सीठी, सारहीन वस्तु ।

(३)

सगुन सकल सङ्कट समन, चित्रकूट चलि जाहु ।
सीताराम-प्रसाद सुभ, लघु साधन बड़ लाहु ॥

(४)

दिये अत्रितिय जानकिहि, बसन बिभूषन भूरि ।
रामकृपा सन्तोष सुख, होहिं सकल दुख दूरि ॥

(५)

काककुचालि बिराधबध, देह तजी सरभङ्ग ।
हानि मरन-सूचक सगुन, अनरथ असुभ-प्रसङ्ग ॥

(६)

रामलखन मुनिगन मिलन, मञ्जुल मङ्गल-मूल ।
सतसमाज तब होइ जब, रमा राम अनुकूल ॥

(७)

मिले कुम्भसम्भव मुनिहि, लखन सीय रघुराज ।
तुलसी साधुसमाज सुख, सिद्ध दरस सुभकाज ॥

द्वितीयसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०–सुनि मुनि आयसु प्रभु कियो, पञ्चबटी बन बास ।
भइ महि पावनि परसि पद, भा सब भाँति सुपास ॥

(२)

सरित सरोवर सजल सब, जलज बिपुल बहुरङ्ग ।
समउ सुहावन सगुन सुभ, राजा प्रजा प्रसङ्ग ॥

(३)

बिटप बेलि फूलहिँ फलहिँ, सीतल सुखद समीर ।
मुदित बिहँग मृग मधुपगन, बनपालक दोउ बीर ॥

समन=शान्त करनेवाला, नाशकारी । लाहु=लाभ । असुभप्रसङ्ग=बुराइयों का होना । सतसमाज=साधुमंडली । रमा=लक्ष्मी, सीता । कुम्भसम्भव=अगस्त्यमुनि । समीर=पवन ।

(४)

मोदाकर गोदावरी, बिपिन सुखद सबकाल।
निर्भय मुनि जप तप करहिँ, पालक राम कृपाल॥

(५)

भैंट गीध रघुराज सन, दुहुँ दिसि हृदय हुलास।
सेवक पाइ सुसाहिबहि, साहिब पाइ सुदास॥

(६)

पढ़हिँ पढ़ावहिँ मुनितनय, आगम निगम पुरान।
सगुन सुबिद्या लाभ-हित, जानब समय समान॥

(७)

निज कर सींचति जानकी, तुलसी लाइ रसाल।
सुभ दूती उनचास भलि, बरषा कृषी सुकाल॥

तृतीयसर्ग

का

पहिला-सप्तक

(१)

दो०—दंडकबन पावन करन, चरन-सरोज प्रभाउ।
ऊसर जामहिँ खल तरहिँ, होइ रङ्क तेँ राउ॥

(२)

कपटरूप मन-मलिन गइ, सूपनखा प्रभु पास।
कुसगुन कठिन कुनारि-कृत, कलह कलुष उपहास॥

(३)

नाक कान बिनु बिकल भइ, बिकट कराल कुरूप।
कुसगुन पाउ न देब मग, पग पग कंटक कूप॥

(४)

खर दूषन देखी दुखित, चले साजि सब साज।
अनरथ असगुन अघ असुभ, अनभल अखिल अकाज॥

मोदाकर=आनन्द की खान। रसाल=आम का वृक्ष। दूती=द्वितीय। अखिल=सम्पूर्ण।

(५)

कटु कुठाय करटा रटहिँ, फेकरहिँ फेरु कुभाँति ।
नीचनिसाचर मीच-बस, अनी मोहमद माँति ॥

(६)

राम-रोष-पावक प्रबल, निसिचर सलभ समान ।
लरत परत जरि जरि मरत, भये भसम जग जान ॥

(७)

सीता लखन समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर बरषत सुमन, सगुन सुमङ्गल बास ॥

तृतीयसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०—सुभट सहस चौदह सहित, भाइ काल बस जानि ।
सूपनखा लङ्कहि चली, असुभ अमङ्गल-खानि ॥

(२)

बसन सकल सोनित समल, बिकट बदन गतगात ।
रोवति रावन की सभा, तात मात हा भ्रात ॥

(३)

काल कि मूरति कालिका, कालराति बिकराल ।
बिनु पहिचाने लङ्कपति, सभा समय तेहि काल ॥

(४)

सूपनखा सब भाँति गत, असुभ अमङ्गल-मूल ।
समय साढ़साती सरिस, नृपहि प्रजहि प्रतिकूल ॥

(५)

बरबस गवनत रावनहिँ, असगुन भये अपार ।
नीच गनत नहिँ मीचबस, मिलि मारीच बिचार ॥

कटु=कड़वा । करटा=काला कौआ । फेरु=सियार । अनी=फ़ौज । सलभ=पाँखी । सोनित=रक्त; लोहू । समल=मैला, गन्दा । बिकट=भयंकर । बदन=मुख । गत=खिन्न । गात=शरीर। गत=प्राप्त । साढ़साती=शनि की दशा ।

(६)

इत रावन उत्त राम-कर, मीचु जानि मारीच।
कपट कनकमृग बेष तब, कीन्ह निसाचर नीच॥

(७)

पञ्चबटी बट बिटप तर, सीता लखन समेत।
सोहत तुलसीदास प्रभु, सकल सुमङ्गल देत॥

तृतीयसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

दो०-मायामृग पहिचानि प्रभु, चले सीय रुचि जानि।
वञ्चक चोर प्रपञ्च-कृत, सगुन कहब हितहानि॥

(२)

सीय-हरन अवसर सगुन, भय संसय सन्ताप।
नारि काजहित निपट गत, प्रगट पराभव पाप॥

(३)

गीधराज रावन समर, घायल बीर बिराज।
सूर सुजस संग्राम-महि, मरन सुसाहिब काज॥

(४)

राम लखन बन बन बिकल, फिरत सीय सुधि लेत।
सूचत सगुन बिषाद बड़, असुभ अरिष्ट अचेत॥

(५)

रघुबर बिकल बिहङ्ग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर।
सिय सुधि कहि सियराम कहि, तजी देह मतिधीर॥

(६)

दसरथ तेँ दसगुन भगति, सहित तासु करि काज।
सोचत बन्धु समेत प्रभु, कृपासिन्धु रघुराज॥

(७)

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम।
सगुन सुमङ्गल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम॥

वञ्चक=ठग। पराभव=हार, पराजय। अरिष्ट=दुःख, क्लेश। अचेत=बेहोशी, अज्ञान। विहंग=पक्षी, जटायु। काज=अन्त्येष्टि क्रिया, मृतक कर्म। परिनाम=अन्त।

तृतीयसर्ग का चौथा-सप्तक

(१)

दो०—सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमङ्गल जानु ।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहिँ आनु ।

(२)

सुमिरि सत्रुसूदन-चरन, चलहु करहु सब काज ।
सत्रु पराजय निज बिजय, सगुन सुमङ्गल साज ॥

(३)

भरत नाम सुमिरत मिटहिँ, कपट कलेस कुचालि ।
नीति प्रीति परतीति हित, सगुन सुमङ्गल सालि ॥

(४)

रामनाम कलि कामतरु, सकल सुमङ्गल कन्द ।
सुमिरत करतल सिद्धि जग, पग पग परमानन्द ॥

(५)

सीता-चरन प्रनाम करि, सुमिरि सुनाम सनेम ।
सुतिय होहिँ पतिदेवता, प्राननाथ पिय प्रेम ॥

(६)

लखन ललित मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह ।
सुख सम्पति कीरति बिजय, सगुन सुमङ्गल-गेह ॥

(७)

तुलसी तुलसीमञ्जरी, मङ्गल मञ्जुल मूल ।
देखत सुमिरत सगुन सुभ, कलपलता फल फूल ॥

तृतीयसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०—खलबल अन्ध कबन्ध बस, परे सुबन्धु समेत ।
सगुन सोच सङ्कट कहब, भूत प्रेत दुख देत ॥

बिभूति=ऐश्वर्य, सम्पत्ति । साज=सामान, सामग्री । सालि=युक्त । कन्द=जड़, मेघ । गेह=मकान, स्थान ।

(२)

पाई नीच सुमीचु भलि, मिटा महामुनि साप ।
बिहँग मरन सिय सोच मन, सगुन सभय सन्ताप ॥

(३)

कहि सबरी सब सीय-सुधि, प्रभु सराहि फल खात ।
सोच समय सन्तोष सुनि, सगुन सुमङ्गल बात ॥

(४)

पवनसुवन सन भेँट भइ, भूमिसुता सुधि पाइ ।
सोच विमोचन सगुन सुभ, मिला सुसेवक आइ ॥

(५)

राम लखन हनुमान मन, दुहुँ दिसि परम उछाहु ।
मिला सुसाहिब सेवकहि, प्रभुहि सुसेवक लाहु ॥

(६)

कीन्ह सखा सुग्रीव प्रभु, दीन्हि बाँह रघुबीर ।
सुभ सनेह हित सगुन फल, मिटइ सोच भयभीर ॥

(७)

बली बालि बलसालि दलि, सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपाल को, बिरद गरीब नेवाज ॥

तृतीयसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०—बन्धु बिरोध न कुसल कुल, कुसगुन कोटि कुचालि ।
रावनरबि को राहु सोँ, भयेउ काल बस बालि ॥

(२)

कीन्ह बास बरषा निरखि, गिरिबर सानुज राम ।
काज बिलम्बित सगुन फल, होइहि भल परिनाम ॥

भूमिसुता=जानकी, सीता। सोचबिमोचन=शोक को छुड़ानेवाला, अभय करनेवाला। बाँह=बल, भरोसा। बिरद=बाना, नामवरी। गरीबनेवाज=गरीबों पर मिहरबानी करनेवाला, गरीबपरवर। रावण रूपी सूर्य्य के राहु=रामचन्द्र। परिनाम=अन्त, नतीजा।

(३)

सीय सोध कपि भालु सब, बिदा किये कपिनाथ।
जतन करहु आलस तजहु, नाइ रामपद माथ॥

(४)

हनूमान हिय हरषि तब, राम जोहारे जाइ।
मङ्गल-मूरति मारुतिहि, सादर लीन्ह बुलाइ॥

(५)

डाँटे बानर भालु सब, अवधि गये बिनकाज।
जो आइहि सो कालबस, कोपि कहा कपिराज॥

(६)

जानसिरोमनि जानि जिय, कपि बल-बुद्धि-निधान।
दीन्हि मुद्रिका मुदित प्रभु, पाइ मुदित हनुमान॥

(७)

तुलसी करतल सिद्धि सब, सगुन सुमङ्गल-साज।
करि प्रनाम रामहिँ चलहु, साहस सिद्ध सुकाज॥

तृतीयसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०-नाथ हाथ माथे धरेउ, प्रभु मुँदरी मुँह मेलि।
चलेउ सुमिरि सारङ्गधर, आनिहि सिद्धि सकेलि॥

(२)

सङ्ग नील नल कुमुद गद, जामवन्त जुबराज।
चले रामपद नाइ सिर, सगुन सुमङ्गल-साज॥

(३)

पैठि बिबर मिलि तापसिहि, अचइ पानि फल खाइ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, अभिमत होइ अघाइ॥

सोध=खोज, खबर। जानसिरोमनि=श्रीरामचन्द्रजी। साहस=हिम्मत। सारङ्गधर=विष्णु, रामचन्द्र। सकेलि=बटोर कर, इकट्ठा करके। बिवर=बिल, बाँबी।

(४)

बनचर बिकल बिषाद-बस, देखि उदधि अवगाह ।
असमञ्जस बड़ सगुन गत, बिधिबस होइ निबाह ॥

(५)

सब सभीत सम्पाति लखि, हहरे हृदय हरास ।
कहत परसपर गीध-गति, परिहरि जीवन आस ॥

(६)

नव तनु पाइ देखाइ प्रभु, महिमा कथा सुनाइ ।
धरहु धीर साहस करहु, मुदित सीय-सुधि पाइ ॥

(७)

तुलसी राम प्रभाउ कहि, मुदित चले सम्पाति ।
सुभ तीसर उनचास भल, सगुन सुमङ्गल पाँति ॥

चतुर्थसर्ग

का

पहिला-सप्तक

(१)

दो०—रामजनम सुभ अवध भल, सकल सुकृत सुख सार ।
पुत्रलाभ कल्यान बड़, मङ्गलचार बिचार ॥

(२)

दसरथ कुलगुरु की कृपा, सुतहित जाग कराइ ।
पायस पाइ बिभाग करि, रानिन्ह दीन्ह बुलाइ ॥

(३)

सब सगरभ सोहहिं सदन, सकल सुमङ्गल-खानि ।
तेज प्रताप प्रसन्नता, रूप न जाहिं बखानि ॥

(४)

देखि सुहावन सपन सुभ, सगुन सुमङ्गल पाइ ।
कहहिं भूप सन मुदित मन, हरष न हृदय समाइ ॥

हहरे=डरे, भयभीत हुए । हरास=ताप, दुःख । सार=तत्व । पायस=हव्यान्न, खीर ।

(५)

सपन सगुन सुनि राउ कह, कुलगुरु-आसिरबाद ।
पूजिहि सब मनकामना, सङ्कर गौरि प्रसाद ॥

(६)

मास पाख तिथि जोग सुभ, नखत लगन ग्रह बार ।
सकल सुमङ्गल-मूल जग, राम लीन्ह अवतार ॥

(७)

भरत लखन रिपुदवन सब, सुवन सुमङ्गल-मूल ।
प्रगट भये नृप सुकृतफल, तुलसी बिधि अनुकूल ॥

चतुर्थसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०-घर घर अवध बधावने, मुदित नगर नर नारि ।
बरषि सुमन हरषहिं बिबुध, बिधि त्रिपुरारि मुरारि ॥

(२)

मङ्गल गान निसान नभ, नगर मुदित नर नारि ।
भूप सुकृत सुरतरु निरखि, फरे चारु फल चारि ॥

(३)

पुत्रकाज कल्यान नृप, दिये दान बहु भाँति ।
रहस बिबस रनिवास सब, मुद मङ्गल दिन राति ॥

(४)

अनुदिन अवध बधावने, नित नव मङ्गल मोद ।
मुदित मातु पितु लोग लखि, रघुबर बालबिनोद ॥

(५)

करनबेध चूड़ाकरन, लौकिक बैदिक काज ।
गुरु आयसु भूपति करत, मङ्गल साज समाज ॥

अनुकूल=प्रसन्न । बधावने=बधाई । रहस=आनन्द । अनुदिन=रोजरोज । करनबेध=कर्णछेदन । चूड़ाकरन=मुंडन ।

(६)

राज-अजिर राजत रुचिर, कोसलपालक बाल ।
जानुपानि-चर चरित बर, सगुन सुमङ्गल माल ॥

(७)

लहे मातु-पितु भागबस, सुत जग जलधि ललाम ।
पुत्रलाभ-हित सगुन सुभ, तुलसी सुमिरहु राम ॥

चतुर्थ सर्ग का तीसरा सप्तक

(१)

दो०—बाल बिभूषन बसन धर, धूरि धूसरित अङ्ग ।
बालकेलि रघुबर करत, बालबन्धु सब सङ्ग ॥

(२)

राम भरत लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभ नाम ।
सुमिरत दसरथसुवन सब, पूजिहि सब मनकाम ॥

(३)

नाम ललित लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन भूषन ललित, ललित अनुज सिसु साथ ॥

(४)

सुदिन साधि मङ्गल किये, दिये भूप ब्रतबन्ध ।
अवध बधाव बिलोकि सुर, बरषत सुमन सुगन्ध ॥

(५)

भूपति भूसुर भाट नट, जाचक पुर नर नारि ।
दिये दान सनमानि सब, पूजे कुल अनुहारि ॥

(६)

सखी सुआसिनि बिप्रतिय, सनमानी सब राय ।
ईस मनाय असीस सुभ, देहिँ सनेह सुभाय ॥

राजअजिर=राजा का आँगन । जानुपानि=घुटना और हाथ । चर=चलत । ललाम=सुन्दर, शोभित । धर=धारण किये, पहने । धूसरित=धूल से भरे हुए । सिसु=बालक । भूसुर=ब्राह्मण । सुआसिनी=सुहागिनी ।

(७)

रामकाज कल्यान सब, सगुन सुमङ्गल-मूल ।
चिरजीवहु तुलसीस सब, कहि सुर बरषहिँ फूल ॥

चतुर्थसर्ग का चौथा सप्तक

(१)

दो०--रामजनम सुभकाज सब, कहत देवरिषि आइ ।
सुनि सुनि मन हनुमान के, प्रेम उमग न अमाइ ॥

(२)

भरत स्यामतन राम सम, सब गुन रूपनिधान ।
सेवक सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ॥

(३)

ललित लाहु लोने लखन, लोयन लाहु निहारि ।
सुत ललाम लालहु ललित, लेहु ललकि फल चारि ॥

(४)

मङ्गलमूरति मोदनिधि, मधुर मनोहर वेष ।
राम-अनुग्रह पुत्रफल, होइहि सगुन बिसेष ॥

(५)

सोधत मख महि जनकपुर, सीय सुमङ्गल खानि ।
भूपति पुन्य-पयोधि जनु, रमा प्रगट भइ आनि ॥

(६)

नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमा-सील निकेत ।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमङ्गल देत ॥

(७)

बालक कोसलपाल के, सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मनमानस बसत, मङ्गल मञ्जु मराल ॥

देवरिषि=नारद । लोयन=लोचन । ललकि=चाह से, उमँग कर । मनमानस=मन रूपी मानसरोवर । मञ्जु=सुन्दर । मराल=राजहंस ।

चतुर्थसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०—जनकनन्दिनी जनकपुर, जब तेँ प्रगटीँ आइ।
तब तेँ सब सुख सम्पदा, अधिक अधिक अधिकाइ॥

(२)

सीय स्वयम्बर जनकपुर, सुनि सुनि सकल नरेस।
आये साज समाज सजि, भूषन बसन सुदेस॥

(३)

चले मुदित कौसिक अवध, सगुन सुमङ्गल साथ।
आये सुनि सनमानि गृह, आने कोसलनाथ॥

(४)

सादर सोरह भाँति नृप, पूजि पहुनई कीन्हि।
बिनय बड़ाई देखि मुनि, अभिमत आसिष दीन्हि॥

(५)

मुनि माँगे दसरथ दिये, राम लखन दोउ भाइ।
पाइ सगुन फल सुकृतफल, प्रमुदित चले लेवाइ॥

(६)

स्यामल गौर किसोर बर, धरे तून धनु बान।
सोहत कौसिक सहित मग, मुद मङ्गल कल्यान॥

(७)

सैल सरित सर बाग बन, मृग बिहङ्ग बहुरङ्ग।
तुलसी देखत जात प्रभु, मुदित गाधिसुत सङ्ग॥

चतुर्थसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०—लेत त्रिलोचन लाभ सब, बड़भागी मग लोग।
रामकृपा दरसन सुगम, अगम जाग जप जोग॥

सम्पदा=सम्पत्ति, ऐश्वर्य। सुदेस=अनुकूल। तून=तरकस। गाधिसुत=विश्वामित्र।

(२)

जलद छाँह मृदु मग अवनि, सुखद पवन अनुकूल ।
हरषत बिबुध बिलोकि प्रभु, बरषत सुरतरु फूल ॥

(३)

दले मलिन खल राखि मख, मुनि सिख आसिष दीन्ह ॥
विद्या बिस्वामित्र सब, सुथल समरपित कीन्ह ॥

(४)

अभय किये मुनि राखि मख, धरे बान धनु भाथ ।
धनुमख कौतुक जनकपुर, चले गाधिसुत साथ ॥

(५)

गौतम-तिय तारन चरन,-कमल आनि उर देखु ।
सकल सुमङ्गल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु ॥

(६)

जनक पाइ प्रिय-पाहुने, पूजे पूजन-जोग ।
बालक कोसलपाल के, देखि मगन पुरलोग ॥

(७)

सनमाने आने सदन, पूजे अति अनुराग ।
तुलसी मङ्गल सगुन सुभ, भूरि भलाई भाग ॥

चतुर्थ सर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०-कौसिक के देखन धनुषमख, चले सङ्ग दोउ भाइ ।
कुँवर निरखि पुर नारिनर, मुदित नयनफल पाइ ॥

(२)

भूपसभा भवचाप दलि, राजत राजकिसोर ।
सिद्धि सुमङ्गल सगुन सुभ, जय जय जय सब ओर ॥

अवनि=धरती । मख=यज्ञ । भाथ=तरकस । धनुमख=धनुषयज्ञ । गौतमतिय=अहल्या । तारन=तारनेवाले । पाहुने=मेहमान । सदन=घर ।

(३)

जयजय मञ्जुल माल उर, मङ्गल-मूरति देखि ।
गान निसान प्रसून झरि, मङ्गल मोद बिसेखि ॥

(४)

समाचार सुनि अवधपति, आये सहित समाज ।
प्रीति परसपर मिलत मुद, सगुन सुमङ्गल-साज ॥

(५)

गान निसान बितान बर, बिरचे बिबिध विधान ।
चारि बिबाह उछाह बड़, कुसल काज कलयान ॥

(६)

दाइज पाइ अनेक बिधि, सुत सुतबधुन्ह समेत ।
अवधनाथ आये अवध, सकल सुमङ्गल लेत ॥

(७)

चौथ चारु उनचास पुर, घर घर मङ्गलचार ।
तुलसिहि सबदिन दाहिने, दसरथ राजकुमार ॥

पञ्चमसर्ग

का

पहिला-सप्तक

(१)

दो०-रामनाम कलि कामतरु, रामभगति सुरधेनु ।
सगुन सुमङ्गल-मूल जग, गुरु-पद-पङ्कज रेनु ॥

(२)

जलधि पार मानस अगम, रावन पालित लङ्क ।
सोच बिकल कपि भालु सब, दुहुँ दिसि सङ्कट सङ्क ॥

(३)

जामवन्त हनुमन्त बल, कहा पचारि पचारि ।
राम सुमिरि साहस करिय, मानिय हिये न हारि ॥

प्रसून=फूल । वितान=मण्डप । उछाह, उत्साह । चारु=सुन्दर । दाहिने=अनुकूल, मुवाफ़िक ।

(४)

रामकाज लगि जनम जग, सुनि हरषे हनुमान।
होइ पुत्रफल सगुन सुभ, रामभगत बलवान॥

(५)

कहत उछाह बढ़ाइ कपि, साथी सकल प्रबोधि।
लागत राम-प्रसाद मोहि, गोपद सरिस पयोधि॥

(६)

राखि तोषि सब साथ सुभ, सगुन सुमङ्गल पाइ।
कूदि कुधर चढ़ि आनि उर, सीय सहित दोउ भाइ॥

(७)

हरषि सुमन बरषत बिबुध, सगुन सुमङ्गल होत।
तुलसी प्रभु लङ्घेउ जलधि, प्रभु प्रताप करि पोत॥

पञ्चमसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०-राहुमातु माया-मलिन, मारी मारुतपूत।
समय सगुन मारग मिलहिं, छल मलीन खल धूत।

(२)

पूजा पाइ मिनाक पहिं, सुरसा कपि सम्बाद।
मारग अगम सहाय सुभ, होइहि रामप्रसाद॥

(३)

लङ्का लोलुप लङ्किनी, काली काल कराल।
काल करालहि दीन्हिबलि, कालरूप कपि काल॥

(४)

मसकरूप दसकन्धपुर, निसि कपि घरघर देखि।
सीय बिलोकि असोक तर, हरष बिषाद बिसेखि॥

राहुमातु=सिंहिका। मायामलिन=छलभरी, भ्रष्ट। धूत=धूर्त, ठग। मिनाक=मैनाक पर्वत। लोलुप=लालची।

(५)

फरकत मङ्गल अङ्ग सिय, बाम बिलोचन बाहु।
त्रिजटा सुनि कह सगुन फल, प्रिय सँदेस बड़ लाहु॥

(६)

सगुन समुझि त्रिजटा कहति, सुनु सिय अबहीं आज।
मिलिहि रामसेवक कहिहि, कुसल लखन रघुराज॥

(७)

तुलसी प्रभु गुनगन बरनि, आपनि बात जनाइ।
कुसल खेम सुग्रीवपुर, राम लखन दोउ भाइ॥

पञ्चमसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

दो०—सुरुख जानकी जानि कपि, कहे सकल सङ्केत।
दीन्हि मुद्रिका लीन्हि सिय, प्रीति प्रतीति समेत॥

(२)

पाइ नाथ कर मुद्रिका, सियहिय हरष-बिषाद।
प्राननाथ प्रिय सेवकहि, दीन्ह सुआसिरबाद॥

(३)

नाथ-सपथ पन रोपि कपि, कहत चरन सिर नाइ।
नहिं बिलम्ब जगदम्ब अब, आइ गये दोउ भाइ॥

(४)

समाचार कहि सुनत प्रभु, सानुज सहित सहाय।
आये अब रघुबंसमनि, सोच परिहरिय माय॥

(५)

गये सोच सङ्कट सकल, भये सुदिन जिय जानु।
कौतुक सागर सेतु करि, आये कृपानिधानु॥

सुरुख=सुन्दर रुख, अच्छा मौका। सङ्केत=इशारा सेतु=पुल।

(६)

सकुल सदल जमराजपुर, चलन चहत दसकन्ध ।
काल न देखत कालबस, बीस बिलोचन अन्ध ॥

(७)

आसिष आयसु पाइ कपि, सीयचरन सिर नाइ ।
तुलसी रावन-बाग-फल, खात बराइ बराइ ॥

पञ्चमसर्ग का चौथा सप्तक

(१)

दो०—सूर सिरोमनि साहसी, सुमति समीरकुमार ।
सुमिरत सब सुख सम्पदा, मुद-मङ्गल दातार ॥

(२)

सत्रुसमन पद-पङ्करुह, सुमिरि करहु सब काज ।
कुसल खेम कल्यान सुभ, सगुन सुमङ्गल-साज ॥

(३)

भरत भलाई की अवधि, सील सनेह निधान ।
धरम भगति भायप समय, सगुन कहब कल्यान ॥

(४)

सेवकपाल कृपाल चित, रबिकुल कैरव-चन्द ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, पग पग परमानन्द ॥

(५)

सिय-पद सुमिरि सुतीय-हित, सगुन सुमङ्गल जान ।
स्वामि सोहागिल भाग बड़, पुत्रकाज कल्यान ॥

(६)

लछिमन पद पङ्कज सुमिरि, सगुन सुमङ्गल पाइ ।
जय बिभूति कीरति कुसल, अभिमत लाभ अघाइ ॥

सकुल=कुल के सहित । जमराजपुर=यमपुरा । आयसु=आज्ञा । सत्रुसमन=शत्रुघ्न । भायप=भाईचारा । सोहागिल=सौभाग्यवती । बिभूति=ऐश्वर्य ।

(७)

तुलसी-कानन कमल-बन, सकल सुमङ्गल बास ।
रामभगति हित सगुनसुभ, सुमिरत तुलसीदास ॥

पञ्चमसर्ग का पाँचवाँ सप्तक

(१)

दो०—रूख निपातत खात फल, रच्छक अच्छ निपाति ।
कालरूप बिकराल कपि, सभय निसाचर जाति ॥

(२)

बन उजारि जारेउ नगर, कूदि कूदि कपिनाथ ।
हाहाकार पुकार सब, आरत मारत माथ ॥

(३)

पूँछ बुताइ प्रबोधि सिय, आइ गहे प्रभु पाय ।
खेमकुसल जय जानकी, जय जय जय रघुराय ॥

(४)

सुनि प्रमुदित रघुबंसमनि, सानुज सेन समेत ।
चले सकल मङ्गल सगुन, बिजय सिद्धि कहि देत ॥

(५)

रामपयान निसान नभ, बाजहिँ गाजहिँ बीर ।
सगुन सुमङ्गल समर जय, कीरति कुसल सरीर ॥

(६)

कृपासिन्धु प्रभु सिन्धु सन, माँगेउ पन्थ न देत ।
बिनय न मानहिँ जीव जड़, डाटे नवहिँ अचेत ॥

(७)

लाभ लाभ लोवा कहत, छेमकरी कह छेम ।
चलत बिभीषन सगुन सुनि, तुलसी पुलकत प्रेम ॥

अच्छ=अक्षयकुमार। प्रबोधि=समझाकर। अचेत=जड़, मूर्ख। लोवा=लोमड़ी। छेमकरी=सफ़ेद गलेवाली चिल्होर। छेम=कल्याण।

पञ्चमसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दोहा—पाहि पाहि असरन-सरन, प्रनतपाल रघुराज ।
दियो तिलक लङ्केस कहि, राम गरीबनेवाज ॥

(२)

लङ्क असुभ चरचा चलति, हाट बाट घर घाट ।
रावन सहित समाज अब, जाइहि बारहबाट ॥

(३)

ऊकपात दिकदाह दिन, फेकरहिँ स्वान सियार ।
उदित केतु गतहेतु महि, कम्पति बारहिँ बार ॥

(४)

रामकृपा कपि भालु करि, कौतुक सागर सेतु ।
चले पार बरषत बिबुध, सुमन सुमङ्गल-हेतु ॥

(५)

नीच निसाचर मीच-बस, चले साजि चतुरङ्ग ।
प्रभु-प्रताप-पावक प्रबल, उड़ि उड़ि परत पतङ्ग ॥

(६)

साजि साजि बाहन चलहिँ, जातुधान बलवान ।
असगुन असुभ न गनहिँ गत, आइ काल नियरान ॥

(७)

लरत भालु कपि सुभट सब, निदरि निसाचर घोर ।
सिर पर समरथ राम सो, साहिब तुलसी तोर ॥

पाहि=रक्षा कीजिये । प्रनतपाल=दीनरक्षक । बारहबाट=नष्टभ्रष्ट । ऊकपात=उल्कापात । केतु=पुच्छल तारा । गतहेतु=बिना कारण ।

पञ्चमसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०-मेघनाद अतिकाय भट, परे महोदर खेत ।
रावन भाइ जगाइ तब, कहा प्रसङ्ग अचेत ॥

(२)

उठि बिसाल बिकराल बड़, कुम्भकरन जमुहान ।
लखि सुदेस कपि भालु दल, जनु दुकाल समुहान ॥

(३)

राम-स्याम-बारिद सघन, बसन सुदामिनि-माल ।
बरषत सर हरषत बिबुध, दला दुकाल दयाल ॥

(४)

राम रावनहि परसपर, होति रारि रन घोर ।
लरत पचारि पचारि भट, समर सोर दुहुँ ओर ॥

(५)

बीस बाहु दससीस दलि, खंड खंड तनु कीन्ह ।
सुभट सिरोमनि लङ्कपति, पाछे पाउ न दीन्ह ॥

(६)

बिबुध बजावत दुन्दुभी, हरषत बरषत फूल ।
राम बिराजत जीति रन, सुर सेवक अनुकूल ॥

(७)

लङ्का थापि बिभीषनहिँ, बिबुध बसाइ सुबास ।
तुलसी जय मङ्गल कुसल, सुभ पञ्चम उनचास ॥

अचेत=नादान । सुदेस=अच्छे मौके पर। समुहान=सामने आया । सुदामिनि=सौदामिनी, बिजली । माल=समूह, पंक्ति । दला=नाश किया । रारि=तकरार । पचारि=ललकार कर । सोर=हल्ला । अनुकूल=प्रसन्न । सुबास=सुन्दर स्थान ।

षष्ठसर्ग

का

पहिला-सप्तक

(१)

दो०—रघुबर आयसु अमर पति, अमिय सींचि कपि भालु।
सकल जिआये सगुन सुभ, सुमिरहु राम कृपालु॥

(२)

सादर आनी जानकी, हनूमान प्रभु पास।
प्रीति परसपर समउ सुभ, सगुन सुमङ्गल-बास॥

(३)

सीता-सपथ प्रसङ्ग सुभ, सीतल भयउ कृसानु।
नेम प्रेम ब्रत धरम हित, सगुन सुहावन जानु॥

(४)

सनमाने कपि भालु सब, सादर साजि बिमानु।
सीय सहित सानुज सदल, चले भानु - कुल-भानु॥

(५)

हरषत सुर बरषत सुमन, सगुन सुमङ्गल गान।
अवधनाथ गवने अवध, खेम कुसल कल्यान॥

(६)

सिन्धु सरोवर सरित गिरि, कानन भूमि बिभाग।
राम दिखावत जानकिहि, उमगि उमगि अनुराग॥

(७)

तुलसी मङ्गल सगुन सुभ, कहत जोरि जुग हाथ।
हंस-बंस-अवतंस जय, जय जय जानकिनाथ॥

अमरपति=इन्द्र। अमिय=अमृत। बास=स्थान। सपथ=कसम। प्रसंग=बात। कृसानु=अग्नि। हंसबंस=सूर्य्यवंस। अवतंस=भूषण।

षष्ठसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०-अवध अनन्दित लोग सब, ब्योम बिलोकि बिमानु।
मनहुँ कोकनद कोक मन, मुदित उदित लखि भानु॥

(२)

मिले गुरुहि जन परिजनहि, भेटत भरत सप्रीति।
लखन राम सिय कुसल पुर, आये रिपु रन जीति॥

(३)

उदबस अवध अनाथ सब, अम्ब दसा दुख देखि।
राम लखन सीता सकल, बिकल बिषाद बिसेखि॥

(४)

मिलीं मातु हित मीत गुरु, सनमाने सब लोग।
सगुन समय बिसमय हरष, प्रिय संजोग बियोग॥

(५)

अमर अनन्दित मुनि मुदित, मुदित भुवन दसचारि।
घर घर अवध बधावने, मुदित नगर नर नारि॥

(६)

सुदिन सोधि गुरु बेद बिधि, किये राज-अभिषेक।
सगुन सुमङ्गल सिद्धि सब, दायक दोहा एक॥

(७)

भाँति भाँति उपहार लेइ, मिलत जोहारत भूप।
पहिराये सनमानि सब, तुलसी सगुन अनूप॥

षष्ठसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

दो०-जयधुनि गान निसान सुर, बरषत सुरतरु-फूल।
भये राम राजा अवध, सगुन सुमङ्गल-मूल॥

ब्योम=आकाश। कोकनद=कमल। कोक=चकवा। उदबस=उजाड़। अमर=देवता। उपहार=भेंट, नजर। जोहार=प्रणाम, बन्दगी।

(२)

भातु बिभीषन कीसपति, पूजे सहित समाज ।
भली भाँति सनमानि सब, बिदा किये रघुराज ॥

(३)

रामराज सन्तोष सुख, घर बन सकल सुपास ।
तरु सुरतरु सुरधेनु महि, अभिमत भोग-बिलास ॥

(४)

रामराज सब काज कहँ, नीक एकही आँक ।
सकल सगुन मङ्गल कुसल, होइहि बार न बाँक ॥

(५)

कुम्भकरन रावन सरिस, मेघनाद से बीर ।
ढहे समूह बिसाल तरु, कालनदी के तीर ॥

(६)

सकुल सदल रावन सरिस, कवलित काल कराल ।
सोच पोच असगुन असुभ, जाय जीव जञ्जाल ॥

(७)

अविचल राज बिभीषनहिं, दीन्ह राज रघुराज ।
अजहुँ बिराजत लङ्क पर, तुलसी सहित समाज ॥

षष्ठसर्ग का चौथा-सप्तक

(१)

दो०—मञ्जुल मङ्गल मोदमय, मूरति मारुतपूत ।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल, सुमिरत रघुबर-दूत ॥

(२)

सगुन समय सुमिरत सुखद, भरत आचरन चारु ।
स्वामि-धरम ब्रत प्रेम हित, नेम निबाहनिहारु ॥

कीसपति=सुग्रीव । सुपास=सुबीता । सुरधेनु=कामधेनु । आँक=अक्षर, दृढ़ सिद्धान्त । बाँक=टेढ़ । ढहे=गिरे । कालनदी=मृत्यु रूपिणी सरिता । कवलित=भक्षित, खाया हुआ । कराल=भीषण । पोच=ख़राब । जाय=व्यर्थ । जञ्जाल=झंझट, बन्धन ।

(३)

ललित लखन लघुबन्धु-पद, सुखद सगुन सब काहु ।
सुमिरत सुभ कीरति बिजय, भूमि ग्राम गृह लाहु ॥

(४)

रामचन्द्र-मुख चन्द्रमा, चित चकोर जब होइ ।
रामराज सब काज सुभ, समउ सुहावन सोइ ॥

(५)

भूमिनन्दिनी-पद-पदुम, सुमिरत सुभ सब काज ।
बरषा भलि खेती सुफल, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥

(६)

सेवक सखा सुबन्धु हित, नाइ लखन-पद माथ ।
कीजिय प्रीति प्रतीति सुभ, सगुन सुमङ्गल साथ ॥

(७)

रामनाम रति नाम गति, राम नाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मङ्गल कुसल, तुलसी तुलसीदास ॥

षष्ठसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०–बिप्र एक बालक मृतक, राखेउ रामदुआर ।
दम्पति बिलपत सोक अति, आरत करत पुकार ॥

(२)

राम सोच सङ्कोच बस, सचिव बिकल सन्ताप ।
बालक-मीचु अकाल भइ, रामराज केहि पाप ॥

(३)

बिबुध बिमल बानी गगन, हेतु प्रजा अपचार ।
रामराज परिनाम भल, कीजिय बेगि बिचार ॥

भूमिनन्दिनी = जानकी । पदुम = कमल । सुराज = सुन्दर राज्य । रति = प्रीति । गति = पहुँच । दम्पति = स्त्री पुरुष । आरत = दुखी । अपचार = अनुचित बर्ताव, अत्याचार । परिनाम = नतीजा, फल, अन्त ।

(४)

कोसलपाल कृपाल चित, बालक दीन्ह जिआइ ।
सगुन कुसल कल्यान सुभ, रोगी उठइ नहाइ ॥

(५)

बालक जिया बिलोकि सब,—कहत उठा जनु सोइ ।
सोच-बिमोचन सगुन सुभ, रामकृपा भल होइ ॥

(६)

सिला सुतिय भइ गिरि तरे, मृतक जिये जग जान ।
राम-अनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥

(७)

केवट निसिचर बिहँग मृग, किये साधु सनमानि ।
तुलसी रघुबर की कृपा, सगुन सुमङ्गल-खानि ॥

षष्ठसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०—राम राज राजत सकल, धरम-निरत नर नारि ।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥

(२)

बग उलूक झगरत गये, अवध जहाँ रघुराउ ।
नीक सगुन बिवरिहि झगर, होइहि धरम निआउ ॥

(३)

जती-स्वान सम्बाद सुनि, सगुन कहब जिय जानि ।
हंसबंस-अवतंस पुर, बिलग होत पय पानि ॥

(४)

राम कुचरचा करहिं सब, सीतहिं लाइ कलङ्क ।
सदा अभागी लोग जग, कहत सकोच न सङ्क ॥

सोच विमोचन=सोच छुड़ानेवाला । सिला=अहल्या । तरे=उतराने । पदारथ=अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष । बग=बकुला । बिवरिहि=निपटेगा । निआउ=न्याव, फैसला । जती=सन्यासी । स्वान=कुत्ता ।

(५)

सतीसिरोमनि-सीय तजि, राखि लोग-रुचि राम।
सहे दुसह दुख सगुन गत, प्रिय-बियोग परिनाम॥

(६)

बरन-धरम आस्रम-धरम, निरत सुखी सब लोग।
रामराज मङ्गल सगुन, सुफल जाग जप जोग॥

(७)

बाजिमेध अगनित किये, दिये दान बहु भाँति।
तुलसी राजा राम जग, सगुन सुमङ्गल-पाँति॥

षष्ठसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०—असमञ्जस बड़ सगुन गत, सीता-राम-बियोग।
गवन बिदेस कलेस कलि, हानि पराभव रोग॥

(२)

तियमनि-सिय अपराध बिनु, प्रभु परिहरि पछितात।
रुचइ समाज न राजसुख, मन मलीन कृस गात॥

(३)

पुत्रलाभ लव-कुस-जनम, सगुन सुहावन होइ।
समाचार मङ्गल कुसल, सुखद सुनावइ कोइ॥

(४)

रामसभा लव-कुस ललित, किये राम-गुन गान।
राज-समागम सगुन सुभ, सुजस लाभ सनमान॥

(५)

बालमीकि लव-कुस सहित, आनी सिय सुनि राम।
हृदय हरष जानब प्रथम, सगुन सोक परिनाम॥

निरत=तत्पर। बाजिमेध=अश्वमेध यज्ञ। पाँति=कतार, समूह। असमञ्जस=अंडस। पराभव=हार। कृस=दुर्बल।

(६)

अनरथ असगुन अति असुभ, सीता अवनि प्रबेस ।
समय सोक सन्ताप भय, कहल कलङ्क कलेस ॥

(७)

सुभग सगुन उनचास रस, रामचरितमय चारु ।
रामभगत हित सफल सब, तुलसी बिमल बिचारु ॥

सप्तमसर्ग

का

पहिला सप्तक

(१)

दो०—राम लखन सानुज भरत, सुमिरत सुभ सब काज ।
साहित प्रीति प्रतीति हित, सगुन सकल सुभसाज ॥

(२)

सुख सुदमङ्गल-कुमुद-बिधु, सगुन-सरोरुह भानु ।
करहु काज सब सिद्धि सुभ, आनि हिये हनुमानु ॥

(३)

राजकाज मनि हेम हय, रामरूप रबिबार ।
कहब नीक जयलाभ सुभ, सगुन समय अनुहार ॥

(४)

रस गोरस खेती सकल, बिप्रकाज सुभ साज ।
राम-अनुग्रह सोमदिन, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥

(५)

मङ्गल मङ्गल भूमि हित, नृप हित जय सङ्ग्राम ।
सगुन बिचारब समय सम, करि गुरु चरन प्रनाम ॥

रस=छः। साहित=साहित्य। बिधु=चन्द्रमा। सरोरुह=कमल। हेम=सुवर्ण। रस=रस, दुग्धादि।

(६)

बिपुल बनिज बिद्या बसन, बुध बिसेषि गृहकाज ।
सगुन सुमङ्गल कहब सुभ, सुमिरि सीय रघुराज ॥

(७)

गुरुप्रसाद मङ्गल सकल, रामराज सब काज ।
जज्ञ बिबाह-उछाह ब्रत, सुभ तुलसी सब साज ॥

सप्तमसर्ग का दूसरा-सप्तक

(१)

दो०—सुक्र सुमङ्गल काज सब, कहब सगुन सुभ देखि ।
जन्त्र मन्त्र मनि ओषधी, सहसा सिद्धि बिसेखि ॥

(२)

रामकृपा थिर काज सुभ, सनिबासर बिस्राम ।
लोह महिष गज बनिज भल, सुख सुपास गृह ग्राम ॥

(३)

राहु केतु उलटे चलहिं, असुभ अमङ्गल मूल ।
रुंड मुंड पाखंड प्रिय, असुर अमर प्रतिकूल ॥

(४)

समउ राहु रबि-गहनगत, राजहि प्रजहि कलेस ।
सगुन सोच सङ्कट बिकट, कलह कलुष दुख देस ॥

(५)

राहु सोम सङ्गम बिषम, असगुन उदधि अगाधु ।
ईतिभीति खल दल प्रबल, सीदहिं भूसुर साधु ॥

(६)

सात पाँच ग्रह एक थल, चलहिं बामगति धाम ।
राज बिराजिय समउ गत, सुभ-हित सुमिरहु राम ॥

बनिज=वाणिज्य । महिष=भैंस । रुंड=बिना सिर की देह । अमर=देवता । प्रतिकूल=उलटा, खिलाफ़ । गहनगत=ग्रहण में प्राप्त । बिकट=भयंकर । कलुष=पाप । सोम=चन्द्रमा । सङ्गम=मिलाप । बिषम=कठोर, विपरीत । ईति=कष्ट । भीति=भय । सीदहिँ=दुखी होते हैं ।

(७)

खेती बनि बिद्या बनिज, सेवा सिलिप सुकाज।
तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल राम के राज॥

सप्तमसर्ग का तीसरा-सप्तक

(१)

सुधा साधु सुरतरु सुमन, सुफल सुहावनि बात।
तुलसी सीतापति-भगति, सगुन सुमङ्गल सात॥

(२)

सिद्ध समागम सम्पदा, सदन सरीर सुपास।
सीतानाथ प्रसाद सुभ, सगुन सुमङ्गल-बास॥

(३)

कौसल्या कल्यानमय, मूरति करत प्रनाम।
सगुन सुमङ्गल-काज सुभ, कृपा करहिं सियराम॥

(४)

सुमिरि सुमित्रा नाम जग, जे तिय लेहिं सुनेम।
सुवन लखन रिपुदवन से, पावहिं पति-पद प्रेम॥

(५)

दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान।
धरनि धाम धन धरम सुख, सुत गुन-रूप-निधान॥

(६)

कलह कपट कलि कैकई, सुमिरत काज नसाइ।
हानि मीच दारिद दुरित, असगुन असुभ अघाइ॥

(७)

राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर॥

बनि=मजदूरी,नौकरी। दुरित=पाप

सप्तमसर्ग का चौथा-सप्तक

(१)

दो०—मध्यम दिन मध्यम दसा, मध्यम सकल समाज ।
नाइ माथ रघुनाथ-पद, जानब मध्यम काज ॥

(२)

हित पर बढ़इ बिरोध जब, अनहित पर अनुराग ।
रामबिमुख बिधि बामगत, सगुन अघाइ अभाग ॥

(३)

कृपन देइ पाइय परो, बिन साधन सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि, जो कीजिय सुभ सोइ ॥

(४)

पहिले हित परिनाम गत, बीच बीच भल पोच ।
सगुन कहब अस रामगति, कहबि समेत सकोच ॥

(५)

रमा रमापति गौरि हर, सीताराम सनेह ।
दम्पति-हित सम्पति सकल, सगुन सुमङ्गल गेह ॥

(६)

प्रीति प्रतीति न रामपद, बड़ी आस बड़ लोभ ।
नहिँ सपनेहुँ सन्तोष सुख, जहाँ तहाँ मन छोभ ॥

(७)

पय नहाइ फल खाइ जपु, रामनाम षट मास ।
सगुन सुमङ्गल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥

सप्तमसर्ग का पाँचवाँ-सप्तक

(१)

दो०—बड़ कलेस कारज अलप, बड़ी आस लहु लाहु ।
उदासीन सीतारमन, समय सरिस निरबाहु ॥

बामगत=बामता को प्राप्त। कृपन=सूम, कञ्जूस। परिनामगत=अन्त में। पोच=अनिष्ट, बुरा। छोभ=मनस्ताप।

(२)

दस दिसि दुख दारिद दुरित, दुसह दसा दिन दोष ।
फेरे लोचन राम अब, सनमुख साज सरोष ॥

(३)

खेती बनिज न भीख भलि, अफल उपाय कदम्ब ।
कुसमय जानब बाम बिधि, रामनाम अवलम्ब ॥

(४)

पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब सगुन सुभ, सुमिरत सीताराम ॥

(५)

भागु भाग तजि भालथल, आलस ग्रसे उपाउ ।
असुभ अमङ्गल सगुन सुनि, सरन राम के आउ ॥

(६)

गइ बरषा करषक बिकल, सूखत सालि सुनाज ।
कुसमउ कुसगुन कलह कलि, प्रजहि कलेस कुराज ॥

(७)

तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरहु लखन समेत ।
दिन दिन उदय अनन्द अब, सगुन सुमङ्गल देत ॥

सप्तमसर्ग का छठाँ-सप्तक

(१)

दो०—उदबस अवध-नरेस बिनु, देस दुखी नर नारि ।
राजभङ्ग कुसमाज बड़, गतग्रह-चालि बिचारि ॥

(२)

अवध प्रवेस अनन्द बड़, सगुन सुमङ्गल माल ।
राम-तिलक अवसर कहब, सुख सन्तोष सुकाल ॥

दुरित=पाप, अघ । कदम्ब=समूह । करषक=कृषक, किसान । सालि=धान । सुनाज=सुन्दर अन्न । कलह=लड़ाई, झगड़ा । उदबस=उजाड़, सूना । राजभङ्ग=राजा का मरण, रामचन्द्रजी का राज्यभिषेक भंग होना । माल=समूह ।

(३)

रामराज बाधक बिबुध, कहब सगुन सतिभाउ।
देखि देवकृत दोष दुख, कीजिय उचित उपाउ॥

(४)

मन्द मन्थरा मोह-बस, कुटिल कैकई कीन्ह।
व्याधि बिपति सब देवकृत, समय सगुन कहि दीन्ह॥

(५)

रामबिरह दसरथ दुखित, कहति कैकई काकु।
कुसमय जाय उपाय सब, केवल करम बिपाकु॥

(६)

लखनराम सिय बसत बन, बिरह-बिकल पुरलोग।
समय सगुन कह करमबस, दुख सुख जोग बियोग॥

(७)

तुलसी लाइ रसाल तरु, निज कर सींचत सोय।
कृषी सफलभल सगुन सुभ, समउ कहब कमनीय॥

सप्तमसर्ग का सातवाँ-सप्तक

(१)

दो०—सुदिन साँझ पोथी नेवति, पूजि प्रभात सप्रेम।
सगुन बिचारब चारुमति, सादर सत्य सनेम॥

(२)

मुनिगनि दिनगनि धातुगनि, दोहा देखि बिचारि।
देस काल करता बचन, सगुन समय अनुहारि॥

(३)

सगुन सत्य ससि नयन गुन, अवधि अधिक नयवान।
होइ सुफल सुभ जासु जस, प्रीति प्रतीत प्रमान॥

सतिभाउ=सत्य सत्य। काकु=व्यंग, ताना। करमबिपाकु=कर्म का फल। मुनि=सात। दिन=सात। धातु=सात। नयवान=नीतिमान।

(४)

गुरु गनेश हर गौरि सिय, राम लखन हनुमान।
तुलसी सादर सुमिरि सब, सगुन बिचार बिधान॥

(५)

हनूमान सानुज भरत, राम सीय उर आनि।
लखन सुमिरि तुलसी कहत, सगुन बिचार बखानि॥

(६)

जो जेहि काजहि अनुहरइ, सो दोहा जब होइ।
सगुन समय सब सत्य तब, कहब राम गति गोइ॥

(७)

गुन-बिस्वास बिचित्र-मनि, सगुन मनोहर हार।
तुलसी रघुबर भगत उर, बिलसत बिमल बिचार॥

इतिशुभम्

दोहावली

—:*:—

दोहा

राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥

सीता लखन समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर बरषत सुमन, सगुन सुमङ्गलबास ॥ २ ॥

पञ्चबटी बटबिटप-तरु, सीता-लखन-समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु, सकल सुमङ्गल देत ॥ ३ ॥

चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय-लखन-समेत ।
रामनाम-जप जापकहि, तुलसी अभिमत देत ॥ ४ ॥

पय अहार फल खाइ जपु, रामनाम षट मास ।
सकल सुमङ्गल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥ ५ ॥

रामनाम-मनि-दीप धरु, जीह-देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियार ॥ ६ ॥

हिय निर्गुन नयनन्हि सगुन, रसना राम सुनाम ।
मनहुँ पुरट-सम्पुट लसत, तुलसी ललित ललाम ॥ ७ ॥

सगुन ध्यान रुचि सरस नहिँ, निर्गुन मन ते दूरि ।
तुलसी सुमिरहु राम को, नाम सजीवन-मूरि ॥ ८ ॥

एक छत्र इक मुकुटमनि, सब बरनन पर जोउ ।
तुलसी रघुबर-नाम के, बरन बिराजत दोउ ॥ ९ ॥

अभिमत = इच्छित । पुरट = सोना । सम्पुट = डब्बा । ललित = सुन्दर । ललाम = रत्न, भूषण ।

रामनाम को अङ्क है, सब साधन है सून।
अङ्क गये कछु हाथ नहिँ, अङ्क रहे दसगून ॥ १० ॥
नाम राम को कलपतरु, कलि कल्यान-निवास।
जो सुमिरत भयो भाँग तेँ, तुलसी तुलसीदास ॥ ११ ॥
रामनाम जपि जीह जन, भये सकृत सुखसालि।
तुलसी इहाँ जो आलसी, गयो आजु की कालि ॥ १२ ॥
नाम गरीबनिवाज को, राज देत जन जानि।
तुलसी मन परिहरत नहिँ, घुरबिनिआँ की बानि ॥ १३ ॥
कासी बिधि बसि तनु तजे, हठि तन तजे प्रयाग।
तुलसी जो फल सो सुलभ, रामनाम-अनुराग ॥ १४ ॥
मीठो अरु कठवति भरो, रौताई अरु खेम।
स्वारथ परमारथ सुलभ, रामनाम के प्रेम ॥ १५ ॥
रामनाम सुमिरत सुजस, भाजन भये कुजाति।
कुतरु कुसरु पुर राजमग, लहत भुवन-विख्याति ॥ १६ ॥
स्वारथ सुख सपनेहु अगम, परमारथ न प्रवेस।
रामनाम सुमरित मिटहिं, तुलसी कठिन कलेस ॥ १७ ॥
मोर मोर सब कहँ कहसि, तू को कहु निज नाम।
कै चुप साधहि सुनिसमुझि, कै तुलसी जपु राम ॥ १८ ॥
हम लखि हमहिँ हमार लखु, हम हमार के बीच।
तुलसी अलखहि का लखइ, रामनाम जपु नीच ॥ १९ ॥
रामनाम-अवलम्ब बिनु, परमारथ की आस।
बरषत बारिद-बूँद गहि, चाहत चढ़न अकास ॥ २० ॥
तुलसी हठि हठि कहत नित, चित सुनि हित करि मानि।
लाभ राम सुमिरत बड़ो, बड़ी बिसारे हानि ॥ २१ ॥

सकृत=एक बार। घुरबिनिआँ=घूर (कूड़ाखाने) में पड़े दाने चुननेवाली। रौताई=शूरता। खेम=कु

बिगरी जनम अनेक की, सुधरै अबही आजु ।
होहि राम को नाम जपु, तुलसी तजि कुसमाजु ॥२२॥
प्रीति प्रतीति सुरीति सों, रामनाम जपु राम ।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥२३॥
दम्पति-रस रसना दसन, परिजन बदन सुगेह ।
तुलसी हरहित बरन सिसु, सम्पति सहज-सनेह ॥२४॥
बरषाऋतु रघुपति-भगति, तुलसी सालि सुदास ।
रामनाम वर बरन जुग, सावन भादौं मास ॥२५॥
रामनाम नरकेसरी, कनककसिपु कलिकाल ।
जापकजन प्रह्लाद जिमि, पालिहि दलि सुरसाल ॥२६॥
रामनाम कलि कामतरु, सकल सुमङ्गल कन्द ।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, पग पग परमानन्द ॥२७॥
रामनाम कलि कामतरु, रामभगति सुरधेनु ।
सकल सुमङ्गल मूल जग, गुरुपद-कङ्कज-रेनु ॥२८॥
जथा भूमि सब बीज मय, नखत-निवास अकास ।
रामनाम सब धरम मैं, जानत तुलसीदास ॥२९॥
सकल कामनाहीन जे, रामभगति-रसलीन ।
नाम प्रेम-पीयूष-हृद, तिनहुँ किये मन मीन ॥३०॥
ब्रह्मराम ते नाम बड़, बरदायक बरदानि ।
रामचरित सतकोटि महँ, लिय महेस जिय जानि ॥३१॥
सवरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल, बेद-बिदित गुनगाथ ॥३२॥
रामनाम पर राम तें, प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन-सुमङ्गल-कोस ॥३३॥

हरहित बरन = रामनाम । सुरसाल = राक्षस । रामचरित = रामायण । कोस = भण्डार ।

लङ्क बिभीषन राज कपि, पति मारुति खग मीच ।
लही राम सो नामरति, चाहत तुलसी नीच ॥३४॥
हरन अमङ्गल अघ अखिल, करन सकल कल्यान ।
रामनाम नित कहत हर, गावत बेद पुरान ॥३५॥
तुलसी प्रीति प्रतीति सों, रामनाम-जप-जाग ।
किये होय बिधि दाहिनो, देइ अभागेहि भाग ॥३६॥
जल थल नभ गति अमित अति, अग जग जीव अनेक ।
तुलसी तोसे दीनकहँ, रामनाम-गति एक ॥३७॥
राम भरोसो राम बल, रामनाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मङ्गल कुसल, माँगत तुलसीदास ॥३८॥
रामनाम रति राम गति, रामनाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मङ्गल कुसल, दुहुँ दिसि तुलसीदास ॥३९॥
रसना साँपिन बदन बिल, जे न जपहिं हरिनाम ।
तुलसी प्रेम न राम सों, ताहि बिधाता बाम ॥४०॥
हिय फाटहु फूटहु नयन, जरउ सो तन केहि काम ।
द्रवहिं स्रवहिं पुलकहिं नहीं, तुलसी सुमिरत राम ॥४१॥
रामहिं सुमरत रन भिरत, देत परत गुरु पाय ।
तुलसी जिनहिं न पुलक तनु, ते जग जीवत जाय ॥४२॥
सो०—हृदय सो कुलिस समान, जो न द्रवहि हरिगुन सुनत ।
कर न रामगुन गान, जीह सो दादुरजीह सम ॥४३॥
स्रवै न सलिल सनेह, तुलसी सुनि रघुबीर-जस ।
ते नयना जनि देहु, राम करहु बरु आँधरो ॥४४॥
रहै न जल भरि पूरि, राम ! सुजस सुनि रावरो ।
तिन अँखिन मैं धूरि, भरि भरि मूठी मेलिये ॥४५॥

अखिल=सम्पूर्ण । जाय = व्यर्थ । दादुर = मेंढ़क । मेलिये=डालिये, छोड़िये ।

बारक सुमिरत तोहि, होहि तिनहिँ सन्मुख सुखद।
क्योँ न सँभारहि मोहि, दयासिन्धु दसरत्थ के ? ॥४६॥
साहिब होत सरोष, सेवक को अपराध सुनि।
अपने देखे दोष, सपनेहुँ राम न उर धरेउ ॥४७॥
दो०—तुलसी रामहिँ आपु तेँ, सेवक की रुचि मीठि।
सीतापति से साहिबहि, कैसे दीजै पीठि ॥४८॥
तुलसी जाके होयगी, अन्तर बाहिर दीठि।
सो कि कृपालुहि देइगो, केवटपालहि पीठि ? ॥४९॥
प्रभु तरुतर कपि डार पर, ते किय आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम सोँ, साहिब सीलनिधान ॥५०॥
रे मन! सबसोँ निरस ह्वै, सरस राम सोँ होहि।
भलो सिखावन देत है, निसि दिन तुलसी तोहि ॥५१॥
हरो चरहिँ तापहिँ बरत, फरे पसारहिँ हाथ।
तुलसी स्वारथमीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥५२॥
स्वारथ सीताराम सोँ, परमारथ सियराम।
तुलसी तेरो दूसरे, द्वार कहाँ कहु काम ॥५३॥
स्वारथ परमारथ सकल, सुलभ एक ही ओर।
द्वार दूसरे दीनता, उचित न तुलसी तोर ॥५४॥
तुलसी स्वारथ रामहित, परमारथ रघुबीर।
सेवक जाके लखन से, पवनपूत रनधीर ॥५५॥
ज्योँ जग बैरी मीन को, आपु सहित बिनु बारि।
त्योँ तुलसी रघुबीर बिनु, गति आपनी बिचारि ॥५६॥
रामप्रेम बिनु दूबरो, रामप्रेम ही पीन।
रघुबर कबहुँक करहुगे, तुलसी ज्योँ जल मीन ॥५७॥

केवटपाल=रामचन्द्र। पीन=मोटा।

राम सनेही राम गति, रामचरन-रति जाहि।
तुलसी फल जग-जनम को, दियो बिधाता ताहि ॥५८॥
आपु आपने तैं अधिक, जेहि प्रिय सीताराम।
तेहिके पग की पानहो, तुलसी तनु को चाम ॥५९॥
स्वारथ परमारथ रहित, सीताराम सनेह।
तुलसी सो फल चारि को, फल-हमार मत एह ॥६०॥
जे जन रूखे विषयरस, चिकने रामसनेह।
तुलसी ते प्रिय राम को, कानन बसहिं कि गेह ॥६१॥
जथा लाभ सन्तोष सुख, रघुबर-चरन सनेह।
तुलसी जौ मन खूँद सम, कानन बसहु कि गेह ॥६२॥
तुलसी जौपै राम सौं, नाहिंन सहज सनेह।
मूँड़ मुड़ायो बादि ही, भाँड़ भयो तजि गेह ॥६३॥
तुलसी श्रीरघुबीर तजि, करै भरोसो और।
सुख सम्पति की का चली, नरकहु नाहीं ठौर ॥६४॥
तुलसी परिहरि हरि हरहि, पाँवर पूजहिं भूत।
अन्त फजीहति होहिंगे, गनिका के से पूत ॥६५॥
सेये सीताराम नहिं, भजे न शंकर गौरि।
जनम गँवायो बादि ही, परत पराई पौरि ॥६६॥
तुलसी हरि अपमान तैं, होइ अकाज समाज।
राज करत रज मिलि गये, सदल सकुल कुरुराज ॥६७॥
तुलसी रामहिं परिहरे, निपट हानि सुनु ओझ।
सुरसरिगत सोई सलिल, सुरा सरिस गंगोझ ॥६८॥
राम दूर माया बढ़ति, घटति जानि मन माँह।
भूरि होति रवि दूरि लखि, सिर पर पगतर छाँह ॥६९॥

खूँद=घोड़े की उछल कूद की चाल। ओझ=ओझा। गंगोझ=गंगोदक,गंगाजल।

साहिब सीतानाथ सोँ, जब घटिहै अनुराग।
तुलसी तबहीं भाल तेँ, भभरि भागिहै भाग ॥७०॥
करिहौ कोसलनाथ तजि, जबहिँ दूसरी आस।
जहाँ तहाँ दुख पाइहौ, तबहीं तुलसीदास ॥७१॥
बिन्ध न ईंधन पाइये, सायर जुरै न नीर।
परै उपास कुबेरघर, जो बिपच्छ रघुबीर ॥७२॥
बरषा को गोबर भयो, को चहै को करै प्रीति।
तुलसी तू अनुभवहि अब, राम-बिमुख की रीति ॥७३॥
सबहि समरथहि सुखद प्रिय, अच्छम प्रिय हितकारि।
कबहुँ न काहुहि राम प्रिय, तुलसी कहा बिचारि ॥७४॥
तुलसी उद्यम करम जुग, जब जेहि राम सुडीठि।
होइ सुफल सोइ ताहि सब, सनमुख प्रभु तन पीठि ॥७५॥
प्रेम-कामतरु परिहरत, सेवक कलितरु ठूँठ।
स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झूँठ ॥७६॥
निज दूषन गुन राम के, समुझे तुलसीदास।
होय भलो कलिकाल हू, उभय लोक अनयास ॥७७॥
कै तोहि लागहिँ राम प्रिय, कै तू प्रभु प्रिय होहि।
दुइ महँ रुचै जो सुगम सो, कीबे तुलसी तोहि ॥७८॥
तुलसी दुइ महँ एक ही, खेल छाँड़ि छल खेलु।
कै करु ममता राम सोँ, कै ममता परहेलु ॥७९॥
निगम अगम साहेब सुगम, राम साँचिली चाह।
अम्बु असन अवलोकियत, सुलभ सबै जग माह ॥८०॥
सनमुख आवत पथिक ज्योँ, दिये दाहिनो बाम।
तैसोइ होत सु आपको, त्योँ ही तुलसी राम ॥८१॥

घटिहै=न्यून होगा। भभरि=डरकर। सायर=सागर। अच्छम=असमर्थ, अशक्त। परहेलु=तिरस्कार कर खेलु।

राम-प्रेम-पथ पेखिये, दिये विषय तनु पीठि ।
तुलसी केचुरि परिहरे, होत साँपहूँ डीठि ॥८२॥
तुलसी जैलौं विषय की, मुधा माधुरी मीठि ।
तौलौं सुधा सहस्र सम, रामभगति सुठि सीठि ॥८३॥
जैसो तैसो रावरो, केवल कोसलपाल ।
तौ तुलसी को है भलो, तिहूँलोक तिहुँकाल ॥८४॥
है तुलसी के एक गुन, अवगुननिधि कहैं लोग ।
भलो भरोसो रावरो, राम रीझिबे जोग ॥८५॥
प्रीति राम सोँ नीतिपथ, चलिय राग रिस जीति ।
तुलसी सन्तन के मते, इहै भगति की रीति ॥८६॥
सत्य बचन मानस बिमल, कपटरहित करतूति ।
तुलसी रघुबर सेवकहि, सकै न कलिजुग धूति ॥८७॥
तुलसी सुखी जो राम सोँ, दुखी सो निज करतूति ।
करम बचन मन ठीक जेहि, तेहि न सकै कलि धूति ॥८८॥
नातो नाते राम के, रामसनेह सनेहु ।
तुलसी माँगत जोरि कर, जनम जनम सिव देहु ॥८९॥
सब साधन को एक फल, जेहि जान्यो सोइ जान ।
ज्योँ त्योँ मन-मंदिर बसहिँ, राम धरे धनु बान ॥९०॥
जो जगदीस तो अति भलो, जो महीस तो भाग ।
तुलसी चाहत जनम भरि, रामचरन-अनुराग ॥९१॥
परहुँ नरक फलचारि-सिसु, मीच डाँकिनी खाउ ।
तुलसी राम सनेह को, जो फल सो जरि जाउ ॥९२॥
हित सोँ हित रति राम सोँ, रिपु सोँ बैर बिहाउ ।
उदासीन सब सोँ सरल, तुलसी सहज सुभाउ ॥९३॥

मुधा=व्यर्थ। सीठि=सीठी,नीरस। धूति सकै=धोखा दे सकता है। उदासीन=मध्यस्थ।

तुलसी ममता राम सों, समता सब संसार।
राग न रोष न दोष दुख, दास भये भवपार ॥९४॥
रामहिं डरु करु राम सों, ममता प्रीति प्रतीति।
तुलसी निरुपधि राम को, भये हारेहू जीति ॥९५॥
तुलसी राम कृपालु सों, कहि सुनाउ गुन दोष।
होय दूबरी दीनता, परम पीन सन्तोष ॥९६॥
सुमिरन सेवा राम सों, साहब सों पहिचानि।
ऐसेहु लाभ न ललक जो, तुलसी नित हित हानि ॥९७॥
जाने जानन जोइये, बिनु जाने को जान।
तुलसी यह सुनि समुझि हिय, आनु धरे धनुबान ॥९८॥
करमठ कठमलिया कहैं, ज्ञानी ज्ञानबिहीन।
तुलसी त्रिपथ बिहाय गो, रामदुआरे दीन ॥९९॥
बाधक सब सब के भये, साधक भये न कोइ।
तुलसी राम कृपालु तें, भलो होइ सो होइ ॥१००॥
संकरप्रिय मम द्रोही, सिवद्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलपभरि, घोर नरक महँ बास ॥१०१॥
बिलग बिलग सुख सङ्ग दुख, जनम मरन सोइ रीति।
रहियत राखे राम के, गये ते उचित अनीति ॥१०२॥
जाय कहब करतूति बिनु, जाय जोग बिनु छेम।
तुलसी जाय उपाय सब, बिना रामपद-प्रेम ॥१०३॥
लोग मगन सब जोग ही, जोग जाय बिनु छेम।
त्यों तुलसी के भावगत, रामप्रेम बिनु नेम ॥१०४॥
राम निकाई रावरी, है सब ही को नीक।
जो यह साँची है सदा, तौ नीको तुलसीक ॥१०५॥

निरुपधि=विना स्वार्थ। त्रिपथ=कर्म, ज्ञान और उपासना कांड। करमठ=कर्मकाण्डी। कठमलिया=झूठा साधु।

तुलसी राम जो आदर्‌यो, खोटो खरो खरोइ ।
दीपक काजर सिर धर्‌यो, धर्‌यो सुधर्‌यो धरोइ ॥१०६॥
तनु बिचित्र कायर बचन, अहि अहार मन घोर ।
तुलसी हरि भये पच्छधर, ताते कह सब मोर ॥१०७॥
लहै न फूटी कौड़िहू, को चाहै केहि काज ।
सो तुलसी महँगो कियो, राम गरीबनिवाज ॥१०८
घर घर माँगे टूक पुनि, भूपति पूजे पाय ।
जे तुलसी तब राम बिनु, ते अब राम सहाय ॥१०९॥
तुलसी राम सुदीठि तें, निबल होत बलवान ।
बैर बालि सुग्रीव के, कहा कियो हनुमान ? ॥११०॥
तुलसी रामहु तें अधिक, रामभक्त जिय जान ।
रिनियाँ राजा राम भे, धनिक भये हनुमान ॥१११॥
कियो सुसेवक-धरम कपि, प्रभु कृतज्ञ जिय जानि ।
जोरि हाथ ठाढ़े भये, बरदायक बरदानि ॥११२॥
भगत-हेतु भगवान प्रभु, राम धरेउ तनुभूप ।
किये चरित पावन परम, प्राकृत- नर - अनुरूप ॥११३॥
ज्ञान-गिरा-गोतीत अज, माया- गुन - गोपार ।
सोइ सच्चिदानन्दघन, करत चरित्र उदार ॥११४॥
हिरन्याक्ष भ्राता सहित, मधुकैटभ बलवान ।
जेहि मारे सोइ अवतरे, कृपासिन्धु भगवान ॥११५॥
सुद्ध सच्चिदानन्दमय, कन्द भानु-कुलकेतु ।
चरित करत नर अनुहरत, संसृति - सागरसेतु ॥११६॥
बाल-बिभूषन बसन बर, धूरि-धूसरित अङ्ग ।
बालकेलि रघुबर करत, बाल-बन्धु सब सङ्ग ॥११७॥

घोर=भयानक । हरि=श्रीकृष्णचन्द्र । टूक=टुकड़ा । कृतज्ञ=एहसानमन्द । प्राकृत=संसारी ।

अनुदिन अवध बधावने, नित नव मङ्गल मोद ।
मुदित मातु-पितु लोग लखि, रघुबर बाल-विनोद ॥११८॥
राज-अजिर राजत रुचिर, कोसलपालक-बाल ।
जानु-पानि-चर चरित बर, सगुन-सुमङ्गल-माल ॥११९॥
नाम ललित लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन भूषन ललित, ललित अनुज सिसु साथ ॥१२०॥
राम भरत लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभनाम ।
सुमिरत दसरथ-सुवन सब, पूजहिँ सब मनकाम ॥१२१॥
बालक कोसलपाल के, सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मन-मानस बसत, मङ्गल मञ्जु मराल ॥१२२॥
भगत भूमि भूसुर सुरभि, सुर हित लागि कृपाल ।
करत चरित धरि मनुज-तनु, सुनत मिटहि जगजाल ॥१२३॥
निज इच्छा प्रभु अवतरइ, सुर महि गो द्विज लागि ।
सगुन-उपासक सङ्ग तँह, रहहिँ मोक्ष सब त्यागि ॥१२४॥
परमानन्द कृपायतन, मन परिपूरन-काम ।
प्रेम भगति अनपायनी, देहु हमहिँ श्रीराम ॥१२५॥
बारि मथे घृत होय बरु, सिकता तेँ बरु तेल ।
बिनु हरि-भजन न भव तरिय, यह सिधान्त अपेल ॥१२६॥
हरिमाया-कृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहिँ ।
भजिय राम सब काम तजि, अस बिचारि मन माहिँ ॥१२७॥
जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हि करइ चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनायकहि, भजहिँ जीव ते धन्य ॥१२८॥
श्रीरघुबीर-प्रताप तेँ, सिन्धु तरे पाषान ।
ते मतिमन्द जे राम तजि, भजहिँ जाय प्रभु आन ॥१२९॥

अनुदिन=रोज रोज । अजिर=आँगन । चर=चलना । कृपायतन=दया के स्थान । अनपायनी=अचल । सिकता=बालू ।

लव निमेष परामन जुग, बरष कलप सर चंड।
भजहि न मन तेहि राम कहँ, काल जासु को दंड ॥१३०॥
तब लगि कुसल न जीव कहँ, सपनेहुँ मन विस्राम।
जब लगि भजत न राम कहँ, सोकधाम तजि काम ॥१३१॥
बिनु सतसङ्ग न हरिकथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु रामपद, होय न दृढ़ अनुराग ॥१३२॥
बिनु विस्वास भगति नहिँ, तेहि बिनु द्रवहिँ न राम।
रामकृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह विस्राम ॥१३३॥
सो०--अस बिचारि मन धीर, तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुन्दर सुखद ॥१३४॥
भाववस्य भगवान, सुखनिधान करुनाभवन।
तजि ममता मद मान, भजिय सदा सीतारमन ॥१३५॥
कहहिँ बिमलमति सन्त, बेद पुरान बिचार अस।
द्रवैं जानकी कन्त, तब छूटै संसारदुख ॥१३६॥
बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु?
गावहिँ बेद पुरान, सुख कि लहिय हरिभगति बिनु? ॥१३७॥
दो०--रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चहै पद निर्बान।
ज्ञानवन्त अपि सोइ नर, पसु बिनु पूछ बिखान ॥१३८॥
जरउ सो सम्पति सदन सुख, सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद, करइ न सहज सहाइ ॥१३९॥
सेइ साधु गुरु समुझिसिखि, रामभगति थिरताइ।
लरिकाई को पैरिबो, तुलसी बिसरि न जाय ॥१४०॥
सबै कहावत राम के, सबहि राम की आस।
राम कहँ जेहि आपनो, तेहि भजु तुलसीदास ॥१४१॥

बिखान=सींग। थिरताइ=स्थिरता।

जेहि सरीर रति राम सोँ, सोइ आदरैँ सुजान ।
रुद्रदेह तजि नेह-बस, बानर भे हनुमान ॥१४२॥
जानि रामसेवा सरस, समुझि करब अनुमान ।
पुरुखा ते सेवक भये, हर ते भे हनुमान ॥१४३॥
तुलसी रघुबर-सेवकहि, खल डाटत मन माँखि ।
बाजराज के बालकहि, लवा दिखावत आँखि ॥१४४॥
रावनरिपु के दास ते, कायर करहिँ कुचालि ।
खर दूषन मारीच ज्यौँ, नीच जाहिँगे कालि ॥१४५॥
पुन्य पाप जस अजस के, भावी भाजन भूरि ।
सङ्कट तुलसीदास को, राम करहिँगे दूरि ॥१४६॥
खेलत बालक ब्याल संग, मेलत पावक हाथ ।
तुलसी सिसु पितु-मातु ज्यौँ, राखत सिय रघुनाथ ॥१४७॥
तुलसी दिन भल साहु कहँ, भली चोर कहँ राति ।
निसि बासर ताकहँ भलो, मानै राम-इताति ॥१४८॥
तुलसी जाने सुनि समुझि, कृपासिन्धु रघुराज ।
महँगे मनि कञ्चन किये, सौंघे जग जल नाज ॥१४९॥
सेवा सील सनेह बस, करि परिहरि प्रिय लोग ।
तुलसी ते सब राम सोँ, सुखद सुजोग बियोग ॥१५०॥
चारि चहत मानस अगम, चनक चारि को लाहु ।
चारि परिहरे चारि को, दानि चारि चख चाहु ॥१५१॥
सूधे मन सूधे बचन, सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल विधि, रघुबर-प्रेम-प्रसूति ॥१५२॥
वेष बिसद बोलनि मधुर, मन कटु करम मलीन ।
तुलसी राम न पाइये, भये बिषय-जल-मीन ॥१५३॥

इताति = इताअत, अनुशासन, आज्ञा । सौंघे = स्वघ, सस्ते ।

बंचन-बेष तेँ जो बनै, सो बिगरै परिनाम ।
तुलसी मन तेँ जो बनै, बनी बनाई राम ॥१५४॥
नीच मीचु लै जाइ जो, राम-रजायसु पाइ ।
तैा तुलसी तेरो भलो, न तु अनभलो अघाइ ॥१५५॥
जातिहीन अघ-जनम-महि, मुकुत कीन्हि असि नारि ।
महामन्द मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहि बिसारि ? ॥१५६॥
बन्धु-बधू-रत कहि कियो, बचन निरुत्तर बालि ।
तुलसी प्रभु सुग्रीव को, चितइ न कछू कुचालि ॥१५७॥
बालि बली बलसालि दलि, सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपालु को, बिरद गरीबनिवाज ॥१५८॥
कहा बिभीषन लै मिलो, कहा बिगार्यो बालि ?
तुलसी प्रभु सरनागतहिं, सब दिन आये पालि ॥१५९॥
तुलसी कोसलपाल सो, को सरनागत-पाल ?
भज्यो बिभीषन बन्धु-भय, भंज्यो दारिद-काल ॥१६०॥
कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस अस रामकर, समुझि परै कहु काहि ? ॥१६१॥
बलकल भूषन फल असन, तृन सज्या द्रुम प्रीति ।
तिन्ह समयन लङ्का दई, यह रघुबर की रीति ॥१६२॥
जो सम्पति सिव रावनहिं, दीन्हि दिये दस माथ ।
सोइ सम्पदा बिभीषनहिँ, सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥१६३॥
अबिचल राज बिभीषनहिँ, दीन्ह राम रघुराज ।
अजहुँ बिराजत लङ्कपुर, तुलसी सहित समाज ॥१६४॥
कहा बिभीषन लै मिल्यो, कहा दियो रघुनाथ ।
तुलसी यह जाने बिना, मूढ़ मीजिहैँ हाथ ॥१६५॥

चाहि = अपेक्षा से (बढ़कर) । द्रुम = वृक्ष । बिरद = नामवरी ।

बैरिबन्धु निसिचर अधम, तज्यो न भरे कलङ्क।
झूठे अघ सिय परिहरी, तुलसी साइँ ससङ्क ॥१६६॥
तेहि समाज किय कठिन पन, जेहि तौल्यो कैलास।
तुलसी प्रभु-महिमा कहौँ, की सेवक विस्वास ॥१६७॥
सभा सभासद निरखि पट, पकरि उठायो हाथ।
तुलसी कियो इगारहौँ, बसनबेष जदुनाथ ॥१६८॥
त्राहि तीनि कह्यो द्रौपदी, तुलसी राजसमाज।
प्रथम बढ़े पट बिय बिकल, चहत चकित निज काज ॥१६९॥
सुखजीवन सब कोउ चहत, सुखजीवन हरिहाथ।
तुलसी दाता माँगनेउ, देखियत अबुध अनाथ ॥१७०॥
कृपिन देइ पाइय परो, बिनु साधे सिधि होइ।
सीतापति सनमुख समुझि, जो कीजै सुभ सोइ ॥१७१॥
दंडकबन-पावन करन, चरन-सरोज प्रभाउ।
ऊसर जामहि खल तरहि, होइ रङ्क ते राउ ॥१७२॥
बिन ही ऋतु तरुवर फरत, सिला द्रवति जलजोर।
रामलखन सिय करि कृपा, जब चितवत जेहि ओर ॥१७३॥
सिला सु तिय भइ गिरि तरे, मृतक जिये जग जान।
रामअनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥१७४॥
सिलासाप-मोचन चरन, सुमिरहु तुलसीदास।
तजहु सोच सङ्कट मिटिहि, पूजिहि मन की आस ॥१७५॥
मुए जिआये भालु कपि, अवध बिप्र को पूत।
सुमिरहु तुलसी ताहि तू, जाको मारुति दूत ॥१७६॥
काल करम गुन दोष जग, जीव तिहारे हाथ।
तुलसी रघुवर रावरो, जान जानकीनाथ ॥१७७॥

इगारहो = दस अवतारों के अतिरिक्त ग्यारहवाँ वस्त्र का रूप। बिय = दूसरा। मारुति = हनूमानजी।
। = सामर्थ्य, प्राण।

रोगनिकर तनु जरठपन, तुलसी सङ्ग कुलोग।
रामकृपा लै पालिये, दीन पालिबे जोग ॥१७८॥
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंसमनि, हरहु विषम भवभीर ॥१७९॥
भवभुअङ्ग तुलसी नकुल, डसत ज्ञान हरि लेत।
चित्रकूट इक औषधी, चितवत होत सचेत ॥१८०॥
हैाँहुँ कहावत सब कहत, राम सहत उपहास।
साहब सीतानाथ से, सेवक तुलसीदास ॥१८१॥
रामराज राजत सकल, धरम-निरत-नर-नारि।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥१८२॥
रामराज सन्तोष सुख, घर बन सकल सुपास।
तरु सुरतरु सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥१८३॥
खेती बनि बिद्या बनिज, सेवा सिलिपि सुकाज।
तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल राम के राज ॥१८४॥
दंड जतिन कर भेद जहँ, नरतक नृत्य समाज।
जीतहु मनहिँ सुनिय अस, रामचन्द्र के राज ॥१८५॥
कोपे सोच न पोच कर, करिय निहोरन काज।
तुलसी परमिति प्रीति की, रीति राम के राज ॥१८६॥
मुकुर निरखि मुख रामभ्रू, गनत गुनहिं दै दोष।
तुलसी से सठ सेवकनि, लखि जनि परहि सरोष ॥१८७॥
सहसनाम मुनि-भनित सुनि, तुलसी-बल्लभ नाम।
सकुचत हिय हँसि निरखि सिय, धरमधुरन्धर राम ॥१८८॥
गौतम-तिय-गति सुरति करि, नहिँ परसति पग पानि।
हिय हरषे रघुबंसमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥१८९॥

नकुल=नेवला। निरत=तत्पर। निहोर=एहसान। पोच=नीच। परमिति= हद।

तुलसी बिलसत नखत निसि, सरद-सुधाकर साथ।
मुकुता झालरि झलक जनु, रामसुजस - सिसुहाथ ॥१९०॥
रघुपति कीरति-कामिनी, क्यों कहै तुलसी दासु ?
सरद-अकास प्रकास ससि, चारु चिवुक-तिल जासु ॥१९१॥
प्रभु गुनगन भूषन बसन, विसद विसेष सुदेस।
राम - सुकीरति - कामिनी, तुलसी करतब केस ॥१९२॥
रामचरित राकेसकर, सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन-कुमुद चकोर चित, हित बिसेष बड़ लाहु ॥१९३॥
रघुबरकीरति सज्जननि, सीतल खलनि सुताति।
ज्यों चकोर-चय चक्कवनि, तुलसी चाँदनि राति ॥१९४॥
रामकथा मन्दाकिनी, चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय - रघुबीर - बिहारु ॥१९५॥
स्याम-सुरभि-पय बिसदअति, गुनद करहिँ तेहि पान।
गिराग्राम्य सियराम जस, गावहिँ सुनहिँ सुजान ॥१९६॥
हरि-हर-जस सुर-नर-गिरहु, बरनहिँ सुकबि-समाज।
हाँड़ी हाटक घटित चरु, राँधे स्वाद सुनाज ॥१९७॥
तिल पर राखेउ सकल जग, बिदित बिलोकत लोग।
तुलसी महिमा राम की, कौन जानिबे जोग ? ॥१९८॥
सो०—राम स्वरूप तुम्हार, बचन अगोचर बुद्धि पर।
अविगत अकथ अपार, नेति नेति नित निगम कह ॥१९९॥
दो०—मायाजीव सुभाव गुन, काल करम महदादि।
ईस-अङ्क ते बढ़त सब, ईस-अङ्क बिनु बादि ॥२००॥
हित उदास रघुबर-बिरह, बिकल सकल नर-नारि।
भरतलखन-सियगति समुझि, प्रभु-चख सदा सुबारि ॥२०१॥

गिराग्राम्य=गँवारी भाषा। हाटक=सोना। घटित=बना हुआ। चरु=खीर।

सीय सुमित्रासुवन-गति, भरत-सनेह सुभाउ।
कहिबे को सारद सरस, जनिबे को रघुराउ ॥२०२॥
जानी राम न कहि सके, भरत लखन सियप्रीति।
सोसुनि गुनि तुलसी कहत, हठ सठता की रीति ॥२०३॥
सबबिधि समरथ सकलकह, सहि साँसति दिन राति।
भलो निबाहेउ सुनि समुझि, स्वामिधर्म सब भाँति ॥२०४॥
भरतहि होइ न राजमद, बिधि-हरि-हर-पद पाइ।
कबहुँक काँजी सीकरनि, छीरसिन्धु बिनसाइ ॥२०५॥
सम्पति चकई भरत चक, मुनि आयसु खिलवार।
तेहि निसि आस्रम-पींजरा, राखे भा भिनुसार ॥२०६॥
सधन चोर मग मुदित मन, धनी गही ज्यौं फैंट।
त्यौं सुग्रीव बिभीषनहिं, भई भरत की भेंट ॥२०७॥
राम सराहे भरत उठि, मिले राम सम जानि।
तदपि बिभीषन कीसपति, तुलसी गरत गलानि ॥२०८॥
भरत स्यामतन रामसम, सब गुन रूप-निधान।
सेवक-सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ॥२०९॥
ललित लखन मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह।
सुख-सम्पति -कीरति-बिजय, सगुन - सुमङ्गल-गेह ॥२१०॥
नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमा सील-निकेत।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमङ्गल देत ॥२११॥
कौसल्या कल्यानमयि, मूरति करत प्रनाम।
सगुन सुमङ्गल काज सुभ, कृपा करहिँ सियराम ॥२१२॥
सुमिरि सुमित्रानाम जग, जे तिय लेहिँ सनेम।
सुवन लखन रिपुदवन से, पावहिँ पति-पद-प्रेम ॥२१३॥

सरस = अधिक। सधन = धन के सहित। धनी = धन का स्वामी, साहु।

सीता-चरन प्रनाम करि, सुमिरि सुनाम सनेम।
होहिँ तीय पतिदेवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम ॥२१४॥
तुलसी केवल कामतरु, रामचरित आराम।
कलितरु कपि निसिचर कहत, हमहिँ किये बिधि बाम ॥२१५॥
मातु सकल सानुज भरत, गुरु पुरलोग सुभाउ।
देखत देख न कैकइहि, लङ्कापति कपिराउ ॥२१६॥
सहज सरल रघुबर बचन, कुमति कुटिल करि जान।
चलै जोँक जल वक्रगति, जद्यपि सलिल समान ॥२१७॥

दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान।
धरनि धाम धन धरमसुत, सद्गुन रूपनिधान ॥२१८॥
तुलसी जान्यो दसरथ हि, धरम न सत्य समान।
राम तजे जेहि लागि बिनु, राम परिहरे प्रान ॥२१९॥
रामबिरह दसरथ-मरन, मुनिमन अगम सु मीचु।
तुलसी मङ्गल-मरन-तरु, सुचि सनेह-जल सींचु ॥२२०॥
सो०–जीवन मरन सुनाम, जैसे दसरथ राय को।
जियत खिलाये राम, रामबिरह तनु परिहरेउ ॥२२१॥
दो०–प्रभुहि बिलोकत गोदगत, सिय-हित घायल नीच।
तुलसी पाई गीधपति, मुकुति मनोहर मीच ॥२२२॥
बिरत करमरत भगत मुनि, सिद्ध ऊँच अरु नीचु।
तुलसी सकल सिहात सुनि, गीधराज की मीचु ॥२२३॥
मुये मरत मरिहैँ सकल, घरी पहर के बीच।
लही न काहू आजु लौँ, गीधराज की मीच ॥२२४॥
मुये मुकुत जीवत मुकुत, मुकुत मुकुतहूँ बीच।
तुलसी सबही ते अधिक, गीधराज की मीच ॥२२५॥

पतिदेवता=पतिव्रता। विरत=वैराग्यवान। कामरत=विषयी। मीच=मृत्यु, मरण।

रघुबर बिकल बिहङ्ग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर।
सिय-सुधि कहि सियराम कहि, देह तजी मतिधीर ॥ २२६ ॥
दसरथ तें दसगुन भगति, सहित तासु करि काज।
सोचत बन्धु समेत प्रभु, कृपासिन्धु रघुराज ॥ २२७ ॥
केवट निसिचर बिहङ्ग मृग, किये साधु सनमानि।
तुलसी रघुबर की कृपा, सकल सुमङ्गल खानि ॥ २२८ ॥
मञ्जुल मङ्गल मोदमय, मूरति मारुतपूत।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल, सुमिरत रघुबर-दूत ॥ २२९ ॥
धीर बीर रघुबीर-प्रिय, सुमिरि समीरकुमार।
अगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि विचार ॥ २३० ॥
सुख-मुद-मङ्गल-कुमुद-बिधु, सुगुन - सरोरुह - भानु।
करहु काज सब सिद्धि सुभ, आनि हिये हनुमानु ॥ २३१ ॥
सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमङ्गल जानु।
कीरति विजय विभूति भलि, हिय हनुमानहिं आनु ॥ २३२ ॥
सूर-सिरोमनि साहसी, सुमति समीरकुमार।
सुमिरत सब सुख-सम्पदा, मुदमङ्गल - दातार ॥ २३३ ॥
तुलसी-तनु सर सुख-जलज, भुज-रुज गज बरजोर।
दलत दयानिधि देखिये, कपि केसरीकिसोर ॥ २३४ ॥
भुज-तरु-कोटर रोग अहि, बरबस कियो प्रवेस।
बिहङ्गराज-बाहन तुरत, काढ़िय मिटइ कलेस ॥ २३५ ॥
बाहु-बिटप सुख-बिहङ्ग-थल, लगी कुपीर कुआगि।
रामकृपा जल सींचिये, बेगि दीनहित लागि ॥ २३६ ॥
सो०—मुकुति जनम महि जानि, ज्ञानखानि अघहानिकर।
जहँ बस सम्भु भवानि, सो कासी सेइय कस न ? ॥ २३७ ॥

काज=अन्त्येष्टि क्रिया। कुमुद=कूईबेरा। बिधु=चन्द्रमा।

जरत सकल सुरवृन्द, बिषम गरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मति मन्द, को कृपालु सङ्कर सरिस ?॥२३८॥
दो०—बासर ढासनि के ढका, रजनी चहुँ दिसि चोर।
सङ्कर निजपुर राखिये, चितै सुलोचन-कोर ॥२३९॥
अपनी बीसी आपुही, पुरिहि लगाये हाथ।
केहि बिधि बिनती बिस्व की, करौं बिस्व के नाथ ॥२४०॥
और करै अपराध कोउ, और पाव फल-भोग।
अति बिचित्र भगवन्त गति, कोउ न जानिबे जोग ॥२४१॥
प्रेमसरीर प्रपञ्च-रुज, उपजी अधिक उपाधि।
तुलसी भली सुवैदई, बेगि बाँधिये ब्याधि ॥२४२॥
हम हमार आचार बड़, भूरि भार धरि सीस।
हठि सठ परबस परत जिमि, कीर कोस-कृमि कीस ॥२४३॥
केहि मग प्रविसति जातिकेहि, कहु दर्पन में छाँह।
तुलसी त्यौं जग-जीवगति, करी जीव के नाँह ॥२४४॥
सुखसागर सुखनींदबस, सपने सब करतार।
माया मायानाथ की, को जग जाननहार ? ॥२४५॥
जीव सीव सम सुख सयन, सपने कछु करतूति।
जागत दीन मलीन सोइ, बिकल बिषाद बिभूति ॥२४६॥
सपने होइ भिखारि नृप, रङ्क नाकपति होइ।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपञ्च जिय जोइ ॥२४७॥
तुलसी देखत अनुभवत, सुनत न समुझत नीचु।
चपरि चपेटे देत नित, केस गहे कर मीचु ॥२४८॥
करम खरी कर मोह थल, अङ्क चराचर-जाल।
हनत गुनत गनि गुनि हनत, जगत ज्योतिषी-काल ॥२४९॥

गरल=विष। ढासनि=डाकू। ढका=तोपा, घिरा हुआ। उपाधि=उत्पात, दुःख। चपरि=झुक कर। चपेट=चोट, थप्पड़ का आघात।

ज्ञान कहै अज्ञान बिनु, तम बिनु कहै प्रकास।
निरगुन कहै जो सगुन बिनु, सो गुरु तुलसीदास ॥२५१॥
अंक अगुन आखर सगुन, समुझिअ उभय प्रकार।
खोये राखे आपु भल, तुलसी चारु बिचार ॥२५२॥
परमारथ-पहिचानि-मति, लसति विषयलपटानि।
निकसि चिता तें अधजरी, मानहुँ सती परानि ॥२५३॥
सीस उघारन किन कहेउ, बरजि रहे प्रिय लोग।
घरही सती कहावती, जरती नाह-बियोग ॥२५४॥
खरिया खरी कपूर सब, उचितनपिय!तियत्याग।
कै खरिया मोहि मेलि कै, बिमल बिवेक बिराग ॥२५५॥
घर कीन्हें घर जात है, घर छाँड़े घर जाइ।
तुलसी घर बन बीच ही, राम-प्रेमपुर छाइ ॥२५६॥
दिये पीठि पाछे लगै, सनमुख होत पराय।
तुलसी सम्पति छाँह ज्यौं, लखि दिन बैठि गँवाय ॥२५७॥
तुलसी अदभुत देवता, आसादेवी नाम।
सेये सोक समर्पई, बिमुख भये अभिराम ॥२५८॥
सोई सेँवर तेइ सुवा, सेवत सदा बसन्त।
तुलसी महिमा मोह की, सुनत सराहत सन्त ॥२५९॥
करत न समुझत झूठ-गुन, सुनत होत मतिरङ्क।
पारद प्रगट प्रपञ्चमय, सिद्धिहिँ नाउँ कलङ्क ॥२६०॥
ज्ञानी तापस सूर कबि, कोविद गुनआगार।
केहि कै लोभ बिडम्बना, कीन्हि न यहि संसार? ॥२६१॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगनयनी के नयनसर, को अस लाग न जाहि ॥२६२॥

खरिया=जाला, झोली। खरी=खड़िया मट्टी। सेँवर=सेमर वृक्ष। कलंक=कजली जो पा[रा]
गन्धक के घोंटने पर सिद्ध होती है। बिडम्बना=फजीहत।

ब्यापि रहेउ संसार महँ, माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट, दम्भ कपट पाखंड ॥२६३॥
तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिज्ञान-धाम-मन, करहिँ निमिष महँ छोभ ॥२६४॥
लोभ के इच्छा दम्भ बल, काम के केवल नारि।
क्रोध के परुष बचन बल, मुनिवर कहहिँ बिचारि ॥२६५॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन्हमहँ अति दारुन दुखद, मायारूपी नारि ॥२६६॥
काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग काल न खाइ ॥२६७॥
जनम-पत्रिका बरति कै, देखहु मनहि बिचारि।
दारुन बैरी मीचु के, बीच बिराजति नारि ॥२६८॥
दीपसिखा सम जुवति-तन, मन जनि होसि पतङ्ग।
भजहि राम तजि काममद, करहि सदा सतसङ्ग ॥२६९॥
काम-क्रोध-मद-लोभरत, गृहासक्त दुखरूप।
ते किमि जानहि रघुपतिहि, मूढ़ परे भवकूप ॥२७०॥
ग्रहगृहीत पुनि बातबस, तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पियाइय बारुनी, कहहु कौन उपचार ? ॥२७१॥
ताहि कि सम्पति सगुन सुभ, सपनेहु मन बिस्राम।
भूतद्रोहरत मोहबस, रामबिमुख रतकाम ॥२७२॥
कहत कठिनसमुझत कठिन, साधन कठिन विवेक।
होइ घुनाक्षरन्याय ज्यों, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥२७३॥
खल प्रबोध जलसोध मन, को निरोध कुल सोध।
करहिँ ते फोकटपचि मरहिँ, सपनेहुँ सुख न सुबोध ॥२७४॥

धारि=सेना। दो० २६८-जन्मकुंडली में छठाँ सातवाँ और आठवाँ स्थान क्रमशः शत्रु, स्त्री और मृत्यु का है। गृहीत=पकड़ा हुआ। बारुनी=मदिरा। प्रत्यूह=विघ्न। निरोध=रुकावट। फोकट=सेंतमेत।

सो०-कोउ बिश्राम कि पाव, तात सहज सन्तोष बिनु ?
चलै कि जल बिनु नाव, कोटि जतन पचि पचि मरिय ?॥२७५॥
सुर नर मुनि कोउ नाहिँ, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहिँ, भजिय महामायापतिहि ॥२७६॥
दो०-एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
एक राम-घनस्याम हित, चातक तुलसीदास ॥२७७॥
जौँ घन बरषै समयसिर, जौँ भरि जनम उदास।
तुलसी या चित चातकहि, तऊ तिहारी आस ॥२७८॥
चातक तुलसी के मते, स्वातिहु पियै न पानि।
प्रेमतृषा बाढ़ति भली, घटे घटैगी कानि ॥२७९॥
रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखि गे अङ्ग।
तुलसी चातक-प्रेम को, नित नूतन रुचिरङ्ग ॥२८०॥
चढ़त न चातक-चित कबहुँ, प्रिय पयोद के दोख।
तुलसी प्रेमपयोधि की, ताते नाप न जोख ॥२८१॥
बरषि परुष पाहन पयद, पंख करौ टुक टूक।
तुलसी परी न चाहिये, चतुर चातकहि चूक ॥२८२॥
उपल बरषि गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर।
चितव कि चातक मेघ तजि, कबहुँ दूसरी ओर ? ॥२८३॥
पवि पाहन दामिनि गरज, झरि झकोर खरि खीझि।
रोष न प्रीतम-दोष लखि, तुलसी रागहि रीझि ॥२८४॥
मान राखिबो माँगिबो, पिय सोँ नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु ॥२८५॥
तुलही चातक ही फबै, मान राखिबो प्रेम।
बक्र बुन्द लखि स्वातिहू, निदरि निबाहत नेम ॥२८६॥

कोटि जतन पचि पचि मरिय=करोड़ों उपाय करते करते मर जाओ। समयसिर=ठीक समय पर। क़ानि=मर्यादा। रसना=जीभ। पवि=वज्र। फबै=शोभा दे।

तुलसी चातक माँगनो, एक सबै घन दानि।
देत जो भूभाजन भरत, लेत जो घूँटक पानि ॥२८७॥
तीनि लोक तिहुँ कालजस, चातक ही के माथ।
तुलसी जासु न दीनता, सुनी दूसरे नाथ ॥२८८॥
प्रीति पपीहा पयद की, प्रगट नई पहिचान।
जाचक जगत कनाउड़ो, कियो कनौड़ो दानि ॥२८९॥
नहिँ जाचत नहिँ संग्रही, सीस नाइ नहिँ लेइ।
ऐसे मानी माँगनेहि, को बारिद बिन देइ ? ॥२९०॥
को को न ज्यायो जगत में, जीवन-दायक दानि।
भयो कनौड़ो जाचकहि, पयद प्रेम पहिचानि ॥२९१॥
साधन साँसति सब सहत, सबहिँ सुखद फल लाहु।
तुलसी चातक जलद की, रीझि-बूझि बुध काहु ॥२९२॥
चातक जीवन-दायकहि, जीवन समय सुरीति।
तुलसी अलख न लखि परै, चातक प्रीति प्रतीति ॥२९३॥
जीव चराचर जहँ लगे, है सबको हित मेह।
तुलसी चातक मन बस्यो, घन सोँ सहज सनेह ॥२९४॥
डोलत बिपुल बिहङ्ग बन, पियत पोखरिन बारि।
सुजस-धवल चातक नवल, तुही भुवन दसचारि ॥२९५॥
मुख-मीठे मानस-मलिन, कोकिल मोर चकोर।
सुजस-धवल चातक नवल, रह्यो भुवन भरि तोर ॥२९६॥
बास बेष बोलनि चलनि, मानस मञ्जु मराल।
तुलसी चातक प्रेम की, कीरति बिसद बिसाल ॥२९७॥
प्रेम न परखिय परुषपन, पयद - सिखावन एह।
जग कह चातक पातकी, ऊसर बरसै मेह ॥२९८॥

घूँटक=घोंट भर। कनाउड़ो=एहसानमन्द। धवल उज्जवल। मराल=हंस। पयद=बादल।

होइ न चातक पातकी, जीवन दानि न मूढ़ ।
तुलसी गति प्रहलाद की, समुझि प्रेमपथ गूढ़ ॥२९९॥
गरज आपनी सबन को, गरज करत उर आनि ।
तुलसी चातक चतुर भो, जाचक जानि सुदानि ॥३००॥
चरग चंगुगत चातकहि, नेम प्रेम की पीर ।
तुलसी परबस हाड़ पर, परिहै पुहुमीनीर ॥३०१॥
बध्यो बधिक पर्‌यो पुन्यजल, उलटि उठाई चोँच ।
तुलसी चातक प्रेमपट, मरतहु लगी न खोँच ॥३०२॥
अंड फोरि कियो चेटुवा, तुष पर्‌यो नीर निहारि ।
गहि चङ्गुल चातक चतुर, डार्‌यो बाहिर बारि ॥३०३॥
तुलसी चातक देत सिख, सुतहि बार ही बार ।
तात न तर्पन कीजिये, बिना बारिधर-धार ॥३०४॥
सो०—जियत न नाई नारि, चातक घन तजि दूसरहि ।
सुरसरि हू को बारि, मरत न माँगेउ अरध जल ॥३०५॥
सुनु रे तुलसीदास, प्यास पपीहहि प्रेम की ।
परिहरि चारिउ मास, जो अँचवै जल स्वाति को ॥३०६॥
जाचै बारहमास, पियै पपीहा स्वातिजल ।
जान्यो तुलसीदास, जोगवत नेही मेह-मन ॥३०७॥
दो०—तुलसी के मत चातकहि, केवल प्रेमपियास ।
पियत स्वातिजल जान जग, जाचक बारह मास ॥३०८॥
आलबाल मुकुताहलनि, हिय सनेह-तरु-मूल ।
होइ हेत चित चातकहि, स्वाति-सलिल अनुकूल ॥३०९॥
बिबि रसना तनु स्याम है, बङ्क चलनि बिषखानि ।
तुलसी जस स्रवननि सुन्यो, सीस समर्‌प्यो आनि ॥३१०॥

चरग=बाज़ की जाति का एक छोटा पक्षी। चङ्ग=चङ्गुल। खोँच=चोट। चेटुवा=बच्चा। तुष=छिलका, अण्डे की छाल। नारि=नार, गरदन। आलवाल=गोंड़ा, थाला। बिबि=दो।

उष्नकाल अरु देह खिन, मगपन्थी तन ऊख।
चातक बतियाँ ना रुचीं, अन जल सींचे रूख ॥३११॥
अन जल सींचे रूख की, छाया तें बरु घाम।
तुलसी चातक बहुत हैं, यह प्रबीन को काम ॥३१२॥
एक अङ्ग जो स्नेहता, निसि दिन चातक नेह।
तुलसी जासोँ हित लगै, वहि अहार वहि देह ॥३१३॥
आपु ब्याध को रूप धरि, कुहो कुरङ्गहि राग।
तुलसी जौं मृगमन मुरै, परै प्रेमपट दाग ॥३१४॥
तुलसी मनि निज दुति फनिहि, ब्याधहि देउ दिखाइ।
बिछुरत होइ न आँधरो, ताते प्रेम न जाइ ॥३१५॥
जरत तुहिन लखि बनजबन, रवि दै पीठि पराउ।
उदय बिकस अथवत सकुच, मिटै न सहज सुभाउ ॥३१६॥
देउ आपने हाथ जल, मीनहिं माहुर घोरि।
तुलसी जियै जो बारि बिनु, तौ तु देहि कवि खोरि ॥३१७॥
मकर उरग दादुर कमठ, जलजीवन जलगेह।
तुलसी एकै मीन को, है साँचिलो सनेह ॥३१८॥
तुलसी मिटै न मरि मिटेहु, साँचो सहज सनेह।
मोरसिखा बिनु मूरि हू, पलुहत गरजत मेह ॥३१९॥
सुलभ प्रीति प्रीतम सबै, कहत करत सब कोइ।
तुलसी मीन पुनीत ते, त्रिभुवन बड़ो न कोइ ॥३२०॥
तुलसी जप तप नेम ब्रत, सब सब ही तें होइ।
लहै बड़ाई देवता, इष्टदेव जब होइ ॥३२१॥
कुदिन हितू सो हित सुदिन, हित अनहित किन होइ।
ससिछबि हर रविसदन तउ, मित्र कहत सब कोइ ॥३२२॥

ऊख=तपा हुआ, उष्ण। अन=अन्य, दूसरा। कुहो=(चाहे) मारे। तुहिन=पाला। बनज=कमल। खोरि=दोष। दादुर=मेढक। मोरसिखा=मयूरशिखा नाम की घास या बूटी जो बरसात आते ही पनप जाती है। इसमें जड़ नहीं होती। पलुहना=पनपना।

कै लघु कै बड़ मीत भल, सम सनेह दुख सोइ।
तुलसी ज्यौं घृत मधु सरिस, मिले महाबिष होइ ॥३२३॥
मान्य मीत सौं सुख चहै, सो न छुवै छलछाँह।
ससि त्रिसंकु कैकेइ गति, लखि तुलसी मन माँह ॥३२४॥
कहिय कठिन कृत कोमलहु, हित हठि होइ सहाइ।
पलक पानि पर ओड़िअत, समुझि कुघाइ सुघाइ ॥३२५॥
तुलसी बैर सनेस दोउ, रहित बिलोचन चारि।
सुरा सेवरा आदरहिं, निन्दहिं सुरसरि-बारि ॥३२६॥
रुचै माँगनेहि माँगिबो, तुलसी दानिहि दानु।
आलस अनख न आचरज, प्रेमपिहानी जानु ॥३२७॥
अमिय गारि गारेउ गरल, गारि कीन्ह करतार।
प्रेम बैर की जननि जुग, जानहिं बुध न गँवार ॥३२८॥
सदा न जे सुमिरत रहहिं, मिलि न कहहिं प्रिय बैन।
तेपै तिन्हके जाहिं घर, जिनके हिये न नैन ॥३२९॥
हित पुनीत सब स्वारथहि, अरि असुद्ध बिनु चाँड़।
निज मुख मानिक सम दसन, भूमि परे ते हाड़ ॥३३०॥
माखी काक उलूक बक, दादुर से भये लोग।
भले ते सुक पिक मोर से, कोउ न प्रेमपथ जोग ॥३३१॥
हृदय कपट बर बेष धरि, बचन कहैं गढ़ि छोलि।
अब के लोग मयूर ज्यौं, क्यौं मिलिये मन खोलि ॥३३२॥
चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल।
छीर नीर बिवरन समय, बक उघरत तेहि काल ॥३३३॥
मिलै जो सरलहि सरल ह्वै, कुटिल न सहज बिहाइ।
सो सहेतु ज्यौं बक्रगति, ब्याल न बिलै समाइ ॥३३४॥

सेवरा=सेवड़ा, नीच। पिहानी=ढकना, छिपानेवाली वस्तु। चाँड़=उद्धत। बिवरन=अलग करना।

कृसधन सखहि न देब दुख, मुयेहु न माँगब नीच।
तुलसी सज्जन की रहनि, पावक पानी बीच ॥३३५॥
सङ्ग सरल कुटिलहि भये, हरि हर करहिँ निबाहु।
ग्रह गनती गनि चतुर बिधि, कियो उदर-बिनु राहु ॥३३६॥
नीच निचाई नहिँ तजै, सज्जन हू के सङ्ग।
तुलसी चन्दन-बिटप बसि, बिनु बिष भये न भुअङ्ग ॥३३७॥
भलो भलाई पै लहै, लहै निचाई नीचु।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीचु ॥३३८॥
मिथ्या माहुर सज्जनहि, खलहि गरल सम साँच।
तुलसी छुअत पराइ ज्यौँ, पारद पावक-आँच ॥३३९॥
सन्त-सङ्ग अपवर्गकर, कामी भवकर पन्थ।
कहहिँ साधु कवि कोविद, स्रुति पुरान सदग्रन्थ ॥३४०॥
सुकृत न सुकृती परिहरै, कपट न कपटी नीच।
मरत सिखावन देइ चले, गीधराज मारीच ॥३४१॥
सुजन सुतरु बन ऊख सम, खल टङ्किका रुखान।
परहित अनहित लागि सब, साँसति सहत समान ॥३४२॥
पियहिँ सुमनरस अलि बिटप, काटि कोल फल खात।
तुलसी तरुजीवी जुगल, सुमति कुमति को बात ॥३४३॥
अवसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिये का लाख ?।
दुइज न चन्दा देखिये, उदौ कहा भरि पाख ॥३४४॥
ज्ञान अनभले को सबहि, भले भलेहू काउ।
सींग सूँड़ रद लूम नख, करत जीव जड़ घाउ ॥३४५॥
तुलसी जगजीवन अहित, कतहुँ कोउ हित जानि।
सोषक भानु कृसानु महि, पवन एक घनदानि ॥३४६॥

कृसधन=धनहीन। बन=कपास। टङ्किका=टाँकी। अलि=भ्रमर। रद=दाँत। लूम=पूँछ।

सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥३४७॥
जलचर थलचर गगनचर, देव दनुज नर नाग।
उत्तम मध्यम अधम खल, दस गुन बढ़त विभाग ॥३४८॥
बलि मिस देखे देवता, कर मिस मानवदेव।
मुये मार सुविचार-हत, स्वारथ-साधन एव ॥३४९॥
सुजन कहत भल पोच पथ, पापि न परखै भेद।
करमनास सुरसरित मिस, बिधि निषेध बद बेद ॥३५०॥
मनि भाजन मधु पारई, पूरन अमी निहारि।
का छाँड़िय का संग्रहिय, कहहु बिबेक बिचारि ॥३५१॥
उत्तम मध्यम नीच गति, पाहन सिकता पानि।
प्रीति परिच्छा तिहुँन की, बैर बितिक्रम जानि ॥३५२॥
पुन्य प्रीति पति प्रापतिउ, परमारथ-पथ पाँच।
लहहिं सुजन परिहरहिं खल, सुनहु सिखावन साँच ॥३५३॥
नीच निरादर ही सुखद, आदर सुखद बिसाल।
कदली बदली बिटप गति, पेखहु पनस रसाल ॥३५४॥
तुलसी अपनो आचरन, भलो न लागत कासु।
तेहि न बसात जो खात नित, लहसुनहू को बासु ॥३५५॥
बुध सो बिबेकी बिमलमति, जिनके रोष न राग।
सुहृद सराहत साधु जेहि, तुलसी ताको भाग ॥३५६॥
आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइकोइ।
तुलसी सबकहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥३५७॥
तुलसी भलो सुसङ्ग तें, पोच कुसङ्गति होइ।
नाउ किन्नरी तीर असि, लोह बिलोकहु लोइ ॥३५८॥

मानवदेव= राजा। कर=मालगुजारी। मधु=मद्य। पारई=मिट्टी का कसोरा, पुरई। दो० ३५२—पत्थर पर की, बालू पर की और पानी पर की लकीर की सी प्रीति क्रम से उत्तम, मध्यम और नीच है। बैर का क्रम इसका उलटा है। बिसाल=बड़ा। किन्नरी=वीणा, सारंगी। असि=तलवार।

गुरु-सङ्गति गुरु होइ सो, लघु-सङ्गति लघु नाम।
चार पदारथ में गनैं, नरकद्वार हू काम ॥३५९॥

तुलसी गुरु लघुता लहत, लघु-सङ्गति परिनाम।
देवी देव पुकारियत, नीच नारिनर-नाम ॥३६०॥

तुलसी किये कुसङ्ग-थिति, होहिं दाहिने बाम।
कहि सुनि सकुचिय सूम खल, गत हरि-शङ्कर-नाम ॥३६१॥

बसि कुसङ्ग चह सुजनता, ताकी आस निरास।
तीरथहू को नाम भो, 'गया' मगह के पास ॥३६२॥

राम-कृपा तुलसी सुलभ, गङ्ग सुसङ्ग समान।
जो जल परै जो जन मिलै, कीजै आपु समान ॥३६३॥

ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग ॥३६४॥

जनम जोग में जानियत, जग विचित्र गति देखि।
तुलसी आखर अङ्क रस, रङ्ग विभेद विसेखि ॥३६५॥

आखर जोरि बिचार करु, सुमति अंक लिखि लेखु।
जोग - कुजोग - सुजोग मय, जगगति समुझि बिसेखु ॥३६६॥

करु विचार चलु सुपथ भल, आदि मध्य परिनाम।
उलटे जपे 'जरा मरा', सूधे 'राजा राम' ॥३६७॥

होइ भले के अनभलो, होइ दानि के सूम।
होइ कुपूत सुपूत के, ज्यों पावक में धूम ॥३६८॥

जड़ चेतन गुन-दोष-मय, बिस्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि बिकार ॥३६९॥

सो०—पाट कीट तें होइ, ताते पाटम्बर रुचिर।
कृमि पालै सब कोइ, परम अपावन प्रान सम ॥३७०॥

दो०—जो जो जेहि जेहि रसमगन, तहँ सो मुदित मन मानि।
रसगुन-दोष बिचारिबो, रसिकरीति पहिचानि ॥३७१॥

सम प्रकास तम पाख दुहुँ, नामभेद बिधि कीन्ह ।
ससि पोषक सोषक समुझि, जग जस अपजस दीन्ह ॥३७२॥

लोक बेद हूँ लौं दगो, नाम भले को पोच ।
धर्मराज, जम गाज पवि, कहत सकोच न सोच ॥३७३॥

बिरुचि परखिये सुजन जन, राखि परखिये मन्द ।
बड़वानल सोषत उदधि, हरष बढ़ावत चन्द ॥३७४॥

प्रभु सनमुख भये नीच नर, निपट होत बिकराल ।
रवि-रुख लखि दरपन फटिक, उगिलत ज्वालाजाल ॥३७५॥

प्रभु-समीप-गत सुजन जन, होत सुखद सुबिचारि ।
लवन-जलधि-जीवन जलद, बरषत सुधा सुबारि ॥३७६॥

नीच निरावहिं निरस तरु, तुलसी सींचहिं ऊख ।
पोषत पयद समान सब, बिष पियूष के रूख ॥३७७॥

बरषि बिस्व हरषित करत, हरत ताप अघ प्यास ।
तुलसी दोष न जलद को, जो जल जरै जवास ॥३७८॥

अमरदानि जाचक मरहिं, मरि मरि फिरि फिरि लेहिं ।
तुलसी जाचक पातकी, दातहि दूषन देहिं ॥३७९॥

लखि गयन्द लै चलत भजि, स्वान सुखानो हाड़ ।
गज-गुन मोल अहार बल, महिमा जान कि राड़ ? ॥३८०॥

कै निदरहु कै आदरहु, सिंहहिं स्वान सियार ।
हरष बिषाद न केसरहिं, कुञ्जर - गञ्जनिहार ॥३८१॥

ठाढ़ो द्वार न दै सकैं, तुलसी जे नर नीच ।
निन्दहिं बलि हरिचन्द को, का कियो करन दधीच ॥३८२॥

दगो = अङ्कित है, प्रसिद्ध है। बिरुचि = विनारुचि के। राड़ = जड़, दुष्ट।

ईस-सीस बिलसत बिमल, तुलसी तरल तरङ्ग ।
स्वान सरावग के कहे, लघुता लहै न गङ्ग ॥३८३॥
तुलसी देवल देव को, लागे लाख करोरि ।
काक अभागे हगि भर्यो, महिमा भई कि थोरि ॥३८४॥
निज गुन घटत न नागनग, परखि परिहरत कोल ।
तुलसी प्रभु भूषन किये, गुञ्जा बढ़ै न मोल ॥३८५॥
राकापति षोड़स उअहिं, तारागन समुदाइ ।
सकल गिरिन दव लाइये, बिनु रवि राति न जाइ ॥३८६॥
भलो कहै बिन जानेहू, बिनु जाने अपवाद ।
ते नर गादुर जानि जिय, करिय न हरष विषाद ॥३८७॥
पर-सुखसम्पति देखि सुनि, जरहिं जे जड़ बिनु आगि ।
तुलसी तिनके भाग ते, चलै भलाई भागि ॥३८८॥
तुलसी जे कीरति चहहिं, पर की कीरति खोइ ।
तिनके मुँह मसि लागिहै, मिटिहि न मरिहैं धोइ ॥३८९॥
तनु गुन धन महिमा धरम, तेहि बिनु जेहि अभिमान ।
तुलसी जियत बिडम्बना, परिनामहु गत जान ॥३९०॥
सासु ससुर गुरु मातु पितु, प्रभु भयो चह सब कोइ ।
होनो दूजी ओर को, सुजन सराहिय सोइ ॥३९१॥
सठ सहि साँसति पतिलहत, सुजन कलेस न काय ।
गढ़ि गुढ़ि पाहन पूजिये, गंडकि सिला सुभाय ॥३९२॥
बड़े बिबुध- दरबार तैं, भूमि भूप दरबार ।
जापक पूजक पेखियत, सहत निरादर भार ॥३९३॥
बिनु प्रपञ्च छल भीख भलि, लहिय न दिये कलेस ।
बावन बलि सौं छल कियो, दियो उचित उपदेस ॥३९४॥

नागनग=गजमुक्ता। प्रभु=श्रीकृष्णचन्द्र। अपवाद=निन्दा। मसि=मसी, कालिख। बिडम्बना=फजीहत।

भलो भले सोँ छल किये, जनम कनौड़ो होइ ।
श्रीपति सिर तुलसी लसति, बलि बावनगति सोइ ॥३९५॥
बिबुध-काज बावन बलिहि, छलो भलो जिय जानि ।
प्रभुता तजि बस भे तदपि, मन की गइ न गलानि ॥३९६॥
सरल बक्रगति पञ्चग्रह, चपरि न चितवत काहु ।
तुलसी सूधे सूर ससि, समय बिडम्बित राहु ॥३९७॥
खल-उपकार बिकार-फल, तुलसी जान जहान ।
मेँढक मर्कट बनिक बक, कथा सत्यउपखान ॥३९८॥
तुलसी खल-बानी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि ।
रामराज बाधक भई, मूढ़ मंथरा चेरि ॥३९९॥
जोँक सूधिमन कुटिलगति, खल बिपरीत बिचारु ।
अनहित सोनित सोख सो, सो हित सोखनहारु ॥४००॥
नीच गुड़ी ज्योँ जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास ।
ढीलि दिये गिरि परत महि, खैँचत चढ़त अकास ॥४०१॥
भरदर बरषत कोससत, बचैँ जे बूँद बराइ ।
तुलसी तेउ खल-बचन सर, हये गये न पराइ ॥४०२॥
पेरत कोल्हू मेलि तिल, तिली सनेही जानि ।
देखि प्रीति की रीति यह, अब देखिबी रिसानि ॥४०३॥
सहबासी काचो गिलहि, पुरजन पाक-प्रबीन ।
कालछेप केहि मिलि करहिँ, तुलसी खग मृग मीन ? ॥४०४॥
जासु भरोसे सोइये, राखि गोद मेँ सीस ।
तुलसी तासु कुचाल तेँ, रखवारो जगदीस ॥४०५॥
मार खोज लै सौँह करि, करि मत लाज न त्रास ।
मुये नीच ते मीच बिनु, जे इनके बिस्वास ॥४०६॥

चपरि = झुककर, सहसा। सत्य-उपखान = सत्योपाख्यान नाम का ग्रंथ। गिलहिँ = निगलते हैं, खाते हैं। मार = मारते हैं।

परद्रोही परदार रत, परधन पर अपवाद ।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥४०७॥
बचन बेष क्यौं जानिये, मन मलीन नर नारि ।
सूपनखा मृग पूतना, दसमुख प्रमुख बिचारि ॥४०८॥
हँसनि मिलनि बोलनि मधुर, कटु करतब मन माँह ।
छुवत जो सकुचै सुमति सो, तुलसी तिन्हकी छाँह ॥४०९॥
कपटसार सूची सहस, बाँधि बचन परवास ।
किय दुराउ चहै चातुरी, सो सठ तुलसीदास ॥४१०॥
बचन बिचार अचार तन, मन करतब छल छूति ।
तुलसी क्यौं सुख पाइये, अन्तर्जामिहि धूति ? ॥४११॥
सारदूल को स्वाँग करि, कूकर की करतूति ।
तुलसी तापर चाहिये, कीरति विजय विभूति ॥४१२॥
बड़े पाप बाढ़े किये, छोटे किये लजात ।
तुलसी तापर सुख चहत, बिधि सोँ बहुत रिसात ॥४१३॥
देस-काल-करता-करम, बचन-विचार-बिहीन ।
ते सुरतरु-तर दारिदी, सुरसरि-तीर मलीन ॥४१४॥
साहसही कै कोपबस, किये कठिन परिपाक ।
सठ सङ्कट-भाजन भये, हठि कुजाति कपि काक ॥४१५॥
राज करत बिनु काजही, करैं कुचालि कुसाज ।
तुलसी ते दसकन्ध ज्यौं, जइहैं सहित समाज ॥४१६॥
राज करत बिनु काज ही, ठटहिं जे कूर कुठाट ।
तुलसी ते कुरुराज ज्यौं, जइहैं बारहबाट ॥४१७॥
सभा सुजोधन की सकुनि, सुमति सराहन जोग ।
द्रोन बिदुर भीषम हरिहि, कहैं प्रपञ्ची लोग ॥४१८॥

परवास=बिराने घर। छलछूति=छल का संसर्ग। धूति=धोखा देकर। सारदूल=सिंह। स्वांग रूप। बारहबाट=नष्ट भ्रष्ट।

पांडुसुवन की सदसि ते, नीको रिपु हित जानि ।
हरि हर सम सब मानियत, मोह ज्ञान की बानि ॥४१९॥
हित पर बढ़ै बिरोध जब, अनहित पर अनुराग ।
राम-बिमुख बिधि बामगति, सगुन अघाय अभाग ॥४२०॥
सहज सुहृद गुरु स्वामि सिख, जो न करै सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हितहानि ॥४२१॥
भरुहाये नट भाँट के, चपरि चढ़े संग्राम ।
कै वे भाजे आइहैं, कै बाँधे परिनाम ॥४२२॥
लोकरीति फूटी सहैं, आँजी सहै न कोइ ।
तुलसी जो आँजी सहै, सो आँधरो न होइ ॥४२३॥
भागे भल आड़ेहु भलो, भलो न घाले घाउ ।
तुलसी सबके सीस पर, रखवारो रघुराउ ॥४२४॥
सुमति बिचारहिं परिहरहिं, दल सुमनहु संग्राम ।
सकुल गये तनु बिनु भये, साखी जादौ काम ॥४२५॥
कलह न जानब छोट करि, कलह कठिन परिनाम ।
लगति अगिनि लघु नीचगृह, जरत धनिक-धन धाम ॥४२६॥
छमा रोष के दोष गुन, सुनि मन! मानहिं सीख ।
अविचल श्रीपति हरि भये, भूसुर लहै न भीख ॥४२७॥
कौरव पांडव जानिये, क्रोध छमा के सीम ॥
पाँचहि मारि न सौ सके, सयो सँहारे भीम ॥४२८॥
बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु ।
जीति सहस सम हारिबो, जीते हारि निहारु ॥४२९॥
जो परि पाँय मनाइये, तासौं रूठि बिचारि ।
तुलसी तहाँ न जीतिये, जहँ जीतेहू हारि ॥४३०॥

सदसि=सभा । भरुहाउ=बढ़ावा देने से । आँजी=अंजन

जूझे ते भल बूझिबो, भली जीति तें हारि।
डहके ते डहकाइबो, भलो जो करिय बिचारि ॥४३१॥
जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाप परितापु।
तासोँ रारि निवारिये, समय सँभारिय आपु ॥४३२॥
जो मधु मरै न मारिये, माहुर देइ सो काउ।
जग जिति हारे परसुधर, हारि जिते रघुराउ ॥४३३॥
बैर-मूल-हर हित-बचन, प्रेममूल उपकार।
दो'हा' सुभ-सन्दोह सो, तुलसी किये बिचार ॥४३४॥
रोष न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवारि।
सुनत मधुर परिनाम हित, बोलिय बचन बिचारि ॥४३५॥
मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु स्रम भाग अभाग।
कुहू कुहू कलकंठ रव, काका कररत काग ॥४३६॥
पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागै ढेर।
सुमति बिचारे बोलिये, समुझि कुफेर सुफेर ॥४३७॥
छिद्र्यो न तरुनि-कटाछ सर, करेउ न कठिन सनेहु।
तुलसी तिनकी देह को, जगत कवच करि लेहु ॥४३८॥
सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर करहिं प्रलापु ॥४३९॥
बचन कहे अभिमान के, पारथ पेषत सेतु।
प्रभु तिय लूटत नीच भर, जय न मीचु तेहि हेतु ॥४४०॥
राम लखन बिजयी भये, बनहु गरीबनिवाज।
मुखर बालि रावन गये, घर ही सहित समाज ॥४४१॥
खग मृग मीत पुनीत किय, वनहु राम नयपाल।
कुमति बालि दसकंठ घर, सुहृद बन्धु किये काल ॥४४२॥

दो'हा'='हा हा' अर्थात हा हा खाना; विनती करना। तरुनि =युवती स्त्री। सन्देह=समूह। कररत=कर्कश बोलता है। विद्यमान=उपस्थित। दो० ४४०—एक बार समुद्र में बँधे सेतु को देख अर्जुन ने गर्व से कहा, "मैं तो बाणों का पुल बाँध सकता था।" अर्जुन ने पुल बांधा, पर हनुमान जी के पैर रखते ही बैठ गया।

लखै अघानो भूख ज्यौं, लखै जीति मैं हारि।
तुलसी सुमति सराहिये, मग पग धरै बिचारि ॥४४३॥
लाभ समय को पालिबो, हानि समय की चूक।
सदा बिचारहिं चारुमति, सुदिन कुदिन दिन दूक ॥४४४॥
सिन्धुतरन कपि गिरिहरन, काज साइँ हित दोउ।
तुलसी समयहि सब बड़ो, बूझत कहुँ कोउ कोउ ॥४४५॥
तुलसी मीठी अमी तेँ, माँगी मिलै जो मीच।
सुधा सुधाकर समय बिनु, कालकूट ते नीच ॥४४६॥
तुलसी असमय के सखा, धीरज धरम बिबेक।
साहित साहस सत्यब्रत, राम-भरोसो एक ॥४४७॥
समरथ कोउ न राम सोँ, तीय-हरन अपराधु।
समयहि साधे काज सब, समय सराहहिँ साधु ॥४४८॥
तुलसी तीरहु के चले, समय पायबी थाह।
धाइ न जाइ थहायबी, सर सरिता अवगाह ॥४४९॥
तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाय ॥४५०॥
कै जूझिबो कै बूझिबो, दान कि काय-कलेस।
चारि चारु परलोक-पथ, जथाजोग उपदेस ॥४५१॥
पात पात को सींचिबो, न करु सरग-तरु हेत।
कुटिल कटुक फर फरैगो, तुलसी करत अचेत ॥४५२॥
गठिबँध तेँ परतीति बड़ि, जेहि सब को सब काज।
कहब थोर समुझब बहुत, गाड़े बढ़त अनाज ॥४५३॥
अपनो ऐपन निजहथा, तिय पूजहिँ निज भीति।
फलै सकल मनकामना, तुलसी प्रीति प्रतीति ॥४५४॥

दूक=दोनों। सुधा=अमृत। सुधाकर=चन्द्रमा। कालकूट=विष। साहित=साहित्य
अवगाह=अथाह।

बरषत करषत आपु जल, हरषत अरघनि भानु ।
तुलसी चाहत साधु सुर, सब सनेह सनमानु ॥४५५॥

स्रुति-गुन कर-गुन पु-जुग-मृग, हय रेवती सखाउ ।
देहि लेहि धन धरनि धरु, गयेहु न जाइहि काउ ॥४५६॥

ऊगुन पूगुन वि अज कृ म, आ भ अ मू गुनु साथ ।
हरो धरो गाड़ो दियो, धन फिर चढ़ै न हाथ ॥४५७॥

रबि हर दिसि गुन रस नयन, मुनि प्रथमादिक बार ।
तिथि सब-काज-नसावनी, होइ कुजोग बिचार ॥४५८॥

ससि सर नव दुइ छ दस गुन, मुनिफल बसु हर भानु ।
मेषादिक क्रम तें गनहि, घात चंद्र जिय जानु ॥४५९॥

नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चक चाष ।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहि मन अभिलाष ॥४६०॥

सुधा साधु सुरतरु सुमन, सुफल सुहावनि बात ।
तुलसी सीतापति भगति, सगुन सुमङ्गलसात ॥४६१॥

करषत=खींचते हैं, सोखते हैं। अरघनि=जल फूल आदि की भेंट से। स्रुति-गुन=श्रवण, धनिष्ठा और शतभिक् नक्षत्र। कर-गुन=हस्त चित्रा और स्वाती। पु-जुग=पुष्य और पुनर्वसु। मृग=मृगशिर। हय=अश्वनी। सखा=अनुराधा। ऊ-गुन=उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तर भाद्रपद। पू-गुन=पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्व भाद्रपद। वि=विशाखा। अज=रोहिणी। कृ=कृत्तिका। म=मघा। आ=आर्द्रा। भ=भरणी। अ=अश्लेषा। मू=मूल। हरो=हरा व लूटा हुआ। रवि=द्वादशी। हर=एकादशी। दिसि=दशमी। गुन=तीज। रस=षष्ठी। नयन=दूज। मुनि=सप्तमी तिथि। प्रथमादिक वार=रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनिवार की उपयुक्त तिथियाँ। मेषादिक=मेष के १, वृष के ५, मिथुन के ९, कर्क के २, सिंह के ६, कन्या के १०, तुला के ३, वृश्चिक के ७, धन के ४, मकर के ८, कुम्भ के ११, मीन के १२ वें स्थान के चंद्रमा घातक हैं। नकुल=नेवला। सुदरसन=मछली। दरसनी=आइना, दर्शनीय। छेमकरी=सफेद कंठवाला चील्ह। चक=चकवा पक्षी। चाष=नीलकंठ।

भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहि सुमङ्गल साथ ॥४६२॥
राम लखन कौसिक सहित, सुमिरहु करहु पयान ।
लच्छि लाभ लै जगत जस, मङ्गल सगुन प्रमान ॥ ४६३ ॥
अतुलित महिमा बेद की, तुलसी किये बिचार ।
जो निन्दत निन्दित भयो, बिदित बुद्ध अवतार ॥ ४६४ ॥
बुध किसान सर-वेद निज, मते खेत सब सींच ।
तुलसी कृषि लखि जानिबो, उत्तम मध्यम नीच ॥ ४६५ ॥
सहि कुबोल साँसति सकल, अँगइ अनट अपमान ।
तुलसी धरम न परिहरिय, कहि करि गये सुजान ॥ ४६६ ॥
अनहित-भय परहित किये, पर-अनहित हितहानि ।
तुलसी चारु बिचार भल, करिय काज सुनि जानि ॥ ४६७ ॥
पुरुषारथ पूरब करम, परमेस्वर परधान ।
तुलसी पैरत सरित ज्यों, सबहि काज अनुमान ॥ ४६८ ॥
चलब नीतिमग रामपग, नेह निबाहब नीक ।
तुलसी पहिरिय सो बसन, जो न पखारे फीक ॥ ४६९ ॥
दोहा चारु बिचारु चलु, परिहरि बाद बिबाद ।
सुकृत-सींव स्वारथ-अवधि, परमारथ-मरजाद ॥ ४७० ॥
तुलसी सो समरथ सुमति, सुकृती साधु सयान ।
जो बिचारि ब्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान ॥ ४७१ ॥
जाय जोग जग छेम बिनु, तुलसी के हित राखि ।
बिनु अपराध भृगुपति नहुष, बेनु बृकासुर साखि ॥ ४७२ ॥
बढ़ि प्रतीति गठिबन्ध तें, बड़ो जोग तें छेम ।
बड़ो सुसेवक साइँ तें, बड़ो नेम तें प्रेम ॥ ४७३ ॥

सरवेद = पंचम वेद । अँगइ = ओज कर । अनट = अत्याचार । सींव = मर्यादा । जाय = व्यर्थ ।

सिष्य सखा सेवक सचिव, सुतिय सिखावन साँच।
सुनि समुझिय पुनि परिहरिय, परमनरञ्जन पाँच ॥४७४॥
नगर नारि भोजन सचिव, सेवक सखा अगार।
सरस परिहरे रङ्गरस, निरस बिषाद बिकार ॥४७५॥
तूठहिं निज रुचि काज करि, रूठहिं काज बिगारि।
तीय तनय सेवक सखा, मन के कंटक चारि ॥४७६॥
दीरघ रोगी दारिदी, कटुबच लोलुप लोग।
तुलसी प्रान समान तउ, होहिं निरादर-जोग ॥४७७॥
पाही खेती लगनवट, ऋन कुब्याज मग खेत।
बैर बड़े सौं आपने, किये पाँच दुख-हेत ॥४७८॥
धाय लगे लोहा ललकि, खैंचि लेइ नइ नीचु।
समरथ पापी सों बयर, जानि बिसाही मीचु ॥४७९॥
सोचिय गृही जो मोहबस, करै कर्मपथ-त्याग।
सोचिय जती प्रपञ्च-रत, बिगत बिवेक बिराग ॥४८०॥
तुलसी स्वारथ सामुहो, परमारथ तनु पीठि।
अन्ध कहे दुख पाइहै, डिठियारो केहि डीठि ? ॥४८१॥
बिनु आँखिन की पानहीं, पहिचानत लखि पाय।
चारि नयन के नारि नर, सूझत मीचु न माय ॥४८२॥
जौपै मूढ़ उपदेस को, होते जोग जहान।
क्यों न सुजोधन बोध कै, आये स्यामसुजान ॥४८३॥
सो०—फूलै फरै न [illegible] बेत, जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुखहृदय न चेत, जो गुरु मिलै बिरञ्चि सिव ॥४८४॥
दो०—रीझि आपनी बूझिपर, खीझि बिचार-बिहीन।
ते उपदेस न मानहीं, मोह - महोदधि - मीन ॥४८५॥

तूठहिं=सन्तुष्ट होते हैं। पाही खेती=अपने गाँव से अन्तर पर की खेती। लगनवट=बटोही से प्रेम।

अनसमुझे अनुसोचनो, अवसि समुझिये आपु।
तुलसी आपु न समुझिये, पलपल पर परितापु ॥४८६॥
कूप खनत मन्दिर जरत, आये धारि बबूर।
बवहिं नवहिं निज काज सिर, कुमति-सिरोमनि कूर ॥४८७॥
निडर ईस ते बीसकै, बीसबाहु सो होइ।
गयो गयो कहैं सुमति सब, भयो कुमति कह कोइ ॥४८८॥
जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥४८९॥
बहु मुख बहु रुचि बहु बचन, बहु अचार ब्यवहार।
इनको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥४९०॥
लोगनि भलो मनाव जो, भलो होन की आस।
करत गगन को गेंडुवा, सो सठ तुलसीदास ॥४९१॥
अपजस-जोग कि जानकी, मनिचोरी की कान्ह।
तुलसी लोग रिझाइबो, करषि कातिबो नान्ह ॥४९२॥
तुलसी जुपै गुमान को, होतो कछू उपाय।
तौ कि जानिकिहि जानिजिय, परिहरते रघुराउ ॥४९३॥
माँगि मधुकरी खात ते, सोवत गोड़ पसारि।
पाय प्रतिष्ठा बढ़ि परी, ताते बाढ़ी रारि ॥४९४॥
तुलसी भेड़ी की धँसनि, जड़ जनता सनमान।
उपजतही अभिमान भो, खोवत मूढ़ अपान ॥४९५॥

आये धारि बबूर बवहिं=सेना ने गढ़ घेर लिया उस समय चारों ओर रोक के हेतु बबूल बोना। बीसकै=बीसविस्वे, निश्चय। गेंडुवा=तकिया। नान्ह=छोटा। गुमान=घमंड, लोकापवाद। खात ते=खाते थे।

लही आँखि कब आँधरे, बाँझ पूत कब ल्याय ।
कब कोढ़ी काया लही ? जग बहराइच जाइ ॥४९६॥

तुलसी निरभय होत नर, सुनियत सुरपुर जाइ ।
सो गति देखियत अछत तनु, सुख सम्पति गति पाइ ॥४९७॥

तुलसी तोरत तीरतरु, बकहित हंस बिडारि ।
बिगत-नलिन-अलि मलिन जल, सुरसरिहू बढ़ियारि ॥४९८॥

अधिकारी बस औसरा, भलेउ जानिबे मन्द ।
सुधासदन बसु बारहैं, चउथे चउथिउ चन्द ॥४९९॥

त्रिबिध एक बिधि प्रभु-अनुग, अवसर करहिं कुठाट ।
सूधे टेढ़े सम बिषम, सब महँ बारहबाट ॥५००॥

प्रभु तें प्रभु-गन दुखद लखि, प्रजहिं सँभारै राउ ।
कर तें होत कृपान को, कठिन घोर घन घाउ ॥५०१॥

ब्यालहु तें बिकराल बड़, ब्यालफेन जिय जानु ।
वहि के खाये मरत है, वह खाये बिनु प्रानु ॥५०२॥

कारन ते कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर ।
कुलिस अस्थि तें उपल तें, लोह कराल कठोर ॥५०३॥

काल बिलोकत ईस-रुख, भानु-काल अनुहारि ।
रबिहि राउ राजहि प्रजा, बुध ब्यवहरहिं बिचारि ॥५०४॥

जथा अमल पावन पवन, पाइ कुसङ्ग सुसङ्ग ।
कहिय कुबास सुबास तिमि, काल महीस प्रसङ्ग ॥५०५॥

भलेहु चलत पथ पोच भय, नृप नियोग नय नेम ।
सुतिय सुभूपति भूपियत, लोह सँवारित हेम ॥५०६॥

बहराइच में सालार मसऊद गाज़ी (गाजी मियाँ) की दरगाह है । यह महमूद ग़ज़नवी का भाँजा था जो महमूद के कन्नौज से आगे न बढ़ने पर भी गाजी होने के हौसले से अवध की ओर कुछ सेना लेकर आया । वहाँ श्रावस्ती (जो बलरामपुर के पास है) के जैन राजा सुहृद्देव के हाथ से मारा गया । चउथिउ=भादों सुदी चौथ का चद्रमा । वहि के खाये=उसके काटने से । हेम=सोना ।

माली भानु किसान सम, नीतिनिपुन नरपाल ।
प्रजा भागबस होहिँगे, कबहुँ कबहुँ कलिकाल ॥५०७॥
बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ ।
तुलसी प्रजा सुभाग ते, भूप भानु सो होइ ॥५०८॥
सुधा सुनाज कुनाज फल, आमअसन सम जानि ।
सुप्रभु प्रजाहित लेहि कर, सामादिक अनुमानि ॥५०९॥
पाके पकये बिटप दल, उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहैँ नरेस त्यौँ, करि बिचार मन बीच ॥५१०॥
रीझि खीझि गुरु देत सिख, सखा सुसाहिब साधु ।
तोरि खाय फल होइ भल, तरु काटे अपराधु ॥५११॥
धरनि-धेनु चारितु चरत, प्रजा सुबच्छ पेन्हाइ ।
हाथ कछू नहिं लागिहै, किये गोड़ की गाइ ॥५१२॥
चढ़े बघूरे चङ्ग ज्यौँ, ज्ञान ज्यौँ सोक समाज ।
करम धरम सुख सम्पदा, त्यौँ जानिबे कुराज ॥५१३॥
कंटक करि करि परत गिरि, साखा सहस खजूरि ।
मरहिँ कुनृप करि करि कुनय, सो कुचालि भव भूरि ॥५१४॥
काल तोपची तुपक महि, दारू-अनय कराल ।
पाप पलीता कठिन गुरु, गोला पुहमीपाल ॥५१५॥
भूमि रुचिर रावन सभा, अङ्गद-पद महिपाल ।
धरम राम नय सीय बल, अचल होत सुभ काल ॥५१६॥
प्रीति-रामपद नीतिरति, धरम प्रतीति सुभाइ ।
प्रभुहि न प्रभुता परिहरै, कबहुँ बचन मन काइ ॥५१७॥
कर के कर मन के मनहिँ, बचन बचन गुन जानि ।
भूपहि भूलि न परिहरै, बिजय बिभूति समान ॥५१८॥

सुधा=दूध रस आदि। चारितु=चारा। गोड़ की करना=दूध दूहते समय गाय को नोवना। बघूरे=अन्धड़, बवंडर। चङ्ग=पतंग।

गोली बान सुमंत्र सर, समुझि उलटि मन देखु।
उत्तम मध्यम नीच प्रभु, वचन विचारि विसेखु ॥५१९॥
सत्रु सयानो सलिल ज्यों, राख सीस रिपुनाउ।
बूड़त लखि पग डगत लखि, चपरि चहूँ दिसि धाउ ॥५२०॥
रैयत राज-समाज घर, तन धन धरम सुबाहु।
सान्त सुसचिवन सौंपि सुख, विलसहि नित नरनाहु ॥५२१॥
मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान को एक।
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित विवेक ॥५२२॥
सेवक कर पद नयन से, मुख सो साहिब होइ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकवि सराहहिँ सोइ ॥५२३॥
मंत्री गुरु अरु बैद जो, प्रिय बोलहिँ भय आस।
राज धरम तन तीनि कर, होइ बेगिही नास ॥५२४॥
रसना मंत्री दसन जन, तोष पोष निज काज।
प्रभु-कर सेन पदादिका, बालक राज-समाज ॥५२५॥
लकड़ी डौआ करछुली, सरस काज अनुहारि।
सुप्रभु संग्रहहिँ परिहरहिँ, सेवक सखा विचारि ॥५२६॥
प्रभु समीप छोटे बड़े, निबल होत बलवान।
तुलसी प्रगट बिलोकिये, कर अँगुली अनुमान ॥५२७॥
साहब ते सेवक बड़ो, जो निज धरम सुजान।
राम बाँधि उतरे उदधि, लाँघि गये हनुमान ॥५२८॥
तुलसी भल बरतरु बढ़त, निज मूलहि अनुकूल।
सबहि भाँति सब कहँ सुखद, दलनि-फलनि-बिनु फूल ॥५२९॥
सधन सगुन सधरम सगन, सबल सुसाइँ महीप।
तुलसी जे अभिमान बिनु, ते त्रिभुवन के दीप ॥५३०॥

बान=बाना, फेंक कर मारने वाला हथियार। सुबाहु=कटक।

तुलसी निज करतूति बिनु, मुकत जात जब कोइ।
गयो अजामिल लोकहरि, नाम सक्यो नहिँ धोइ ॥५३१॥

बड़ो गहे ते होत बड़, ज्योँ बावन-कर-दंड।
श्रीप्रभु के सँग सो बढ़ो, गयो अखिल ब्रह्मंड ॥५३२॥

तुलसी दान जो देत हैँ, जल मैँ हाथ उठाय।
प्रतिग्राही जीवै नहीँ, दाता नरकै जाय ॥५३३॥

आपन छोड़ो साथ जब, ता दिन हितू न कोइ।
तुलसी अम्बुज अम्बु-बिन, तरनि तासु रिपु होइ ॥५३४॥

उरबी परि कुलहीन होइ, ऊपर कलाप्रधान।
तुलसी देखु कलापगति, साधन-धन पहिचान ॥५३५॥

तुलसी सङ्गति पोच की, सुजनहिँ होति मदानि।
ज्योँ हरि रूप सुताहि तेँ, कीन जुहारी आनि ॥५३६॥

कलि-कुचालि सुभमति-हरनि, सरलै दंडै चक्र।
तुलसी यह निहचय भई, बाढ़ि लेति नव बक्र ॥५३७॥

गोखग खेखग बारिखग, तीनोँ माहिँ बिसेक।
तुलसी पीवैँ फिरि चलैँ, रहैँ फिरैँ सँग एक ॥५३८॥

साधन-समय सुसिद्धि लहि, उभय मूल अनुकूल।
तुलसी तीनिउ समय सम, ते मांह मङ्गल-मूल ॥५३९॥

५३३—जल मैं हाथ उठाय=गङ्गा में खड़े होकर जो गङ्गापुत्र आदि को दान दिया जाता है वह ऐसा ही है जैसा जल में मछली पकड़ने के लिये फेंका हुआ चारा जिसे लेने वाला मर जाता है और देने वाला नरक में जाता है। मदानि=कल्याणदायिनी। ज्यों........आनि=पौराणिक कथा है कि एक बढ़ई ने काठ के दो हाथ जोड़ कर विष्णु की मूर्त्ति बनायी और एक राजकन्या पर मोहित होकर उससे विवाह कर लिया। एक बार कन्या के पिता पर कोई आपत्ति आई। उसने अपनी कन्या से अपने पति विष्णु से सहायता माँगने के लिये कहा। अपने रूप की मर्य्यादा को विचार करके विष्णु भगवान ने सचमुच उसकी रक्षा की। चक्र=राजचक्र, अर्थात् राजा अपने राजपुरुषों के सहित। बाढ़ि लेति नव=नित नयी नयी बढ़ती है। वक्र=वक्रता। गोखग=धरती के पक्षी। खे=आकाश। बिसेक=एक ही विषय।

मातु-पिता-गुरु-स्वामि-सिख, सिरधरि करहिँ सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन जनम कर, न तरु जनम जग जाय ॥५४०॥
अनुचित उचित बिचार तजि, जे पालहिँ पितुबैन ।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहिँ अमरपति-ऐन ॥५४१॥
सो०—सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभगति लहै ।
जस गावत स्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥५४२॥
दो०—सरनागत कहँ जे तजहिँ, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पाँवर पापमय, तिनहिँ बिलोकत हानि ॥५४३॥
तुलसी तृन जल-कूल को, निरधन निपट निकाज ।
कै राखै, कै सँग चलै, बाँह गहे की लाज ॥५४४॥
रामायन-अनुहरत सिख, जग भयो भारत रीति ।
तुलसी सठ की को सुनै ? कलि-कुचालि पर प्रीति ॥५४५॥
पात पात कै सींचिबो, बरी बरी कै लोन ।
तुलसी खोटे चतुरपन, कलि डहके कहु को न ? ॥५४६॥
प्रीति सगाई सकल गुन, बनिज उपाय अनेक ।
कल बल छल कलिमल-मलिन, डहकत एकहि एक ॥५४७॥
दम्भ सहित कलिधरम सब, छल-समेत व्यवहार ।
स्वारथ-सहित सनेह सब, रुचि अनुहरत अचार ॥५४८॥
चोर चतुर बटपार नट, प्रभुप्रिय भँडुआ भंड ।
सब-भच्छक परमारथी, कलि सुपन्थ पाखंड ॥५४९॥
असुभ बेष भूषन धरैं, भच्छ अभच्छ जे खाहिँ ।
ते जोगी ते सिद्ध नर, पूजित कलिजुग माहिँ ॥५५०॥
सो०—जे अपकारी चार, तिनकर गौरव मान्य तेइ ।
मन बच करम लबार, ते बकता कलिकाल महँ ॥५५१॥

कूल=किनारा । डहके=ठगे । सगाई=सम्बन्ध । चार=टहलू । गौरव=प्रतिष्ठा, इज़्ज़त ।

दो०—ब्रह्म-ज्ञान बिनु नारि-नर, कहहिँ न दूसरि बात।
कौड़ी लागि ते मोहबस, करहिँ बिप्र-गुरु-घात ॥५५२॥
बादहिँ सूद्र द्विजन सन, हम तुम तेँ कछु घाटि ?।
जानहिँ ब्रह्म सो बिप्रवर, आँखि दिखावहिँ डाँटि ॥५५३॥
साखी सबदी दोहरा, कहि किहनी उपखान।
भगति निरूपहिँ भगत कलि, निन्दहिँ बेद पुरान ॥५५४॥
स्रुति-सम्मत हरि-भक्तिपथ, संजुत - बिरति-बिवेक।
तेहि परिहरिहिँ बिमोहबस, कलपहिँ पन्थ अनेक ॥५५५॥
सकल धरम बिपरीत कलि, कल्पित कोटि कुपन्थ।
पुन्य पराइ पहार बन, दुरे पुरान सुभ ग्रन्थ ॥५५६॥
धातुबाद निरुपाधि बर, सदगुरु-लाभ सुमीत।
देव-दरस कलिकाल मैं, पोथिन दुरे सभीत ॥५५७॥
सुर-सदननि तीरथ पुरिन, निपट कुचालि कुसाज।
मनहुँ मवासे मारि कलि, राजत सहित समाज ॥५५८॥
गोँड़ गँवार नृपाल महि, यमन महा-महिपाल।
साम न दाम न भेद कलि, केवल दंड कराल ॥५५९॥
फोरहिँ सिल लोढ़ा सदन, लागे अढुक पहार।
कायर कूर कुपूत कलि, घर घर सहस डहार ॥५६०॥
प्रगट चारि पद धरम के, कलि महँ एक प्रधान।
येनकेन बिधि दीन्हे, दान करै कल्यान ॥५६१॥
कलिजुग सम जुग आन नहिँ, जो नर कर बिस्वास।
गाइ राम-गुन गन बिमल, भव तर बिनहिँ प्रयास ॥५६२॥
स्रवन घटहु पुनि दृग घटहु, घटहु सकल बल देह।
इते घटे घटिहै कहा, जो न घटै हरि-नेह ॥५६३॥

धातुबाद=रसायन। मवासे मारि=क़िला बाँध कर। डहार=डालनेवाले, तंग करनेवाले। येनकेन=जिस किसी तरह।

तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन ।
अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहैं कौन ॥५६४॥
कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दम्भ पाखंड ।
दहन रामगुन-ग्राम जिमि, ईंधन अनल प्रचंड ॥५६५॥
सो०—कलि पाखंड प्रचार, प्रबल पाप पाँवर पतित ।
तुलसी उभय अधार, रामनाम सुरसरि-सलिल ॥५६६॥
दो०—रामचन्द्र-मुख-चन्द्रमा, चित चकोर जब होइ ।
रामराज सब काज सुभ, समय सुहावन सोइ ॥५६७॥
बीज राम-गुनगन नयन, जल अङ्कुर पुलकालि ।
सुकृती-सुतन सुखेत बर, बिलसत तुलसी सालि ॥५६८॥
तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम ।
सगुन सुमङ्गल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥५६९॥
पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब साहिबी, सुमिरत सीताराम ॥५७०॥
मनिमय दोहा दीप जहँ, उरघर प्रगट प्रकास ।
तहँ न मोह भय-तम तमी, कलि कज्जली बिलास ॥५७१॥
का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिये साँच ।
काम जु आवै कामरी, का लै करै कुमाच ॥५७२॥
मनि मानिक महँगे किये, सहँगे तृन जल नाज ।
तुलसी एतो जानिये, राम गरीब-नेवाज ॥५७३॥

तमी=रात्रि । कुमाच=एक प्रकार का रेशमी कपड़ा । सहँगे=सस्ते ।

कवित्त-रामायण

बालकांड

सवैया—अवधेस के द्वारे सकारे गई सुत गोद कै भूपति लै निकसे ।
अवलोकिहौं सोच विमोचन को ठगि सी रही जे न ठगे धिक से ॥
तुलसी मनरञ्जन रञ्जित अञ्जन नैन सु खञ्जन-जातक से ।
सजनी ससि मैं समसील उभै नवनील सरोरुह से बिकसे ॥१॥
पग नूपुर औ पहुँची करकञ्जनि मञ्जु बनी मनिमाल हिये ।
नवनील कलेवर पीत झँगा झलकैं पुलकैं नृप गोद लिये ॥
अरविन्द सो आनन रूपमरन्द अनन्दित लोचन-भृङ्ग पिये ।
मन मौं न बस्यौ अस बालक जौ तुलसी जग मैं फल कौन जिये ?॥२॥
तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन कञ्ज की मंजुलताई हरैं ।
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे छबि भूरि अनङ्ग की दूरि धरैं ॥
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यौं किलकैं कल बाल-बिनोद करैं ।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन मन्दिर मैं बिहरैं ॥३॥
कबहूँ ससि माँगत आरि करैं कबहूँ प्रतिबिम्ब निहारि डरैं ।
कबहूँ करताल बजाइ कै नाचत मातु सबै मन मोद भरैं ॥
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठि कै पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं ।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन मन्दिर मैं बिहरैं ॥४॥
बर दन्त की पङ्गति कुन्दकली अधराधर-पल्लव खोलन की ।
चपला चमकै घन बीच जगै छबि मोतिन माल अमोलन की ॥

जातक=बच्चा । समसील=समान, समानतावाला । झँगा=कुरती । अरि=टेक, जिद्द ।
अरैं=अड़ जाते हैं ।

घुँघुरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर कुंडल लोल कपोलन की।
निवछावरि प्रान करै तुलसी बलिजाउँ लला इन बोलन की ॥५॥
पदकञ्जनि मञ्जु बनी पनहीं धनुहीं सर पङ्कजपानि लिये।
लरिका सँग खेलत डोलत हैं सरजूतट चौहट हाट हिये॥
तुलसी अस बालक सों नहिं नेह कहा जप जोग समाधि किये ?।
नर ते खर सूकर स्वान समान कहौ जग मैं फल कौन जिये ॥६॥
सरजू बर तीरहि तीर फिरैं रघुबीर सखा अरु बीर सबै।
धनुहीं कर तीर निषङ्ग कसे कटि पीत दुकूल नवीन फबै॥
तुलसी तेहि औसर लावनिता दस चारि नौ तीनि इकीस सबै।
मति-भारति पङ्गु भई जो निहारि बिचारि फिरी उपमा न पवै ॥७॥

कवित–छोनी मैं के छोनीपति छाजे जिन्हैं छत्रछाया,
छोनी छोनी छाये छिति आये निमिराज के।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बर बेष वपु,
बरबे के बोले वयदेही बरकाज के॥
बोले बन्दी बिरद बजाइ बर बाजनेऊ,
बाजे बाजे बीर बाहु धुनत समाज के।
तुलसी मुदित मन पुरनर-नारि जेते,
बारबार हेरैं मुख औध-मृगराज के ॥८॥
सीय के स्वयम्बर समाज जहाँ राजनि को,
राजनि के राजा महाराजा जानै नाम को।

दस, चारि......सबै=माधुर्य के दस गुण (रूप, लावण्य, सौन्दर्य्य, माधुर्य्य, सौकुमार्य्य, यौवन सुगन्ध, सुवेश, भाग्य, स्वच्छता, उज्वलता)। प्रताप के चार गुण (ऐश्वर्य्य, वीर्य्य, तेज,बल)। ऐश्वर्य के नौ गुण (अदभ्रता, नियतात्मा, वशीकरण, वाग्मित्व; सर्वज्ञता, संहनन, स्थिरता, वदान्यता)। प्रकृति के तीन गुण (सौम्यता, रमण, व्यापकता)। यश के इक्कीस गुण (सुशीलता, वात्सल्य, सुलभता गंभीरता, क्षमा, दया,करुणा, आर्द्रव, उदारता, आर्जव, शरण्यत्व, सौहार्द; चातुर्य्य, प्रीतिपालन, कृतज्ञता, ज्ञान, नीति, लोकप्रियता, कुलीनता; अनुराग, निर्वहणता)। फबैं=शोभै। पवै=पाती है। छोनी=पृथ्वी। छोनीपति=राजा, भूपाल।

पवन पुरन्दर कृसानु भानु धनद से,
गुन के निधान रूपधाम सोम काम को ॥
बान बलवान जातुधानप सरीखे सूर,
जिन्हके गुमान सदा सालिम संग्राम को ।
तहाँ दसरत्थ के समर्थ नाथ तुलसी के,
चपरि चढ़ायो चाप चन्द्रमा-ललाम को ॥९॥
मयनमहन पुरदहन गहन जानि,
आनि कै सबै को सारु धनुष गढ़ायो है।
जनक सदसि जेते भले भले भूमिपाल,
किये बलहीन बल आपनो बढ़ायो है ॥
कुलिस कठोर कूर्म पीठ तें कठिन अति,
हठि न पिनाक काहू चपरि चढ़ायो है।
तुलसी सो राम के सरोज-पानि परसत,
टूट्यौ मानौं बारे ते पुरारि ही पढ़ायो है ॥१०॥
छप्पय—डिगति उर्वि अति गुर्वि सर्व पब्बै समुद्र सर ।
ब्याल बधिर तेहि काल बिकल दिगपाल चराचर ॥
दिग्गयन्द लरखरत परत दसकंठ मुक्खभर ।
सुरविमान हिमभानु भानु सङ्घटित परस्पर ॥
चौंके विरञ्चि सङ्कर सहित, कोल कमठ अहि कलमल्यौ ।
ब्रह्मांड खंड कियो चंड धुनि, जबहिँ राम सिवधनु दल्यौ ॥११॥
कवित्त—लोचनाभिराम घनस्याम रामरूप सिसु,
सखी कहै सखी सौं तू प्रेमपय पालि री !
बालक नृपालजू के ख्याल ही पिनाक तोरयो,
मंडलीक-मंडली-प्रताप-दाप दालि री ॥

सोम=चन्द्रमा । सालिम=दृढ़, अविचलित । चन्द्रमा-ललाम=चन्द्रभूषण, शिव । सदसि=सभा। हिम भानु=चंद्रमा। उर्वि=धरती। संघटित=मिलीजुली। दाप=दर्प, क्रोध।

जनक को सीय को हमारो तेरो तुलसी को,
सब को भावतो ह्वैहै मैं जो कह्यो कालि री।
कौसिला की कोखि पर तोषि तन वारिये री,
राय दसरत्थ की बलैया लीजै आलि री ॥१२॥

दूब दधि रोचना कनकथार भरि भरि,
आरती सँवारि बर नारि चलीं गावतीं।
लीन्हें जयमाल करकञ्ज सोहैं जानकी के,
पहिराओ राघोजू को सखियाँ सिखावतीं॥

तुलसी मुदितमन जनक नगरजन,
झाँकती झरोखे लागी सोभा रानी पावतीं।
मनहुँ चकोरी चारु बैठीं निज निज नीड़,
चन्द की किरन पीवैं पलकैं न लावतीं ॥१३॥

नगर निसान बर बाजैं ब्योम दुन्दुभी,
बिमान चढ़ि गान कै कै सुरनारि नाँचहीं।
जय जय तिहूँ पुर जयमाल रामउर,
बरषैं सुमन सुर रूरे रूप राँचहीं॥

जनक को पन जयो सब को भावतो भयो,
तुलसी मुदित रोम रोम मोद माँचहीं।
साँवरो किसोर गोरी सोभा पर तृन तोरि,
जोरी जियो जुग जुग सखीजन जाँचहीं ॥१४॥

भले भूप कहत भले भदेस भूपनि सों,
लोक लखि बोलिये पुनीत रीति मारखी।
जगदम्बा जानकी जगतपितु रामभद्र,
जानि जिय जोवो जो न लागै मुँह कारखी॥

रोचना=हलदी। नीड़=घोसला। भदेस=भ्रष्ट।

देखे हैं अनेक ब्याह सुने हैं पुरान बेद,
बूझे हैं सुजान साधु नर नारि पारखी।
ऐसे सम समधी समाज ना विराजमान,
राम से न बर दुलही न सीय सारखी ॥१५॥

बानी बिधि गौरी हर सेस हू गनेस कही,
सही भरी लोमस भुसुंडी बहुबारिखो।
चारिदस भुवन निहारि नर नारि सब,
नारद को परदा न नारद सो पारिखो॥

तिन कही जग मैं जगमगति जोरी एक,
दूजो को कहैया औ सुनैया चषचारिखो।
रमा रमारमन सुजान हनुमान कही,
सीय सी न तीय न पुरुष राम सारिखो ॥१६॥

सवैया—दूलह श्रीरघुनाथ बने दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं।
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि बेद जुवा जुरि बिप्र पढ़ाहीं॥
राम को रूप निहारति जानकी कङ्कन के नग की परछाहीं।
यातें सबै सुधि भूलि गई कर टेकि रही पल टारति नाहीं ॥१७॥

कवित्त—भूपमंडली प्रचंड चंडीस-कोदंड खंड्यौ,
चंड बाहुदंड जाको ताही सों कहत हैं।
कठिन कुठार धार धारिबे की धीरताहि,
बीरता बिदित ताकी देखिये चहत हैं॥
तुलसी समाज राज तजि सो बिराजै आजु,
गाज्यो मृगराज गजराज ज्यों गहतु हैं।
छोनी मैं न छाँड्यौ छप्यौ छोनिप को छौना छोटो,
छोनिप-छपन बाँको बिरद बहत हैं ॥१८॥

पारखी = परीक्षक। सारखी = समान। बहु बारिखो = बहुत काल के, दीर्घजीवी। चष = नेत्र। चंड = उग्र। चंडीस = शिव। छोनी = पृथ्वी। छोनिप = राजा। छौना = बच्चा।

निपट निदरि बोले बचन कुठारपानि,
मानि त्रास औनिपन मानौ मौनता गही।
रोषे माखे लखन अकनि अनखौहीं बातैं,
तुलसी बिनीत बानी बिहँसि ऐसी कही॥
सुजस तिहारो भरो भुवननि भृगुनाथ,
प्रगट प्रताप आपु कहौ सो सबै सही।
टूट्यौ सो न जुरैगो सरासन महेसजू को,
रावरी पिनाक मैं सरीकता कहा रही॥१९॥

सवैया--गर्भ के अर्भक काटन को पटु धार कुठार कराल है जाको।
सोई हौं बूझत राजसभा धनु को दल्यो हौं दलिहौं बल ताको॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो लरिहै मरिहै करिहै कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो सो ढोटो है काको॥२०॥

कवित्त--मख राखिबे के काज राजा मेरे सङ्ग दये,
जीते जातुधान जे जितैया बिबुधेस के।
गौतम की तीय तारी मेटे अघ भूरि भारी,
लोचन अतिथि भये जनक जनेस के॥
चंड बाहुदंड बल चंडीस-कोदंड खंड्यौ,
ब्याहि जानकी को जीते भूप देस देस के।
साँवरे गोरे सरीर धीर महा बीर दोऊ,
नाम राम लखन कुमार कोसलेस के॥ २१॥

सवैया--काल कराल नृपालन के धनुभङ्ग सुने फरसा लिये धाये।
लक्खन राम बिलोकि सप्रेम महा रिसि ते फिरि आँखि दिखाये॥
धीर-सिरोमनि बीर बड़े बिनयी बिजयी रघुनाथ सुहाये।
लायक हे भृगुनायक सोँ धनुसायक सौंपि सुभाय सिधाये॥२२॥

अकनि=सुनकर। सरीकता=साझा, बराबरी। साका करना=नामवरी का काम करना। ढोटो=पुत्र। बिबुधेस=इन्द्र।

अयोध्या कांड

सवैया–कीर के कागर ज्यौं नृपचीर बिभूषन उप्पम अङ्गनि पाई।
औध तजी मगबास के रूख ज्यौं पन्थ के साथी ज्यौं लोग-लुगाई॥
सङ्ग सुबन्धु पुनीत प्रिया मनो धर्म क्रिया धरि देह सुहाई।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं॥ १॥
कागर-कीर ज्यौं भूषन चीर सरीर लस्यो तजि नीर ज्यौं काई।
मातु पिता प्रिय लोग सबै सनमानि सुभाय सनेह सगाई॥
सङ्ग सुभामिनि भाइ भलो दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं॥ २॥

कवित्त–सिथिल सनेह कहैं कौसिला सुमित्राजू सौं,
मैं न लखो सौति सखी! भगिनी ज्यौं सेई है।
कहैं मोहिं मैया कहौं मैं न मैया भरत की,
बलैया लेहौं भैया तेरी मैया कैकेई है॥
तुलसी सरल भाय रघुराय माय मानी,
काय मन बानी हूँ न जानी कै मतेई है।
बाम बिधि मेरो सुख सिरिससुमन सम,
ताको छल-छुरी कोह-कुलिस लै टेई है॥ ३॥
कीजै कहा जीजी जू सुमित्रा परि पायँ कहै,
तुलसी सहावै बिधि सोई सहियतु है।
रावरो सुभाव राम-जन्म ही तें जानियत,
भरत की मातु को कि ऐसो चहियतु है॥
जाई राजघर ब्याहि आई राजघर माहँ,
राज-पूत पाये हूँ न सुख लहियतु है।

कागर=पंख, पिँजड़ा। हुते=थे। धर्मक्रिया=धर्म और कर्म। बटाऊ=बटोही, मुसाफ़िर। मतेई=विमाता, सौतेली माँ।

देह सुधागेह ताहि मृगहू मलीन कियो,
ताहू पर बाहु बिनु राहु गहियतु है ॥४॥

सवैया—नाम अजामिल से खलकोटि अपार नदी भव बूड़त काढ़े।
जो सुमिरे गिरि-मेरु सिला-कन होत अजाखुर बारिधि बाढ़े॥
जा पद पङ्कज ते तुलसी प्रगटी तटिनी जो हरै अघ गाढ़े।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े॥५॥

एहि घाट तैं थोरिक दूर अहै कटि लैाँ जल-थाह देखाइ हैाँ जू।
परसे पगधूरि तरै तरनी घरनी घर क्यौँ समुझाइहैाँ जू॥
तुलसी अवलम्ब न और कछू लरिका केहि भाँति जिआइहैाँ जू।
बरु मारिये मोहिँ बिना पग धोये हैाँ नाथ न नाव चढ़ाइहैाँ जू॥६॥

रावरे दोष न पायँन को पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है।
पाहन तैं बन-बाहन काठ को कोमल है जल खाइ रहा है॥
पावन पायँ पखारि कै नाव चढ़ाइहैाँ आयसु होत कहा है।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है॥७॥

कवित्त—पात भरी सहरी सकल सुत बारे बारे,
केवट की जाति कछू बेद ना पढ़ाइहैाँ।
सब परिवार मेरो याही लागि राजा जू हैाँ,
दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहैाँ॥
गैातम की घरनी ज्यौँ तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सोँ निषाद ह्वैकै बाद न बढ़ाइहैाँ।
तुलसी के ईस राम रावरे सोँ साँची कहैाँ,
बिना पग धोये नाथ नाव न चढ़ाइहैाँ॥८॥

जिनको पुनीत बारि धारे सिर पै पुरारि,
त्रिपथगामिनि-जस बेद कहै गाइ कै।

सुधागेह=चंद्रमा, कैकेयी को अधरामृत। स्वै=सोई, वही। बनबाहन=नौका। बन=जल। त्रिपथ गामिनि=गंगा।

जिनको जोगीन्द्र मुनिवृन्द देव देह भरि
करत बिराग जप जोग मन लाइ कै ॥
तुलसी जिनकी धूरि परसि अहल्या तरी,
गौतम सिधारे गृह गौनो सो लिवाइ कै।
तेई पायँ पाइकै चढ़ाइ नाव धोये बिनु,
ख्वैहौं न पठावनी के ह्वै हौं न हँसाइ कै ॥९॥
प्रभुरुख पाइ कै बोलाइ बाल घरनिहिं,
बन्दि कै चरन चहूँ दिसि बैठे घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गङ्गाजू को,
धोइ पाँय पीयत पुनीत बारि फेरि फेरि ॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर,
बरषैं सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।
बिबुध-सनेह-सानी बानी असयानी सुनी,
हँसे राघो जानकी लखन तन हेरि हेरि ॥१०॥

सवैया—पुर तें निकसी रघुबीर-बधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पट सूखि गये मधुराधर वै ॥
फिरि बूझति हैं चलनो अब केतिक पर्नकुटी करिहौ कित ह्वै।
तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीं जल च्वै।११॥
जलसूखि गये रसनाधर मञ्जुल कञ्ज से लोचन चारु चुवैं।
करुनानिधि कन्त तुरन्त कह्यौ कि दुरन्त महावन है इतवै!
सरसीरुह-लोचन मोचत नीर चितै रघुनायक सीय पै ह्वै।
अब हीं बन भामिनि! पूछति हौ तजि कोसलराज पुरी दिन द्वै ॥१२॥
जल को गये लक्खन हैं लरिका परिखौ पिय! छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े।
पोंछि पसेउ बयारि करौं अरु पायँ पखारिहौं भूभुरि डाढ़े ॥

भरि=पर्यन्ता। पठावनी=मज़दूरी। असयानी=मूर्खताभरी। पर्नकुटी=पत्ते की झोपड़ी। भूभुरि=गरम धूल। डाढ़े=ज्वाला।

तुलसी रघुबीर प्रिया स्रम जानि कै बैठि बिलम्ब लौं कंटक काढ़े।
जानकी नाह को नेह लख्यो पुलको तनु बारि बिलोचन बाढ़े॥ १३॥

ठाढ़े हैं नौ द्रुम डार गहे धनु काँधे धरे कर सायक लै।
बिकटी भृकुटी बड़री अँखियाँ अनमोल कपोलन की छबि है॥
तुलसी असि मूरति आनि हिये जड़ डारिहौं प्रान निछावरि कै।
स्रम-सीकर साँवरि देह लसै मनो रासि महा तम तारक मै॥१४॥

कवित्त—जलजनयन जलजानन जटा है सिर,
जोबन उमङ्ग अङ्ग उदित उदार हैं।
साँवरे गोरे के बीच भामिनी सुदामिनी सी,
मुनिपट धरे उर फूलनि के हार हैं॥
करनि सरासन सिलीमुख निषङ्ग कटि,
अतिही अनूप काहू भूप के कुमार हैं।
तुलसी बिलोकि कै तिलोक के तिलक तीनि,
रहे नरनारि ज्यों चितेरे चित्रसार हैं॥ १५॥

आगे सोहै साँवरो कुवँर गोरो पाछे पाछे,
आछे मुनि बेष धरे लाजत अनङ्ग हैं।
बान बिसिषासन बसन बन ही के कटि,
कसे हैं बनाइ नीके राजत निषङ्ग हैं॥
साथ निसिनाथमुखी पाथनाथ-नन्दिनी सी,
तुलसी बिलोके चित लाइ लेत सङ्ग हैं।
आनँद उमङ्ग मन जोबन उमङ्ग तन,
रूप की उमङ्ग उमगत अङ्ग अङ्ग हैं॥१५॥

सुन्दर बदन सरसीरुह सुहाये नैन,
मञ्जुल प्रसून माथे मुकुट जटनि के।

तारक=तारागण। चितेरा=मुसौवर। बनाइ=अच्छी तरह, खूब। प्रसून=फूल।

अंसनि सरासन लसत सुचि कर सर,
तून कटि मुनिपट लूटक पटनि के ॥
नारि सुकुमारि सङ्ग जाके अङ्ग उबटि कै,
बिधि बिरचे बरूथ विद्युतछटनि के ।
गोरे को बरन देखे सोनो न सलोनो लागै,
साँवरे बिलोके गर्ब घटत घटनि के ॥१६॥

बल्कल बसन धनुबान पानि तून कटि,
रूप के निधान घन-दामिनी-बरन हैं ।
तुलसी सुतीय सङ्ग सहज सुहाये अङ्ग,
नवल कवँल हू ते कोमल चरन हैं ॥
औरै सो बसन्त औरै रति औरै रतिपति,
मूरति बिलोके तन मन के हरन हैं ।
तापस बेषै बनाइ पथिक पथै सुहाइ,
चले लोक-लोचननि सुफल करन हैं ॥१७॥

सवैया—बनिता बनी स्यामल गौर के बीच बिलोकहु री सखी! मोहिं सी ह्वै।
मग जोग न कोमल क्यों चलिहैं ? सकुचात मही पदपङ्कज छ्वै ॥
तुलसी सुनि ग्रामबधू बिथकीं पुलकीं तन औ चले लोचन च्वै ।
सब भाँति मनोहर मोहन रूप अनूप हैं भूप के बालक द्वै ॥१८॥

साँवर गोर सलोने सुभाय मनोहरता जिति मैन लियो है ।
बान कमान निषङ्ग कसे सिर सोहैं जटा मुनिवेष कियो है ॥
सङ्ग लिये बिधुबैनी बधू रति को जेहि रञ्चक रूप दियो है ।
पाँयन तौ पनहीं न पयादेहिं क्यों चलिहैं ? सकुचात हियो है ॥१९॥

रानी मैं जानी अजानी महा पवि पाहन हू ते कठोर हियो है ।
राज हु काज अकाज न जान्यो कह्यो तिय को जिन कान कियो है ॥

लूटक पटनि के=वस्त्रों का शोभा को हरनेवाले। घटनि=घटाओं। बिधुबैनी=चंद्रवदनी।

ऐसी मनोहर मूरति ये बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है ? ।
आँखिन मैं सखि राखिबे जोग इन्हैं किमि कै बनबास दियो है ॥२०॥

सीस जटा उर बाहु बिसाल बिलोचन लाल तिरीछी सी भौंहैं ।
तून सरासन बान धरें तुलसी बन-मारग मैं सुठि सोहैं ॥
सादर बारहिं बार सुभाय चितै तुम त्यौं हमरो मन मोहैं ।
पूछति ग्रामबधू सियसों कहौ साँवरे से सखि रावरे को हैं ॥२१॥

सुनि सुन्दर बैन सुधारस-साने सयानी हैं जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसकाइ चली ॥
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकति लोचन लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग मैं भानु उदै बिगसीं मनो मञ्जुल कञ्ज-कली ॥२२॥

धरि धीर कहैं चलु देखिय जाइ जहाँ सजनी रजनी रहिहैं ।
कहिहै जग पोच न सोच कछू फल लोचन आपन तौ लहिहैं ॥
सुख पाइहैं कान सुने बतियाँ कल आपस मैं कछू पै कहिहैं ।
तुलसी अति प्रेम लगीं पलकैं पुलकीं लखि राम हिये महि हैं ॥२३॥

पद कोमल स्यामल गौर कलेवर राजत कोटि मनोज लजाये ।
कर बान सरासन सीस जटा सरसीरुह लोचन सोन सुहाये ॥
जिन देखे सखी! सतभायहु तें तुलसी तिन तौ मन फेरि न पाये।
यहि मारग आजु किसोर बधू बिधुबैनी समेत सुभाय सिधाये ॥२४॥

मुखपङ्कज कञ्ज बिलोचन मञ्जु मनोज-सरासन सी बनी भौंहैं ।
कमनीय कलेवर कोमल स्यामल गौर किसोर जटा सिर सोहैं ॥
तुलसी कटि तून धरे धनु बान अचानक दीठि परी तिरछौहैं ।
केहि भाँति कहौं सजनी तोहि सोँ मृदु मूरति द्वै निवसी मन मोहैं ॥२५॥

प्रेम सोँ पीछे तिरीछे प्रियाहि चितै चित दै चले लै चित चोरे।
स्याम सरीर पसेउ लसै हुलसै तुलसी छबि सो मन मोरे ॥

तून=तरकस। कल=सुन्दर। सोन=लाल। कामनीय=सुन्दर। कलेवर=शरीर। पसेऊ=पसीना।

लोचन लोल चलैं भृकुटी कल काम-कमानहुँ सो तृन तोरे।
राजत राम कुरङ्ग के सङ्ग निषङ्ग कसे धनु सों सर जोरे ॥२६॥
सर चारिक चारु बनाइ कसे कटि पानि सरासन सायक लै।
बन खेलत राम फिरैं मृगया तुलसी छवि सो बरनै किमि कै?॥
अवलोकि अलौकिक रूप मृगी मृग चौंकि चकैं चितवैं चितदै।
न डगैं न भगैं जिय जानि सिलीमुख पञ्च धरं रतिनायक है ॥२७॥
बिन्ध्य के बासी उदासी तपोव्रतधारी महा बिनु नारि दुखारे।
गौतमतीय तरी तुलसी सो कथा सुनि भे मुनिवृन्दसुखारे॥
ह्वै हैं सिला सब चन्द्रमुखी परसे पद-मञ्जुल-कञ्ज तिहारे।
कीन्हीं भली रघुनायकजू करुना करि कानन को पगु धारे ॥२८॥

आरण्य कांड

सवैया—पञ्चबटी बर पर्नकुटी तर बैठे हैं राम सुभाय सुहाये।
सोहै प्रिया प्रिय बन्धु लसै तुलसी सब अङ्ग घने छबिछाये॥
देखि मृगा मृगनैनी कहे प्रिय बैन ते प्रीतम के मन भाये।
हेमकुरङ्ग के सङ्ग सरासन सायक लै रघुनायक धाये ॥ १ ॥

किष्किन्धा कांड

कवित्त—जब अङ्गदादिन की मति गति मन्द भई,
पवन के पूत को न कूदिबे को पल गो।
साहसी ह्वै सैल पर सहसा सकेलि आइ,
चितवत चहूँ ओर औरन को कल गो॥
तुलसी रसातल को निकसि सलिल आयो,
कोल कलमल्यो अहि कमठ को बल गो।

सिलीमुख पञ्च धरं=पाँच बाण धारण करनेवाला कामदेव। हेमकुरंग=स्वर्ण मृग। सकेलि=बटोर कर। कल=चैन।

चारिहू चरन के चपेट चाँपे चिपिटि गो,
उचके उचकि चारि अङ्गुल अचल गो ॥१॥

सुन्दर कांड

कबित्त—बासव बरुन बिधि बन तेँ सुहावनो,
दसानन को कानन बसन्त को सिँगार सो।
समय पुराने पात परत डरत बात,
पालत लालत रति मार को बिहार सो॥
देखे बर बापिका तड़ाग बाग को बनाव,
रागबस भो बिरागी पवनकुमार सो।
सीय की दसा बिलोकि बिटप असोक तर,
तुलसी बिलोक्यो सो तिलोक सोक-सार सो॥१॥
माली मेघमाल बनपाल बिकराल भट,
नीके सब काल सींचै सुधासार नीर को।
मेघनाद तेँ दुलारो प्रान तेँ पियारो बाग,
अति अनुराग जिय जातुधान धीर को॥
तुलसी सो जानि सुनि सीय को दरस पाइ,
पैठो बाटिका बजाइ बल रघुबीर को।
बिद्यमान देखत दसानन को कानन सो,
तहस-नहस कियो साहसी समीर को॥२॥
बसन बटोरि बोरि बोरि तेल तमीचर,
खोरि खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर हैँ।
तैसो कपि कौतुकी डरात ढीलो गात कै कै,
लात के अघात सहै जी मैं कहै कूर हैँ॥

उचके उचकि=उठ कर उछले। अचल=पर्वत। बासव=इन्द्र। लालत=प्यार करता है। सोक-सार=शोक का तत्व। बजाइ=घोषित करके। बिद्यमान=मौजूद। तहस-नहस=बरबाद। अघात=चोट।

बाल किलकारी कै कै तारी दै दै गारी देत,
पाछे लागे बाजत निसान ढोल तूर हैं।
बालधी बढ़न लागी ठौर ठौर दीन्हीं आगि,
बिन्ध की दवारि कैधौं कोटिसत सूर हैं ॥३॥

लाइ लाइ आगि भागे बाल-जाल जहाँ तहाँ,
लघु ह्वै निबुकि गिरिमेरु तें बिसाल भो।
कौतुकी कपीस कूदि कनक कँगूरा चढ़ि,
रावन भवन जाइ ठाढ़ो तेहि काल भो॥
तुलसी बिराज्यो ब्योम बालधी पसारि भारी,
देखे हहरात भट काल तें कराल भो।
तेज को निधान मानो कोटिक कृसानु भानु,
नख बिकराल मुख तैसो रिस-लाल भो ॥४॥

बालध बिसाल बिकराल ज्वाल-जाल मानो,
लङ्क लीलिबे को काल रसना पसारी है।
कैधौं ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि सो उघारी है॥
तुलसी सुरेस-चाप कैधौं दामिनी कलाप,
कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है।
देखे जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं,
कानन उजार्‌यो अब नगर प्रजारी है ॥५॥

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
जरत निकेत धाओ धाओ लागी आगि रे।
कहाँ तात मात भ्रात भगिनी भामिनी भाभी,
ढोटे छोटे छोहरा अभागे भोरे भागि रे॥

तूर=तुरही,सिंहा। बालधी=पूँछ। दवारि=अग्नि। ब्योमबीथिका=आकाशमार्ग। धूमकेतु=दुमदार सितारा। सुरेस चाप=इन्द्रधनुष। कलाप=समूह। बुबुक=जोर से रोना। बुबुकारी=बुक्का फाड़ कर रोना। छोहरा=लड़का।

हाथी छोरो घोरा छोरो महिष बृषभ छोरो,
छेरी छोरो सोवै सो जगावो जागि जागि रे।
तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
बार बार कह्यो पिय कपि सों न लागि रे ॥६॥
देखि ज्वालजाल हाहाकार दसकन्ध सुनि,
कह्यो धरो धरो धाये बीर बलवान हैं।
लिये सूल सेल पास परिघ प्रचंड दंड,
भाजन सनीर धीर धरे धनुबान हैं॥
तुलसी समिध सौंज लङ्क-जज्ञकुंड लखि,
जातुधान पुङ्गीफल जव तिल धान हैं।
स्रुवा सो लँगूल बलमूल प्रतिकूल हवि,
स्वाहा महा हाँकि हाँकि हुनै हनुमान हैं॥७॥
गाज्यो कपि गाज ज्यों बिराज्यो ज्वालजाल-जुत,
भाजे बीर धीर अकुलाइ उठ्यो रावनो।
धाओ धाओ धरो सुनि धाये जातुधानधारि,
वारिधारा उलहैं जलद ज्यों नसावनो।
लपट झपट झहराने हहराने बात,
भहराने भट पर्यो प्रबल परावनो।
ढकनि ढकेलि पेलि सचिव चले लै ठेलि,
नाथ न चलैगो बल अनल भयावनो ॥८॥
बड़ो बिकराल बेष देखि सुनि सिंहनाद,
उठ्यो मेघनाद सबिषाद कहै रावनो।
बेग जीत्यो मारुत प्रताप मारतंड कोटि,
कालऊ करालता बड़ाई जीत्यो बावनो।

हवि=होम की सामग्री। गाज=बिजली। उलहैं=गिराते हैं। समिध=यज्ञ की लकड़ी। सौंज=सामग्री। स्रुवा=हवन करने का पात्र। लँगूल=पूँछ।

तुलसी सयाने जातुधान पछिताने मन,
जाको ऐसो दूत सो साहबअबै आवनो ॥
काहे की कुसल रोषे राम बामदेवहू के,
बिषम बली सोँ बादि बैर को बढ़ावनो ॥९॥
पानी पानी पानी सब रानी अकुलानी कहैँ,
जाति हैँ परानी गति जानि गजचालि है।
बसन बिसारैँ मनि भूषन सँभारत न,
आनन सुखाने कहैँ क्योँहूँ कोऊ पालिहै ?
तुलसी मँदोवे मीँजि हाथ धुनि माथ कहै,
काहू कान कियो न मैँ कह्यो केतो कालि है॥
बापुरो बिभीषन पुकारि बार बार कह्यो,
बानर बड़ी बलाइ घने घर घालि है ॥१०॥
कानन उजारयो तौ उजारयो न बिगारेउ कछू,
बानर बिचारो बाँधि आन्यो हठिहार सोँ।
निपट निडर देखि काहू ना लख्यो बिसेषि,
दीन्होँ ना छुड़ाइ कहि कुल के कुठार सोँ।
छोटे श्रौ बड़ेरे मेरे पूतऊ अनेरे सब,
साँपनि सोँ खेलैँ मेलैँ गरे छुराधार सोँ ॥
तुलसी मँदोवै रोइ रोइ के बिगोवै आपु,
बार बार कह्यौँ मैँ पुकारि दाढ़ीजार सोँ ॥११॥
रानी अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहिँ,
सकैँ ना बिलोकि बेष केसरीकुमार को।
मीँजि मीँजि हाथ धुनैँ माथ दसमाथ-तिय,
तुलसी तिलौ न भयो बाहिर अगार को।

मँदोवै=मंदोदरी। हठिहार=जिद्दी। डाढ़त=दाह से जलती हुई। अनेरे=व्यर्थ, निकम्मे बिगोवै आपु=अपने को छिपाती है।

सब असबाब डाढ़ो मैं न काढ़ो तैं न काढ़ो,
जिय की परी सँभार सहन भँडार को ? ।
खीझति मँदोवै सबिषाद देखि मेघनाद,
बयो लुनियत सब याही दाढ़ीजार को ॥१२॥
रावन की रानी जातुधानी बिलखानी कहैं,
हाहा ! कोऊ कहै बीसबाहु दसमाथ सोँ ।
काहे मेघनाद काहे काहे रे महोदर ! तू,
धीरज न देत लाइ लेत क्योँ न हाथ सोँ ? ॥
काहे अतिकाय काहे काहे रे अकम्पन,
अभागे तिय त्यागे भोँड़े भागे जात साथ सोँ ? ।
तुलसी बढ़ाय बादि साल तैं बिसाल बाहैं,
याही बल बालिसो ! बिरोध रघुनाथ सोँ ॥१३॥
हाट बाट कोट ओट अटनि अगार पौरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है ।
आरत पुकारत सँभारत न कोऊ काहू,
ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि है ॥
बालधी फिरावै बार बार झहरावै झरैं,
बूँदिया सी लङ्क पघिलाइ पाग पागिहै ।
तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
चित्रहू के कपि सोँ निसाचर न लागिहै ॥१४॥
लागि लागि आगि भागि भागि चले जहाँ तहाँ,
धीय को न माय बाप पूत न सँभारहीं ।
छूटे बार बसन उघारे धूमधुन्धअन्ध,
कहैं बारे बूढ़े बारि बारि बार बारहीं ॥

लुनियत=लवती हूँ । साल=साँखू । बालधी=पूँछ । धीय=पुत्री ।

हय हिहिनात भागे जात घहरात गज,
भारी भीर ठेलि पेलि रौंदि खौंदि डारहीं।
नाम लै चिलात बिललात अकुलात अति,
तात तात! तौंसियत झौंसियत झारहीं ॥१५॥

लपट कराल ज्वाल जाल माल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने पहिचानै कौन काहि रे?
पानी को ललात बिललात जरे गात जात,
परे पाइमाल जात भ्रात! तू निबाहि रे
प्रिया तू पराहि नाथ नाथ! तू पराहि बाप,
बाप! तू पराहि पूत पूत! तू पराहि रे।
तुलसी बिलोकि लोग ब्याकुल बिहाल कहैं,
लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे ॥१६॥

बीथिका बजार प्रति अटनि अगार प्रति,
पँवरि पगार प्रति बानर बिलोकिये।
अध ऊर्द्ध बानर बिदिसि दिसि बानर है,
मानहुँ रह्यो है भरि बानर तिलोकिये॥
मूँदे आँखि हीय मैं उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किये?।
लेहु अब लेहु तब कोऊ न सिखाओ मानो,
सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिये ॥१७॥

एक करै धौंज एक कहै काढ़ौ सौंज,
एक औंजि पानी पी कै कहै बनत न आवनो।
एक परे गाढ़े एक डाढ़त हीं काढ़े एक,
देखत हैं ठाढ़े कहैं पावक भयावनो॥

बिललात=इधर उधर मारे मारे फिरना। तौंसियत = तपे जाते हैं। झौंसियत=झुलसे जाते हैं। पाइमाल जात=पामाल होते हैं, नष्ट हुए जाते हैं। चाहि=देखि। पगार=भींति। सतराइ जाइ=चिढ़ जाता था। धौंज=दौड़धूप। सौंज=सामान। औंजि=अकुलाकर। डाढ़त=जलते हुए।

तुलसी कहत एक नीके हाथ लाये कपि,
अजहूँ न छाँड़ै बाल गाल को बजावनो।
धाओ रे बुझाओ रे कि बावरे हौ रावरे या,
औरे आगि लागी न बुझावै सिन्धु सावनो ॥१८॥
कोपि दसकन्ध तब प्रलयपयोद बोले,
रावन रजाइ धाइ आये जूथ जोरि कै ॥
कह्यो लङ्कपति लङ्क बरत बुताओ बेगि,
बानर बहाइ मारौ महा बारि बोरि कै ॥
भले नाथ! नाइ माथ चले पाथ प्रदनाथ,
बरषैं मुसलधार बार बार घोरि कै ॥
जीवन तें जागी आगी चपरि चौगुनी लागी,
तुलसी भभरि मेघ भागे मुख मोरि कै ॥१९॥
इहाँ ज्वाल जरे जात उहाँ ग्लानि गरे गात,
सूखे सकुचात सब कहत पुकार हैं।
जुग-षट भानु देखे प्रलय-कृसानु देखे,
सेषमुखअनल बिलोके बार बार हैं ॥
तुलसी सुन्यो न कान सलिल सर्पी समान,
अति अचरज कियो केसरीकुमार हैं।
बारिद बचन सुनि धुनैं सीस सचिवन्ह,
कहैं दससीस ईसबामता बिकार हैं ॥२०॥
पावक पवन पानी भानु हिमवान जम,
काल लोकपाल मेरे डर डाँवाडोल हैं।
साहिब महेस सदा सङ्कित रमेस मोहिं,
महातप साहस बिरञ्चि लीन्हे मोल हैं ॥

पयोद=बादल। घोरि कै=गरज कर। जीवन=जल। भभरि=डरकर। सर्पी=घृत, घी।
हिमवान=चन्द्रमा। डाँवाडोल=डगमग।

तुलसी तिलोक आजु दूजो न बिराजै राजा,
बाजे बाजे राजनि के बेटा बेटी ओल हैं ।
को है ईस नाम ! को जो बाम होत मोहू सो को,
मालवान ! रावरे के बावरे से बोल हैं ॥२१॥

भूमि भूमिपाल व्यालपालक पताल नाक-
पाल लोकपाल जेते सुभट समाज है ।
कहै मालवान जातुधानपति रावरे को,
मनहूँ अकाज आनै ऐसो कौन आज है ॥
रामकोह-पावक समीर सीयस्वास कीस,
ईस-बामता बिलोकु बानर को ब्याज है ।
जारत प्रचारि फेरि फेरि सो निसङ्क लङ्क,
जहाँ बाँको बीर तोसो सूर सिरताज है ॥२२॥

पान पकवान बिधि नाना को सँधानो सीधो,
बिबिध बिधान धान बरत बखारहीं ।
कनककिरीट कोटि पलँग पेटारे पीठ,
काढ़त कहार सब जरे भरे भारहीं ॥
प्रबल अनल बाढ़ै जहाँ काढ़ै तहाँ डाढ़ै,
झपट लपट भरे भवन भँडारहीं ।
तुलसी अगार न पगार न बजार बच्यो,
हाथी हथिसार जरे घोरे घोरसारहीं ॥२३॥

हाट बाट हाटक पिघिल चलो घी सो घनो,
कनक-कराही लङ्क तलफति ताय सोँ ।

ओल = अपने किसी प्रिय प्राणी को दूसरे के पास रख छोड़ना कि यदि वह प्रतिज्ञा न पूरी करे तो दूसरा प्राणी उस के साथ जो चाहे सो करे। ब्याज = बहाना। सँधानो = अचार। सीधो = सीधु, मदिरा। पीठ = पीढ़ा, । पगार = प्राकार, भीति।

नाना पकवान जातुधान बलवान सब,
पागि पागि ढेरी कीन्ही भली भाँति भाय सोँ ॥
पाहुने कृसानु पवमान सोँ परोसो
हनुमान सनमानि कै जेँवाये चित चाय सोँ।
तुलसी निहारि अरिनारि दै दै गारि कहैँ,
बावरे सुरारि बैर कीन्होँ रामराय सोँ ॥२४॥

रावन सो राजरोग बाढ़त बिराट उर,
दिन दिन बिकल सकल सुखराँक सो।
नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि,
होत न बिसोक ओत पावै न मनाँक सो ॥
राम की रजाय तेँ रसायनी समीरसूनु,
उतरि पयोधि पार सोधि सरवाँक सो।
जातुधान बुट पुटपाक लङ्क जातरूप,
रतन जतन जारि कियो है मृगाँक सो ॥२५॥

जारि बारि कै बिधूम बारिधि बुताइ लूम,
नाइ माथो पगनि भो ठाढ़ो कर जोरि कै।
मातु कृपा कीजै सहिदानि दीजै सुनि सीय,
दीन्हीँ है असीस चारु चूड़ामनि छोरि कै ॥
कहा कहैाँ तात ! देखे जात ज्योँ बिहात दिन,
बड़ी अवलम्ब ही सो चले तुम तोरि कै।
तुलसी सनीर नैन नेह सोँ सिथिल बैन,
बिकल बिलोकि कपि कहत निहोरि कै ॥२६॥

दिवस छ सात जात जानिबे न मातु धरु,
धीर अरि अन्त की अवधि रही थोरिकै।

पवमान=पवन। राँक=रङ्क, दरिद्र। उपचार=चिकित्सा, प्रयोग। ओत=चैन, आराम। मनाँक=थाड़ा। सरवाँक=सहज में। बुट=बूटी। जातरूप=सोना। मृगाँक=एक रस का नाम। बिधूम=निर्धूम। सहिदानि=चीन्ह की वस्तु। अवलम्ब ही=अवलम्बथी। अरि=शत्रु।

बारिधि बँधाय सेतु ऐहैं भानुकुलकेतु,
सानुज कुसल कपिकटक बटोरि कै ॥
बचन बिनीत कहि सीता को प्रबोध करि,
तुलसी त्रिकूट चढ़ि कहत डफोरि कै।
जै जै जानकीस दससीस करिकेसरी
कपीस कूद्यो बातघात बारिधि हलोरि कै ॥ २७ ॥
साहसी समीरसूनु नीरनिधि लङ्घि लखि,
लङ्क सिद्धिपीठ निसि जागो है मसान सो।
तुलसी बिलोकि महा साहस प्रसन्न भई,
देवी सिय सारिखो दियो है बरदान सो ॥
बाटिका उजारि अच्छ-धारि मारि जारि गढ़,
भानुकुलभानु को प्रतापभानु भानु सो।
करत बिसोक लोककोकनद कोक-कपि,
कहै जामवन्त आयो आयो हनुमान सो ॥ २८ ॥
गगन निहारि किलकारी भारी सुनि
हनुमान पहिचानि भये सानँद सचेत हैं।
बूड़त जहाज बच्यो पथिकसमाज मानो,
आजु जाये जानि सब अङ्कमाल देत हैं ॥
जै जै जानकीस जै जै लखन कपीस कहि,
कूदैं कपि कौतुकी नचत रेत रेत हैं।
अङ्गद मयन्द नल नील बलसील महा,
बालधी फिरावैं मुख नाना गति लेत हैं ॥ २९ ॥

डफोरि कै=ललकार कर। धारि=सेना। कोकनद=कमल। कोक=चकवा पक्षी। रेत=बालू।

आयो हनुमान प्रानहेतु अङ्कमाल देत,
 लेत पगधूरि एक चूमत लँगूल हैं।
एक बूझै बार बार सीय समाचार कहे,
 पवनकुमार भो विगतस्रमसूल हैं॥
एक भूखे जानि आगे आने कन्द मूल फल,
 एक पूजे बाहुबल तोरि मूल फूल हैं।
एक कहैं तुलसी सकल सिधि ताके जाके,
 कृपापाथनाथ सीतानाथ सानुकूल हैं॥३०॥
सीय को सनेहसील कथा तथा लङ्क की
 चले कहत चाय सोँ सिरानो पथ छन मैं।
कह्यो जुवराज बोलि बानर समाज आजु,
 खाहु फल सुनि पेलि पैठे मधुबन मैँ॥
मारे बागवान ते पुकारत देवान गे
 उजारे बाग अङ्गद दिखाये घाय तन मैँ।
कहैं कपिराज करि काज आये कीस
 तुलसीस की सपथ महामोद मेरे मन मैं॥३१॥
नगर कुबेर को सुमेरु की बराबरी
 बिरञ्चि बुद्धि को बिलास लङ्क निरमान भो।
ईसहि चढ़ाय सीस बीसबाहु बीर तहाँ,
 रावन सो राजा रजतेज को निधान भो॥
तुलसी त्रिलोक की समृद्धि सौंज सम्पदा
 सकेलि चाकि राखी रासि जागर जहान भो।
तीसरे उपास बनबास सिन्धुपास सो
 समाज महाराज जू को एक दिन दान भो॥३२॥

पेलि=ठेल कर। देवान=दरबार, सुग्रीव की राजसभा। चाकि=इकट्ठा। जागर=जाहिर।

लङ्का कांड

कवित्त—बड़े बिकराल भालु बानर बिसाल बड़े,
तुलसी बड़े पहार लै पयोधि तोपिहैं ।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड खंड,
मंडि मेदिनी को मंडलीक-लीक लोपिहैं ।
लङ्कदाह देखे न उछाह रह्यो काहुन को,
कहैं सब सचिव पुकारि पाँव रोपिहैं ॥
बाचिहैं न पाछे त्रिपुरारि हू मुरारिहू के,
को है रन रारि को जौं कोसलेस कोपिहैं ? ॥१॥
त्रिजटा कहत बार बार तुलसीस्वरी सोँ,
राघौ बान एक ही समुद्र सातौ सोषिहैं ।
सकुल सँघारि जातुधानधारि जम्बुकादि,
जोगिनीजमाति कालिकाकलाप तोषिहैं ॥
राज दै निवाजिहैं बजाइ कै बिभीषनै
बजैंगे ब्योम बाजने बिबुध प्रेम पोषिहैं ।
कौन दसकन्ध कौन मेघनाद बापुरो को,
कुम्भकर्न कीट जब राम रन रोषिहैं ॥२॥
बिनय सनेह सोँ कहति सीय त्रिजटा सोँ,
पाये कछु समाचार आरजसुवन के ? ।
पाये जू बँधायो सेतु उतरे कटक कुलि,
आये देखि देखि दूत दारुन दुवन के ॥
बदनमलीन बलहीन दीन देखि मानौ,
मिटे घटे तमीचरतिमिर भुवन के ।

लीक=चिन्ह । लोपिहैं=छिपा देंगे । दारुन=भीषण । दुवन=राक्षस ।

लोकपतिसोककोक मूँदे कपि-कोकनद,
दंड द्वै रहे हैं रघु आदित उवन के ॥३॥

झूलना—सुभुज मारीच खर त्रिसिर दूषन बालि,
दलत जेहि दूसरो सर न साँध्यो।
आन परबाम बिधिबाम तेहि राम सों
सकत संग्राम दसकन्ध काँध्यो ॥
समुझि तुलसीस कपिकर्म घर घर घैरु,
बिकल सुनि सकल पाथोधि बाँध्यो।
बसत गढ़ लङ्क लङ्केस नायक अछत,
लङ्क नहिँ खात कोउ भात राँध्यो ॥४॥

सवैया—बिस्वजयी भृगुनायक से बिनु हाथ भये हनि हाथ-हजारी।
बातुल मातुल की न सुनी सिख का तुलसी कपि लङ्क न जारी ?॥
अजहूँ तौ भलो रघुनाथ मिले फिरि बूझिहै को गज कौन गजारी।
कीर्त्ति बड़ी करतूति बड़ी जन बात बड़ी सो बड़ोई बजारी ॥५॥
जब पाहन भे बनबाहन से उतरे बनरा जय राम रढ़े।
तुलसी लिये सैल-सिला सब सोहत सागर ज्यों बलधारि बढ़े।
करि कोप करैं रघुबीर को आयसु कौतुक ही गढ़ कूदि चढ़े।
चतुरङ्ग चमू पल में दलि कै रन रावन राढ़ के हाड़ गढ़े ॥६॥

कवित्त—बिपुल बिसाल बिकराल कपि भालु मानो,
काल बहु बेष धरे धाये किये करषा।
लिये सिला सैल साल ताल औ तमाल तोरि,
तोपैं तोयनिधि सुर को समाज हरषा ॥

आदित=सूर्य्य। साँध्यो=सन्धान किया, उठाया। राँध्यो=रींधा, पकाया। मातुल=मामा। बनबाहन=नाव। रढ़े=रटकर, बोलकर। आयसु=आज्ञा, सपथ। राढ़=क्षुद्र, मतिहीन। करषा=क्रोध। साल=साँखू।

डगे दिगकुञ्जर कमठ कोलकलमले,
डोले धराधर-धारि धराधर धरषा।
तुलसी तमकि चलैं राघो की सपथ करैं,
को करै अटक कपि-कटक अमरषा ? ॥ ७ ॥

आये सुक सारन बोलाये ते कहन लागे,
पुलक सरीर सेना करत फ़हम ही।
महाबली बानर बिसाल भालु काल से
कराल हैं रहे कहाँ समाहिंगे कहाँ मही।
हँस्यो दसमाथ रघुनाथ को प्रताप सुनि,
तुलसी दुरावै मुख सूखत सहमही॥
राम के बिरोध बुरो बिधि हरि हरहू को,
सबको भलो है राजा राम के रहम ही॥ ८॥

आयो आयो आयो सोई बानर बहोरि भयो,
सोर चहूँ ओर लङ्का आये जुबराज के।
एक काढ़ैं सौंज एक धौज करै कहा हैहै,
पोच भई महा सोच सुभट समाज के॥
गाज्यो कपिराज रघुराज की सपथ करि,
मूँदे कान जातुधान मानो गाजे गाज के।
सहमि सुखात बातजात की सुरति करि,
लवा ज्यों लुकात तुलसी झपेटे बाज के॥ ९॥

तुलसीस-बल रघुबीर जू के बालिसुत,
वाहि न गनत बात कहत करेरी सी।
बखसीस ईस जू की खीस होत देखियत,
रिस काहेँ लागति कहत हौँ तो तेरी सी।

कोल=शूकर। कलमले=दाब में पड़कर हिलना डोलना। धराधर=पहाड़, शेषनाग। धरषा=नीचा देखा। अटक=रोक। अमरष=क्रोध। रहम=दया, कृपा। =खीस होत=नष्ट होती है।

चढ़ि गढ़ मढ़ दृढ़ कोट के कँगूरे कोपि,
नेकु धका दैहैं ढैहैं ढेलन की ढेरी सो ॥
सुनु दसमाथ! नाथ-साथ के हमारे कपि,
हाथ लङ्का लाइहैं तो रहैगो हथेरी सो ॥ १० ॥

दूषन बिराध खर त्रिसिर कवन्ध बधे,
तालऊ बिसाल बेधे कौतुक है कालि को।
एक ही बिसिष बस भयो वीर बाँकुरो जो,
तोहू है बिदित बल महाबली बालि को॥
तुलसी कहत हित मानतो न नेकु सङ्क,
मेरो कहा जैहै फल पैहै तू कुचालि को।
बीर-करि-केसरी कुठारपानि मानो हारि,
तेरी कहा चली बिड़! तो सों गनै घालि को॥ ११ ॥

सवैया—तोसों कहौं दसकन्धर रे रघुनाथ-विरोध न कीजिय बौरे।
बालि बली खरदूषन और अनेक गिरे जे जे भीति मैं दौरे॥
ऐसिय हाल भई तोहिं धौं नतु लै मिलु सीय चहै सुख जो रे।
राम के रोष न राखिसकैं तुलसी बिधि श्रीपति सङ्कर सौरे॥ १२॥

तू रजनीचरनाथ महा रघुनाथ के सेवक को जन हौं हौं।
बलवान है स्वान गली अपनी तोहिं लाज न गाल बजावत सोहौं।
बीस भुजा दससीस हरौं न डरौं प्रभु आयसुभङ्ग ते जौ हौं।
खेत मैं केहरि ज्यों गजराज दलौं दल बालि को बालक तौ हौं॥१३॥

कोसलराज के काज हौं आज त्रिकूट उपारि लै बारिधि बोरौं।
महाभुज-दंड द्वै अंडकटाह चपेटके चोट चटाक दै फोरौं॥

मढ़=मंडप। हाथ की हथेरी सी=सफाचट। कुठारपानि=परशुराम। बिड=विट, पुरीष। घालि गनै=पसँगे बराबर समझता है, तुच्छ समझता है। त्रिकूट=उस पर्वत का नाम जिस पर लङ्का नगरी वसी है। अंडकटाह=धरती। चपेट=चटकन, तमाचा।

आयसुभङ्ग तैं जौ न डरौँ सब मींजि सभासद सोनित खोरौँ।
बालि को बालक तौ तुलसी दसहूमुख के रन मैं रद तोरौँ ॥१४॥
अति कोप सोँ रोप्यो है पाँव सभा सब लङ्क ससङ्कित सोर मचा।
तमके घननाद से बीर पचारि कै हारि निसाचर सैन पचा ॥
न टरै पग मेरुहु तें गुरु भो सो मनोँ महि सङ्ग बिरञ्चि रचा।
तुलसी सब सूर सराहत हैं जग मैं बलसालि है बालि-बचा ॥१५॥

कवित्त—रोप्यो पाँव पैज कै विचारि रघुबीरबल,
लागे भट सिमिटि न नेकु टसकत है।
तज्यो धीर धरनि धरनिधर धसकत,
धराधर धीर भार सहि न सकत है ॥
महाबली बालि को दबत दलकतु भूमि,
तुलसी उछरि सिन्धु मेरु मसकत है।
कमठ कठिन पीठि घठा परो मन्दर को,
आयो सोई काम पै करेजो कसकत है ॥ १६ ॥

झूलना—कनकगिरि सृङ्ग चढ़ि देखि मर्कट कटक,
बदति मन्दोदरी परम भीता।
सहसभुज-मत्त-गजराज-रनकेसरी,
परसुधर-गर्व जेहि देखि बीता ॥
दासतुलसी समरसूर कोसलधनी,
ख्याल ही बालि बलसालि जीता।
(रे)कन्त! तृन दन्त गहि सरन श्रीराम कहि,
अजहुँ यहि भाँति लै सौंपु सीता ॥ १७ ॥
(रे)नीच! मारीच बिचलाइ हति ताड़का,
भञ्जि सिवचाप सुख सबहि दीन्ह्यो।

खोरौँ=स्नान करूँ। रद=दाँत। गुरु=गरुआ। बचा=बालक। धरनिधर=पर्वत। धसकत=धँसते हैं। धराधर=शेष। घठा=घट्ठा, रगड़ लगने से चिन्ह का पड़ना। यह अक्षर छन्द के अन्तर्गत नहीं है।

सहस-दसचारि खल सहित खर दूषनहिं,
पठै जमधाम तैं तउ न चीन्ह्यो॥
मैं जु कहौं कन्त सुनु मन्त भगवन्त सों,
बिमुख ह्वै बालि फल कौन लीन्ह्यो?
बीस भुज सीस दस खीस गये तबहिं जब,
ईस के ईस सों बैर कीन्ह्यो॥ १८॥
बालि दलि कालिह जलजान पाषान किय,
कन्त! भगवन्त तैं तउ न चीन्हैं।
बिपुल बिकराल भट भालु कपि काल से,
सङ्ग तरु तुङ्ग गिरिसृङ्ग लीन्हैं॥
आइगे कोसलाधीस तुलसीस जेहि,
छत्रमिस मौलि दस दूरि कीन्हैं।
ईस-बकसीस जनि खीस करु ईस! सुनु,
अजहुँ कुल कुसल बैदेहि दीन्हैं॥ १९॥
सैन के कपिन को को गनै अर्बुदै,
महाबलबीर हनुमान जानो।
भूलि है दसदिसा सेस पुनि डोलिहैं,
कोपि रघुनाथ जब बान तानो॥
बालिहू गर्ब जिय माहिं ऐसो कियो,
मारि दहपट कियो जम की घानो।
कहति मन्दोदरी सुनहिं रावन! मतो,
बेगि लै देहि बैदेहि रानी॥२०॥
गहन उज्जारि पुरजारि सुत मारि तव,
कुसल गो कीस बरबेर जाको।

तुङ्ग=ऊँचा। ईस=ईश्वर, स्वामी। दहपट=ध्वस्त, नाश। बरबेर=बृहद् शरीरवाला।

दूसरो दूत पन रोपि कोप्यो सभा,
खर्ब कियो सर्ब को गर्ब थाको ॥
दास तुलसी सभय बदति मयनन्दिनी,
मन्दमति कन्त ! सुनु मन्त म्हाको।
तौलौं मिलु बेगि नहिं जौलौं रन रोष भयो,
दासरथि बीर बिरदैत बाँको ॥२१॥

कवित्त—कानन उजारि अच्छ मारि धारि धूरि कीन्हीं,
नगर प्रजारयो सो बिलोक्यो बल कीस को।
तुम्हें बिद्यमान जातुधान मंडली में कपि,
कोपि रोप्यो पाँउ सो प्रभाव तुलसीस को ॥
कन्त ! सुनु मन्त कुल अन्त किये अन्त हानि,
हातो कीजै हीय तें भरोसो भुज बीस को।
तौलौं मिलु बेगि जौलौं चाप न चढ़ायो राम,
रोषि बान काढ़यो न दलैया दससीस को ॥२२॥

पवन को पूत देखो दूत बीर बाँकुरो जो,
बङ्क गढ़ लङ्क सो ढका ढकेलि ढाहिगो ॥
बालि बलसालि को सो कालिह दाप दलि कोपि,
रोप्यो पाँउ चपरि चमू को चाउ चाहिगो।
सोई रघुनाथ कपि साथ पाथनाथ बाँधि,
आये नाथ ! भागे तें खिरिरि खेह खाहिगो ॥
तुलसी गरब तजि मिलिबे को साज सजि,
देहि सीय नतौ पिय ! पाइमाल जाहिगो ॥२३॥

। खर्ब=चूर। मन्त=मंत्र, सलाह। म्हा=वहाँ, मेरा। हातो=दूर, नष्ट। ढका=धक्का। ढाहिगो=गिरागया। चपरि=झुककर। चमू=सेना। चाव=प्रसन्नता, हर्ष। खिरिरि=खुरचकर। खेह=धूल। पाइमाल=नष्ट।

उदधि अपार उतरत नहिँ लागी बार,
केसरीकुमार सो अदंड कैसो डाँड़िगो।
बाटिका उजारि अच्छ रच्छकनि मारि भट,
भारी भारी रावरे के चाउर से काँड़िगो॥
तुलसी तिहारे विद्यमान जुवराज आजु,
कोपि पाँव रोपि बस कै छोहाइ छाँड़िगो।
कहे की न लाज पिय! अजहूँ न आये बाज,
सहित समाज गढ़ राँड़ कै सो भाँड़िगो॥२४॥
जाके रोष दुसह त्रिदोष दाह दूरि कीन्हे,
पैयत न छत्रीखोज खोजत खलक मैँ।
महिषमती को नाथ साहसी सहसबाहु,
समर समर्थ नाथ। हेरिये हलक मैँ॥
सहित समाज महाराज सो जहाजराज,
बूड़ि गयो जाके बलबारिधिछलक मैँ।
टूटत पिनाक के मनाक बाम राम से ते,
नाक बिनु भये भृगुनायक पलक मैँ॥२५॥
कीन्हीँ छोनी छत्री बिनु छोनिपछपनहार,
कठिन कुठारपानि बीर बानि जानि कै।
परम कृपाल जो नृपाल लोकपालन पै,
जब धनुहाई ह्वैहै मन अनुमानि कै॥
नाक मैँ पिनाक मिस बामता बिलोकि राम,
रोक्यो परलोक लोक भारी भ्रम भानि कै।
नाइ दस माथ महि जोरि बीस हाथ पिय,
मिलिये पै नाथ रघुनाथ पहिचानि कै॥२६॥

डाँड़िगो=दंड देगया। राँड़=अनाथ। भाँड़िगो=भ्रष्ट कर गया। खलक=संसार। हलक=कंठ, हृदय। नाक=प्रतिष्ठा। छपनहार=नशानेवाले। धनुहाई ह्वैहै=धनुष टूटेगा।

कह्यो मत मातुल बिभीषनहू बार बार,
आँचर पसारि पिय पाँइ लै लै हौं परी।
बिदित बिदेहपुर नाथ! भृगुनाथगति,
समय सयानी कीन्हीं जैसी आइ गौं परी॥
बायस बिराध खर दूषन कबन्ध बालि,
बैर रघुबीर के न पूरी काहु की परी।
कन्त बीस लोचन बिलोकिये कुमन्त-फल,
ख्याल लङ्का लाई कपि राँड़ की सी झोपरी॥२७॥

सवैया— राम सो साम किये नित है हित कोमल काज न कीजिय टाँठे।
आपनि सूझि कहौं पिय! बूझिये जूझिबे जोग न ठाहरु नाँठे॥
नाथ! सुनी भृगुनाथकथा बलि बालि गये चलि बात के साँठे।
भाइ बिभीषन जाइ मिल्यो प्रभु आइ परे सुनि सायर-काँठे॥२८॥

पालिबे को कपि-भालु-चमू जमकाल करालहु को पहरो है।
लङ्क से बङ्क महागढ़ दुर्गम ढाहिबे दाहिबे को कहरी है॥
तीतर-तोम तमीचर-सेन समीर को सूनु बड़ो बहरी है॥
नाथ भलो रघुनाथ मिले रजनीचर-सेन हिये हहरी है॥२९॥

कवित्त–रोष्यो रन रावन बोलाये बीर बानइत,
जानत जे रीति सब सञ्जुग समाज की।
चली चतुरङ्ग चमू चपरि हने निसान,
सेना सराहन जोग रातिचर-राज की॥
तुलसी बिलोकि कपि भालु किलकत
ललकत लखि ज्यों कँगाल पातरी सुनाज की।

टाँठे=कठिन। नाँठे=नष्ट। साँठे=शठता, टेक। सायर=समुद्र। काँठे=किनारे। चमू=फ़ौज। पहरी=रक्षक। कहरी=कहर करनेवाला। बहरी=शिकारी पक्षी। पतरी=पत्तल। सुनाज=पकान्न।

राम रुख निरखि हरषे हिय हनुमान,
मानों खेलवार खोली सीसताज बाज की ॥३०॥

साजिकै सनाह गजगाह सउछाह दल,
महाबली धाये बीर जातुधान धीर के।

इहाँ भालु बन्दर बिसाल मेरु मन्दर से,
लिये सैल साल तोरि नीरनिधि-तीर के॥

तुलसी तमकि ताकि भिरे भारी जुद्ध क्रुद्ध,
सेनप सराहैं निज निज भट भीर के।

रुंडन के झुंड झूमि झूमि झुकरे से नाचैं,
समर सुमार सूर मारे रघुबीर के ॥३१॥

सवैया—तीखे तुरङ्ग कुरङ्ग सुरङ्गनि साजि चढ़े छँटि छैल छबीले
भारी गुमान जिन्हैं मन में कबहूँ न भये रन में तनु ढीले॥
तुलसी गज से लखि केहरि लौं लपटे पटके सब सूर सलीले।
भूमि परे भट घूमि कराहत हाँकि हने हनुमान हठीले ॥३२॥

सूर सजोइल साजि सुबाजि ससेल धरे बगमेल चले हैं।
भारी भुजा भरि, भारी सरीर बली बिजयी सब भाँति भले हैं॥
तुलसी जिन्हैं धाये धुकै धरनीधर धौर धकानि सों मेरु हले हैं।
ते रन-तीर्थनि लक्खन लाखन-दानि ज्यों दारिद दाबि दले हैं ॥३३॥

गहि मन्दर बन्दर भालु चले सो मनो उनये घन सावन के।
तुलसी उत झुंड प्रचंड झुके झपटैं भट जे सुरदावन के॥
बिरुझे बिरदैत जे खेत अरे न टरे हठि बैर बढ़ावन के।
रन मारि मची उपरी उपरा भले बीर रघुप्पति रावन के ॥३४॥

सीसताज=सिर की टोपी, कुलही। सनाह=जिरह बकतर। गजगाह=हाथी की झूल। झुकरे=झुँझलाये हुए। सलीले=खेल ही में। सजोइल=सजे हुए। बगमेल=कतार बाँध कर।

सर तोमर सेल समूह पवारत मारत बीर निसाचर के।
इत तेँ तरु ताल तमाल चले खर खंड प्रचंड महीधर के॥
तुलसी करि केहरि-नाद भिरे भट खग्ग खगे खपुवा खरके।
नख दन्तन सोँ भुजदंड बिहंडत मुंड सोँ मुंड परे भर के॥३५॥
रजनीचर मत्तगयन्द घटा बिघटै मृगराज के साज लरै।
झपटै भट कोटि मही पटकै गरजै रघुबीर की सौँह करै॥
तुलसी उत हाँक दसानन देत अचेत भे बीर को धीर धरै ?।
बिरुझो रन मारुत को बिरदैत जो कालहु काल सो बूझि परै॥३६॥
जे रजनीचर बीर बिसाल कराल बिलोकत काल न खाये।
ते रन रोर कपीस-किसोर बड़े बरजोर परे फँग पाये॥
लूम लपेटि अकास निहारि कै हाँक हठी हनुमान चलाये।
सूखि गे गात चले नभ जात परे भ्रम-बात न भूतल आये॥३७॥
जो दससीस महीधर-ईस को बीस भुजा खुलि खेलनहारो।
लोकप दिग्गज दानव देव सबै सहमैँ सुनि साहस भारो॥
बीर बड़ो बिरदैत बली अजहूँ जग जागत जासु पँवारो।
सो हनुमान हनी मुठिका गिरिगो गिरिराज ज्योँ गाज को मारो॥३८॥
दुर्गम दुर्ग पहार तेँ भारे प्रचंड महा भुजदंड बने हैँ।
लक्ख मैँ पक्खर तिक्खन तेज जे सूर समाज मैँ गाज गने हैँ॥
ते बिरुदैत बली रन-बाँकुरे हाँकि हठी हनुमान हने हैँ।
नाम लै राम दिखावत बन्धु को घूमत घायल घाय घने हैँ॥३९॥
कवित्त—हाथिन सोँ हाथी मारे घोड़े घोड़े सोँ सँहारे,
रथनि सोँ रथ बिदरनि बलवान की।
चञ्चुल चपेट चोट चरन चकोट चाहैँ,
हहरानी फौजैँ भहरानी जातुधान की॥

धौर=धौल, थप्पड़। तोमर=भाला। खपुवा=कादर, निकम्मे। रार=हल्ला। फँग=पञ्जा, फन्दा। पँवारा=वीरता की कथा। गाज=वज्र। पक्खर=कवच। चकोट=खरोट, मांस नोचना।

बारबार सेवक-सराहना करत राम,
तुलसी सराहै रीति साहेब सुजान की।
लाँबी लूम लसत लपेटि पटकत भट,
देखौ देखौ लखन! लरनि हनुमान की ॥४०॥
दबकि दबोरे एक बारिधि में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं।
पकरि पछारे कर चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे एक मींजि मारे लात हैं॥
तुलसी लखत राम-रावन बिबुध बिधि,
चक्रपानि चंडीपति चंडिका सिहात हैं।
बड़े बड़े बानइत बीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथप निपाते बातजात हैं॥ ४१ ॥
प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड बीर,
धाये जातुधान हनुमान लियो घेरि कै।
महाबल-पुञ्ज कुञ्जरारि ज्यों गरजि भट,
जहाँ तहाँ पटके लँगूर फेरि फेरि कै॥
मारे लात तोरे गात भागे जात हाहा खात,
कहैं तुलसीस राखि राम की सौं टेरि कै।
ठहर ठहर परे कहरि कहरि उठैं,
हहरि हहरि हर सिद्ध हँसे हेरिकै॥ ४२ ॥
जाकी बाँकी बीरता सुनत सहमत सूर,
जाकी आँच अबहूँ लसत लङ्क लाह सी।
सोई हनुमान बलवान बाँके बानइत,
जोहि जातुधान-सेना चले लेत थाह सी॥

दबोरे=दबाया। बानइत=बानावाले, नामवर। बातजात=पवनकुमार। कुञ्जरारि=सिंह। हाहाखात=हाय हाय करते।

कम्पत अकम्पन सुखाय अतिकाय काय,
कुम्भऊकरन आइ रह्यो पाइ आह सी।
देखे गजराज मृगराज ज्यों गरजि धायो,
बीर रघुबीर को समीरसूनु साहसी ॥ ४३ ॥

झूलना—मत्तभट-मुकुट-दसकन्ध-साहस-सइल,
सृङ्ग-बिद्दरनि जनु बज्रटाँकी।
दसन धरि धरनि चिक्करत दिग्गज कमठ,
सेष सङ्कुचित सङ्कित पिनाकी ॥
चलित महि मेरु उच्छलित सायर सकल,
बिकल बिधि बधिर दिसि बिदिसि झाँकी।
रजनिचर-घरनि घर गर्भ-अर्भक स्रवत,
सुनत हनुमान की हाँक बाँकी ॥ ४४ ॥

कौन की हाँक पर चौंकि चंडीस बिधि,
चंडकर थकित फिरि तुरँग हाँके।
कौन के तेज बलसीम भट भीम से,
भीमता निरखि कर नयन ढाँके ॥
दास तुलसीस के बिरद बरनत बिदुष,
बीर बिरदैत बर बैरि धाँके।
नाक नरलोक पाताल कोउ कहत किन,
कहाँ हनुमान से बीर बाँके ॥ ४५ ॥

जातुधानावली-मत्त-कुञ्जर-घटा,
निरखि मृगराज जनु गिरि तें टूट्यो ॥
बिकट चटकन चपट चरन गहि पटक महि,
निघटि गये सुभट सत सब को छूट्यो ॥

आह=शोक, पीड़ा। सइल=पर्वत। सायर=सागर। चंडीस=शिव। चंडकर=सूर्य्य
बिदुष=पण्डित। धाँके=धाक जमा दी। नाक=आकाश। निघटि=चुक गये।

दास तुलसी परत धरनि धरकत झुकत,
हाट सी उठति जम्बुकनि लूट्यो ।
धीर रघुबीर को बीर रन-बाँकुरो,
हाँकि हनुमान कुलि कटक कूट्यो ॥४६॥

छप्पय–कतहुँ बिटप भूधर उपारि परसेन बरक्खत ।
कतहुँ बाजि सौं बाजि मर्दि गजराज करक्खत ॥
चरन चोट चटकन चकोट अरि उर सिर बज्जत ।
बिकट कटक बिद्दरत बीर बारिद जिमि गज्जत ॥
लङ्गूर लपेटत पटकि भट जयति राम जय उच्चरत ।
तुलसीस पवननन्दन अटल जुद्ध क्रुद्ध कौतुक करत ॥४७॥

कवित्त– अङ्ग अङ्ग दलित ललित फूले किंसुक से,
हने भट लाखन लखन जातुधान के ।
मारि कै पछारे कै उपारि भुजदंड चंड,
खंड खंड डारे ते बिदारे हनुमान के ॥
कूदत कबन्ध के कदम्ब बम्ब सी करत,
धावत दिखावत हैं लाघौ राघौ बान के ।
तुलसी महेस बिधि लोकपाल देवगन,
देखत बिमान चढ़े कौतुक मसान के ॥४८॥

लोथिन सौं लोहू के प्रवाह चले जहाँ तहाँ,
मानहुँ गिरिन गेरु-झरना झरत हैं ।
सोनित सरित घोर कुञ्जर करारे भारे,
कूल तें समूल बाजि-बिटप परत हैं ॥
सुभट सरीर नीरचारी भारी भारी तहाँ,
सूरनि उछाह क्रूर कादर डरत हैं ।

सत=साहस । बम्ब=चिल्लाहट । सी=चोट की पीड़ा पर मुख से निकलनेवाला शब्द । करारे=भीषण ।

फेकरि फेकरि फेरु फारि फारि पेट खात,
काक कङ्क-बालक कोलाहल करत हैं ॥४९॥
ओझरी की झोरी काँधे आँतनि की सेल्ही बाँधे,
मूँड़ के कमंडलु खपर किये कोरि कै।
जोगिनी झुटुङ्ग झुंड झुंड बनी तापसी सी,
तीर तीर बैठीं सो समरसरि खोरि कै॥
सोनित सोँ सानि गुद खात सतुआ से एक,
एक प्रेत पियत बहोरि घोरि घोरि कै।
तुलसी बैताल भूत साथ लिये भूतनाथ,
हेरि हेरि हँसत हैं हाथ हाथ जोरि कै॥५०॥
सवैया—राम-सरासन तें चले तीर रहे न सरीर हड़ावरि फूटी।
रावन धीर न पीर गनी लखि लै कर खप्पर जोगिनि जूटी॥
सोनित छीट-छटानि-जटे तुलसी प्रभु सोहैं महाछबि छूटी।
मानो मरक्कत-सैल बिसाल में फैलि चली बर बीरबहूटी॥५१॥
कवित्त—मानो मेघनाद सोँ प्रचारि भिरे भारी भट,
आपने अपन पुरुषारथ न ढील की।
घायल लखनलाल लखि बिलखाने राम,
भई आस सिथिल जगन्निवास-दील की।
भाई को न मोह छोह सीय को न तुलसीस,
कहैं मैं बिभीषन की कछु न सबील की।
लाज बाँह बोल की नेवाजे को सँभार सार,
साहेब न राम से बलैया लेउँ सील की॥५२॥

फेरु=शृगाल। कङ्क=चील्ह। ओझरी=पेट के भीतर की वह थैली जिसमें खाये हुए पदार्थ रहते हैं। झुटुङ्ग=झोंटेवाला। खोरि कै=स्नान करके। हड़ावरि=हड्डी। जटे=जड़े हुए, मिले हुए। छूटी=फैली। बीरबहूटी=बरसात के आरम्भ में होनेवाला एक लाल रंग का छोटा कीड़ा, वधूटी। दील=दिल, मन। सबील=प्रबन्ध।

सवैया–कानन बास दसानन सो रिपु आननश्री ससि जीति लियो है।
बालि महाबलसालि दल्यो कपि पालि बिभीषन भूप कियो है॥
तीय हरी रन बन्धु परयो पै भरयो सरनागत-सोच हियो है।
बाँहपगार उदार कृपालु कहाँ रघुबीर सो बीर बियो है?॥५३॥

लीन्हो उखारि पहार बिसाल चल्यो तेहि काल बिलम्ब न लायो।
मारुतनन्दन मारुत को मन को खगराज को बेग लजायो॥
तीखी तुरा तुलसी कहतो पै हिये उपमा को समाउ न आयो।
मानोँ प्रतच्छ परब्बत की नभ लीक लसी कपि योँ धुकि धायो॥५४॥

कवित्त०–चल्यो हनुमान सुनि जातुधान कालनेमि,
पठयो सो मुनि भयो पायो फल छलि कै।
सहसा उखारो है पहार बहु जोजन को,
रखवारे मारे भारे भूरि भट दलि कै॥
बेग बल साहस सराहत कृपानिधान,
भरत की कुसल अचल ल्यायो चलि कै॥
हाथ हरिनाथ के बिकाने रघुनाथ जनु,
सीलसिन्धु तुलसीस भलो मान्यो भलि कै॥५५॥

बाप दियो कानन भो आनन सुभानन सो,
बैरी भो दसानन सो तीय को हरन भो।
बालि बलसालि दलि पालि कपिराज को,
बिभीषन नेवाजि सेतुसागर तरन भो॥
घोर रारि हेरि त्रिपुरारि बिधि हारे हिये,
घायल लखन बीर बानर बरन भो।
ऐसे सोक मेँ तिलोक कै बिसोक पलही मेँ,
सबही को तुलसी को साहिब सरन भो॥५६॥

बाँहपगार=रक्षा करनेवाली भुजाएँ। बियो=दूसरा। तुरा=त्वरा, शीघ्रगति। समाउ=सामग्री। धुकि=झुककर, झपट कर। हरिनाथ=हनूमान।

सवैया०-कुम्भकरन्न हन्यो रन राम दल्यो दसकन्धर कन्धर तोरे।
पूषन-बंस-बिभूषन-पूषन तेज प्रताप गरे अरि-ओरे॥
देव निसान बजावत गावत सावँत गो मन भावत भोरे!।
नाचत बानर भालु सबै तुलसी कहि हा रे! हहा भै होरे!॥५७॥

कवित्त०-मारे रन रातिचर रावन सकुल दल,
अनुकूल देव मुनि फूल बरषत हैं।
नाग नर किन्नर बिरञ्चि हरि हर हेरि,
पुलक सरीर हिये हेतु हरषत हैं।
वाम ओर जानकी कृपानिधान के विराजैं,
देखत विषाद मिटै मोद करषत हैं।
आयसु भो लोकनि सिधारे लोकपाल सबै,
तुलसी निहाल कै कै दियो सरषत हैं॥५८॥

कन्धर=कन्धा। पूषन=सूर्य्य। ओरे=ओले, अन्त। सावँत=सामन्तपना, पराधीनता। हहा=हाय हाय। सरषत=परवाना, आज्ञापत्र।

उत्तर कांड।

सवैया—बालि से बीर बिदारि सुकंठ थप्यो हरषे सुर बाजन बाजे।
पल में दल्यो दासरथी दसकन्धर लङ्क बिभीषन राज बिराजे॥
राम सुभाव सुने तुलसी हुलसे अलसी हम से गलगाजे।
कायर कूर कपूतन की हद तेउ गरीबनेवाज नेवाजे॥१॥
बेद पढ़ैं बिधि सम्भु सभीत पुजावन रावन सोँ नित आवैं।
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरिहि तें सिर नावैं॥
ऐसेउ भाग भगे दसभाल तें जो प्रभुता कवि कोविद गावैं।
राम से बाम भये तेहि बामहि बाम सबै सुख सम्पति लावैं॥२॥
बेद-बिरुद्ध मही मुनि साधु ससोक किये सुरलोक उजारो।
और कहा कहौं तीय हरी तबहूँ करुनाकर कोप न धारो॥
सेवक-छोह तें छाँड़ी छमा तुलसी लख्यो राम सुभाव तिहारो।
तौलौं न दाप दल्यो दसकन्धर जौलौं बिभीषन लात न मारो॥
सोक-समुद्र निमज्जत काढ़ि कपीस कियो जग जानत जैसो॥३॥
नीच निसाचर बैरी को बन्धु बिभीषन कीन्ह पुरन्दर सैसो॥
नाम लिये अपनाइ लियो तुलसी सो कहौ जग कौन अनैसो?
आरत-आरति-भञ्जन राम गरीबनेवाज न दूसर ऐसो॥४॥
मीत पुनीत कियो कपि भालु को पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो।
सज्जन-सींव बिभीषन भो अजहूँ बिलसै बर बन्धु-बधू जो॥
कोसलपाल बिना तुलसी सरनागतपाल कृपालु न दूजो।
कूर कुजाति कुपूत अघी सब की सुधरै जो करै नर पूजो॥५॥

विदारि=विदीर्ण करके। थप्यो=स्थापन किया। अलसी=आलसी। गलगाजे=प्रसन्न हुए। सै=सौ। अनैसो=दुष्ट। तनूजो=पुत्र।

तीय-सिरोमनि सीय तजी जेहि पावक की कलुषाई दही है।
धर्म-धुरन्धर बन्धु तज्यो पुरलोगनि की बिधि बोलि कही है॥
कीस निसाचर की करनी न सुनी न बिलोकी न चित्त रही है।
राम सदा सरनागत की अनखौहीं अनैसी सुभाय सही है॥६॥
अपराध अगाध भये जन तेँ अपने उर आनत नाहिँन जू।
गनिका गज गीध अजामिल के गनि पातकपुञ्ज सिराहिँ न जू॥
लिए बारक नाम सुधाम दियो जिहि धाम महामुनि जाहिँ न जू।
तुलसी भजु दीनदयालहि रे रघुनाथ अनाथहि दाहिन जू॥७॥
प्रभु सत्य करी प्रहलाद-गिरा प्रगटे नरकेहरि खम्भ महाँ।
झखराज ग्रस्यो गजराज कृपा ततकाल बिलम्ब कियो न तहाँ॥
सुर साखी दै राखी है पांडुबधू पट लूटत कोटिक भूप जहाँ।
तुलसी भजु सोच-बिमोचन को जन कोप न राम न राख्यो कहाँ॥८॥
नरनारि उघारि सभा महँ होत दियो पट सोच हरयो मन को।
प्रहलाद-बिषाद-निवारन बारन-तारन मीत अकारन को॥
जो कहावत दीनदयालु सही जेहि भार सदा अपने पन को।
तुलसी तजि आन भरोस भजे भगवान भलो करिहैं जन को॥९॥
रिषिनारि उधारि कियो सठ केवट मीत पुनीत सुकीर्ति लही।
निज लोक दियो सबरी खग को कपि थाप्यो सो मालुम है सब ही॥
दससीस-बिरोध सभीत बिभीषन भूप कियो जग लीक रही।
करुनानिधि को भजु रे तुलसी रघुनाथ अनाथ के नाथ सही॥१०॥
कौसिक बिप्रबधू मिथिलाधिप के सब सोच दले पल माहैं।
बालि-दसानन-बन्धु कथा सुनि सत्रु सुसाहिब-सीलसराहैं॥
ऐसी अनूप कहै तुलसी रघुनायक की अगुनी गुन-गाहैं।
आरत दीन अनाथन को रघुनाथ करैं निज हाथ की छाहैं॥११॥

अनखौहीं=क्रोध से भरी। अनैसी=अप्रिय, खराब। सुभाय=स्वाभाविक। सिराहिँ=चुकाते हैं। महाँ=में। झषराज=मकर। नरनारि=द्रौपदी। बारन=हाथी। उधारि=उद्धार करके।

तेरे बेसाहे बेसाहत औरनि और बेसाहि कै बेचनहारे।
ब्योम रसातल भूमि भरे नृप कूर कुसाहिब से तिहुँ खारे॥
तुलसी तेहि सेवत कौन मरै? रज तें लघु को करै मेरु तें भारे।
स्वामी सुसील समर्थ सुजान सो तोसों तुहीं दसरत्थ दुलारे॥१२॥

कवित्त–जातुधान भालु कपि केवट विहङ्ग जो जो,
पाल्यो नाथ सद्य सो सो भयो काम-काज को।
आरत अनाथ दीन मलिन सरन आये,
राखे अपनाइ सो सुभाव महाराज को॥
नाम तुलसी पै भोंड़े भाग सो कहायो दास,
किये अङ्गीकार ऐसे बड़े दगाबाज को।
साहेब समर्थ दसरत्थ के दयाल देव,
दूसरो न तोसों तुही आपने की लाज को॥ १३॥
महाबली बाली दलि कायर सुकंठ कपि,
सखा किये महाराज हैं न काहू काम को।
भ्रात-घात-पातकी निसाचर सरन आये,
कियो अङ्गीकार नाथ एते बड़े बाम को॥
राय दसरत्थ के समर्थ तेरे नाम लिये,
तुलसी से कूर को कहत जग राम को।
आपने निवाजे की तो लाज महाराज को,
सुभाव समुझत मन मुदित गुलाम को॥१४॥
रूप-सील-सिन्धु गुनसिन्धु बन्धु दीन को,
दयानिधान जान-मनि बीर बाहु-बोल को।
स्राद्ध कियो गीध को सराहे फल सबरी के,
सिलासाप-समन निबाह्यो नेह कोल को॥
तुलसी उराउ होत राम को सुभाव सुनि,

ब्योम=आकाश। सद्य=तुरन्त। बाम=दुष्ट। समन=नाश। उराउ=उत्साह, उमङ्ग।

को न बलिजाइ न बिकाइ बिन मोल को? ।
ऐसेहू सुसाहेब सोँ जाको अनुराग न सो,
बड़ोई अभागो भाग भागो लोभ-लोल को ॥१५॥
सूर-सिरताज महाराजनि के महाराज,
जाको नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो ।
साहब कहाँ जहान जानकीस सो सुजान,
सुमिरे कृपालु के मराल होत खूसरो ॥
केवट पषान जातुधान कपि भालु तारे,
अपनायो तुलसी सो धींग धमधूसरो ।
बोल को अटल बाँह को पगार दीनबन्धु,
दूबरे को दानी को दयानिधान दूसरो ? ॥१६॥
कीबे को बिसोक लोक लोकपालहू तेँ सब,
कहूँ कोऊ भो न चरवाहो कपि भाल को ।
पवि को पहार कियो ख्याल ही कृपालु राम,
बापुरो बिभीषन घरौंधा हुतो बाल को ॥
नाम-ओट लेत ही निखोट होत खोटे खल,
चोट बिनु मोट पाइ भयो न निहाल को ? ।
तुलसी की बार बड़ी ढील होत सीलसिन्धु,
बिगरी सुधारिबे को दूसरो दयाल को ? ॥१७॥
नाम लिये पूत को पुनीत कियो पातकीस,
आरति निवारी प्रभु पाहि कहे पील की ।
छलिन की छोँड़ी सो निगोड़ी छोटी जाति पाँति,
कीन्हीँ लीन आपु मेँ भामिनी भोँड़े भील की ॥

लोभ लोल=लोभ से चञ्चल। खूसरो=खूसट, उल्लू पक्षी। धींग=हट्टाकट्टा, उपद्रवी। धमधूसर=बे डौल का मनुष्य। पवि=वज्र। घरौंधा=कागज़ मिट्टी आदि का बना छोटा घर। भाल=भालू। मोट=गठरी, सारी रमा। पील=हाथी। छोँड़ी=लड़की। निगोड़ी=अभागिनी। भोँड़े=भद्दे।

तुलसी औ तारिबा बिसारिबो न अन्त मोहिँ,
नीके है प्रतीति रावरे सुभाव सील की।
देव ते। दयानिकेत देत दादि दीनन की,
मेरी बार मेरे ही अभाग नाथ ढील की ॥१८॥

आगे परे पाहन कृपा किरात कोलनी
कपीस निसिचर अपनाये नाये माथ जू ॥
साँची सेवकाई हनुमान की सुजानराय,
रिनियाँ कहाये हौ बिकाने ताके हाथ जू ॥
तुलसी से खोटे खरे होत ओट नाम ही की,
तेजी माटी मगहू की मृगमद साथ जू।
बात चलै बात को न मानिबो बिलग बलि,
काकी सेवा रीझि कै नेवाजे रघुनाथ जू? ॥१९॥

कौसिक की चलत पषान की परसि पायँ,
टूटत धनुष बनि गई है जनक की।
कोल पसु सबरी बिहङ्ग भालु रातिचर,
रतिन के लालचिन प्रापति मनक की ॥
कोटि-कला-कुसल कृपालु नतपाल बलि,
बातहू कितिक तिन तुलसी तनक की।
राइ दसरत्थ के समत्थ राम राजमनि,
तेरे हेरे लोपै लिपि बिधिहू गनक की ॥ २० ॥

सिला-साप-पाप गुह गीध को मिलाप
सबरी के पास आप चलि गये हैा सो सुनी मैं।

दादि=न्याय, इन्साफ। ढील=देरी। तेजी=महँगी। मृगमद=कस्तूरी। रतिन=थोड़े से। मनक=मन भर। लोपै=छिपै। गनक=ज्योतिषी।

सेवक सराहे कपिनायक बिभीषन,
भरत सभा सादर सनेह सुरधुनी मैं ॥
आलसी-अभागी-अघी-आरत-अनाथपाल,
साहेब समर्थ एक नीके मन गुनी मैं ।
दोष दुख दारिद दलैया दीनबन्धु राम,
तुलसी न दूसरो दयानिधान दुनी मैं ॥ २१ ॥
मीत बालि-बन्धु पूत दूत, दसकन्ध-बन्धु,
सचिव, सराध कियो सबरी जटाइ को।
लङ्क जरी जोहे जिय सोच सो बिभीषन को,
कहो ऐसे साहेब की सेवा न खटाइ को ? ॥
बड़े एक एक तें अनेक लोक लोकपाल,
अपने अपने को तौ कहैगो घटाइ को ?।
साँकरे के सेइबे सराहिबे सुमिरबे को,
राम सो न साहिब न कुमति-कटाइ को ॥२२॥
भूमिपाल ब्यालपाल नाकपाल लोकपाल,
कारन कृपालु मैं सबै के जी की थाह ली।
कादर को आदर काहू के नाहिं देखियत,
सबनि सोहात है सेवा-सुजानि टाहली ॥
तुलसी सुभाय कहै नाहीं कछु पच्छपात,
कौने ईस किये कीस भालु खासमाहली।
राम ही के द्वारे पै बोलाइ सनमानियत,
मोसे दीन दूबरे कुपूत कूर काहली ॥ २३ ॥
सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों
बिहूनेगुन पथिक पियासे जात पथ के।

सुरधुनी = गंगा। दुनी = दुनियाँ। खटाइ = टिके, ठहरे। कटाइ = काटनेवाला। खास-माहली = भितरिया। काहली = काहिल, आलसी। बिहूनेगुन = बिना गुण के। पियासे = प्यासे, तृषित। पथ = रास्ता।

लेखे जोखे चोखे चित तुलसी स्वारथहित,
नीके देखे देवता देवैया घने गथ के ॥
गीध मानो गुरु कपि-भालु मानो मीत कै
पुनीत गीत साके सब साहेब समत्थ के।
और भूप परखि सुलाखि तौलि ताइ लेत,
लसम के खसम तुही पै दसरत्थ के ॥२४॥
रीति महाराज की नेवाजिये जो माँगनो सो,
दोष-दुख-दारिद-दरिद्र कै कै छोड़िये।
नाम जाको कामतरु देत फल चारि ताहि,
तुलसी बिहाइ कै बबूर रेँड़ गोड़िये ॥
जाँचै को नरेस देसदेस को कलेस करै ?
देहै तो प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बोड़िये।
कृपापाथनाथ लोकनाथ नाथ सीतानाथ,
तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िये ? ॥२५॥
सवैया–जाके बिलोकत लोकप होत बिसोक लहैं सुरलोग सुठौरहि।
सो कमला तजि चञ्चलता करि कोटि कला रिझवै सुरमैारहि ॥
ताको कहाय कहै तुलसी तू लजाहि न माँगत कूकुर कौरहि।
जानकी जीवन को जन ह्वै जरिजाउ सो जीह जो जाँचत औरहि ॥२६॥
जड़ पञ्च मिलै जेहि देह करी करनी लखु धैाँ धरनीधर की।
जन की कहु क्योँ करिहै न सँभार जो सार करै सचराचर की ॥
तुलसी कहु राम समान को आन है ? सेवकि जासु रमा घर की।
जग मैं गति जाहि जगत्पति की परवाह है ताहि कहा नर की ॥२७॥

गथ=मोल, दाम। साके=नामवरी। सुलाखि=सूराख करके। ताइ=तपा कर। लसम=मुलायम, खोट। खसम=स्वामी। पै=निश्चय। रेँड=अरण्ड। बोड़िये=बोरिये, दमड़ी। ओड़िये=अँगइये। सुरमैार=विष्णु।

जग जाँचिये कोऊ न जाँचिये जो जिय जाँचिये जानकी-जानहि रे।
जेहि जाँचत जाँचकता जरि जाइ जो जारति जोर जहानहि रे॥
गति देखु बिचारि बिभीषन की अरु आनु हिये हनुमानहि रे।
तुलसी भजु दारिद-दोष-दवानल सङ्कट-कोटि-कृपानहि रे॥२८॥

सुनु कान दिये नित नेम लिये रघुनाथहि के गुनगाथहि रे।
सुख-मन्दिर सुन्दर रूप सदा उर आनि धरे धनुभाथहि रे॥
रसना निसि बासर सादर सो तुलसी जपु जानकीनाथहि रे।
करु सङ्ग सुसील सुसन्तन सोँ तजि कूर कुपन्थ कुसाथहि रे॥२९॥

सुत दार अगार सखा परिवार बिलोकु महा कुसमाजहि रे।
सबकी ममता तजिकै समता सजि सन्तसभा न बिराजहि रे॥
नरदेह कहा करि देखु बिचार बिगारु गँवार न काजहि रे।
जनि डोलहि लोलुप कूकर ज्यों तुलसी भजु कोसलराज हिरे॥३०॥

बिषया परनारि निसा-तरुनाई सुपाइ पर्‌यो अनुरागहि रे।
जम के पहरू दुख रोग बियोग बिलोकतहू न बिरागहि रे॥
ममतावस तैं सब भूलि गयो भयो भोर महाभय भागहि रे।
जरठाइ दिसा रविकाल उग्यो अजहूँ जड़ जीव न जागहि रे॥३१॥

जनम्यो जेहि जोनि अनेक क्रिया सुख लागि करी न परै बरनी।
जननी जनकादि हितू भये भूरि बहोरि भई उर की जरनी॥
तुलसी अब राम के। दास कहाइ हिये धरु चातक की धरनी।
करि हंस को बेष बड़ो सब सोँ तजि दे बक बायस की करनी॥३२॥

भलि भारतभूमि भले कुल जन्म समाज सरीर भलो लहि कै।
करषा तजि कै परुषा बरषा हिम मारुत घाम सदा सहि कै॥
जो भजै भगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहि कै।
नतु और सबै विष बीज बये हर-हाटक कामदुहा नहि कै॥३३॥

जरठाइ=वृद्धावस्था। धरनी=धारणा, गहनि हर-हाटक=सोने का हल। कामदुहा=कामधेनु। नहिकै=जोत कर।

सो सुकृती सुचिमन्त सुसन्त सुजान सुसील-सिरोमनि स्वै।
सुर तीरथ तासु मनावत आवन पावन होत हैं ता तन छ्वै॥
गुनगेह सनेह को भाजन सो सब ही सों उठाइ कहौं भुज द्वै।
सतिभाय सदा छल छाँड़ि सबै तुलसी जो रहै रघुबीर को ह्वै॥३४॥
सो जननी सो पिता सोइ भाइ सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो।
सोई सगो सो सखा सोइ सेवक सो गुरु सो सुर साहिब चेरो॥
सो तुलसी प्रिय प्रान समान कहाँ लौं बनाइ कहौं बहुतेरो।
जो तजि देह को गेह को नेह सनेह सों राम को होइ सबेरो॥३५॥
राम हैं मातु पिता गुरु बन्धु औ सङ्गी सखा सुत स्वामि सनेही।
राम की सौंह भरोसो है राम को रामरँग्यो रुचि राच्यो न केही॥
जीयत राम मुये पुनि राम सदा रघुनाथहि की गति जेही।
सोई जियै जगमें तुलसी नतु डोलत और मुये धरि देही॥३६॥
सियराम-सरूप अगाध अनूप बिलोचन-मीनन को जलु है।
श्रुति रामकथा मुख राम को नाम हिये पुनि रामहिं को थलु है॥
मति रामहिं सों गति रामहिं सों रति राम सों रामहिं को बलु है।
सब की न कहै तुलसी के मते इतनो जग जीवन को फलु है॥३७॥
दसरत्थ के दानि-सिरोमनि राम पुरान-प्रसिद्ध सुन्यो जसु मैं।
नर नाग सुरासुर जाचक जो तुम सों मनभावत पायो न कै॥
तुलसी कर जोरि करै बिनती जो कृपा करि दीनदयालु सुनैं।
जेहि देह सनेह न रावरे सों असि देह धराइ कै जाय जियैं॥३८॥
झूठो है झूठो है सदा जग सन्त कहन्त जे अन्त लहा है।
ताको सहै सठ सङ्कट कोटिक काढ़त दन्त करन्त हहा है॥
जानपनी को गुमान बड़ो तुलसी के बिचार गँवार महा है।
जानकीजीवन जान न जान्यौ तौ जान कहावत जान्यो कहा है॥३९॥

राच्यो=लग्यो। केही=किसी से। हहा=हँसी मज़ाक। जानपनी=चतुराई, होशियारी
गुमान=गर्व, घमण्ड।

तिन्ह तेँ खर सूकर स्वान भले जड़ताबस ते न कहैँ कछु वै।
तुलसी जेहि राम सोँ नेह नहीँ सो सही पसु पूँछ बिखान न द्वै॥
जननी कत भार मुई दस मास भई किन बाँझ गई किन च्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकीनाथ! जियै जग मेँ तुम्हरो बिन ह्वै॥४०॥
गज-बाजि-घटा भले भूरि भटा बनिता सुत भौँह तकैँ सब वै।
धरनी धन धाम सरीर भलो सुरलोकहु चाहि इहै सुख स्वै॥
सब फोकट साटक है तुलसी अपनो न कछू सपनो दिन द्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकीनाथ! जियै जग मेँ तुम्हरो बिन ह्वै॥४१॥
सुरराज सो राज-समाज समृद्धि विरञ्चि धनाधिप सो धन भो।
पवमान सो पावक सो जम सोम सो पूषन सो भवभूषन भो॥
करि जोग समीरन साधि समाधि कै धीर बड़ो बसहू मन भो।
सब जाय सुभाय कहै तुलसी जो न जानकीजीवन को जन भो॥४२॥
काम से रूप प्रताप दिनेस से सोम से सील गनेस से माने।
हरिचन्द से साँचे बड़े बिधि से मघवा से महीप बिषै-सुखसाने॥
सुक से मुनि सारद से बकता चिरजीवन लोमस तेँ अधिकाने।
ऐसे भये तौ कहा तुलसी जु पै राजिवलोचन राम न जाने॥४३॥
झूमत द्वार अनेक मतङ्ग जँजीर जरे मदअम्बु चुचाते।
तीखे तुरङ्ग मनोगतिचञ्चल पौन के गौनहुँ तेँ बढ़ि जाते॥
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकति बाहर भूप खरे न समाते।
ऐसे भये तौ कहा तुलसी जुपै जानकीनाथ के रङ्ग न राते॥४४॥
राज सुरेस पचासक को बिधि के कर को जो पटो लिखि पाये।
पूत सुपूत पुनीत प्रिया निज सुन्दरता रति को मद नाये॥
सम्पति सिद्धि सबै तुलसी मन की मनसा चितवै चित लाये।
जानकीजीवन जाने बिना जग ऐसेऊ जीव न जीव कहाये॥४५॥

बिखान= सींग। चाहि=अपेक्षा से अधिक। फोकट=मुफ़्त। साटक=सटकनेवाला। धनाधिप=कुबेर। चुचाते=चुआते, गिराते हैं। राते=रँगे गये। पटो=पट्टा, सरखत। मद=गर्व। नाये=नीचा किया।

कृसगात ललात जो रोटिन को घरवात घरे खुरपा खरिया।
तिन सोने के मेरु से ढेरु लहे मन तौ न भरो घर पै भरिया॥
तुलसी दुख दूनो दसा दुहुँ देखि कियो मुख दारिद को करिया।
तजि आस भो दास रघुप्पति को दसरत्थ को दानि दया-दरिया॥४६॥
को भरिहै हरि के रितये रितवै पुनि को हरि जौं भरिहै।
उथपै तेहि को जेहि राम थपै? थपिहै तेहि को हरि जौं टरिहै॥
तुलसी यह जानि हिये अपने सपने नहिँ कालहु तें डरिहै।
कुमया कछु हानि न औरन की जोपै जानकीनाथ मया करिहै॥४७॥
व्याल कराल महाविष पावक मत्तगयन्दहु के रद तोरे॥
साँसति सङ्कि चली डरपे हुते किङ्कर ते करनी मुख मोरे॥
नेकु विषाद नहीं प्रहलादहि कारन केहरि केवल हो रे।
कौन की त्रास करै तुलसी जोपै राखिहैं राम तौ मारिहै को रे?॥४८॥
कृपा जिनकी कछु काज नहीं न अकाज कछू जिनके मुख मोरे।
करैं तिनकी परवाहि ते जो बिनु पूँछ विषान फिरैं दिन दोरे॥
तुलसी जेहिके रघुनाथ से नाथ समर्थ सु सेवत रीझत थोरे।
कहा भव-भीर परी तेहि धौं विचरै धरनी तिन सौं तिन तोरे॥४९॥
कानन भूधर बारि बयारि महाविष व्याधि दवा अरि घेरे॥
सङ्कट कोटि जहाँ तुलसी सुत मातु पिता हित बन्धु न नेरे॥
राखिहैं राम कृपालु तहाँ हनुमान से सेवक हैं जेहि केरे।
नाक रसातल भूतल में रघुनायक एक सहायक मेरे॥५०॥
जवै जमराज रजायसु तें मोहिँ लै चलिहैं भट बाँधि नटैया।
तात न मात न स्वामि सखा सुत बन्धु विसाल विपत्ति बँटैया॥
साँसति घोर पुकारत आरत कौन सुनै चहुँ ओर डटैया।
एक कृपालु तहाँ तुलसी दसरत्थ के नन्दन बन्दि कटैया॥५१॥

घरवात=घर की सम्पत्ति। खुरपा=घास छीलने का औज़ार। खरिया=घास भरने का जाला। दरिया=नदी, सागर। रितये=खाली किये। कुमया=नाराजगी। मया=स्नेह। मत्तगयन्द=हाथी। रद=दाँत। कारन हो=कारण थे दवा=अग्नि। नाक=आकाश।

जहाँ जमजातना घोर-नदी भट कोटि जलच्चर दन्त टेवैया।
जहँ धार भयङ्कर वार न पार न बोहित नाव न नीक खेवैया॥
तुलसी जहँ मातु पिता न सखा नहिँ कोउ कहूँ अवलम्ब देवैया।
तहाँ बिनु कारन राम कृपालु बिसाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया॥५२॥

जहाँ हित स्वामि न सङ्ग सखा बनिता सुत बन्धु न बापु न मैया।
काय गिरा मन के जन के अपराध सबै छल छाँड़ि छमैया॥
तुलसी तेहि काल कृपालु बिना दूजो कौन है दारुन दुःख दमैया।
जहाँ सब सङ्कट दुर्घट सोच तहाँ मेरो साहब राखै रमैया॥५३॥

तापस को बरदायक देव सबै पुनि बैर बढ़ावत बाढ़े।
थोरेहि कोप कृपा पुनि थोरेहि बैठिकै जोरत तोरत ठाढ़े॥
ठोंकि बजाय लखे गजराज कहाँ लौं कहौं केहिसोँ रद काढ़े?।
आरत के हित नाथ अनाथ के राम सहाय सही दिन गाढ़े॥५४॥

जप जोग बिराग महा मख साधन दान दया दम कोटि करै।
मुनि सिद्ध सुरेस गनेस महेस से सेवत जन्म अनेक मरै॥
निगमागम ज्ञान पुरान पढ़ै तपसानल में जुग पुञ्ज जरै।
मन सोँ पन रोपि कहै तुलसी रघुनाथ बिना दुख कौन हरै?॥५५॥

पातक पीन कुदारिद दीन मलीन धरे कथरी करवा है।
लोक कहै बिधिहू न लिख्यो सपनेहूँ नहीं अपने बर बाहै॥
राम को किङ्कर सो तुलसी समुझेहि भले कहबो न रवा है।
ऐसे को ऐसो भयो कबहूँ न भजे बिन बानर के चरवाहै॥५६॥

मातु पिता जग जाय तज्यो बिधिहू न लिखी कछु भाल भलाई।
नीच निरादर-भाजन कादर कूकर टूकन लागि ललाई॥
राम-सुभाउ सुन्यो तुलसी प्रभु सोँ कह्यो बारक पेट खलाई।
स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सो साहब खोरि न लाई॥५७॥

बोहित=जहाज़। छमैया=क्षमा करनेवाले। दमैया=दमन करनेवाला। दुर्घट=कठिन। जुगपुञ्ज=अनेक युग। पीन=मोटा, स्थूल। करवा=टोंटीदार लोटा, बधना। रवा=उचित। जाय=उत्पन्न करके। बारक=एक बार।

पाप हरे परिताप हरे तन पूजि भो हीतल सीतलताई ।
हंस कियो बक तेँ बलिजाउँ कहाँ लौँ कहौँ करुना अधिकाई ॥
काल बिलोकि कहै तुलसी मन मेँ प्रभु की परतीति अघाई ।
जन्म जहाँ तहँ रावरे सोँ निबहै भरि देह सनेह सगाई ॥५८॥
लोग कहैँ अरु हौँ हूँ कहौँ जन खोटो खरो रघुनायक ही को ।
रावरी राम बड़ी लघुता जस मेरो भयो सुखदायक ही को ॥
कै यह हानि सहौ बलिजाउँ कि मोहूँ करौ निज लायक ही को ।
आनि हिये हित जानि करौ ज्योँ हौँ ध्यान धरौँ धनुसायक ही को ॥५९॥
आपु हौँ आपुको नीके कै जानत, रावरो राम ! भरायो गढ़ायो ।
कीर ज्योँ नाम रटै तुलसी सो कहै जग जानकीनाथ पढ़ायो ॥
सोई है खेद जो बेद कहै न घटै जन जो रघुबीर बढ़ायो ।
हौँ तो सदा खर को असवार तिहारोई नाम गयन्द चढ़ायो ॥६०॥

कवित्त—छार ते सँवारिकै पहार हू तेँ भारी कियो,
गारो भयो पञ्च मँ पुनीत पच्छ पाइकै ॥
हौँ तो जैसो तब तैसो अब अधमाई कै कै,
पेट भरौँ राम रावरोई गुन गाइकै ॥
आपने निवाजे की पै कीजै लाज महाराज,
मेरी ओर हेरिकै न बैठिये रिसाइकै ।
पालिकै कृपालु व्याल-बाल को न मारिये,
औ काटिये न नाथ ! बिषहू को रूख लाइकै ॥६१॥
बेद न पुरान गान जानौँ न बिज्ञान ज्ञान,
ध्यान धारना समाधि साधन-प्रवीनता ।
नाहिन बिराग जोग जाग भाग तुलसी के,
दया-दान-दूबरो हौँ पाप ही की पीनता ॥

भरिदेह=शरीर रहते तक। गयन्द=हाथी। गारो=गर्व, घमंड। रूख=वृक्ष। लाइकै=लगाकर। पीनता=मोटाई।

लोभ-मोह-काम-कोह-दोषकोष मोसो कौन ?
कलि हू ने सीखि लई मेरियै मलीनता।
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
रावरे दयालु दीनबन्धु मेरी दीनता ॥६२॥

रावरो कहावौं गुन गावौं राम रावरोई,
रोटी द्वै हौं पावौं राम रावरी ही कानि हौं।
जानत जहान मन मेरे हू गुमान बड़ो,
मान्यो मैं न दूसरो न मानत न मानिहौं ॥
पाँच की प्रतीति न भरोसो मोहिं आपनोई,
तुम अपनायो हौं तबैहीं परि जानिहौं।
गढ़ि गुढ़ि छोलि छालि कुन्द की सी भाई बातैं
जैसी मुख कहौं तैसी जीय जब आनिहौं ॥६३॥

बचन बिकार करतबउ खुआर मन,
बिगत-बिचार कलि मल को निधान है।
राम को कहाइ नाम बेचि बेचि खाइ सेवा,
सङ्गति न जाइ पाछिले को उपखान है ॥
तेहू तुलसी को लोग भलो भलो कहैं ताको,
दूसरो न हेतु एक नीके कै निदान है।
लोकरीति बिदित बिलोकियत जहाँ तहाँ,
स्वामी के सनेह स्वान हू को सनमान है ॥६४॥

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मोसो दगाबाज दूसरो न जगजाल है।
कै न आयौं करौं न करौंगो करतूति भली,
लिखी न बिरञ्चि हू भलाई भूलि भाल है ॥

कुन्द=खराद। खुआर=नष्ट। उपखान=कथा। निदान=मूलकारण। जाल=समूह, भारी।

रावरी सपथ राम ! नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो झूठो सो तिलोक तिहूँ काल है ।
तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपालु,
कीजै न बिलम्ब बलि पानीभरी खाल है ॥६५॥

राग को न साज न बिराग जोग जाग जिय,
काया नहिं छाँड़ि देत ठाटिबो कुठाट को ।
मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि,
चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाट को ॥
भयो करतार बड़े कूर को कृपालु पायो,
नाम-प्रेम-पारस हैाँ लालची बराट को ।
तुलसी बनी है राम रावरे बनाये ना तौ,
धोबी कैसो कूकर न घर को न घाट को ॥ ६६॥

ऊँचो मन ऊँची रुचि भाग नीचो निपट हि,
लोकरीति-लायक न लङ्गर-लबार है ।
स्वारथ अगम परमारथ की कहा चली,
पेट की कठिन जग जीव को जवार है ॥
चाकरी न आकरी न खेती न बनिज भीख,
जानत न कूर कछु किसब कबार है ।
तुलसी की बाजी राखी राम ही के नाम नतु,
भैंट पितरन को न मूड़ हू में बार है ॥६७॥

अपत उतार अपकार को अगार जग,
जाकी छाँह छुये सहमत व्याध बाघको ।

बराट=कौड़ी । लङ्गर=कुचाली, नटखट । लबार=झूठा । जवार=जवाल, झंझट । चाकरी=नौकरी । आकरी=खान खोदने का काम । किसब=कारीगरी । कबार=व्यापार, रोज़गार । अपत=निर्लज्ज । उतार=नीच । सहमत=सकुचाता है ।

पातक पुहुमि पालिबे को सहसानन सो,
कानन कपट को पयोधि अपराध को
तुलसी से बाम को भो दाहिनो दयानिधान,
सुनत सिहात सब सिद्ध साधु साधको।
रामनाम ललित ललाम कियो लाखनि को,
बड़ो कूर कायर कपूत कौड़ी आध को ॥६८॥

सब अङ्ग हीन सब-साधन-विहीन मन,
बचन मलीन हीन कुल करतूति हैाँ।
बुधि-बल हीन भाव-भगति-बिहीन हीन,
गुन ज्ञानहीन हीन भाग हू बिभूति हैाँ॥
तुलसी गरीब की गई-बहोर रामनाम,
जाहि जपि जीह राम हू को बैठो धूति हैाँ॥
प्रीति रामनाम सोँ प्रतीति रामनाम की,
प्रसाद रामनाम के पसारि पायँ सूतिहैाँ ॥६९॥

मेरे जान जब तेँ हैाँ जीव ह्वै जनम्यो जग,
तब तेँ बेसाह्यो दाम लोह कोह काम को।
मन तिनहीँ की सेवा तिनहीँ सोँ भाव नीको,
बचन बनाइ कहैाँ हैाँ गुलाम राम को॥
नाथ हू न अपनायो लोक झूठी ह्वै परी पै,
प्रभु हू तेँ प्रबल प्रताप प्रभु नाम को।
आपनी भलाई भलो कीजै तौ भलोई न तौ,
तुलसी को खुलैगो खजानो खोटे दाम को ॥७०॥

जोग न बिराग जप जाग तप त्याग ब्रत,
तीरथ न धर्म जानैाँ बेदबिधि किमि है।

बिभूति=ऐश्वर्य। धूति=धोखा देकर। भलोई=अच्छा ही है।

तुलसी सो पोच न भयो है नहिँ ह्वै है कहूँ,
सोचैँ सब याके अघ कैसे प्रभु छमिहै ॥
मेरे तौ न डर रघुबीर सुनौ साँची कहौँ,
खल अनखैहैँ तुम्हैँ सज्जन न गमिहै।
भले सुकृती के सङ्ग मोहिँ तुला तौलिये तौ,
नाम के प्रसाद भार मेरी ओर नमिहै ॥७१॥

जाति के सुजाति के कुजाति के पेटागिबस,
खाये टूक सब के बिदित बात दुनी सो।
मानस बचन काय किये पाप सतिभाय,
राम को कहाय दास दगाबाज पुनी सो ॥
राम नाम को प्रभाउ पाउ महिमा प्रताप,
तुलसी को जग मनियत महामुनी सो।
अतिही अभागो अनुरागत न रामपद,
मूढ़ एतो बड़ो अचरज देखि सुनी सो ॥७२॥

जायो कुल मङ्गन बधावनो बजायो सुनि,
भयो परिताप पाप जननी जनक को।
बारे तेँ ललात बिललात द्वार द्वार दीन,
जानत हो चारि फल चारि ही चनक को ॥
तुलसी सो साहिब समर्थ को सुसेवक है,
सुनत सिहात सोच बिधिहू गनक को।
नाम राम रावरो सयानो किधौं बावरो जो,
करत गिरी तेँ गरु तृन तेँ तनक को ॥७३॥

पोच=नीच। गमिहै=परवा न करैँगे। नमिहै=नवेगा, गरुआ होगा। टूक=टुकड़ा। दुनी=दुनियाँ। पुनी=पुण्यात्मा, पुनः। पाउ=प्राप्त। परिताप=दुःख। जानत हो=जानता था। चनक=चना। तनक=थोड़ा, तुच्छ।

वेद हू पुरान कही लोकहू बिलोकियत,
राम नाम ही सों रीझे सकल भलाई है ।
कासी हू मरत उपदेसत महेस सोई,
साधना अनेक चितई न चित लाई है ॥
छाछी को ललात जे ते राम-नाम के प्रसाद,
खात खुनसात सोंधे दूध की मलाई है ।
रामराज सुनियत राजनीति की अवधि,
नाम राम रावरो तौ चाम की चलाई है ॥७४॥
सोच सङ्कटनि सोच सङ्कट परत जर,
जरत प्रभाव नाम ललित ललाम को ।
बूड़ियो तरति बिगरोयो सुधरति बात,
होत देखि दाहिनो सुभाव बिधि बाम को ॥
भागत अभाग अनुरागत विराग भाग,
जागत आलसि तुलसी हू से निकाम को ।
धाई धारि फिरि कै गोहारि हितकारी होति,
आई मीचु मिटति जपत रामनाम को ॥७५॥
आँधरो अधम जड़ जाजरो जरा जवन,
सूकर के सावक ढका ढकेल्यो मग मैं ।
गिरो हिये हहरि हराम हो हराम हन्यो,
हाय हाय करत परीगो कालफँग मैं ॥
तुलसी बिसोक ह्वै त्रिलोकपति-लोक गयो,
नाम के प्रताप बात बिदित है जग मैं ।

छाछी=मट्ठा, मही । खुनसात=अप्रसन्न होता । सोंधे= सोन्हापन युक्त। निकाम=बेकाम का । धारि=सेना, झुंड । जाजरो=जर्जर, खिन्न । जरा=वृद्धावस्था । जवन=म्लेच्छ । सावक=बच्चा । ढका=धक्का । फँग=फन्दा ।

सोई रामनाम जो सनेह सों जपत जन,
ताकी महिमा क्यों कहीहै जाति अगमैं ॥७६॥
जापकी न तप खप कियो न तमाइ जोग,
जाग न बिराग त्याग तीरथ न तनको।
भाई को भरोसो न खरो सो बैर बैरिहू सों,
बल अपनो न हितू जननी न जनको।
लोक को न डर परलोक को न सोच देव,
सेवा न सहाय गर्व धाम को न धन को।
रामही के नाम तें जो होइ सोई नीको लागै,
ऐसोई सुभाव कछु तुलसी के मन को ॥७७॥
ईस न गनेस न दिनेस न धनेस न
सुरेस सुर गौरि गिरापति नहिं जपने।
तुम्हरेई नाम को भरोसो भव तरिबे को,
बैठे उठे जागत बागत सोये सपने॥
तुलसी है बावरो सो रावरोई रावरी सौं,
रावरेऊ जानि जिय कीजिये जु अपने
जानकी-रमन मेरे रावरे बदन फेरे,
ठाउँ न समाउँ कहाँ सकल निरपने ॥७८॥
जाहिर जहान में जमानो एक भाँति भयो,
बेंचिये बिबुधधेनु रासभी बेसाहिये।
ऐसेऊ कराल कलिकाल में कृपालु तेरे,
नाम के प्रताप न त्रिताप तन दाहिये॥
तुलसी तिहारो मन बचन करम तेहि,
नाते नेह-नेम निज ओर तें निबाहिये।

अग=जड़। खप=लगना। तमाइ=चाह करके। खरो सो=तृण के बराबर। बागत=डोलते हुए। सौँ=सौगन्द। निरपने=अपने नहीं, बेगाने। बिबुधधेनु=कामधेनु। रासभी=गदही।

रङ्क के निवाज रघुराज राजा राजनि के,
उमिर दराज महाराज तेरी चाहिये ॥ ७९ ॥
स्वारथ सयानप प्रपञ्च परमारथ
कहायो राम रावरो हौँ जानत जहान है।
नाम के प्रताप बाप ! आजु लौँ निबाही नीके,
आगे को गोसाइँ स्वामी सबल सुजान है ॥
कलि की कुचालि देखि दिन दिन दूनी देव !
पाहरूई चोर हेरि हिय हहरान है।
तुलसी की बलि बार बार ही सँभार कीबो,
जद्यपि कृपानिधान सदा सावधान है ॥८०॥
दिन दिन दूनो देखि दारिद दुकाल दुख,
दुरित दुराज सुख सुकृत सकोच है।
माँगे पैँत पावत पचारि पातकी प्रचंड,
काल की करालता भले को होत पोच है ॥
आपने तौ एक अवलम्ब अम्ब डिम्भ ज्योँ,
समर्थ सीतानाथ सब सङ्कट-बिमोच है।
तुलसी को साहसी सराहिये कृपालु राम !
नाम के भरोसे परिनाम को निसोच है ॥८१॥
मोह-मद-मात्योा रात्योा कुमति कुनारि सोँ
बिसारि बेद लोक-लाज आँकरो अचेतु है।
भावै सो करत मुँह आवै सो कहत कछु,
काहू की सहत नाहिँ सरकस हेतु है ॥
तुलसी अधिक अधमाई हू अजामिल तेँ,
ताहू मेँ सहाय कलि कपट-निकेतु है।

रङ्क=ग़रीब । निवाज=दयालु । दराज=लम्बा, बड़ा। सयानप=चतुराई। दुरित=पाप ॥ दुराज=कुराज्य। पत=दाँव, बाज़ी। डिम्भ=बालक । साहसी=हिम्मतवरी। निसोच=बेफ़िक्र । रात्या=रत हुआ, लगा । आँकरो=बहुत अधिक। सरकस=प्रबल, सीनाज़ोर।

जैबे को अनैक टेक एक टेक हूबे की जो,
पेट-प्रिय-पूत-हित रामनाम लेतु है ॥८२॥
जागिये न सोइये बिगोइये जनम जाय,
दुख रोग रोइये कलेस कोह काम को।
राजा रङ्क रागी औ बिरागी भूरि भागी ये
अभागी जीव जरत प्रभाव कलि बाम को ॥
तुलसी कबन्ध कैसो धाइबो बिचारु अन्ध,
धन्ध देखियत जग सोच परिनाम को।
सोइबो जो राम के सनेह की समाधि-सुख,
जागिबो जो जीह जपै नीके रामनाम को ॥८३॥
बरन-धरम गयो आस्रम निवास तज्यो,
त्रासन चकित सो परावनो परो सो है।
करम उपासना कुबासना बिनास्यो ज्ञान,
बचन बिराग बेष जगत हरो सो है ॥
गोरख जगायो जोग भगति भगायो लोग,
निगम नियोग ते सो केलि ही छरो सो है।
काय मन बचन सुभाय तुलसी है जाहि,
राम नाम को भरोसो ताहि को भरोसो है ॥८४॥

सवैया—बेद पुरान बिहाइ सुपन्थ कुमारग कोटि कुचाल चली है।
काल कराल नृपाल कृपाल न राजसमाज बड़ोई छली है ॥
बर्न-बिभाग न आस्रम धर्मदुनी दुख-दोष-दरिद्र-दली है।
स्वारथ को परमारथ को कलि राम को नाम-प्रताप बली है ॥८५॥
न मिटै भवसङ्कट दुर्घट है तप तीरथ जन्म अनेक अटो।
कलि मैं न बिराग न ज्ञान कहूँ सब लागत फोकट झूँठ-जटो ॥

बिगोइये=नाश कीजिये। बाम=टेढ़ा। कबन्ध=बिना सिर की धड़। धन्ध=धन्धा, काम। परावनो=भगदड़। छरो=छलो। दुर्घट=कठिन, असाध्य। अटो=घूमो। फोकट=मुफ़्त।

नट ज्योँ जनि पेट-कुपेटक कोटिक चेटक कौतुकठाट ठटो ।
तुलसी जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसिबासर राम रटो ॥८६॥
दम दुर्गम दान दया मख कर्म सुधर्म अधीन सबै धन को ।
तप तीरथ साधन जोग बिराग सोँ होइ नहीँ दृढ़ता तन को ॥
कलिकाल कराल में राम कृपालु यहै अवलम्ब बड़ो मन को ।
तुलसी सब सञ्जमहीन सबै इक नाम अधार सदा जन को ॥८७॥
पाइ सुदेह बिमोह-नदी-तरनी न लही करनी न कछू की ।
रामकथा बरनी न बनाइ सुनी न कथा प्रहलाद न ध्रू की ॥
अब जोर जरा जरि गात गयो मन मानि गलानि कुबानि न मूकी ।
नीके कै ठीक दई तुलसी अवलम्ब बड़ो उर आखर दू की ॥८८॥
राम बिहाय मरा जपते बिगरी सुधरी कवि-कोकिल हू की ।
नामहिँ तें गज की गनिका की अजामिल की चलि गै चलचूकी ॥
नाम-प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पांडुबधू की ।
ताको भलो अजहूँ तुलसी जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की ॥८९॥
नाम अजामिल से खल तारन तारन बारन बारबधू को ।
नाम हरे प्रहलाद बिषाद पिता भय साँसति सागर सूको ॥
नाम सो प्रीति-प्रतीति बिहीन गिल्यो कलिकाल कराल न चूको ।
राखिहैँ राम सो जासु हिये तुलसी हुलसै बल आखर दू को ॥९०॥
जीव जहान मैं जायो जहाँ सो तहाँ तुलसी तिहुँ दाह दहो है ।
दोस न काहू कियो अपनो सपनेहुँ नहीं सुख-लेस लहो है ॥
राम के नाम तें होउ सो होउ न सोऊ हिये रसना ही कहो है ।
कियो न कछू करिबो न कछू कहिबो न कछू मरिबोइ रहो है ॥९१॥

जनि=उत्पन्न होकर। चेटक=चटक मटक। तरनी=नौका। मूकी=बन्द हुई, छूटी। कविकोकिल=वाल्मीकमुनि। चलचूकी=धोखेबाज़ी, कपट। पांडुबधू=द्रौपदी। बारबधू=वेश्या। सूको=सूख गया। गिल्यो=निगल गया।

जीजै न ठाँउ न आपन गाँउ सुरालयहू को न सम्बल मेरे।
नाम रटौं जमवास क्यौं जाउँ को आइ सकै जम-किङ्कर नेरे ?॥
तुम्हरो सब भाँति तुम्हारिय सौं तुम्हहीं बलि हौ मोकौं ठाहरु हेरे।
वैरख बाँह बसाइये पै तुलसी-घर व्याध अजामिल खेरे ॥९२॥

का कियो जोग अजामिल जू गनिका कबहीं मति पेम पगाई ?।
व्याध को साधुपनो कहिये अपराध अगाधनि मैं ही जनाई ॥
करुनाकर की करुना करुना-हित नाम-सुहेत जो देत दगाई।
काहे को खीझिय ? रीझिय पै तुलसीहु सो है बलि सोइ सगाई ॥९३॥

जे मद-मार-विकार भरे ते अचार बिचार समीप न जाहीं।
है अभिमान तऊ तन में जन भाषिहै दूसरे दीनन पाहीं ॥
जौ कछु बात बनाइ कहौं तुलसी तुममें तुमहूँ उर माहीं।
जानकी-जीवन जानत हौ हम हैं तुम्हरे तुममें सक नाहीं ॥९४॥

दानव देव अहीस महीस महा मुनि तापस सिद्ध समाजी।
जग जाचक दानि दुतीय नहीं तुमही सब की सब राखत बाजी ॥
एते बड़े तुलसीस तऊ सबरी के दिये बिनु भूषन भाजी।
राम गरीब नेवाज भये हौं गरीबनेवाज गरीब नेवाजी ॥९५॥

कवित्त–किसबी किसान-कुल बनिक भिखारी भाँट,
चाकर चपल नट चोर चार चेटकी।
पेट को पढ़त गुन गढ़त चढ़त गिरि,
अटत गहन-गन अहन अखेट की ॥
ऊँचे नीचे करम धरम अधरम करि,
पेट ही को पचत बेचत बेटा बेटकी।

सम्बल=बल, सहारा। वैरख=पताका। पै=निश्चय। खेरे=पुरवा, गाँव। पगाई=सराबोर किया। जनाई=विख्यात हुआ। दगाई=दागने की क्रिया। बिनुभूषन=बिनाबनाये अर्थात् लवणादि हीन। किसबी=कारीगर। चेटकी=इन्द्रजाली, जादूगर। अटत=घूमते हैं। अहन=दिन। अखेट=अहेर, शिकार। पचत=नष्ट होते हैं।

तुलसी बुझाइ एक राम घनस्याम ही तैं,
आगि बड़वागि तैं बड़ी है आगि पेट की ॥९६॥

खेती न किसान को भिखारी को न भीख बलि,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका-बिहीन लोग सीद्यमान सोच-बस,
कहैं एक एकन सों कहाँ जाइ का करी ? ॥
बेदहू पुरान कही लोकहू बिलोकियत,
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी।
दारिद-दसानन दबाई दुनी दीनबन्धु !
दुरित-दहत देखि तुलसी हहा करी ॥९७॥

कुल करतूति भूति कीरति सुरूप गुन,
जोबन जरत जर परै न कल कहीं।
राजकाज कुपथ कुसाज भोग रोग ही के,
बेद-बुध बिद्या पाइ बिबस बलकहीं ॥
गति तुलसीस की लखै न कोउ जो करत,
पब्बइ तैं छार छार पब्बइ पलक ही।
कासों कीजै रोष दोष दीजै काहि पाहि राम ?
कियो कलिकाल कुलि खलल खलक ही ॥९८॥

बबुर बहेरे को बनाइ बाग लाइयत,
रूँधिबे को सोई सुरतरु काटियत है।
गारी देत नीच हरिचन्द हू दधीचि हू को,
आपने चना चबाइ हाथ चाटियत है।
आप महापातकी हँसत हरि हर हू को,
आपु है अभागी भूरि भागी डाटियत है।

सीद्यमान=छीजते। दबई=जलदानि, पानी देनेवाले। हहा=हाय हाय, खेद। कल=चैन। बलकहीं=उबलते हैं। खलल=बाधा, रुकावट। खलक=जगत, संसार।

कलि को कलुष मन मलिन किये महत,
मसक की पाँसुरी पयोधि पाटियत है ॥९९॥
सुनिये कराल कलिकाल भूमिपाल तुम,
जाहि घालो चाहिये कहौ धौं राखै ताहि को ?।
हौँ तौ दीन दूबरो बिगारो ढारो रावरो न,
मैं हूँ तैं हूँ ताहि को सकल जग जाहि को॥
काम कोह लाइ कै देखाइयत आँखि मोहिं,
एते मान अकस कीबे को आपु आहि को ?॥
साहिब सुजान निज स्वानहू को पच्छ कियो,
रामबोला नाम हौँ गुलाम-राम-साहि को ॥१००॥

सवैया—साँचो कहौँ कलिकाल कराल मैं ढारो बिगारो तिहारो कहा है।?
काम को कोह को लोभ को मोह को मोहि सोँ आनि प्रपञ्च रहा है॥
हौ जगनायक लायक आजु पै मेरियौ टेव कुटेव महा है।
जानकीनाथ बिनो तुलसी जग दूसरे सोँ करिहौँ न हहा है॥१०१॥
भागीरथी जलपान करौँ अरु नाम द्वै राम के लेत निते हौँ॥
मोको न लेनो न देनो कछू कलि भूलि न रावरी ओर चितैहौँ॥
जानिकै जोर करौ परिनाम तुम्हैं पछितैहौँ पै मैं न भितैहौँ।
ब्राह्मन ज्यौँ उगिल्यो उरगारिहौँ त्योँही तिहारे हिये न हितैहौँ१०२
राजमराल के बालक पेलि कै पालत लालत खूसर को।
सुचि सुन्दर सालि सकेलि सुवारि कै बीज बटोरत ऊसर को॥
गुन-ज्ञान-गुमान भभेरि बड़ो कलपद्रुम काटत मूसर को।
कलिकाल बिचार अचार हरो नहिं सूझै कछू धमधूसर को॥१०३॥
कीबे कहा पढ़िबे को कहा? फल बूझि न बेद को भेद बिचार्यौ।
स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नाम बिसार्यौ॥

महत=अतिशय। पाँसुरी=पसली की हड्डी। ढारो=लुढ़काता हूँ। एतेमान=इतना बड़ा। अकस=वैर, शत्रुता। साहि=शाह, राजराजेश्वर। टेव=आदत। खूसर=उल्लू पक्षी। सालि=धान। सकेलि=बटोर कर। भभेरि=भभाय। धमधूसर=भद्दा मोटा आदमी।

याद विवाद बिषाद बढ़ाइ कै छाती पराई औ आपनी जारयौ।
चारिहु को छहु को नव को दस आठ को पाठ कुकाठ ज्योँ फारयौ॥१०४॥
आगम बेद पुरान बखानत मारग कोटिन जाहिँ न जाने।
जे मुनि ते पुनि आपुहि आपु को ईस कहावत सिद्ध सयाने॥
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे जप जोग बिराग लै जीव पराने।
के करि सोच मरै तुलसी हम जानकी नाथ के हाथ बिकाने॥ १०५॥
धूत कहौ अवधूत कहौ रजपूत कहौ जोलहा कहौ कोऊ।
काहू की बेटी सोँ बेटा न ब्याहब काहू की जाति बिगार न सोऊ॥
तुलसी सरनाम गुलाम है राम को जाको रुचै सो कहै कछु ओऊ।
माँगि कै खैबो मसीद को सोइबो लैबे के एक न दैबे को दोऊ॥१०६॥

कवित्त—मेरे जाति पाँति न चहौँ काहू की जाति पाँति,
मेरे कोऊ काम को न हौँ काहू के काम को।
लोक परलोक रघुनाथ ही के हाथ सब,
भारी है भरोसो तुलसी के एक नाम को॥
अति ही अयाने उपखानो नहिँ बूझैँ लोग,
साह ही के गोत गोत होत है गुलाम को।
साधु कै असाधु कै भलो कै पोच सोच कहा,
काहू के दुआर परौँ जो हौँ सो हौँ राम को॥१०७॥

कोऊ कहै करत कुसाज दगाबाज बड़ो,
कोऊ कहै राम को गुलाम खरो खूब है।
साधु जानैँ महासाधु खल जानैँ महाखल,
बानी झूँठी साँची कोटि उठत हबूब है॥
चहत न काहू सोँ न कहत काहू की कछु,
सबकी सहत उर अन्तर न ऊब है।

सरनाम=प्रसिद्ध, मशहूर। मसीद=धर्मशाला, मसजिद। उपखान=उपाख्यान, इतिहास। साह=स्वामी। गात=वंश, गरोह। हबूब=बुलबुला। ऊब=उकताहट।

तुलसी को भलो पोच हाथ रघुनाथ ही के,
राम की भगति भूमि मेरी मति दूब है ॥१०८॥

जागैं जोगी जङ्गम जती जमाति ध्यान धरैं,
डरैं उर भारी लोभ मोह कोह काम के।

जागैं राजा राजकाज सेवक समाज साज,
सोचैं सुनि समाचार बड़े बैरी बाम के॥

जागैं बुध बिद्याहित पंडित चकित चित,
जागैं लोभी लालच धरनि धन धाम के।

जागैं भोगी भोगही बियोगी रोगी सोगबस,
सोवै सुख तुलसी भरोसे एक राम के ॥ १०९ ॥

छप्पय—राम पिता पितु बन्धु सुजन गुरु पूज्य परम हित।
साहेब सखा सहाय नेह नाते पुनीत चित ॥
निसि दिन रघुपति चरन सरन सपनेहुँ न आनगति।
जाति पाँति सब भाँति लागि रामहिं हमारि पति ॥
परमारथ स्वारथ सुजस, सुलभ राम तैं सकल फल।
कह तुलसिदास अब जब कबहुँ, एक राम तैं मोर भल ॥११०॥

महाराज बलिजाउँ रामसेवक सुखदायक।
महाराज बलिजाउँ राम सुन्दर सब लायक ॥
महाराज बलिजाउँ राम सब संकट मोचन।
महाराज बलिजाउँ राम राजीव-बिलोचन ॥
बलिजाउँ राम करुनायतन, प्रनतपाल पातकहरन।
बलिजाउँ राम कलि-भय-बिकल, तुलसिदास राखिय सरन॥१११॥

जय ताड़का-सुबाहु-मथन मारीच-मानहर।
मुनिमख-रच्छन-दच्छ, सिलातारन करुनाकर ॥

पति=मर्यादा, प्रतिष्ठा। मथन=मढ़ना, बिड़ोलना।

नृपगन-बलमदसहित सम्भु कोदंड-बिहंडन।
जय कुठारधर-दर्पदलन दिनकरकुल-मंडन॥
जय-जनकनगर-आनन्दप्रद, सुखसागर सुखमाभवन॥
कह तुलसिदास सुर-मुकुटमनि, जय जय जय जानकिरवन॥११२॥

जय जयन्त-जयकर अनन्त सज्जनजनरञ्जन।
जय बिराध-बध-बिदुष बिबुध-मुनिगन-भयभञ्जन॥
जय निसिचरी-बिरूप-करन रघुबंसबिभूषन।
सुभट चतुर्दस-सहस-दलन त्रिसिरा खर दूषन॥
जय दंडकबन-पावन-करन, तुलसिदास संसय-समन।
जगबिदित जगतमनि जयति जय, जयजय जय जानकिरमन॥११३॥

जय मायामृगमथन गीध-सवरी-उद्धारन।
जय कबन्धसूदन बिसाल-तरुताल-बिदारन॥
दवन बालि बलसालि थपन सुग्रीव सन्तहित।
कपि-कराल-भट-भालुकटक-पालन कृपालु-चित॥
जय सियबियोग-दुखहेतु-कृत, सेतुबन्ध बारिधि-दमन।
दससीस बिभीषन-अभयप्रद, जय जय जय जानकिरमन॥११४॥

कनककुधर-केदार बीज सुन्दर सुरमनिवर।
सींचि कामधुकधेनु सुधामय पय बिसुद्धतर॥
तीरथपति अङ्कुर-सरूप यच्छेस रच्छ तेहि।
मरकतमय साखा सुपत्र मञ्जरिय लच्छ जेहि॥
कैवल्य सकल फल कल्पतरु, सुभ सुभाव सब सुख बरिस।
कह तुलसिदास रघुबंसमनि, तौ कि होहिं तुव कर सरिस?॥११५॥

जाय सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै।
जाय सो जती कहाय विषय-बासना न छंडै॥

दर्प = घमंड। मंडन = भूषण। रञ्जन = प्रसन्न करनेवाले। बिदुष = पंडित। सूदन = नाशक। केदार = धान बोने का खेत, कियारी। सुरमनि = देवमणि। कैवल्य = मोक्ष।

जाय धनिक बिनु दान जाय निर्धन बिनु धर्महिँ ।
जाय सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्महिँ ॥
सुत जाय मातु-पितु-भक्ति बिनु, तिय सो जाइ जेहि पति न हित ।
सब जाय दास तुलसी कहत, जैाँ न रामपद नेह नित ॥ ११६ ॥

को न क्रोध निरदह्यो कामबस केहि नहिँ कीन्होँ ?।
को न लोभ दृढ़ फन्द बाँधि त्रासन करि दीन्होँ ?
कौन हृदय नहिँ लाग कठिन अति नारिनयनसर ?।
लोचनजुत नहिँ अन्ध भयो श्री पाइ कौन नर ?॥
सुर-नाग-लोक महिमंडलहु, को जु मोह कीन्होँ जय न ?।
कह तुलसिदास सो ऊबरै, जेहि राख राम राजिवनयन ॥११७॥

सवैया—भैाँह कमान सँधान सुठान जे नारि-बिलोकनि-बान तेँ बाँचे ।
कोप-कृसानु गुमान-अवाँ घट ज्योँ जिनके मन आँच न आँचे ॥
लोभ सबै नट के बस ह्वै कपि ज्योँ जग मैँ बहु नाच न नाँचे ॥
नीके हैँ साधु सबै तुलसी पै तेई रघुबीर के सेवक साँचे ॥११८॥

कवित्त—भेष सुबनाइ सुचि बचन कहै चुवाइ,
जाइ तौ न जरनि धरनि धन धाम की ।
कोटिक उपाय करि लालि पालियत देह,
मुख कहियत गति राम ही के नाम की ॥
प्रगटै उपासना दुरावै दुरबासनाहिँ,
मानस निवास-भूमि लोभ मोह काम की ।
राग रोष ईरषा कपट कुटिलाई भरे,
तुलसी से भगत भगति चहै राम की ! ॥ ११९ ॥
काल्हिही तरुन तन काल्हि ही धरनि धन,
काल्हि ही जितैाँगो रन कहत कुचालि है ।

निरदह्यो=जलाये। सुठान=सुन्दर चाल। अवाँ=आँवा। दुरावै=छिपावै।

काल्हिही साधैँगो काज काल्हि ही राजा समाज,
मसक ह्वै कहै भार मेरे मेरु हालिहै ॥
तुलसी यही कुभाँति घने घर घालि आई,
घने घर घालति है, घने घर घालिहै।
देखत सुनत समुझत हू न सूझै सोई,
कबहूँ कह्यो न कालहू को काल काल्हि है ॥ १२० ॥

भयो न तिकाल तिहूँ लोक तुलसी सो मन्द,
निन्दैँ सब साधु सुनि मानौ न सकोच हौँ।
जानत न जोग हिय हानि मानौँ जानकीस,
काहे को परेखो पातकी प्रपञ्ची पोच हौँ ॥
पेट भरिबे के काज महाराज को कहायो,
महाराज हू कह्यो है प्रनत-बिमोच हौँ।
निज अघ जाल कलिकाल की करालता
बिलोकि होत व्याकुल करत सोई सोच हौँ ॥ १२१ ॥

धरम के सेतु जगमङ्गल के हेतु भूमि,
भार हरिबे को अवतार लियो नर को।
नीति औ प्रतीति-प्रीति-पाल चालि प्रभु मान,
लोक बेद राखिबे को पन रघुबर को ॥
बानर बिभीषन की ओर के कनावड़े हैँ,
सो प्रसङ्ग सुने अङ्ग जरै अनुचर को।
राखे रीति आपनी जो होइ सोई कीजै बलि,
तुलसी तिहारो घरजायउ है घर को ॥ १२२ ॥

नाम महाराज के निबाह नीको कीजै उर,
सबही सोहात मैँ न लोगनि सोहात हौँ।

घालि=नष्ट। प्रनतबिमोच=दीनता छुड़ानेवाले। घरजायउ=गुलाम।

कीजै राम बार यहि मेरी ओर चखकोर,
ताहि लगि रङ्क ज्यों सनेह को ललात हौं ॥
तुलसी बिलोकि कलिकाल की करालता,
कृपालु को सुभाव समुझत सकुचात हौं।
लोक एक भाँति को तिलोकनाथ लोकबस,
आपनो न सोच स्वामी सोच ही सुखात हौं ॥ १२३ ॥

तौलौं लोभ लोलुप ललात लालची लबार,
बार बार लालच धरनि धन धाम को।
तब लौं बियोग रोग सोग भोग जातना को,
जुग सम लगत जीवन जाम जाम को ॥
तौलौं दुख दारिद दहत अति नित तनु,
तुलसी है किङ्कर बिमोह कोह काम को।
सब दुख आपने निरापने सकल सुख,
जौलौं जन भयो न बजाइ राजा राम को ॥ १२४ ॥

तब लौं मलीन हीन दीन सुख सपने न,
जहाँ तहाँ दुखी जन भाजन कलेस को।
तब लौं उबेने पायँ फिरत पेटै खलाय,
बाये मुँह सहत पराभौ देस देस को ॥
तब लौं दयावनो दुसह दुख दारिद को,
साथरी को सोइबो ओढ़िबो झूने खेस को।
जब लौं न भजै जीह जानकी-जीवन राम,
राजन को राजा सो तौ साहब महेस को ॥ १२५ ॥

ईसन के ईस महाराजन के महाराज,
देवन के देव देव ! प्रानहूँ के प्रान हौ ॥

जातना=साँसति, कष्ट। बजाइ=डंके की चोट, अलानियाँ। पराभौ=हार, तौहीन। झूने=झीने। खेस=खद्दर, पुरानी रुई का बना कपड़ा।

कालहू के काल महाभूतन के महाभूत,
करम के करम निदान के निदान हौ ॥
निगम को अगम सुगम तुलसीहू से को,
एते मान सीलसिन्धु करुनानिधान हौ।
महिमा अपार काहू बोल को न वारापार,
बड़ी साहिबी मैं नाथ बड़े सावधान हौ ॥१२६॥
सवैया–आरतपाल कृपालु जो राम जेही सुमिरे तेहि को तहँ ठाढ़े।
नामप्रताप महा महिमा अकरे किये खोटेउ छोटेउ बाढ़े ॥
सेवक एक तें एक अनेक भये तुलसी तिहुँ तापन डाढ़े।
प्रेम बदौं प्रहलादहि को जिन पाहन तैं परमेस्वर काढ़े ॥१२७॥
काढ़ि कृपान कृपा न कहूँ पितु काल कराल बिलोकि न भागे।
राम कहाँ सब ठाँउ हैं 'खंभ मैं 'हाँ' सुनि हाँक नृकेहरि जागे।
बैरी बिदारि भये बिकराल कहे प्रहलादहि के अनुरागे।
प्रीति प्रतीति बढ़ी तुलसी तब तैं सब पाहन पूजन लागे ॥१२८॥
अन्तर्जामिहु तैं बड़ बाहरजामि हैं राम जे नाम लिये तैं।
धावत धेनु पेन्हाइ लवाइ ज्यौं बालक बोलनि कान किये तैं।
आपनि बूझि कहै तुलसी कहिबे की न बावरि बात बिये तैं ॥
पैज परे प्रहलादहु को प्रगटे प्रभु पाहन तैं न हिये तैं ॥१२९॥
बालक बोलि दिये बलि काल को कायर कोटि कुचाल चलाई।
पापी है बाप बड़े परिताप तैं आपनी ओर तैं खोरि न लाई ॥
भूरि दई बिषमूरि भई प्रहलाद सुधाई सुधा की मलाई।
रामकृपा तुलसी जन को जग होत भले को भलाई भलाई ॥१३०॥
कंस करी ब्रजबासिन सौं करतूति कुभाँति चली न चलाई।
पांडु के पूत सपूत कुपूत सुजोधन भो कलि छोटो छलाई ॥

अगम=दुर्गम। बोल=बचन, वर्णन। अकरे=श्रेष्ठ, महँगा। बाढ़े=बड़े हुए। डाढ़े=जले। नृकेहरि=नृसिंह। बिये=दूसरे। सुजोधन=दुर्योधन। छलाई=छल करनेवाला।

कान्ह कृपालु बड़े नतपाल गये खल खेचर खीस खलाई।
ठीक प्रतीति कहै तुलसी जग होइ भले को भलोई भलाई ॥१३१॥
अवनीस अनेक भये अवनी जिनके डर तें सुर सोच सुखाहीँ।
मानव-दानव-देव-सतावन रावन घाटि रच्यो जग माहीँ॥
ते मिलये धरि धूरि सुजोधन जे चलते वहुछत्र की छाहीँ।
वेद पुरान कहै जग जान गुमान गोविन्दहि भावत नाहीँ ॥१३२॥
जब नैनन प्रीति ठई ठग स्याम सोँ स्यानी सखी हठि हैाँ बरजी।
नहिँ जान्या बियोग सो रोग है आगे झुकी तब हैाँ तेहि सोँ तरजी॥
अब देह भई पट नेह के घाले सोँ ब्याेँत करै बिरहा दरजी।
ब्रजराज कुमार बिना सुनु भृङ्ग! अनङ्ग भया जिय को गरजी ॥१३३॥
जोगकथा पठई ब्रज को सब सो सठ चेरी की चाल चलाकी।
ऊधो जू! क्याेँ न कहै कुबरी जो बरी नटनागर हेरि हलाकी॥
जाहि लगै पर जानै सोई तुलसी सो सुहागिनि नन्दलला की।
जानी है जानपनी हरि की अब बाँधियैगी कछु मोटि कला की॥१३४॥

कवित्त—पठयो है छपद छबीले कान्ह कैहू कहूँ,
खोजि कै खवास खासो कूबरी सी बाल को॥
ज्ञान को गढ़ैया बिनु गिरा को पढ़ैया बार,
खाल को कढ़ैया सो बढ़ैया उरसाल को॥
प्रीति को बधिक रसरीति को अधिक नीति,-
निपुन बिबेक है निदेस देसकाल को।
तुलसी कहे न बनै सहेही बनैगी सब,
जोग भयो जोग को बियोग नन्दलाल को ॥ १३५ ॥
हनूमान ह्वै कृपालु लाड़िले लखनलाल,
भावते भरत कीजै सेवक सहाय जू।

खेचर=राक्षस। तरजी=भय दिखाया। हलाकी=घातक, मार डालनेवाला। जानपनी=चतुराई। छपद=भ्रमर। खवास=टहलू, ख़िदमतगार। निदेस=आज्ञा। जोग=संयोग।

बिनती करत दीन दूबरो दयावनो सो,
बिगरे ते आपही सुधारि लीजै माय जू ॥
मेरी साहिबिनि सदा सीस पर बिलसति,
देवि ! क्यों न दास को देखाइयत पाय जू।
खीझहू में रीझबे की बानि राम रीझत हैं,
रीझे ह्वै हैं राम की दुहाई रघुराय जू ॥१३६॥
सवैया–बेष बिराग को राग भरे मनु माय ! कहौं सतिभाव हौं तोसों।
तेरे ही नाथ को नाम लै बेचि हौं पातकी पामर प्राननि पोसों॥
एते बड़े अपराधी अघी कहुँ, तैं कहु अम्ब को मेरो तु मोसों।
स्वारथ को परमारथ को परिपूरन भो फिरि घाटि न हो सों ॥१३७॥
कवित्त–जहाँ बालमीकि भये ब्याध ते मुनीन्द्र साधु,
मरा मरा जपे सुनि सिख रिषि सात की।
सीय को निवास लव-कुस को जनमथल,
तुलसी छुवत छाँह ताप गरै गात की ॥
बिटप महीप सुरसरित समीप सोहै,
सीताबट पेखत पुनीत होत पातकी।
बारिपुर दिगपुर बीच बिलसति भूमि,
अङ्कित जो जानकी चरन जलजात की ॥ १३८ ॥
मरकत बरन परन फल मानिक से,
लसै जटाजूट जनु रूख बेष हर है।
सुखमा को ढेर कैधौं सुकृत सुमेर कैधौं,
सम्पदा सकल मुद मङ्गल को घर है ॥
देत अभिमत जो समेत प्रीति सेइये
प्रतीति मानि तुलसी बिचारि काको थर है।

पोसों=पालन करता हूँ। बारिपुर=बारीपुर गाँव। दिगपुर=दीघ। सुखमा=शोभा। सुकृत=पुण्य। थर=स्थान।

सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै,
रामरमनी को बट कलि कामतरु है ॥ १३९ ॥
देवधुनी पास मुनिवास श्रीनिवास जहाँ,
प्राकृतहु बट बूट बसत पुरारि हैं ।
जोग जप जाग को बिराग को पुनीत पीठ,
रागिन पै सीठि डीठि बाहरी निहारिहैं ॥
आयसु आदेस बाबा भलो भलो भाव सिद्ध,
तुलसी बिचारि जोगी कहत पुकारि हैं ।
रामभगतन को तौ कामतरु तें अधिक,
सीयबट सेये करतल फल चारि हैं ॥१४०॥
जहाँ बन पावनो सुहावनो बिहङ्ग मृग,
देखि अति लागत अनन्द खेत खूँट सो ।
सीताराम-लखन-निवास बास मुनिन को,
सिद्ध साधु साधक सबै बिबेक बूट सो ॥
झरना झरत झारि सीतल पुनीत बारि,
मन्दाकिनी मञ्जुल महेस जटाजूट सो ।
तुलसी जो राम सोँ सनेह साँचो चाहिये तो,
सेइये सनेह सोँ बिचित्र चित्रकूट सो ॥१४१॥
मोह-बन कलिमल-पल पीन जानि जिय,
साधु गाय बिप्रन के भय को नेवारिहै ।
दीन्हीं है रजाइ राम पाइ सो सहाइ लाल,
लखन समर्थ बीर हेरि हेरि मारिहैं ॥
मन्दाकिनी मञ्जुलकमान असि बान जहाँ,
बारि-धार धीर धरि सुकर सुधारिहै ।

देवधुनी = गङ्गा। बूट = वृक्ष। पीठ = स्थल। खूँट = छोर, हद। पल = मांस। कमान = धनुष। असि = तलवार।

चित्रकूट अचल अहेरी बैठ्यो घात मानोँ,
पातक के व्रात घोर सावज सँहारिहै ॥१४२॥

सवैया—लागि दवारि पहार ठही लहकी कपिलंक जथा खर-खौकी।
चारु चुवा चहुँ ओर चलैँ लपटैँ झपटैँ सो तमीचर तौँकी।
क्योँ कहि जात महा सुखमा उपमा तकि ताकत है कबि कौकी॥
मानोँ लसी तुलसी हनुमान हिये जगजीति जराय की चौकी॥१४३॥

देव कहैँ अपनी अपना अवलोकन तीरथराज चलो रे।
देखि मिटै अपराध अगाध निमज्जत साधु समाज भलो रे॥
सोहै सितासित को मिलिबो तुलसी हुलसै हिय हेरि हलोरे।
मानोँ हरे तृन चारु चरैँ बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे॥१४४॥

देवनदी कहँ जो जन जानि किये मनसा कुल कोटि उधारे।
देखि चले झगरैँ सुरनारि सुरेस बनाइ बिमान सँवारे॥
पूजा को साज बिरञ्चि रचैँ तुलसी जे महातम जाननहारे।
ओक की नीँव परी हरिलोक बिलोकत गङ्ग तरङ्ग तिहारे॥१४५॥

ब्रह्म जो ब्यापक बेद कहैँ गम-नाहिँ गिरा गुनज्ञान गुनी को।
जो करता भरता हरता सुर साहिब साहब दीन दुनी को॥
सोई भयो द्रव रूप सही जु है नाथ बिरञ्चि महेस मुनी को।
मानि प्रतीति सदा तुलसी जल काहे न सेवत देवधुनी को?॥१४६॥

बारि तिहारो निहारि मुरारि भये परसे पद पाप लहौँगो।
ईस ह्वै सीस धरौँ पै डरौँ प्रभु की समता बड़ दोष दहौँगो॥
बारहि बार सरीर धरौँ रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौँगो।
भागीरथी! बिनवौँ करजोरि बहोरि न खोरि लगै सो कहौँगो॥१४७॥

अहेरी=शिकारी। घात=मौका। ठही=अच्छी तरह। लहकी=ज्वाला की बाढ़। खरखौकी=अग्नि। चुवा=चौवा, चौपाये। तौँकी=आँच से झुलस कर। कौकी=कव का। जराय=जड़ाऊ। हुलोरे=तरंग। बगरे=फैले। कलोरे=बिना ब्याई हुई किशोरावस्था की गाय। ओक=स्थान।

कवित्त—लालची ललात बिललात द्वार द्वार दीन,
बदन मलीन मन मिटै न बिसूरना।
ताकत सराध कै विवाह कै उछाह कछू,
डोलै लोल बूझत सबद ढोल तूरना॥
प्यासे हू न पावै बारि भूखे न चनक चारि,
चाहत अहारन पहार दारि कूरना।
सोक को अगार दुख-भार-भरो तौलौं जन,
जौलौं देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना॥१४८॥

छप्पय—भस्म अङ्ग मर्दन अनङ्ग, सन्तत असङ्ग हर।
सीस गङ्ग गिरिजा अधङ्ग भूषन भुजङ्गवर॥
मुंड माल बिधु बाल भाल डमरू कपाल कर।
बिबुध-वृन्द-नवकुमुद-चन्द सुखकन्द सूलधर॥
त्रिपुरारि त्रिलोचन दिग्वसन, विष-भोजन भव-भय-हरन।
कह तुलसिदास सेवत सुलभ, सिव सिव सिव सङ्कर सरन॥१४९॥
गरल-असन दिग्वसन व्यसन-भञ्जन जनरञ्जन।
कुन्द-इन्दु-कर्पूर-गौर सच्चिदानन्दघन॥
विकट वेष उर शेष सीस सुरसरित सहज सुचि।
सिव अकाम अभिराम धाम नित रामनाम रुचि॥
कन्दर्पदर्प-दुर्गम-दवन, उमारवन गुनभवन हर।
तुलसीस त्रिलोचन त्रिगुन-पर, त्रिपुरमथन जय त्रिदसवर॥१५०॥
अर्ध-अङ्ग अङ्गना नाम जोगीस जोगपति।
बिषम असन दिगबसन नाम बिस्वेस बिस्वगति।
कर कपाल सिर माल ब्याल बिष भूति बिभूषन।
नाम सुद्ध अविरुद्ध अमर अनवद्य अदूषन॥

बिसूरना = चिन्ता। तूरना = तुरही, सिंघा। दारिकूरना = पकवानों का ढेर। बिधु = चन्द्रमा। त्रिदस = देवता। अङ्गना = स्त्री। अनवद्य = निर्दोष।

बिकराल भूत-बैताल-प्रिय, भीम नाम भवभय-दमन।
सब बिधि समर्थ महिमा अकथ, तुलसिदास संसयसमन ॥१५१॥

भूतनाथ भयहरन भीम भय भवन भूमिधर।
भानुमन्त भगवन्त भूति भूषन भुजङ्गवर ॥
भव्य-भाव-वल्लभ भवेस भवभार-बिभञ्जन।
भूरिभोग भैरव कुजोग-गञ्जन जन-रञ्जन ॥
भारती बदन विष-अदन सिव, ससि-पतङ्ग पावकनयन।
कह तुलसिदास किन भजसि मन, भद्रसदन मर्दनमयन १५२॥

सवैया—नाँगो फिरै कहै माँगनो देखि न खाँगो कछू जनि माँगिये थोरो ॥
राँकनि नाकप रीझि करै तुलसी जग जो जुरै जाचक जोरो।
नाक सवाँरत आयो हैाँ नाकहि, नाहिं पिनाकिहि नेकु निहोरो ॥
ब्रह्म कहै गिरिजा! सिखवो पति रावरो दानि है बावरो भोरो१५३॥

विष-पावक ब्याल कराल गरे सरनागत तै। तिहुँ ताप न डाढ़े।
भूत बैताल सखा भव नाम दलै पल में भव के भय गाढ़े ॥
तुलसीस दरिद्र-सिरोमनि सो सुमिरे दुखदारिद होहिं न ठाढ़े।
भैान में भाँग धतूरोइ आँगन नाँगे के आगे हैं माँगने बाढ़े ५१४॥

सीस बसै बरदा बरदानि चढ़यो बरदा घरन्यै बरदा है।
धाम धतूरो बिभूति को कूरो निवास तहाँ सब लै मरे दाहै ॥
ब्याली कपाली है ख्याली चहूँ दिसि भाँग की टाटिन को परदा है।
राँकसिरोमनि काकिनिभाग बिलोकत लोकप को करदा है ॥१५५॥

दानी जो चारि पदारथ को त्रिपुरारि तिहूँ पुर में सिर-टीको।
भोरो भलो भले भाय को भूखो भलोई कियो सुमिरे तुलसी को ॥
ता बिनु आस के दास भयो कबहूँ न मिट्यो लघु लालच जी को।
साधो कहा करि साधन तैं जोपै राधो नहीं पति पारबती को? ॥१५६॥

पतङ्ग=सूर्य। ब्रह्म=ब्रह्मा। सब=मुर्दा का शरीर। काकिनि=कैाड़ी। राधो=आराधना की।

जात जरे सब लोक बिलोकि त्रिलोचन सों बिष लोकि लियो है।
पान कियो बिष भूषन भो करुना-बरुनालय साइँ-हियो है॥
मेरोइ फोरिबे जोग कपार किधौं कछु काहू लखाइ दियो है।
काहे न कान करौ बिनती तुलसी कलिकाल बिहाल कियो है॥१५७॥

कबित्त—खायो कालकूट भयो अजर अमर तनु,
भवन मसान गथ गाँठरी गरद की।
डमरू कपाल कर भूषन कराल ब्याल,
बावरे बड़े की रीझ बाहन-बरद की॥
तुलसी बिसाल गोरे गात बिलसति भूति,
मानौं हिमगिरि चारु चाँदनी सरद की।
अर्थ धर्म काम मोक्ष बसत बिलोकनि मैं,
कासी करामाति जोगी जागत मरद की॥१५८॥

पिङ्गल जटा कलाप माथे पै पुनीत आप,
पावक नैना प्रताप भ्रू पर बरत हैं।
लोचन बिसाल लाल सोहै बालचन्द्र भाल,
कंठ कालकूट ब्याल भूषन धरत हैं॥
सुन्दर दिगम्बर बिभूति गात भाँग खात,
रूरे सृङ्गी पूरे काल-कंटक हरत हैं।
देत न अघात रीझि जात पात आक ही के,
भोलानाथ जोगी जब औढर ढरत हैं॥१५९॥

देत सम्पदा समेत श्रीनिकेत जाचकनि,
भवन बिभूति भाँग वृषभ बहन है।
नाम बामदेव दाहिनो सदा असङ्ग रङ्ग,
अर्द्ध अङ्ग अङ्गना अनङ्ग को महन है॥

गथ=मोल, दाम। गरद=धूल, राख। पिङ्गल=पीला वा तामड़ा रंग। कलाप=समूह। आप=जल। बहन=बाहनवाले।

तुलसी महेस को प्रभाव भाव ही सुगम,
निगम अगम हूँ को जानिबो गहन है।
वेष तौ भिखारि को भयङ्कर रूप सङ्कर
दयालु दीनबन्धु दानि दारिद-दहन है ॥१६०॥

चाहै न अनङ्ग-अरि एकौ अङ्ग मङ्गन को,
देबोई पै जानिये सुभाव-सिद्ध बानि सो।
बारिबुन्द चारि त्रिपुरारि पर डारिये तौ,
देत फल चारि लेत सेवा साँची मानि सो॥

तुलसी भरोसो न भवेस भोलानाथ को तौ,
कोटिक कलेस करौ मरौ छार छानि सो।
दारिद-दमन दुख-दोष-दाह-दावानल,
दुनी न दयालु दूजो दानि सूलपानि सो॥१६१॥

काहे को अनेक देव सेवत जागै मसान,
खोवत अपान सठ होत हठि प्रेत रे!।
काहे को उपाय कोटि करत मरत धाय,
जाचत नरेस देस देस के अचेत रे!॥

तुलसी प्रतीति बिनु त्यागे तैं प्रयाग तनु,
धन ही के हेतु दान देत कुरुखेत रे।
पात द्वै धतूर के दै भोरे कै भवेस सो,
सुरेस हू की सम्पदा सुभाय सोँ न लेत, रे॥१६२॥

स्यन्दन गयन्द बाजिराजि भले भले भट,
धन-धाम-निकर करनि हू न पूजै क्वै।
बनिता बिनीत पूत पावन सोहावन औ,
बिनय बिवेक बिद्या सुभग सरीर ज्वै॥

छारछानि=खाक छान कर। स्यन्दन=रथ। क्वै=कोई। ज्वै=जो कुछ।

इहाँ ऐसो सुख परलोक सिवलोक ओक,
ताको फल तुलसी सो सुनो सावधान ह्वै।
जाने बिनु जाने कै रिसाने केलि कबहुँक,
सिवहि चढ़ाये ह्वैहैं बेल के पतौवा द्वै॥१६३॥
रति सी रवनि सिन्धु-मेखला-अवनिपति,
औनिप अनेक ठाढ़े हाथ जोरि हारि कै।
सम्पदा समाज देखि लाज सुरराज हू के,
सुख सब बिधि बिधि दीन्हैं हैं सँवारि कै॥
इहाँ ऐसो सुख सुरलोक सुरनाथ-पद,
ताको फल तुलसी सो कहैगो विचारि कै।
आक के पतौवा चारि फूल कै धतूरे के द्वै,
दीन्हें ह्वैहैं बारक पुरारि पर डारि कै॥१६४॥
देवसरि सेवौं वामदेव गाउँ रावरे ही,
नाम राम ही के माँगि उदर भरत हौं।
दीबे जोग तुलसी न लेत काहू को कछुक,
लिखी न भलाई भाल पोच न करत हौं॥
एते पर हू जो कोऊ रावरो ह्वै जोर करै,
ताको जोर देव! दीन द्वारे गुदरत हौं।
पाइकै उराहनो उराहनो न दीजै मोहिं,
काल-कला कासीनाथ कहे निबरत हौं॥१६५॥
चेरो राम राय को सुजस सुनि तेरो हर!
पाइँ तर आइ रह्यौं सुरसरि तीर हौं।
वामदेव राम को सुभाव सील जानि जिय,
नातो नेह जानियत रघुबीर भीर हौं।

केलि=खेल से। मेखला=करधनी। औनिप=राजा। गुदरत=कहता हूँ। निबरत=छुट्टी पाता हूँ।

अधिभूत बेदन बिषम होत भूतनाथ!
तुलसी बिकल पाहि पचत कुपीर हौँ।
मारिये तो अनायास कासीबास खास फल,
ज्याइये तौ कृपा करि निरुज सरीर हौँ॥१६६॥
जीबे की न लालसा दयालु महादेव! मोहिँ,
मालुम है तोहिँ मरिबेई को रहत हौँ।
कामरिपु राम के गुलामनि को कामतरु,
अवलम्ब जगदम्ब सहित चहत हौँ॥
रोग भयो भूत सो कुसूत भयो तुलसी को,
भूतनाथ पाहि पदपङ्कज गहत हौँ।
ज्याइये तौ जानकी-रमन जन जानि जिय,
मारिये तो माँगी मीचु सूधियै कहत हौँ॥१६७॥
भूतभव भवत् पिसाच-भूत-प्रेत प्रिय,
आपनौ समाज सिव! आपु नीके जानिये।
नाना बेष बाहन बिभूषन बसन बास,
खान पान बलि पूजा बिधि को बखानिये॥
राम के गुलामनि की रीति प्रीति सूधी सब,
सब सोँ सनेह सबही को सनमानिये।
तुलसी की सुधरै-सुधारे भूतनाथही के,
मेरे माय बाप गुरु सङ्कर भवानिये॥१६८॥
गौरीनाथ भोलानाथ भवत भवानीनाथ,
बिस्वनाथ-पुर फिरी आन कलिकाल की।
सङ्कर से नर गिरिजा सी नारि कासीबासी,
बेद कही सही ससिसेखर कृपाल की॥

कुसूत = कुपास, सुभीता न रहना। भूतभव = पंचभूतों के कारण स्वरूप। भवत = आप। अधिभूत बेदन = शरीरधारियों द्वारा प्राप्त पीड़ा। आन = दोहाई। ससिसेखर = शिव।

छमुख गनेस तें महेस के पियारे लोग,
बिकल बिलोकियत नगरी बिहाल की।
पुरी-सुरबेलि केलि काटत किरात कलि,
निठुर निहारिये उघारि डीठि भाल की ॥१६९॥

ठाकुर महेस ठकुराइनि उमा सी जहाँ,
लोक बेद हू बिदित महिमा ठहर की।
भट रुद्रगन पूतगनपति सेनापति,
कलिकाल की कुचालि काहू तौ न हरकी॥
बीसी बिस्वनाथ की बिषाद बड़ो बारानसी,
बूझिये न ऐसी गति सङ्कर-सहर की।
कैसे कहै तुलसी बृषासुर के बरदानि,
बानि जानि सुधा तजि पियनि जहर की ॥१७०॥

लोक बेद हू बिदित बारानसी की बड़ाई,
बासी नरनारि ईस अम्बिका-सरूप हैं।
कालनाथ कोतवाल दंडकारि दंडपानि,
सभासद गनप से अमित अनूप हैं॥
तहाँऊँ कुचालि कलिकाल की कुरीति कैधौं,
जानत न मूढ़ इहाँ भूतनाथ भूप हैं।
फलैं फूलैं फैलैं खल सीदैं साधु पल पल,
खाती दीपमालिका ठठाइयत सूप हैं ॥१७१॥

पञ्चकोस पुन्यकोस स्वारथ परारथ को,
जानि आप आपने सुपास बास दियो है।
नीच नर नारि न सँभारि सकैं आदर
लहत फल कादर बिचारि जो न कियो है॥

हरकी = मना की। बिस्वनाथ बीसी = रुद्रबीसी। सीदैं = खिन्न होते हैं।

बारी बारानसी बिनु कहे चक्र चक्रपानि,
मानि हितहानि सो मुरारि मन भियो है।
रोष में भरोसो एक आसुतोष कहि जात,
बिकल बिलोकि लोक कालकूट पियो है ॥१७२॥

रचत बिरञ्चि हरि पालत हरत हर,
तेरेही प्रसाद जग अगजगपालिके।
तोहि में बिकास बिस्व तोहि में बिलास सब,
तोहि में समात मातु भूमिधरबालिके ॥
दीजै अवलम्ब जगदम्ब न बिलम्ब कीजै,
करुना-तरङ्गिनी कृपातरङ्ग-मालिके।
रोष महामारी परितोष महँतारी ! दुनी,
देखिये दुखारी मुनि-मानस-मरालिके ॥१७३॥

निपट बसेरे अघ औगुन घनेरे नर,
नारिऊ अनेरे जगदम्ब चेरी चेरे हैं।
दारिदी दुखारी देखि भूसुर भिखारी भीरु,
लोभ मोह काम कोह कलिमल-घेरे हैं ॥
लोकरीति राखी राम साखी बामदेव जान,
जन की बिनति मानि मातु कही मेरे हैं।
महामारी महेसानि महिमा की खानि
मोद मङ्गल की रासि दास कासी-बासी तेरे हैं ॥१७४॥

लोगन के पाप कैधौं सिद्ध-सुर-साप
ताप काल के प्रताप कासी तिहूँ-ताप-तई है।
ऊँचे नीचे बीच के धनिक रङ्क राजा राय,
हठनि बजाय करि डीठि पीठि दई है ॥

भियो=डरो। बारी…चक्र=मिथ्या वासुदेव को दंड देने में कृष्ण के चक्र ने उसकी सेना विध्वन्स कर काशी पुरी को जला दिया। डीठि=देख कर। पीठि दई=मुँह फेर लिया।

देवता निहोरे महामारिन्ह सों कर जोरे,
भोरानाथ जानि भोरे आपनी सी ठई है।
करुनानिधान हनुमान वीर बलवान
जसरासि जहाँ तहाँ तैहीं लूटि लई है ॥१७५॥

सङ्कर-सहर सर नरनारि बारिचर,
बिकल सकल महामारी माँजा भई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भभरि भगात जल थल मीचुमई है ॥
देव न दयालु महिपाल न कृपालुचित,
बारानसी बाढ़ति अनीति नित नई है।
पाहि रघुराज पाहि कपिराज रामदूत,
रामहू की बिगरी तुहीं सुधारि लई है ॥१७६॥

एक तो कराल कलिकाल सूल-मूल तामैं,
कोढ़ मैं की खाज सी सनीचरी है मीन की।
वेद धर्म दूरि गये भूमिचोर भूप भये,
साधु सीद्यमान जानि रीति पाप-पीन की ॥
दूबरे को दूसरो न द्वार राम दया-धाम, !
रावरीई गति बल-बिभव बिहीन की।
लागैगी पै लाज वा बिराजमान बिरदहि,
महाराज आजु जौ न देत दादि दीन की ॥१७७॥

रामनाम मातुपितु स्वामि-समरथ हितु,
आस रामनाम की भरोसो रामनाम को।
प्रेम रामनाम ही सों नेम रामनाम ही को,
जानौं न मरम पद दाहिनो न बाम को ॥

मीन की शनीचरी=मीन राशि के शनैश्चर; यह योगसम्बत् १६६८ के आरम्भ से सम्बत् १६७१ तक था।

स्वारथ सकल परमारथ को रामनाम,
रामनामहीन तुलसी न काहू काम को।
राम की सपथ सरबस मेरे रामनाम,
कामधेनु कामतरु मो से छीन छाम को ॥१७८॥
सवैया—मारग मारि महीसुर मारि कुमारग कोटिक कै धन लीयो।
सङ्कर कोप सोँ पाप को दाम परीच्छित जाहिगो जारि कै हीयो॥
कासी मेँ कंटक जेते भये गये पाइ अघाइ कै आपनो कीयो।
आजुकिकाल्हिपरौँकिनरौँजड़जाहिँगेचाटिदिवारीकोदीयो॥१७९॥
कुङ्कुम रङ्ग सुअङ्ग जितो मुखचन्द सोँ चन्द सोँ होड़ परी है।
बोलत बोल समृद्धि चुवै अवलोकत सोच विषाद हरी है॥
गौरी कि गङ्ग बिहङ्गिनि बेष कि मञ्जुल मूरति मोद भरी है।
पेखि सप्रेम पयान समै सब सोच बिमोचन छेमकरी है॥१८०॥
कवित—मङ्गल की रासि परमारथ की खानि जानि,
बिरचि बनाई बिधि केसव बसाई है।
प्रलय हू काल राखी सूलपानि सूल पर,
मीचुबस नीच सोऊ चहत खसाई है॥
छाँड़ि छितिपाल जो परीछित भये कृपालु,
भलो कियो खल को निकाई सो नसाई है।
पाहि हनुमान! करुनानिधान राम पाहि!
कासी कामधेनु कलि कुहत कसाई है॥१८१॥
बिरची बिरञ्चि की बसति बिस्वनाथ की जो,
प्रानहू तेँ प्यारी पुरी केसव कृपाल की।
ज्योतिरूप-लिङ्गमई अगनित-लिङ्गमई,
मोक्ष-बितरनि बिदरनि जगजाल की॥

छीनछाम=दुबला पतला। दिवारी को दीयो=कहते हैं सर्प दीवारी का दिया चाट कर चले जाते हैं। कुङ्कुम=केसर। होड़=बाज़ी। समृद्धि चुवै=उन्नति की वर्षा। छेमकरी=सफेद गलेवाली चील्ह। खसाई=गिराना, नष्ट करना। कुहत=मारता है। मोक्ष बितरनि=मोक्ष देनेवाली।

देवी देव देवसरि सिद्ध मुनिबर बास,
लोपति बिलोकत कुलिपि भोंड़े भाल की।
हाहा करै तुलसी दयानिधान राम ! ऐसी,
कासी की कदर्थना कराल कलिकाल की ॥१८२॥

आस्रम बरन कलि-बिबस बिकल भय,
निज निज मरजाद मोटरी सी डार दी।
सङ्कर सरोष महामारि ही तैं जानियत,
साहिब सरोष दुनी दिन दिन दारदी ॥
नारि नर आरत पुकारत सुनै न कोउ,
काहू देवतनि मिलि मोटी मूठि मार दी।
तुलसी सभीत-पाल सुमिरे कृपालु राम,
समय सुकरुना सराहि सनकार दी ॥१८३॥

कदर्थना=फ़जीहत। मोटीमूठि=गहरा तंत्र मंत्र। सनकार दी=इशारा कर दिया।

हनुमान बाहुक

छप्प०—सिन्धु-तरन सिय-सोच-हरन रबि-बाल-बरन तनु ।
भुजबिसाल मूरति कराल कालहु को काल जनु ॥
गहन दहन निरदहन, लंक निःसङ्क बङ्क-भुव ।
जातुधान बलवान, मान-मददवन पवनसुव ॥
कह तुलसिदास सेवत सुलभ, सेवक हित सन्तत निकट ।
गुन गनत नमत सुमिरत जपत, समन सकल सङ्कट बिकट ॥१॥
स्वर्न-सैल-सङ्कास, कोटि रबि तरुन तेज घन ।
उर बिसाल भुजदंड, चंड नखबज्र बज्रतन ॥
पिङ्ग नयन भृकुटी कराल रसना दसनानन ।
कपिस केस करकस लँगूर खल दल बल भानन ॥
कह तुलसिदास बस जासु उर, मारुतसुत मूरति बिकट ।
सन्ताप पाप तेहि पुरुष पहिं, सपनेहुँ नहिं आवहिं निकट ॥२॥
झूल०—पञ्चमुख छमुख भृगुमुख्य भट असुर सुर,
सर्ब सरि समर समरत्थ सूरो ।
बाँकुरो बीर बिरदैत बिरदावली,
बेद बन्दी बदत पैजपूरो ॥
जासु गुनगाथ रघुनाथ कह जासु बल,
बिपुल जल भरित जग-जलधि झूरो ।
दुवन दल दमन को कौन तुलसीस है,
पवन को पूत रजपूत रूरो ॥३॥
घना०—भानु सों पढ़न हनुमान गए भानु मन,
अनुमानि सिसु केलि कियो फेरफार सो ।

१—गहन=दुर्गम,दुर्भेद्य । निरदहन=नहीं जलाने योग्य । भुव=भृकुटी, भौंह । दवन=नाशक ।
२—सङ्काश=समान, तुल्य । पिङ्ग=पीला, तामड़ा रंग । कपिश=भूरा, पीला भूरा रंग । कर्कश=कठोर ।
३—पञ्चमुख=शिव । छमुख=कार्त्तिकेय, षड़ानन । भृगुमुख्य=परशुराम । दुवन=राक्षस, खल ।

पाछिले पगन गम गगन मगन मन,
क्रम को न भ्रम कपि-बालक-विहार सो ॥
कौतुक बिलोकि लोकपाल हरि हर बिधि,
लोचननि चकाचौंधी चित्तनि खभार सो।
बल कैधौं बीररस धीरज कै साहस कै,
तुलसी सरीर धरे सबनि को सार सो ॥४॥
भारत में पारथ के रथकेतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरुराज दल हलबल भो।
कह्यो द्रोन भीषम समीरसुत महाबीर,
बीररस-बारिनिधि जाको बलजल भो ॥
बानर सुभाय बालकेलि भूमि भानु लगि,
फलँग फलाँगहू तेँ घाटि नभतल भो।
नाइ नाइ माथ जोरि जोरि हाथ जोधा जोहैँ,
हनुमान देखे जगजीवन को फल भो ॥५॥
गोपद पयोधि करि होलिका ज्यौं लाई लङ्क,
निपट निसङ्क परपुर गलबल भो।
द्रोन सो पहार लियो ख्यालही उखारि कर,
कन्दुक ज्यौं कपि खेल बेल कैसो फल भो ॥
सङ्कट समाज असमञ्जस भो रामराज,
काज जुग-पूगनि को करतल पल भो।
साहसी समत्थ तुलसी को नाह जाकी बाँह,
लोकपाल पालन को फिर थिर थल भो ॥ ६ ॥
कमठ की पीठि जाके गोड़नि की गाड़ैं मानो,
नाप के भाजन भरि जलनिधि-जल भो।

५—हलबल=घबराहट। फलाँग=कुदान, चौकड़ी। नभतल = आकाशमंडल। जोहैँ=देखते हैं, निहारते हैं। ६—गलबल=गड़बड़ी, खलभली। बेल=बिल्व, श्रीफल। पूग=समूह, ढेर। ७—कमठ=कछुआ। गोड़=पाँव, पैर। गाड़=गर्त, गड़हा।

जोतुधान दावन परावन को दुर्ग भयो,
महामीन बास तिमि तोमनि को थल भो ॥
कुम्भकर्न रावन पयोदनाद ईंधन को,
तुलसी प्रताप जाको प्रबल अनल भो।
भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान,
सारिखो त्रिकाल न त्रिलोक महाबल भो ॥ ७ ॥

दूत रामराय को सपूत पूत पौन को तू,
अञ्जनी को नन्दन प्रताप भूरि भानु सो।
सीय सोच समन दुरित दोष दमन।
सरन आये अवन लखन प्रिय प्रान सो ॥
दसमुख-दुसह-दरिद्र दरिबे को भयो,
प्रगट तिलोक ओक तुलसी निधान सो।
ज्ञानगुनवान बलवान सेवा सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो ॥ ८ ॥

दवन दुवन दल भुवन बिदित बल,
वेद जस गावत बिबुध बन्दीछोर को।
पाप तापतिमिर तुहिन बिघटन पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोर को ॥
लोक परलोक तें बिसोक सपने न सोक,
तुलसी के हिय है भरोसो एक ओर को।
राम को दुलारो दासबामदेव को निवास,
नाम कलि कामतरु केसरीकिसोर को ॥ ९ ॥

महाबल सीम महाभीम महाबानइत,
महाबीर बिदित बरायो रघुबीर को।

तोम=समूह। सारिखो=समान, बराबर। ८—दुरित=पाप। अवन=अवनत, दीन। ओक=स्थान। निधान=आश्रय, आधार। ९—बन्दीछोर=जेल से छुड़ानेवाला। तुहिन=पाला। विघटन=घटानेवाला। पटु=दक्ष, प्रवीण। १०—सीम=हद। बरायो=चुनाहुआ।

कुलिस कठोर तनु जोर परै रोर-रन,
    करुना कलित मन धारमिक धीर को ॥
दुर्जन को काल सो कराल पाल सज्जन को,
    सुमिरे हरनहार तुलसी की पीर को।
सीय सुखदायक दुलारो रघुनायक को,
    सेवक सहायक है साहसी समीर को ॥ १० ॥
रचिबे को बिधि जैसे पालिबे को हरि हर,
    मीच-मारिबे को ज्याइबे को सुधापान भो।
धरिबे को धरनि तरनि तम दलिबे को,
    सोखिबे कृसानु पोषिबे को हिम-भान भो ॥
खल दुख दोषिबे को जन परितोषिबे को,
    माँगिबो मलीनता को मोदक सुदान भो।
आरत की आरति निवारिबे को तिहूँ पुर,
    तुलसी को साहेब हठीलो हनुमान भो ॥ ११ ॥
सेवक स्योकाई जानि जानकीस मानै कानि,
    सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाक को।
देवी देव दानव दयावने ह्वै जोरैं हाथ,
    बापुरे बराक कहा और राजा राक को ॥
जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
    ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आँक को।
सब दिन रूरो परै पूरो जहाँ तहाँ ताहि,
    जाको है भरोसो हिये हनुमान हाँक को ॥ १२ ॥
सानुग सगौरि सानुकूल सुलपानि ताहि,
    लोकपाल सकल लखन राम जानकी।

रोर=हल्ला, कोलाहल। कलित=शोभन। ११—तम=अन्धकार। हिम-भान=जाड़े के सूर्य। परितोषन=प्रसन्न करना। १२—कानि=संकोच, लिहाज़। नाक=स्वर्ग। बराक=शोचनीय, दुखिया। राक=रंक, दरिद्र। बागत=डोलते, चलते फिरते। आँक=दृढ़निश्चय, सिद्धान्त। रूर=उत्तम, श्रेष्ठ। हाँक=बोल, आवाज़। १३—सानुग=सेवकों के सहित।

लोक परलोक को बिसोक सो त्रिलोक ताहि,
तुलसी तमाइ कहा काहू बीर बान की ॥
केसरीकिसोर बन्दीछोर के नेवाजे सब,
कीरति बिमल कपि करुनानिधान की ।
बालक ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ताको,
जाके हिये हुलसति हाँक हनुमान की ॥१३॥
करुनानिधान बल बुद्धि के निधान मोद,-
महिमा निधान गुन ज्ञान के निधान हैा ।
बामदेव रूप भूपराम के सनेही नाम,
लेत देत अर्थ धर्म काम निरबान हैा ॥
आपने प्रभाव सीतानाथ के सुभाव सील,
लोकबेद बिधि के बिदुष हनुमान हैा ।
मन की बचन की करम की तिहूँ प्रकार,
तुलसी तिहारो तुम्ह साहेब सुजान हैा ॥१४॥
मन को अगम तन सुगम किये कपीस,
काज महाराज के समाज साज साजे हैं ।
देव बन्दीछोर रनरोर केसरीकिसोर,
जुग जुग जग तेरे बिरद बिराजे हैं ॥
बीर बरजोर घटि जोर तुलसी की ओर,
सुनि सकुचाने साधु खलगन गाजे हैं ।
बिगरी सँवार अञ्जनीकुमार कीजे मोहि,
जैसे होत आये हनुमान के निवाजे हैं ॥१५॥
सवैया०—जान-सिरोमनि हौ हनुमान सदा जन के मन बास तिहारो ।
ढारो बिगारो मैं काको कहा केहि कारन खीझत हौं तो तिहारो ॥

तमाइ=लालची, ख़ाहिशमन्द । बानकी=बानैत, वीरता में प्रसिद्ध । १४—निरबान=निर्वाण, मोक्ष । विधि=विधान । विदुष=विद्वान, पण्डित । १५—रनरोर=युद्ध में कोलाहल मचानेवाला । विरद=नामवरी । गाजे=प्रसन्न हुए । १६—जानिसिरोमनि=ज्ञानशिरोमणि, ज्ञानियों के सिरताज़ । ढारो=गिराया ।

साहेब सेवक नाते ते हातो कियौ सो तहाँ तुलसी को न चारो।
दोष सुनाये तेँ आगेहुँ के होसियार ह्वै हौँ मन तौ हिय हारो ॥१६॥

तेरे थपे उथपै न महेस थपै थिर को कपि जे घर घाले।
तेरे निवाजे गरीबनिवाज बिराजत बैरिन के उर साले॥
सङ्कट सोच सबै तुलसी लियेनाम फटै मकरी के से जाले।
बूढ़ भये बलि मेरिहि बार कि हारि परे बहुतै नतपाले ॥१७॥

सिन्धु तरे बड़े बीर दले खल जारे हैँ लङ्क से बङ्क मवासे।
तैँ रन केहरि केहरि के बिदले अरि-कुञ्जर छैल छवा से॥
तोसोँ समत्थ सुसाहेब सेइ सहै तुलसी दुख-दोष दवा से।
बानर-बाज बढ़े खल-खेचर लीजत क्योँ न लपेटि लवा से ॥१८॥

अच्छ-बिमर्दन कानन-भानि दसानन आनन भा न निहारो।
बारिदनाद अकम्पन कुम्भकरन्न से कुञ्जर केहरि-बारो॥
रामप्रताप हुतासन कच्छ बिपच्छ समीर समीरदुलारो।
पाप तेँ साप तेँ ताप तिहूँ तेँ सदा तुलसी कहँ सो रखवारो ॥१९॥

घना०—जानत जहान हनुमान को निवाज्यौ जन,
मन अनुमानि बलि बोल न बिसारिये।
सेवा-जोग तुलसी कबहुँ कहा चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेब सँभारिये॥
अपराधी जानि कीजै सासति सहस भाँति,
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिये।

हातो=नष्ट, हीन। चारा=वश, क़ाबू। १७—थपे स्थापन किये, बैठाये। उथपे=उठाये, हटादिये। घाले=नष्ट किये। नतपाले=ग़रीबों का पालन किये। १८—मवास=स्थान, गढ़ी। छैल=बाँके, बनेठने। छवा=बच्चा, छौना। दवा=अग्नि। खेचर= व्योमचारी ग्रह पक्षी राक्षस आदि। १९—अच्छ=अक्षयकुमार। भानि=नाश करके। भा=तेज, प्रताप। बारा=बाल, किशोर अवस्था के सिंह। कच्छ=जलप्राय देश, वह प्रदेश वा नगर जो जल से घिरा हो। विपच्छ=शत्रु, विपरीत, उलटा। २०—बोल=वचन, प्रतिज्ञा। सासति=दुर्दशा। माहुर=विष। साहसी=हिम्मती।

साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजू के,
बाँहपीर महाबीर बेगिही निवारिये ॥ २० ॥
बालक बिलोकि बलि बारे तेँ आपनो कियो,
दीनबन्धु दया कीन्ही निरुपाधि न्यारिये।
रावरो भरोसो तुलसी के रावरोई बल,
आस रावरीयै दास रावरो बिचारिये ॥
बड़ो बिकराल कलि काको न बिहाल कियो,
माथे पगु बली को निहारि सो निवारिये।
केसरी किसोर रन-रोर बरजोर बीर,
बाँहुपीर राहुमातु ज्यौँ पछारि मारिये ॥ २१ ॥
उथपे-थपन थिर थपे-उथपनहार,
केसरी कुमार बल आपनो सँभारिये।
राम के गुलामनि को कामतरु रामदूत,
मोसे दीन दूबरे को तकिया तिहारिये ॥
साहेब समर्थ तोसोँ तुलसी के माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु बीर बाँधि मारिये।
पोखरी बिसाल बाँहु बलि बारिचर पीर,
मकरी ज्योँ पकरि कै बदन बिदारिये ॥ २२ ॥
राम को सनेह राम साहस लखन सिय,
राम की भगति सोच सङ्कट निवारिये।
मुद मरकट रोग-बारिनिधि हेरि हारे,
जीव जामवन्त को भरोसो तेरो भारिये ॥
कूदिये कृपाल तुलसी सुप्रेम-पब्बइ तेँ,
सुथल सुबेल भालु बैठि कै बिचारिये।

२१—निरुपाधि=माया रहित। न्यारिये=निराली, अनोखी। राहुमातु=सिंहिका, छायाग्राहिणी राक्षसी। २२—तकिया=भरोसा, सहारा। बारिचर=जलजन्तु। बदन=मुख। २३—पब्बइ=पर्वत, पहाड़। बराकी=बपुरी, बेचारी।

महाबीर बाँकुरे बराकी बाहपीर क्यों न,
        लङ्किनी ज्यों लात घातही मरोरि मारिये ॥ २३ ॥
लोक परलोकहूँ तिलोक न बिलोकियत,
        तोसे समरथ चष चारिहूँ निहारिये।
कर्म काल लोकपाल अग जग जीवजाल,
        नाथ हाथ सब निज महिमा बिचारिये ॥
खास दास रावरो निवास तेरो तासु उर,
        तुलसी सो देव दुखी देखियत भारिये।
बात तरुमूल बाँहुसूल कपिकच्छु-बेलि,
        उपजी सकेलि कपिकेलिही उखारिये ॥ २४ ॥
करम-कराल-कंस भूमिपाल के भरोसे,
        बकी बक-भगिनी काहू तें कहा डरैगी।
बड़ी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
        बाहुँ-बल बालक छबीले छोटे छरैगी ॥
आई है बनाइ बेष आपही बिचारि देख,
        पाप जाय सब को गुनी के पाले परैगी।
पूतना पिसाचिनी ज्यों कपि कान्ह तुलसी की,
        बाँहपीर महाबीर तेरे मारे मरैगी ॥ २५ ॥
भाल की कि काल की कि रोष की त्रिदोष की है,
        बेदन बिषम पाप ताप छल-छाँह की।
करमन कूट की कि जन्त्र मन्त्र बूट की
        पराहि जाहि पापिनी मलीन मन माँह की ॥
पैहहि सजाय नतु कहत बजाय तोहि,
        बावरी न होहि बानि जानि कपिनाँह की।

घात=चोट, वार। २४—चष=नेत्र, आँख। कपिकच्छु-बेलि=केवाँच की लता। २५—बकी=पूतना। बकभगिनी=बकासुर की बहिन। बिकराल=भयंकर। छरैगी=धोखा देगी। २६—करमन=कार्मण, मारण आदि का प्रयोग। कूट=छल, झूठ। बूट=वृक्ष, पेड़।

आन हनुमान की दोहाई बलवान की,
सपथ महाबीर की जो रहै पीर बाँह की ॥ २६ ॥
सिंहिका सँघारि बल सुरसा सुधारि छल,
लङ्किनी पछारि मारि बाटिका उजारी है।
लङ्क परजारि मकरी बिदारि बार बार,
जतुधान-धारि धूरिधानी करि डारी है॥
तोरि जमकातरि मँदोदरी कढ़ोरि आनी,
रावन की रानी मेघनाद-महतारी है।
भीर बाँहपीर की निपट राखी महाबीर,
कौन के सँकोच तुलसी के सोच भारी हैं ॥२७॥
तेरो बालकेलि बीर सुनि सहमत धीर,
भूलत सरीर-सुधि सक्र रबि राहु की।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहु की॥
साम दान भेद बिधि बेदहू लबेद सिधि-
हाथ कापिनाथही के चोटी चोर साहु की।
आलस अनख परिहास के सिखावन है,
एते दिन रही पीर तुलसी के बाहु की ॥ २८ ॥
टूकनि को घर घर डोलत कँगाल बोलि,
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है।
कीन्ही है सँभार सार अञ्जनीकुमार बीर,
आपनो बिसारिहैं न मेरेहू भरोसो है॥
इतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिराज साँचो कहौं को त्रिलोक तोसो है।

आन=सौगन्ध। २७—परजारि=प्रजारि, अच्छी तरह जला कर। धूरिधानी=गर्द ... विनाश। जमकातरि=यम का छुरा, भँवर। कढ़ोरि=घसीट कर, खींच कर। भीर=दुःख, भय। निपट=केवल, खाली। २८—बालकेलि=लड़कपन का खेल। आरति=दीनता, कष्ट। अनख=क्रोध। परिहास=हँसी, मज़ाक। २९—टूकनि=टुकड़ों के लिये। परेखो=परीक्षा किया, आजमाया हुआ। चीरो=पक्षी, चिड़िया।

सासति सहत दास कीजै पेखि परिहास,
चीरी को मरन खेल बालकनि को सो है ॥२९॥
आपनेही पाप तें त्रिताप तें कि साप तें बढ़ी है
बाँह-बेदन कही न सहि जाति है ।
औषध अनेक जन्त्र मन्त्र टोटकादि किये,
बादि भये देवता मनाये अधिकाति है ॥
करतार भरतार हरतार कर्म काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है ।
चेरो तेरो तुलसी तू मेरो कह्यो रामदूत,
ढील तेरी बीर मोहि पीर तें पिराति है ॥३०॥
दूत रामराय को सपूत पूत बाय को
समरथ हाथ पाय को सहाय असहाय को ।
बाँकी बिरदावली बिदित बेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मुठिका के घाय को ॥
एते बड़े साहेब समर्थ को निवाजो आजु,
सीदत सुसेवक बचन मन काय को ।
थोरी बाँहपीर की बड़ी गलानि तुलसी को,
कौन पाप-कोप लोप प्रगट प्रभाय को ॥३१॥
देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हैं ।
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम,
रामदूत की रजाइ माथे मानि लेत हैं ॥
घोर जन्त्र मन्त्र कूट कपट कुरोग जोग,
हनूमान आन सुनि छाड़त निकेत हैं ।

३०—करतार=ब्रह्मा । भरतार=विष्णु । हरतार=रुद्र । इताति=आज्ञापालन, ताबेदारी । ३१—सीदत=दुःख पाता है । प्रगटप्रभाय=प्रत्यक्ष प्रभाव, जाहिर महिमा । ३२—घोर=भीषण । कूट=धूर्त्तता, फ़रेब । आन=दोहाई, किरिया । निकेत=स्थान, घर ।

क्रोध कीजै कर्म को प्रबोध कीजै तुलसी को,
सोध कीजै तिनको जो दोष दुख देत हैं ॥ ३२ ॥
तेरे बल बानर जिताये रन रावन सोँ,
तेरे घाले जातुधान भये घर घर के।
तेरे बल रामराज किये सब सुरकाज,
सकल समाज साज साजे रघुबर के ॥
तेरे गुनगान सुनि गीरबान पुलकत,
सजल बिलोचन बिरञ्चि हरि हर के।
तुलसी के माथे पर हाथ फेरो कीसनाथ,
देखिये न दास दुखी तो से कनिगर के ॥३३॥
पालो तेरे टूक को परेहूँ चूक मूकिये न,
कूर कौड़ी दू को हौं आपनी ओर हेरिये।
भोरानाथ भोरेही सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपनो न अवडेरिये ॥
अम्बु तू हौं अम्बुचर अम्ब तू हौं डिम्भ सो न,
बूझिये बिलम्ब अवलम्ब मेरे तेरिये।
बालक बिकल जानि पाहि प्रेम पहिचानि,
तुलसी की बाँह पर लामी लूम फेरिये ॥३४॥
घेरि लियो रोगनि कुजोगनि कुलोगनि ज्यौं,
बासर जलद घनघटा धुकि धाई है।
बरषत बारि पीर जारिये जवासे जस,
रोष बिनु दोष धूम-मूल मलिनाई है ॥
करुनानिधान हनुमान महा बलवान,
हेरि हँसि हाँकि फूँकि फौजैं तैं उड़ाई है।

सोध=सुधार। ३३—गीरवान=गीर्वाण, देवता। कनिगर=कानिवाला, जिसे अपनी मर्यादा की लज्जा हो। ३४—मूकिये=त्यागिये, मौन हो जाइये। अवडेरिये=पेंच में डालिये, उद्वास कर रहने न दीजिये। अम्बु=जल। अम्बुचर=मछली। अम्ब=माता। डिम्भ, छोटा बच्चा। लूम=पूँछ। ३५—घनघटा=बादलों का घना समूह। धुकि=झुक कर, झपट कर। धूममूल=अग्नि।

खाये हुतो तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरी किसोर राखे बीर बरियाई है ॥३५॥

सवै०-रामगुलाम तुही हनुमान गोसाँइ सुसाँइ सदा अनुकूलो ।
पाल्यो हैाँ बाल ज्योँ आखर दू पितुमातु ज्यौं मङ्गल मोद समूलो ॥
बाँह की बेदन बाँह-पगार पुकारत आरत आनँद भूलो ।
श्रीरघुबीर निवारिये पीर रहौँ दरबार परो लटि लूलो ॥३६॥

घना०-काल की करालता करम कठिनाई कीधैाँ,
पाप के प्रभाव की सुभाय बाय बावरे ।
बेदन कुभाँति सो सही न जाति रातिदिन,
सोईबाँह गही जो गही समीरडावरे ॥
लाये तरु तुलसी तिहारो सो निहारि बारि,
सींचिये मलीन भो तयो है तिहुँ ताव रे ।
भूतनि की आपनी पराये की कृपानिधान,
जानियत सबही की रीति राम रावरे ॥३७॥

पाँय-पीर पेट-पीर बाँह-पीर मुहँपीर,
जरजर सकल सरीर पीरमई है ।
देव भूत पितर करम खल काल ग्रह,
मोहि पर दवरि दमानक सी दई है ।
हैाँ तो बिन मोल के बिकानो बलि बारेही तेँ,
ओट रामनाम की ललाट लिखि लई है ।
कुम्भज के किङ्कर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय ऐसी हाल कहूँ भई है ॥ ३८ ॥

बाहुक-सुबाहु नीच लीचर-मरीच मिलि,
मुँह-पीर केतुजा कुरोग-जातुधान हैं ।

राढ़=क्रुर, निर्दय । राकसनि=राक्षसों, निशाचरों । बरियाई=ज़ोरावरी, ज़बर्दस्ती । ३६=आखर दू=रामनाम । बाँहपगार=बाहु रूपी गढ़ । लटि—खिन्न होकर । लूलो=लुञ्ज, लगड़ा । ३७—बाय=वातव्याधि । बावरे=उन्मत्त । डावरे=पुत्र, बालक । ३८—जरजर=जीर्ण, जर्जर, टूटाफूटा । दमानक=तोपों की बाढ़ । कुम्भज=समुद्र सुखानेवाले अगस्त्य ।

रामनाम जपजाग कियो चहौं सानुराग,
काल कैसे दूत भूत कहा मेरे मान हैं ॥
सुमिरे सहाय राम लखन आखर दोऊ,
जिन्ह के समूह साके जागत जहान हैं ।
तुलसी सँभारि ताड़का सँघारि भारी भट,
बेधे बरगद से बनाइ बान बान हैं ॥३९॥

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत माँगि खात टूकटाक हौं ।
परयो लोकरीति में पुनीत प्रीति रामराय,
मोहबस बैठो तोरि तरकि तराक हौं ॥
खोटे खोटे आचरन आचरत अपनायो,
अञ्जनीकुमार सोध्यो रामपानि पाक हौं ।
तुलसी गोसाँई भयो भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं ॥४०॥

असन-बसन-हीन विषम-विषाद-लीन,
देखि दीन दूबरो करै न हाय हाय को ।
तुलसी अनाथ सो सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिन्धु आपने सुभाय को ॥
नीच एहि बीच पति पाइ भरुहाइगो,
बिहाइ प्रभु भजन बचन मन काय को ।
तातें तनु पेषियत घोर बरतोर मिस,
फूटि फूटि निकसत लोन रामराय को ॥४१॥

३९—बाहुक=छद्मवेषी, छली । लीचर=सुम, शिथिल । केतुजा=ताड़का । मान=वश, क़ाबू । साके=राक्षसवध की नामवरी । जागत=विख्यात । जहान=संसार, जगत । बान=तीर । बान=आतशबाज़ी । ४०—टूकटाक=टुकड़ाटकड़ी । तरकितराक=चटपट कूदकर । पाक=पवित्र । भोंड़े=निकृष्ट ख़राब । निदान=अन्त में, आख़िर । परिपाक=पूर्णता, अच्छी तरह । ४१—असन=भोजन । पति=प्रतिष्ठा, इज़्ज़त । भरुहाइगो=फूल उठा, अपने को बड़ा समझने लगा ।

जिऔं जग जानकीजीवन को कहाइ जन,
मरिबे को बारानसी बारि सुरसरि को ।
तुलसी के दुहूँ हाथ मोदक है ऐसे ठाउँ,
जाके जिये मुये सोच करिहैं न लरिको ॥
मो को झूठो साँचो लोग राम को कहत सब,
मेरे मन मान है न हर को न हरि को ।
भारी पीर दुसह सरीर तें बिहाल होत,
सोऊ रघुबीर बिनु सकै दूरि करि को ॥४२॥
सीतापति साहेब सहाय हनुमान नित,
हित उपदेस को महेस मानोँ गुरु कै ॥
मानस बचन काय सरन तिहारे पाँय,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुर कै ॥
ब्याधि भूत-जनित उपाधि काहू खल की,
समाधि कीजै तुलसी को जानिजन फुर कै ।
कपिनाथ रघुनाथ भोलानाथ भूतनाथ,
रोगसिन्धु क्योँ न डारियत गाय खुर कै ॥४३॥
कहौं हनुमान सौं सुजान रामराय सोँ,
कृपानिधान सङ्कर सोँ सावधान सुनिये ।
हरष-बिषाद-राग रोष-गुन दोषमई,
बिरची बिरञ्चि सब देखियत दुनिये ॥
माया जीव काल के करम के सुभाय के,
करैया राम बेद कहैं साँची मन गुनिये ॥
तुम्ह तें कहा न होय हाहा सो बुझैये मोहि,
हौंहूँ रहैाँ मौनही बयो सो जानि लुनिये ॥४४॥

बरतोर=फोड़ा । ४२—बारानसी=काशी, बनारस । मोदक=लड्डू । मान=[illegible]
आदर । ४३—समाधि=मनको सुख-पूर्वक परमेश्वर के ध्यान में लगाने योग्य करना ।
४४—दुनिये=दुनियाँ, जगत । हाहा=हायहाय, अहो ! । बयो=बोया । लुनिये=काटिये, लवता हूँ ।

गीतावली-रामायण

बालकाण्ड

राग आसावरी

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई।
रूपसील-गुनधाम राम नृप,-भवन प्रगट भये आई ॥१॥
अति पुनीत मधुमास लगन ग्रह, बार जोग समुदाई।
हरषवन्त चर अचर भूमिसुर, तनरुह पुलक जनाई ॥२॥
बरषहिँ बिबुध-निकर कुसुमावलि, नभ दुन्दुभी बजाई।
कौसल्यादि मातु मन हरषित, यह सुख बरनि न जाई ॥३॥
सुनि दसरथ सुत जन्म लिये सब, गुरुजन बिप्र बोलाई।
बेद-बिहित करि क्रिया परम सुचि, आनँद उर न समाई ॥४॥
सदन बेद-धुनि करत मधुर मुनि, बहु बिधि बाज बधाई।
पुरबासिन्ह प्रिय नाथ हेतु निज, निज सम्पदा लुटाई ॥५॥
मनि तोरन बहु केतु पताकनि, पुरी रुचिर करि छाई।
मागध सूत द्वार बन्दीजन, जहँ तहँ करत बड़ाई ॥६॥
सहज सिँगार किये बनिता चलीं, मङ्गल बिपुल बनाई।
गावहिँ देहिँ असीस मुदित चिरजिवौ तनय सुखदाई ॥७॥
बीथिन्ह कुङ्कुम कीच अरगजा, अगर अबीर उड़ाई।
नाचहिँ पुर-नर-नारि प्रेम भरि, देहदसा बिसराई ॥८॥
अमित धेनु गज तुरग बसन मनि, जातरूप अधिकाई।
देत भूप अनुरूप जाहि जोइ, सकल सिद्धि गृह आई ॥९॥

तनरुह=रोम। तोरन=बन्दनवार। केतु=ध्वजा। जातरूप=सुवर्ण।

सुखी भये सुर सन्त भूमिसुर, खलगन मन मलिनाई।
सबइ सुमन बिकसत रबि निकसत, कुमुद-बिपिन बिलखाई ॥१०॥
जो सुख-सिन्धु-सकृत-सीकर तैं, सिव बिरञ्चि प्रभुताई।
सोइ सुख अवध उमँगि रह्यो दस दिसि, कौन जतन कहौं गाई॥११॥
जे रघुबीर चरन चिन्तक तिन्हकी गति प्रगट दिखाई।
अबिरल अमल अनूप भगति दृढ़, तुलसिदास तब पाई ॥१२॥१॥

राग जैतश्री

सहेली सुनु सोहिलो रे!
सोहिलो सोहिलो सोहिलो, सोहिलो सब जग आज॥
पूत सपूत कौसिला जायो, अचल भयो कुलराज ॥१॥
चैत चारु नौमी तिथि सितपख, मध्य-गगन-गत भानु॥
नखत जोग ग्रह लगन भले दिन, मङ्गल मोद निधानु ॥२॥
व्योम पवन पावक जल थल दिसि, दसहु सुमङ्गल-मूल।
सुर दुन्दुभी बजावहिं गावहिं, हरषहिं बरषहिं फूल ॥३॥
भूपति सदन सोहिलो सुनि बाजैं गहगहे निसान।
जहँ तहँ सजहिं कलस धुज चामर, तोरन केतु बितान ॥४॥
सींचि सुगन्ध रचैं चौके गृह, आँगन गली बजार।
दल फल फूल दूब दधि रोचन, घर घर मङ्गलचार ॥५॥
सुनि सानन्द उठे दसस्यन्दन, सकल समाज समेत।
लिये बोलि गुरु सचिव भूमिसुर, प्रमुदित चले निकेत ॥६॥
जातकर्म करि पूजि पितर सुर, दिये महिदेवन दान।
तेहि औसर सुत तीनि प्रगट भये, मङ्गल मुद कल्यान ॥७॥
आनँद महँ आनन्द अवध आनन्द बधावन होइ।

बिलखाई=उदास। सकृत=एक। सीकर=अत्यल्प बिन्दु। सोहिलो=मङ्गलगीत, पुत्रजन्म में सोहर गान। सित=शुक्ल। चामर=चँवर। बितान=मंडप। रोचन=हल्दी। दसस्यन्दन=दशरथ। जातकर्म=दस संस्कारों में से चौथा जो बालक के जन्म समय में होता है।

उपमा कहौं चारि फल की मोहिं, भल न कहै कवि कोइ ॥८॥
सजि आरती बिचित्र थार कर, जूथ जूथ बरनारि।
गावत चलीं बधावन लै लै, निज निज कुल अनुहारि ॥९॥
असही दुसही मरहु मनहिं मन, बैरिन बढ़हु बिषाद।
नृपसुत चारि चारु चिरजीवहु, सङ्कर गौरि प्रसाद ॥१०॥
लै लै ढोव प्रजा प्रमुदित चले, भाँति भाँति भरि भार।
करहिं गान करि आन राय की, नाचहिं राजदुवार ॥११॥
गज रथ बाजि बाहिनी बाहन, सबनि सँवारे साज।
जनु रतिपति रितुपति कोसलपुर, बिहरत सहित समाज॥१२॥
घंटा घंटि पखाउज आउज, झाँझ बेनु डफ तार॥
नूपुर धुनि मञ्जीर मनोहर, कर कङ्कन-झनकार ॥१३॥
नृत्य करहिं नट नटी नारि नर, अपने अपने रङ्ग।
मनहुँ मदनरति बिबिध बेष धरि, नटत सुदेस सुढङ्ग ॥१४॥
उघटहिं छन्द प्रबन्ध गीत पद, राग तान बन्धान।
सुनि किन्नर गन्धर्ब सराहत, बिथके हैं बिबुध-बिमान॥१५॥
कुङ्कुम अगर अरगजा छिरकहिं, भरहिं गुलाल अबीर।
नभ प्रसून झरि पुरी कोलाहल, भइ मनभावति भीर ॥१६॥
बड़ी बयस बिधि भयो दाहिनो, सुरगुरु आसिरबाद।
दसरथ सुकृत-सुधासागर सब, उमगे हैं तजि मरजाद ॥१७॥
ब्राह्मन बेद बन्दि बिरदावलि, जय धुनि मङ्गल गान।
निकसत पैठत लोग परसपर, बोलत लगि लगि कान ॥१८॥
वारहिं मुकुता रतन राजमहिषी पुर-सुमुखि समान।

असही=ईर्षालु, दूसरे की बढ़ती न सह सकनेवाला। दुसही=डाही, जो कठिनता से दूसरे की वृद्धि सह सके। ढोव=मंगल समय में भेंट की वस्तु। आन=विजयघोषणा, दुहाई। पखाउज=ढोल, मृदङ्ग। आउज=तासा। तार=ताल। मञ्जीर=मजीरा। कङ्कन=हरकौआ, हाथ का कड़ा। बिथके=रुके, ठहरे हैं। अगर=धूप। अरगजा=एक प्रकार का सुगन्धित लेपन। बयस=अवस्था। राजमहिषी=रानी।

बगरे नगर निछावरि मनिगन, जनु जुवारि जव धान ॥१९॥

कीन्हि बेदबिधि लोकरीति नृप, मन्दिर परम हुलास।

कौसल्या कैकयी सुमित्रा, रहसबिबस रनिवास ॥२०॥

रानिन दिये बसन मनि भूषन, राजा सहन-भँडार।

मागध सूत भाँट नट जाचक, जहँ तहँ करहिँ कबार ॥२१॥

विप्रबधू सनमानि सुआसिनि, जन पुरजन पहिराइ।

सनमाने अवनीस असीसत, ईस रमेस मनाइ ॥२२॥

अष्टसिद्धि नवनिद्धि भूति सब, भूपति भवन कमाहिँ।

समउ समाज राज दसरथ को, लोकप सकल सिहाहिँ ॥२३॥

को कहि सकै अवधबासिन को प्रेम प्रमोद उछाह।

सारद सेस गनेस गिरीसहिँ, अगम निगम अवगाह ॥२४॥

सिव बिरञ्चि मुनि सिद्ध प्रसंसत, बड़े भूप के भाग।

तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत, उमगि उमगि अनुराग ॥२५॥२॥

राग बिलावल

आजु महामङ्गल कोसलपुर, सुनि नृप के सुत चारि भये।

सदन सदन सोहिलो सोहावनो, नभ अरु नगर निसान हये ॥१॥

सजि सजि जान अमर किन्नर मुनि, जानि समय सम गान ठये।

नाचहिं नभ अपसरा मुदित मन, पुनि पुनि बरषहिँ सुमनचये ॥२॥

अति सुख बेगि बोलि गुरु भूसुर, भूपति भीतर भवन गये।

जातकरम करि कनक बसन मनि, भूषित सुरभि समूह दये ॥३॥

दल फल फूल दूब दधि रोचन, जुवतिन्ह भरि भरि थार लये।

गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह, बन्दिन बाँकुर बिरद बये ॥४॥

कनक-कलस चामर पताक धुज, जहँ तहँ बन्दनवार नये।

भरहिं अबीर अरगजा छिरकहिं, सकल लोक एक रङ्ग रये ॥५॥

बगरे=फैले, छिटके हुए। रहस=आनन्द। सहन-भँडार=बाहरी ख़ज़ाना। कबार=लेनदेन। सुआसिनि=सौभाग्यवती। कमाहिँ=सेवा करती हैं। अवगाह=अथाह। चये=समूह। बये=बोया, फैलाया। रये=रङ्गे गये।

उमँगि चल्यौ आनन्द लोक तिहुँ, देत सबनि मन्दिर रितये।
तुलसिदास पुनि भरेइ देखियत, रामकृपा चितवनि चितये ॥६॥

राग जयतश्री

गावैं बिबुध बिमल बरबानी।
भुवन कोटि कल्यान-कन्द जो, जायो पूत कौसिला रानी ॥१॥
मास पाख तिथि बार नखत ग्रह, जोग लगन सुभ ठानी।
जल थल गगन प्रसन्न साधु मन, दसदिसि हिय हुलसानी ॥२॥
बरषत सुमन बधाव नगर नभ, हरष न जात बखानी।
ज्यौं हुलास रनिवास नरेसहिं, त्यौं जनपद रजधानी ॥३॥
अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन, बिगतबिषाद-गलानी।
मिलेहि माँझ रावन रजनीचर, लङ्क सङ्क अकुलानी ॥४॥
देव पितर गुरु बिप्र पूजि नृप, दिये दान रुचि जानी।
मुनि-बनिता पुरनारि सुआसिनि, सहस भाँति सनमानी ॥५॥
पाइ अघाइ असीसत निकसत, जाचक जन भये दानी।
योँ प्रसन्न कैकयी सुमित्रहि, होहु महेस भवानी ॥६॥
दिन दूसरे भूप-भामिनि दोउ, भईं सुमङ्गल-खानी।
भयो सोहिलो सोहिले मो जनु, सृष्टि सोहिलो-सानी ॥७॥
गावत नाचत मो मन भावत, सुख सो अवध अधिकानी।
देत लेत पहिरत पहिरावत, प्रजा प्रमोद-अघानी ॥८॥
गान निसान कुलाहल कौतुक, देखत दुनी सिहानी।
हरि-बिरञ्चि हरपुर सोभा कुलि, कोसलपुरी लोभानी ॥९॥
आनँद अवनि राजरानी सब, माँगहु कोखि जुड़ानी।
आसिष दै दै सराहहिं सादर, उमा रमा ब्रह्मानी ॥१०॥
बिभव-बिलास बाढ़ि दसरथ की, देखि न जिनहिं सोहानी।
कीरति कुसल भूति जय रिधि सिधि, तिन्ह पर सबै कोहानी ॥११॥

रितये=खाली किये। जनपद=प्रजा। मिलेहिमाँझ=सङ्ग ही। कुलि=सम्पूर्ण। कोहानी=अप्रसन्न हुई।

छठी बारहैं लोक-बेद बिधि, करि सुबिधान बिधानी।
राम लखन रिपुदवन भरत धरे, नाम ललित गुरु ज्ञानी ॥१२॥
सुकृत-सुमन तिल-मोद बासि बिधि, जतन जंत्र भरि घानी।
सुख सनेह सब दियो दसरथहि, खरि खलेल थिरथानी ॥१३॥
अनुदिन उदय उछाह उमग जग, घर घर अवध कहानी।
तुलसी राम जन्म-जस गावत, सो समाज उर आनी ॥१४॥ ४॥

राग केदारा

घर घर अवध बधावने, मङ्गल साज समाज।
सगुन सोहावने मुदित मन, कर सब निज निज काज॥
ह० छं०-निज काज सजत सँवारि पुर-नर नारि रचना अनगनी।
गृह अजिर अटनि बजार बीथिन्ह, चारु चौकैं बिधि घनी॥
चामर पताक बितान तोरन, कलस दीपावलि बनी।
सुख-सुकृत-सोभामय पुरी बिधि, सुमति-जननी जनु जनी॥१॥
चैत चतुरदसि चाँदनी, अमल उदित निसिराज।
उडुगन अवलि प्रकासहीं, उमगत आनँद आज॥
ह० छं०-आनन्द उमगत आजु बिबुध बिमान बिपुल बनाइकै।
गावत बजावत नटत हरषत, सुमन बरषत आइ कै॥
नर निरखि नभ सुर पेखि पुरछबि, परसपर सचु पाइकै।
रघुराज-साज सराहि लोचन,-लाहु लेत अघाइकै ॥२॥
जागिय राम छठी सजनि, रजनी रुचिर निहारि।
मङ्गल मोदमढ़ी मुरति, नृप के बालक चारि॥
ह० छं०-मूरति मनोहर चारि बिरचि बिरञ्चि परमारथ मई।
अनुरूप भूपति जानि पूजन, जोग बिधि सङ्कर दई॥

सुमन=फूल। खलेल=फुलेल का गाज, तेल की मैल। थिरथानी=अटल, स्थिर स्थानवाले। समाज=सामग्री। अजिर=अगनाई। अटनि=अटारियाँ। निसिराज=चन्द्रमा। सचु=आनन्द। मुरति=मूर्त्ति।

तिन्हकी छठी मञ्जुलमठी जग, सरस जिन्हकी सरसई।
किय नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामिनि भई ॥३॥
सेवक सजग भये समय, साधन सचिव सुजान।
मुनिवर सिखये लौकिकौ, बैदिक बिबिध बिधान ॥
ह०छं०-बैदिक बिधान अनेक लौकिक, आचरत सुनि जानिकै।
बलिदान पूजा मूलिकामनि, साधि राखी आनिकै ॥
जे देव देवी सेइयत हित, लागि चित सनमानिकै।
ते जंत्र मंत्र सिखाइ राखत, सबनि सों पहिचानिकै ॥४॥
सकल सुआसिनि गुरुजन, पुरजन पाहुनलोग।
बिबुध बिलासिनि सुर मुनि, जाचक जो जेहि जोग ॥
ह०छं०-जेहि जोग जे तेहि भाँति ते, पहिराइ परिपूरन किये।
जय कहत देत असीस तुलसीदास ज्यौं हुलसत हिये ॥
ज्यौं आजु कालिहु परहुँ जागन, होहिंगे नेवते दिये।
ते धन्य पुन्य-पयोधि जे, तेहि समै सुख-जीवन जिये ॥५॥
भूपति भागबली सुर वर, नाग सराहि सिहाहिँ।
तिय-बरबेष अली रमा, सिधि अनिमादि कमाहिँ ॥
ह०छं०-अनिमादि सारद सैलनन्दिनि, बाल लालहिँ पालहीं।
भरि जनम जे पाये न ते, परितोष उमा रमा लहीं ॥
निज लोक बिसरे-लोकपति घर, की न चरचा चालहीं।
तुलसी तपत तिहुँ ताप जग, जनु प्रभुछठी छाया लहीं ॥६॥५॥

राग जयतश्री

बाजत अवध गहागहे, आनन्द-बधाये।
नामकरन रघुबरनि के, नृप सुदिन सोधाये ॥
पाय रजायसु राय को, रिषिराज बोलाये।
सिष्य सचिव सेवक सखा, सादर सिर नाये ॥

जामिनि=रात्रि। जागन=यज्ञों, उत्सवों।

साधु सुमति समरथ सबै, सानन्द सिखाये ।
जल दल फल मनि-मूलिका, कुलि काज दिखाये ॥१॥
गनप गौरि हर पूजिकै, गोबृन्द दुहाये ।
घर घर मुद मङ्गल महा, गुन-गान सुहाये ॥
तुरत मुदित जहँ तहँ चले, मन के भये भाये ।
सुरपति-सासन घन मनो, मारुत मिलि धाये ॥२॥
गृह आँगन चौहट गली, बाजार बनाये ।
कलस चँवर तोरन धुजा, सुबितान तनाये ॥
चित्र चारु चौकैं रचीं, लिखि नाम जनाये ।
भरिभरि सरवर बापिका, अरगजा सनाये ॥३॥
नर-नारिन्ह पल चारि मैं, सब साज सजाये ।
दसरथ-पुर छबि आपनी, सुरनगर लजाये ॥
बिबुध बिमान बनाइ कै, आनन्दित आये ।
हरषि सुमन बरषन लगे, गये घन जनु पाये ॥४॥
बरे बिप्र चहुँ बेद के, रबिकुल-गुरु ज्ञानी ।
आपु बसिष्ठ अथर्वनी, महिमा जग जानी ॥
लोक-रीति बिधि बेद की, करि कह्यो सुबानी ।
सिसु समेत बेगि बोलिये, कौसल्या रानी ॥५॥
सुनत सुआसिनि लै चलीं, गावत बड़भागीं ।
उमा रमा सारद सची, लखि सुनि अनुरागीं ॥
निज निज रुचि बेष बिरचि कै, हिलिमिलि सँग लागीं ।
तेहि अवसर तिहुँ लोक की, सुदसा जनु जागीं ॥६॥
चारु चौक बैठत भईं, भूप भामिनी सोहैं ।
गोद मोद-मूरति लिये, सुकृती जन जोहैं ॥

गनप=गणेश । सासन=आज्ञा । घन=मेघ । अथर्वनी=अथर्ववेदी । जोहैं=देखते हैं ।

सुख सुखमा कौतुक कला, देखि सुनि मुनि मोहैं।
सो समाज कहैं बरनिकै, ऐसे कबि को हैं? ॥७॥
लगे पढ़न रच्छा रिचा, रिषिराज बिराजे।
गगन सुमन-झरि जयजय, बहु बाजन बाजे॥
भये अमङ्गल लङ्क मैं, सङ्क सङ्कट गाजे।
भुवन चारिदस के बड़े, दुख दारिद भाजे ॥८॥
बाल बिलोकि अथर्वनी, हँसि हरहि जनायो।
सुभ को सुभ मोद मोद को, राम नाम सुनायो॥
आलबाल कल कौसिला, दल बरन सोहायो।
कन्द सकल आनन्द को, जनु अङ्कुर आयो ॥९॥
जोहि जानि जपि जोरि कै, करपुट सिर राखे।
जय जय जय करुनानिधे, सादर सुर भाखे॥
सत्यसन्ध साँचे सदा, जे आखर आषे।
प्रनतपाल पाये सही, जे फल अभिलाषे ॥१०॥
भूमिदेव देव देखिकै, नरदेव सुखारी।
बोलि सचिव सेवक सखा, पटधारि भँडारी॥
देहु जाहि जोइ चाहिये, सनमानि सँभारी।
लगे देन हिय हरषि कै, हेरि हेरि हँकारी ॥११॥
राम-निछावरि लेन को, हठि होत भिखारी।
बहुरि देत तेहि देखिये, मानहुँ धन-धारी॥
भरत लखन रिपुदवनहूँ, धरे नाम बिचारी।
फलदायक फल चारि के, दसरथ-सुत चारी ॥१२॥
भये भूप बालकनि के, नाम निरूपन नीके।
सबै सोच सङ्कट मिटे, तब ते पुर-ती के॥

गाजे=गजें। आलबाल=थाला, थाँवला। कल=सुन्दर। दल=पत्ता। कन्द=जड़, मूल। प्रणतपाल=दीन रक्षक। नरदेव=राजा दशरथ। पटधारि भंडारी=वस्त्रों का भण्डारी। धनधारी=कुबेर।

सुफल मनोरथ विधि किये, सब विधि सबही के।
अब होइ है गाये सुने, सब के तुलसी के ॥१३॥ ॥६॥

राग बिलावल

सुभगसेज सोभित कौसल्या, रुचिर राम-सिसु गोद लिये।
बार बार बिधुबदन बिलोकति, लोचन चारु चकोर किये ॥१॥
कबहुँ पौढ़ि पयपान करावति, कबहूँ राखति लाइ हिये।
बालकेलि गावति हलरावति, पुलकति प्रेम-पियूष पिये ॥२॥
विधि महेस मुनि सुर सिहात सब, देखत अम्बुद ओट दिये।
तुलसिदास ऐसो सुख रघुपति, पै काहू पायो न बिये ॥३॥७॥

राग सोरठ

ह्वैहौ लाल कबहिँ बड़े बलि मैया।
राम लखन भावते भरत रिपुदवन चारु चारयो भैया ॥ १ ॥
बाल-बिभूषन-बसन मनोहर, अङ्गनि बिरचि बनैहौँ!
सोभा निरखि निछावरि करि, उर लाइ वारने जैहौँ ॥ २ ॥
छगन-मगन अँगना खेलिहैा मिलि, ठुमुक ठुमुक कब धैहैा।
कलबल बचन तोतरे मञ्जुल, कहि माँ मोहिँ बुलैहैा ॥ ३ ॥
पुरजन सचिव राउ रानी सब, सेवक सखा सहेली।
लैहैं लोचन-लाहु सुफल लखि, ललित मनोरथ-बेली ॥ ४ ॥
जा सुख की लालसा लटू सिव, सुक सनकादि उदासी।
तुलसी तेहि सुख सिन्धु कौसिला, मगन पै प्रेम-पियासी॥५॥८॥

पगनि कब चलिहैा चारौ भैया?
प्रेम-पुलकि उर लाइ सुवन सब, कहति सुमित्रा मैया ॥ १ ॥
सुन्दर तनु सिसु-बसन-बिभूषन, नखसिख निरखि निकैयां।
दलि तृन प्रान निछावरि करि करि, लैहैं मातु बलैया ॥२॥

बिये=दूसरे। छगनमगन=छोटे छोटे बालक, प्यार का शब्द। कलबल=अस्पष्ट शब्द, गिलबिल वचन। दलितृन= तिनका तोड़ कर।

किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि, मिलनि मनोहरतैया।
मनि-खम्भनि प्रतिबिम्ब-झलक छबि,छलकिहै भरि अँगनैया॥३॥
बालबिनोद मोद मञ्जुल बिधु, लीला ललित जुन्हैया।
भूपति पुन्य-पयोधि उमँग घर, घर आनन्द बधैया॥
ह्वैहैं सकल सुकृत-सुख-भाजन, लोचन लाहु लुटैया।
अनायास पाइहैं जनमफल, तोतरे बचन सुनैया॥५॥
भरत राम रिपुदवन लखन के, चरित-सरित अन्हवैया।
तुलसी तब के से अजहुँ जानिबे, रघुबर-नगर-बसैया॥६॥९॥

राग केदारा

चुपरि उबटि अन्हवाइकै नयन आँजे,
रचि रुचि तिलक गोरोचन को कियो है।
भ्रू पर अनूप मसिबिन्दु बारे बारे बार,
बिलसत सीस पर हेरि हरै हियो है।
मोद-भरी गोद लिये लालति सुमित्रा देखि,
देव कहैं सबको सुकृत उपवियो है।
मातु पितु प्रिय परिजन पुरजन धन्य,
पुन्यपुञ्ज पेखि पेखि प्रेमरस पियो है।
लोहित ललित लघु चरन-कमल चारु,
चाल चाहि सो छबि सुकबि जिय जियो है।
बालकेलि बातबस झलकि झलमलत,
सोभा की दियटि मानों रूप दीप दियो है।
राम-सिसु सानुज चरित चारु गाइ सुनि,
सुजनन सादर जनम-लाहु लियो है।
तुलसी बिहाइ दसरथ दसचारिपुर,
ऐसे सुखजोग बिधि बिरच्यो न बियो है॥१०॥

छलकिहै=उमड़ेगी। उपवियो=उत्पन्न हुआ है। लोहित=लाल। चाहि=देखकर। झलमलत=रह रह कर चमकता है। दीप=दीप्त, प्रकाशमान।

राम-सिसु गोद-महामोद भरे दसरथ,
कौसिलाहु ललकि लखनलाल लये हैं।
भरत सुमित्रा लये कैकयी सत्रुसमन,
तन प्रेम-पुलक मगन मन भये हैं।
मेढ़ी लटकन मनि-कनक-रचित बाल,-
भूषन बनाइ आछे अङ्ग अङ्ग ठये हैं।
चाहि चुचुकारि चूमि लालत लावत उर,
तैसे फल पावत जैसे सुबीज बये हैं।
घनओट बिबुध बिलोकि बरषत फूल,
अनुकूल बचन कहत नेह नये हैं।
ऐसे पितु मातु पूत प्रिय परिजन बिधि,
जानियत आयु भरि येई निरमये हैं।
अजर अमर होहु करौ हरि हर छोहु,
जरठ जठेरिन्ह आसिरबाद दये हैं।
तुलसी सराहैं भाग तिन्हके जिन्हके हिये,
डिम्भ-रामरूप-अनुराग-रङ्ग रये हैं ॥११॥

राग आसावरी

आजु अनरसे हैं भोर के, पय पियत न नीके।
रहत न बैठे ठाढ़े पालने झुलावतहू, रोवत राम मेरो सो सोच सबही के॥
देव पितर ग्रह पूजिये, तुला तौलिये घी के।
तदपि कबहुँ कबहुँक सखी ऐसेहि अरत, जब परत दृष्टि दुष्ट ती के॥
बेगि बोलि कुलगुरु छुयो माथे हाथ अमी के।
सुनत आइ रिषि कुस हरे नरसिंह मंत्र पढ़े जो सुमिरत भय भी के॥

मेढ़ी = बालों की गुथी हुई चोटी। ठये = प्रयुक्त किये, पहनाये। बये = बोये। जठेरिन्ह = बड़ी बूढ़ी। डिम्भ = बालक। रये = रङ्गे हुए। अनरसे = अनमने, बीमार। ती = स्त्री।

जासु नाम सर्वस सदासिव पार्वती के ।
ताहि झरावति कौसिला यह रीति प्रीति की, हिय हुलसति तुलसी के ॥१२॥
माथे हाथ रिषि जब दियो, राम किलकन लागे ।
महिमासमुझि लीलाबिलोकि गुरुसजलनयन, तनुपुलक रोमरोम जागे ॥
लिये गोद धाये गोद तें, मोद मुनि मन अनुरागे ।
निरखि मातु हरषी हिये आली ओट कहति, मृदु बचन प्रेम के से पागे ॥
तुम्ह सुरतरु रघुवंस के, देत अभिमत माँगे ।
मेरे बिसेषि गति रावरी तुलसी प्रसाद, जाके सकल अमङ्गल भागे ॥१३॥
अमिय-बिलोकनि करि कृपा, मुनिवर जब जोये ।
तबतें राम अरु भरत लखन रिपुदवन, सुमुखसखि! सकलसुवनसुखसोये ॥
सुमित्रा लाय हिये फनि,-मनि ज्यों गोये ।
तुलसी नेवछावरि करति मातु अति प्रेम-मगन मन, सजल सुलोचन कोये ॥१४॥
मातु सकल कुलगुरु-बधू, प्रिय सखी सुहाई ।
सादर सब मङ्गल किये महि-मनि-महेस पर सबनि सुधेनु दुहाई ॥
बोलि भूप भूसुर लिये, अति बिनय बड़ाई ।
पूजि पायँ सनमानि दान दिये, लहि असीस सुनि बरषैं सुमन सुरसाई ॥
घर घर पुर बाजन लगीं आनन्द बधाई ।
सुख सनेह तेहि समय को, तुलसी जाने जाको चोरयोहै चितचहुँ भाई ॥१५॥

राग धनाश्री

या सिसु के गुन नाम बड़ाई ।
को कहि सकै सुनहु नरपति श्रीपति समान प्रभुताई ॥
जद्यपि बुधि वय रूप सील गुन, समय चारु चारयो भाई ।
तदपि लोक-लोचन-चकोर-ससि, राम भगत-सुखदाई ॥
सुर नर मुनि करि अभय दनुज हति, हरिहि धरनि गरुआई ।
कीरति बिमल बिस्व-अघमोचनि, रहिहि सकल जग छाई ॥

जोये = देखे, निहारे। कोये = आँख का कोना ।

याके चरन-सरोज कपट तजि, जे भजिहैं मन लाई।
ते कुल जुगल सहित तरिहैं भव, यह न कछू अधिकाई॥
सुनि गुरुबचन पुलक तन दम्पति, हरष न हृदय समाई।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख, प्रभु मन मैं मुसुकाई॥१६॥

राग बिलावल

अवध आजु आगमी एक आयो।
करतल निरखि कहत सब गुनगन, बहुतनि परिचै पायो।
बूढ़ो बड़ो प्रमानिक ब्राह्मन, सङ्कर नाम सुहायो।
सँग सिसुसिष्य सुनत कौसल्या, भीतर भवन बुलायो॥
पाँय पखारि पूजि दियो आसन, असन बसन पहिरायो।
मेले चरन चारु चारयो सुत, माथे हाथ दिवायो॥
नखसिख बाल बिलोकि बिप्रतनु, पुलक नयन जल छायो।
लै लै गोद कमल-कर निरखत, उर प्रमोद न अमायो॥
जनम प्रसङ्ग कह्यो कौसिक मिस, सीय स्वयम्बर गायो।
राम भरत रिपुदवन लखन को, जय-सुख सुजस सुनायो॥
तुलसिदास रनिवास रहसवस, भयो सबको मनभायो।
सनमान्यौ महिदेव असीसत, सानँद सदन सिधायो॥१७॥

राग केदारा

पौढ़िये लालन पालने हौं झुलावौं।
कर पद मुख चख कमल लसत लखि, लोचन-भँवर भुलावौं॥
बाल-बिनोद-मोद-मञ्जुल मनि, किलकनि खानि खुलावौं
तेइ अनुराग ताग गुहिबे कहँ, मति मृगनयनि बुलावौं॥
तुलसी भनित भली भामिनि उर, सो पहिराइ फुलावौं।
चारु चरित रघुबर तेरे तेहि, मिलि गाइ चरन चित लावौं॥१८॥

दम्पति=स्त्री-पुरुष। आगमी=ज्योतिषी। परिचै=परिचय, प्राप्त की हुई जानकारी। सदन=घर। चख=नेत्र। प्रतिबिम्बनि=मूर्त्तियाँ।

सोइये लाल लाड़िले रघुराई।
मगन मोद लिये गोद सुमित्रा, बार बार बलि जाई॥
हँसे हँसत अनरसे अनरसत, प्रतिबिम्बनि ज्यों झाँई।
तुम सबके जीवन के जीवन, सकल सुमङ्गलदाई॥
मूल मूल सुरबीथि बेलि तम,-तोम-सुदल अधिकाई।
नखत-सुमन नभ-बिटप बौंड़ि मानों, छपा छिटकि छबि छाई॥
हौ जँभात अलसात तात! तेरी, बानि जानि मैं पाई।
गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं, सुख नींदरी सुहाई॥
बछरु छबीलो छगनमगन मेरे, कहति मल्हाइ मल्हाई।
सानुज हिय हुलसति तुलसी के, प्रभु की ललित लरिकाई॥१९॥

ललन लोने लेरुआ बलि मैया।
सुख सोइये नींद-बेरिया भइ, चारु-चरित चारयौ भैया॥
कहति मल्हाइ लाइ उर छिन छिन, छगन छबीले छोटे छैया।
मोद-कन्द कुल-कुमुद-चन्द्र मेरे, रामचन्द्र रघुरैया॥
रघुबर बालकेलि सन्तन की, सुभग सुभद सुरगैया।
तुलसी दुहि पीवत सुख जीवत, पय सप्रेम घनी घैया॥२०॥

सुखनींद कहति आलि आइहौं।
राम लखन रिपुदवन भरत सिसु, करि सब सुमुख सोआइहौं॥
रोवनि धोवनि अनखानि अनरसनि, डिठि-मुठि निठुर नसाइहौं।
हँसनि खेलनि किलकनि आनन्दनि, भूपति-भवन बसाइहौं॥
गोद बिनोद मोदमय मूरति, हरषि हरषि हलराइहौं।
तनु तिल तिल करि वारि राम पर, लेहौं रोग बलाइहौं॥

बिम्बनि=मूर्त्तियाँ। झाँई=परछाहीं। सुरबीथि=देवडगर। बेलि=लता। तमतोम=अन्धकार समूह। बौंड़ि=बेलि। छपा=रात्रि। नींदरी=निद्रा। बछरु=बछवा, बालक। मल्हाइ=स्नेहपूर्ण वाक्य। लेरुआ=बछड़ा। छगन=छोटा बच्चा, प्रिय बालक। छैया=वत्स। घैया=ताजे और बिना मथे हुए दूध के ऊपर उतराये हुए मक्खन को काछ कर इकट्ठा करने की क्रिया। डिठिमुठि=टोना, नजर।

रानी राउ सहित सुत परिजन, निरखि नयन-फल पाइहैं।
चारु चरित रघुबंस-तिलक के, तहँ तुलसी मिलि गाइहैं ॥२१॥

राग—आसावरी

कनक-रतन मय पालनो रच्यो, मनहुँ मार सुतहार।
बिबिध खेलौना किङ्किनी लागे, मञ्जुल मुकुताहार ॥
रघुकुल-मंडन रामलला ॥१॥

जननि उबटि अन्हवाइकै, मनिभूषन सजि लिये गोद।
पौढ़ाये पटु पालने सिसु, निरखि मगन मन मोद ॥
दसरथनन्दन रामलला ॥ २ ॥

मदन मोर के चन्द की झलकनि, निदरति तनु-जोति।
नील कमल मनि जलद की उपमा, कहे लघु मति होति ॥
मातु-सुकृत-फल रामलला ॥ ३ ॥

लघु लघु लोहित ललित हैं पद, पानि अधर एक रङ्ग।
को कवि जो छवि कहि सकै नखसिख सुन्दर सब अङ्ग ॥
परिजन-रञ्जन रामलला ॥ ४ ॥

पग पुर कटि किङ्किनी कर-कञ्जनि पहुँची मञ्ज।
हिय हरिनख अदभुत बन्यौ मानों, मनसिज मनि-गन-गञ्जु ॥
पुरजन-सिरमनि रामलला ॥ ५ ॥

लोयन नील सरोज से भ्रू पर, मसि-बिन्द बिराज।
जनु बिधु-मुख छबि-अमिय को, रच्छक राखे रसराज ॥
सोभासागर रामलला ॥ ६ ॥

गभुआरी अलकावली लसै, लटकन ललित ललाट।
जनु उडुगन बिधु मिलन को चले, तम बिदारि करि बाट ॥
सहज सोहावनो रामलला ॥ ७ ॥

सुतहार=खाट बीननेवाला बढ़ई। पटु=श्रेष्ठ। गञ्जु=अनादरकारी, नाशक। मसिबिन्दु=डिठौना। रसराज=पारा, कामदेव। गभुआरी=पेटके।

देखि खेलौना किलकहीं पद, पानि बिलोचन लोल।
विचित्र विहँग अलि जलज ज्यौं, सुखमा-सर करत कलोल॥
भगत-कल्पतरु रामलला॥८॥

बाल-बोल बिनु अरथ के सुनि, देत पदारथ चारि।
जनु इन्ह बचनन्हि तें भये, सुरतरु तापस त्रिपुरारि॥
नाम-कामधुक रामलला॥९॥

सखी सुमित्रा वारहीं मनि, भूषन बसन बिभाग।
मधुर झुलाइ मल्हावहीं गावैं, उमँगि उमँगि अनुराग॥
हैं जग-मङ्गल रामलला॥१०॥

मोती जायो सीप में अरु, अदिति जन्यो जग-भानु।
रघुपति जायो कौसिला, गुन-मङ्गल-रूप-निधानु॥
भुवन-बिभूषन रामलला॥११॥

राम प्रगट जब तें भये गये, सकल अमङ्गल मूल।
मीत मुदित हित उदित हैं, नित बैरिन के चित सूल॥
भव-भय भञ्जन रामलला॥१२॥

अनुज सखा सिसु सङ्ग लै, खेलन जैहैं चौगान।
लङ्का खरभर परैगी, सुरपुर बाजिहैं निसान॥
रिपुगन-गञ्जन रामलला॥१३॥

राम अहेरे चलहिंगे जब, गजरथ बाजि सँवारि।
दसकन्धर उर धकधकी अब, जनि धावै धनु धारि॥
अरि-करि-केहरि रामलला॥१४॥

गीत सुमित्रा सखिन्ह कै सुनि, सुनि सुर मुनि अनुकूल।
दै असीस जय जय कहैं, हरषैं बरषैं फूल॥
सुर-सुखदायक रामलला॥१५॥

कलोल=विहार। कामधुक=कामधेनु। चौगान=गेंद का खेल। खरभर=खलबली, बेचना। धकधकी=जी की धड़कन।

बालचरित-मय चन्द्रमा यह, सोरह-कला-निधान।
चित चकोर तुलसी कियो कर, प्रेम-अमिय-रस पान॥
तुलसी को जीवन रामलला॥१६॥२२॥

राग कान्हरा

पालने रघुपति झुलावै।
लै लै नाम सप्रेम सरस स्वर, कौसल्या कल कीरति गावै॥
केकिकंठ दुति स्यामबरन बपु, बाल-बिभूषन बिरचि बनाये।
अलकैं कुटिल ललित लटकन भ्रू, नील नलिन दोउ नयन सुहाये॥
सिसु सुभाय सोहत जब कर गहि, बदन निकट पदपल्लव लाये।
मनहुँ सुभग जुग भुजग जलज भरि, लेत सुधा ससि सोँ सचु पाये॥
उपर अनूप बिलोकि खेलैाना, किलकत पुनि पुनि पानि पसारत।
मनहुँ उभय अम्भोज अरुन सोँ, बिधु-भय बिनय करत अति आरत॥
तुलसिदास बहु-बास-बिबस अलि, गुञ्जत सुछबि न जाति बखानी।
मनहुँ सकल स्रुति रिचा मधुप ह्वै, बिसदसुजस बरनत बर बानी॥२३॥

राग बिलावल

झूलत राम पालने सोहैं।
भूरि-भाग जननी जन जोहैं॥
तन मृदु मञ्जुल मेचकताई।
झलकति बाल बिभूषन झाँई॥
अधर पानि पद लोहित लोने।
सर-सिँगार-भव सारस सोने॥
किलकत निरखि बिलोल खेलैाना।
मनहुँ बिनोद लरत छबि छैाना॥

केकि=मुरैला। भ्रू=भौंह। नलिन=कमल। जोहैं=देखती हैं। मेचकताई=श्यामता। सारस=कमल। बिलोल=चञ्चल।

रञ्जित अञ्जन कञ्ज-बिलोचन।
भ्राजत भाल तिलक गोरोचन॥
लस मसिबिन्दु बदन-बिधु नीको।
चितवत चितचकोर तुलसी को॥२४॥

राग कल्याण

राजत सिसुरूप राम सकल गुन निकाय धाम,
कौतुकी कृपालु ब्रह्म जानु-पानि-चारी।
नीलकञ्ज जलदपुञ्ज मरकतमनि सरिस स्याम,
काम कोटि सोभा अँग अङ्ग उपर वारी॥
हाटक-मनि-रत्न-खचित रचित इन्द्र-मन्दिराभ,
इन्दिरानिवास सदन बिधि रच्यो सँवारी।
बिहरत नृप-अजिर अनुज सहित बालकेलि कुसल,
नील-जलज-लोचन हरि मोचन-भयभारी॥
अरुन चरन अङ्कुस धुज कञ्ज कुलिस चिन्ह रुचिर,
भ्राजत अति नूपुर बर मधुर मुखरकारी।
किङ्किनी बिचित्र जाल कम्बुकंठ ललित माल,
उर बिसाल केहरि नख कङ्कन करधारी॥
चारु चिबुक नासिका कपोल भाल तिलक भृकुटि,
स्रवन अधर सुन्दर द्विज-छबि अनूप न्यारी।
मनहुँ अरुन कञ्ज-कोस मञ्जुल जुगपाँति प्रसव,
कुन्दकली जुगल जुगल परम सुभ्रवारी॥
चिक्कन चिकुरावली मनो षडङ्घ्रि-मंडली,
बनी बिसेषि गुञ्जत जनु बालक किलकारी।

जानुपानिचारी=घुटनों के बल चलनेवाले। हाटक=सुवर्ण। मन्दिराभ=मन्दिर की शोभा। इन्दिरा=लक्ष्मी। मुखरकारी=बोलनेवाला। चिबुक=ठुड्डी। द्विज=दाँत। षडङ्घ्रि=भ्रमर।

इकटक प्रतिबिम्ब निरखि पुलकत हरि हरषि हरषि,
लै उछङ्ग जननी रसभङ्ग जिय बिचारी ॥
जा कहँ सनकादि सम्भु नारदादि सुक मुनीन्द्र,
करत बिबिध जोग काम क्रोध लोभ जारी।
दसरथ गृह सोइ उदार भञ्जन संसार-भार,
लीला अवतार तुलसिदास त्रासहारी ॥२५॥

राग कान्हरा

।आँगन फिरत घुटुरुवनि धाये।
नील-जलद-तनु-स्याम राम-सिसु, जननि निरखि मुख निकट बोलाये ॥१॥
बन्धुक-सुमन-अरुन पदपङ्कज अङ्कुस प्रमुख चिन्ह बनि आये।
नूपुर जनु मुनिवर-कलहंसनि, रचे नीड़ दै बाँह बसाये ॥२॥
कटि मेखल बर हार ग्रीव दर, रुचिर बाँह भूषन पहिराये।
उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख, हेम मध्य मनिगन बहु लाये ॥३॥
सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका, स्त्रवन कपोल मोहिँ अति भाये।
भ्रू सुन्दर करुनारस-पूरन, लोचन मनहुँ जुगल जलजाये ॥४॥
भाल बिसाल ललित लटकन बर, बालदसा के चिकुर सोहाये।
मनु दोउ गुरु सनि कुज आगे करि, ससिहि मिलन तम के गन आये ॥५॥
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीत ओढ़ाये।
नील जलद पर उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनोँ तड़ित छपाये ॥६॥
अङ्ग अङ्ग पर मार निकर मिलि, छबिसमूह लैलै जनु छाये।
तुलसिदास रघुनाथ-रूप-गुन, तौ कहौँ जो बिधि होँहिँ बनाये ॥७॥२६॥

राग केदारा।

।रघुबर-बाल-छबि कहौँ बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि-मनोज-सोभाहरनि ॥१॥

बन्धुक=जपा, वड़हुल। प्रमुख=प्रधान। मेखल=करधनी। दर=शंख। रसभङ्ग=अनिष्ट। श्रीवत्स=प्यारी छवि। चिकुर=बाल। दोउगुरु=बृहस्पति और शुक्र। कुज=मंगल

बसी मानहुँ चरन कमलनि, अरुनता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किङ्किनी मन, हरति रुनझुन करनि ॥२॥
मञ्जु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिङ्गार-सिसु तरु, फर्‌यो है अदभुत फरनि ॥३॥
भुजनि भुजग सरोज नयननि, बदन बिधु जित्यो लरनि।
रहे कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि ॥४॥
लसत कर प्रतिबिम्ब मनि-आँगन घुटुरुवनि चरनि।
जनु जलज-सम्पुट सुछबि भरि, भरि धरति उर धरनि ॥५॥
पुन्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथ-घरनि।
बसति तुलसी-हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि ॥६॥२७॥

नेकु बिलोकि धौं रघुबरनि।
चारि फल त्रिपुरारि तोको, दिये कर नृप-घरनि ॥१॥
बाल-भूषन-बसन तन, सुन्दर रुचिर रजभरनि।
परसपर खेलनि अजिर उठि, चलनि गिरि गिरि परनि ॥२॥
झुकनि झाँकनि छाँह सौं, किलकनि नटनि हठि लरनि।
तोतरी बोलनि बिलोकनि, मोहनी मनहरनि ॥ ३ ॥
सखि बचन सुनि कौसिला लखि, सुढर पासे ढरनि।
लेति भरि भरि अङ्क सैंतति, पैंत जनु दुहुँ करनि ॥ ४ ॥
चरित निरखत बिबुध तुलसी, ओट दै जलधरनि।
चहत सुर सुरपति भयो सुरपति भयो चहै तरनि ॥ ५ ॥ २८ ॥

राग जयतश्री

भूमितल भूप के बड़े भाग।
राम लखन रिपुदमन भरत सिसु, निरखत अति अनुराग ॥१॥

तरनि = सूर्य। लरनि = लड़ाई, समूह। कुहरनि=गड्ढे, नीचा स्थान। अजिर=आँगन। सैंतति=बटोरती हैं, संचय करती है। पैंत = दाँव, बाजी।

बाल-बिभूषन लसत पायँ मृदु, मञ्जुल अङ्ग-बिभाग।
दसरथ सुकृत-मनोहर-बिरवनि, रूप-करह जनु लाग ॥ २ ॥
राजमराल बिराजत बिहरत, जे हर हृदय तड़ाग।
ते नृप अजिर जानुकर धावत, धरन चटक चल काग ॥ ३ ॥
सिद्ध सिहात सराहत मुनिगन, कहैँ सुर किन्नर नाग।
ह्वै बरु बिहँग बिलोकिय बालक, बसि पुर उपबन बाग ॥ ४ ॥
परिजन सहित राय रानिन्ह कियो, मज्जन प्रेम-प्रयाग।
तुलसी फल ताके चाख्यो मनि, मरकत पङ्कजराग ॥ ५ ॥ २९ ॥

राग आसावरी

छँगन-मँगन अँगना खेलत चारु चार्यो भाई।
सानुज भरत लाल लखन राम लोने लोने,
लरिका लखि मुदित मातुसमुदाई ॥ १ ॥
बाल-बसन भूषन धरे नखसिख छबि छाई।
नील पीत मनसिज सरसिज मञ्जुल,
मालनि मानोँ हैँ देहनि तेँ दुति पाई ॥ २ ॥
ठुमुक ठुमुक पग धरनि नटनि लरखरनि सुहाई।
भजनि मिलनि रूठनि टूठनि किलकनि,
अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ॥ ३ ॥
जननि सकल चहुँ ओर आलबाल मनि-अँगनाई।
दसरथ सुकृत बिबुध बिरवा बिलसत,
बिलोकि जनु बिधि बर बारि बनाई ॥ ४ ॥
हरि बिरञ्चि हर हेरि राम प्रेम-परबसताई।
सुख समाज रघुराज के बरनत,

करह=फूल की कली। पङ्कज राग= पद्मराग, मानिक। टूठनि=प्रसन्नता। किलकनि=किलकारी मारना, हर्षध्वनि। बिबुधबिरवा=कल्पवृक्ष। बारि=गोंड़ा, थाला।

विसुद्ध मन सुरनि सुमन झरि लाईं ॥ ५ ॥
सुमिरत श्रीरघुबरन की लीला लरिकाईं।
तुलसिदास अनुराग अवध आनँद,
अनुभवत तब को सो अजहुँ अघाईं ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग बिलावल

आँगन खेलत आनँदकन्द।
रघुकुल कुमुद सुखद चारु चन्द ॥
सानुज भरत लखन सँग सोहैं।
सिसु-भूषन भूषित मन मोहैं ॥
तन दुति मोरचन्द जिमि झलकैं।
मनहुँ उमँगि अँग अँग छबि छलकैं ॥ १ ॥
कटि किङ्किनि पग पैजनि बाजैं।
पङ्कज-पानि पहुँचियाँ राजैं ॥
कठुला कंठ बघनहा नीके।
नयन-सरोज मयन-सरसी के ॥ २ ॥
लटकन लसत ललाट लटूरीं।
दमकति द्वै द्वै दँतुरियाँ रूरीं ॥
मुनि-मन हरत मञ्जु मसि-बुन्दा।
ललित बदन बलि बालमुकुन्दा ॥ ३ ॥
कुलही चित्र-बिचित्र झँगूली।
निरखत मातु मुदित मन फूली ॥
गहि मनि-खम्भ डिम्भ डगि डोलत।
कलबल बचन तोतरे बोलत।

मोरचन्द=मुरैला की चन्द्रिका। छलकैं=उछरी पड़ती हैं। किङ्किनि=करधनी। पैजनी=बच्चों का एक गहना जो कड़े की तरह पैर में पहना जाता है। मयन=कामदेव। सरसी=तालाव। लटूरी=लट,लिपटे हुए केश। रूरीं=सुन्दर। मसिबुन्दा=डिठौना। बदन=मुख। कुलही=टोपी। झँगूली=झीने वस्त्र की कुरती। डिम्भ=बालक।

किलकत झुकि झाँकत प्रतिबिम्बनि ।
देत परम सुख पितु अरु अम्बनि ॥
सुमिरत सुखमा हिय हुलसी है ।
गावत प्रेम पुलकि तुलसी है ॥ ५ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा

ललित सुतहि लालति सचु पाये ।
कौसल्या कल कनक अजिर महँ, सिखवति चलन अँगुरियाँ लाये ॥१॥
कटि किङ्किनी पैजनी पाँयनि, बाजति रुनझुन मधुर रँगाये ।
पहुँची करनि कंठ कठुला बन्यो, केहरिनख-मनि-जरित जराये ॥२॥
पीत पुनीत बिचित्र झँगुलिया, सोहति स्याम सरीर सोहाये ।
दँतियाँ द्वै द्वै मनोहर मुखछवि, अरुन अधर चित लेत चोराये ॥३॥
चिबुक कपोल नासिका सुन्दर, भाल तिलक मसिबिन्दु बनाये ।
राजत नयन मञ्जु अञ्जनजुत, खञ्जन कञ्ज मीन मद नाये ॥ ४ ॥
लटकन चारु भृकुटिया टेढ़ी, मेढ़ो सुभग सुदेस सुभाये ।
किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि, डरपति जननि पानि छुटकाये ॥५॥
गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि, तोतरि बोलत पूप देखाये ।
बाल-केलि अवलोकि मातु सब, मुदित मगन आनँद न अमाये ॥ ६ ॥
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि, जोग समाधि बिरति बिसराये ।
तुलसिदास जे रसिक न एहि रस, ते नर जड़ जीवत जग जाये ॥७॥३२॥

राग ललित ।

छोटी छोटी गोड़ियाँ अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-जोति मोती मानोँ कमल-दलनि पर ।
ललित आँगन खेलैं ठुमुक ठुमुक चलैं,
झुँझुन झुँझुन पाँय पैजनी मृदु मुखर ॥

सचु=आनन्द । नाये=झुकाये । पूप=पुआ । मुखर=बोलनेवाला ।

किङ्किनी कलित कटि हाटक-जटित मनि,
मञ्जु कर कञ्जनि पहुँचियाँ रुचिरतर।
पियरी झीनी झँगुली साँवरे सरीर खुली,
बालक दामिनि ओढ़ी मानोँ बारे बारिधर॥ १॥
उर बघनहा कंठ कठुला झँडूले केस,
मेढ़ी लटकन मसिबिन्दु मुनि मन-हर।
अञ्जन-रञ्जित नैन चित चोरै चितवनि,
मुख-सोभा पर वारौँ अमित असमसर॥
चुटकी बजावती नचावती कौसल्या माता,
बालकेलि गावति मल्हावति सुप्रेम-भर।
किलकि किलकि हँसैं द्वै द्वै दँतुरियाँ लसैं,
तुलसी के मन बसैं तोतरे बचन बर॥ २॥ ३३॥

सादर सुमुखि बिलोकि राम-सिसु, रूप अनूप भूप लिय कनियाँ॥
सुन्दर स्यामसरोज बरन तनु, नखसिख सुभग सकल सुखदनियाँ॥१॥
अरुन चरन नखजोति जगमगति, रुनझुन करति पाँय पैजनियाँ।
कनक रतन मनि-जटित रटति कटि, किङ्किनि कलित पीतपट तनियाँ॥२॥
पहुँची करनि पदिक हरिनख उर, कठुला कंठ मञ्जु गजमनियाँ।
रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर, ललित नासिका लसति नथुनियाँ॥३॥
बिकट भृकुटि सुखमानिधि आनन, कल कपोल काननि नगफनियाँ।
भाल तिलक मसिबिन्दु बिराजत, सोहति सीस लाल चौतनियाँ॥४॥
मनमोहनी तोतरी बोलनि, मुनिमनहरनि हँसनि किलकनियाँ।
बाल सुभाय बिलोल बिलोचन, चोरति चितहि चारु चितवनियाँ॥५॥
सुनि कुलबधू झरोखनि झाँकति, रामचन्द्र-छबि चन्दबदनियाँ।
तुलसिदास प्रभु देखि मगन भई, प्रेमबिबस कछु सुधि न अपनियाँ॥६॥३४॥

ओढ़ी = ओढ़ा, ऊपर फैलाया। असमसर = कामदेव। कनियाँ = गोदी, कोरा। तनियाँ = लँगोटी। पदिक = सुवर्ण। चौतनियाँ = बालकों की टोपी। बिलोल = चंचल।

राग बिलावल

सोहत सहज सुहाये नैन।
खञ्जन मीन कमल सकुचत तब, जब उपमा चाहत कवि दैन ॥१॥
सुन्दर सब अङ्गनि सिसु-भूषन, राजत जनु सोभा आये लैन।
बड़ो लाभ लालची लोभ बस, रहि गये लखि सुखमा बहु मैन ॥२॥
भोर भूप लिये गोद मोद भरे, निरखत बदन सुनत कल बैन।
बालक रूप अनूप राम छवि, निवसति तुलसिदास उर ऐन॥३॥३५॥

राग विभास

भोर भयो जागहु रघुनन्दन।
गत ब्यलीक भगतनि-उर-चन्दन ॥
ससि करहीन छीनदुति तारे।
तमचुर मुखर सुनहु मेरे प्यारे ! ॥
बिकसित कञ्ज कुमुद बिलखाने।
लै पराग रस मधुप उड़ाने ॥
अनुजसखा सब बोलन आये।
बन्दिन्ह अति पुनीत गुन गाये ॥
मनभावतो कलेऊ कीजे।
तुलसिदास कहँ जूठनि दीजे ॥ ३६ ॥
प्रात भयो तात बलि मातु बिधु बदन पर,
मदन वारौं कोटि उठो प्रान प्यारे !
सूत मागध बन्दि बदत बिरदावली,
द्वार सिसु-अनुज प्रियतम तिहारे।
कोक गतसोक अवलोकि ससि छीन छवि,
अरुनमय गगन राजत रुचिरतारे।

ऐन = स्थान, मन्दिर। ब्यलीक = छल। कर = किरण। तमचुर = मुर्गा। मुखर = बोल।

मनहुँ रबिबाल-मृगराज तमनिकर-करि,
दलित अति ललित मनिगन बिथारे।
सुनहु तमचुर मुखर कीर कलहंस पिक,
केकि रव कलित बोलत बिहँग बारे॥ ३७॥

मनहुँ मुनिवृन्द रघुबंसमनि ! रावरे,
गुनत गुन आस्रमनि सपरिवारे
सरनि बिकसित कञ्जपुञ्ज मकरन्द वर,
मञ्जुतर मधुर मधुकर गुँजारे।

मनहुँ प्रभुजन्म सुनि चैन अमरावती,
इन्दिरानन्द मन्दिर सँवारे।
प्रेम-सम्मिलित वर बचन-रचना अकनि,
राम राजीवलोचन उघारे।

दास तुलसी मुदित जननि करै आरती,
सहज सुन्दर अजिर पाँव धारे॥ ३८॥

जागिये कृपानिधान जान राय रामचन्द्र,
जननी कहै बार बार भोर भयो प्यारे।
राजिवलोचन बिसाल प्रीति बापिका मराल,
ललित कमल बदन उपर मदन कोटि वारे॥
अरुन उदित बिगत सर्वरी ससाङ्क किरनहीन,
दीन दीपजोति मलिन दुति समूह तारे।
मनहुँ ज्ञान घन प्रकास बीते सब भव बिलास,
आसत्रास तिमिर तोष तरनि तेज जारे॥
बोलत खगनिकर मुखर मधुर करि प्रतीति सुनहु,
स्रवन प्रानजीवन धन मेरे तुम बारे।

बिथारे=फैलाये। कीर=सुग्गा। पिक=कोकिल। केकि=मुरैला। सर्वरी=रात्रि।

मनहुँ बेद बन्दी मुनिबृन्द सूत मागधादि,
बिरुद बदत जय जय जय जयति कैटभारे ॥
बिकसित कमलावली चले प्रपुञ्ज चञ्चरीक,
गुञ्जत कल कोमल धुनि त्यागि कञ्ज न्यारे।
जनु बिराग पाइ सकल-सोक-कूप-गृह बिहाइ,
भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे ॥
सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल,
भागे जञ्जाल बिपुल दुख-कदम्ब दारे।
तुलसिदास अति अनन्द देखिकै मुखारबिन्द,
छूटे भ्रमफन्द परम मन्द द्वन्द भारे ॥ ३९ ॥
बोलत अवनिप-कुमार ठाढ़े नृपभवन-द्वार,
रूपसील-गुन उदार जागहु मेरे प्यारे।
बिलखित कुमुदिनि चकोर चक्रवाक हरष भोर,
करत सोर तमचुर खग गुञ्जत अलि न्यारे ॥
रुचिर मधुर भोजन करि भूषन सजि सकल अङ्ग,
सङ्ग अनुज बालक सब बिबिध बिधि सँवारे।
करतल गहि ललित चाप भञ्जन रिपु-निकर-दाप,
कटितट पटपीत तून सायक अनियारे ॥
उपबन मृगया-बिहार-कारन गवने कृपाल,
जननी मुख निरखि पुन्यपुञ्ज निज बिचारे।
तुलसिदास सङ्ग लीजै जानि दीन अभय कीजै
दीजै मति बिमल गावै चरित बर तिहारे ॥ ४० ॥

राग नट

खेलन चलिये आनँदकन्द !
सखा प्रिय नृपद्वार ठाढ़े, बिपुल बालक-वृन्द ॥ १ ॥

कदंब=समूह। दारे=नष्ट किये। भोर=सवेरा। तून=तरकस। अनियार=पैने, तीखे। दाप=दर्प, अभिमान।

तृषित तुम्हरे दरस कारन, चतुर चातक दास।
बपुष बारिद बरषि छबि-जल, हरहु लोचन-प्यास ॥ २ ॥
बन्धु बचन बिनीत सुनि उठे, मनहुँ केहरि-बाल।
ललित लघु सर चाप कर, उर नयन बाहु बिसाल ॥ ३ ॥
चलत पद प्रतिबिम्ब राजत, अजिर सुखमा-पुञ्ज।
प्रेमबस प्रति चरन महि मानौं, देति आसन कञ्ज ॥ ४ ॥
निरखि परम बिचित्र सोभा, चकित चितवहिँ मात।
हरष-बिबस न जात कहि निज, भवन बिहरहु तात ॥ ५ ॥
देखि तुलसीदास प्रभु छबि, रहे सब पल रोकि।
थकित निकर चकोर मानहुँ, सरदइन्दु बिलोकि ॥ ६ ॥ ४१ ॥

बिहरत अवध बीथिन राम।
सङ्ग अनुज अनेक सिसु नव-नील-नीरद-स्याम ॥ १ ॥
तरुन अरुन-सरोज-पद, बनी कनकमय पदत्रान।
पीत पट कटि तून बर, कर ललित लघु धनु बान ॥ ॥ २ ॥
लोचननि को लहत फल, छबि निरखि पुर-नर-नारि।
बसत तुलसीदास उर, अवधेस के सुत चारि ॥ ३ ॥ ४२ ॥

जैसे राम ललित तैसे लोने लखनलाल।
तैसेई भरत सील-सुखमा-सनेह-निधि, तैसेई सुभग सँग सत्रुसाल ॥१॥
धरे धनु सर कर कसे कटि तरकसी, पीरे पट ओढ़े चले चारु चाल।
अङ्ग अङ्ग भूषन जराय के जगमगत, हरत जन के जी को तिमिरजाल ॥२॥
खेलत चौहट घाट बीथी बाटिकनि, प्रभु सिव सुप्रेम-मानस-मराल।
सोभा-दान दै दै सनमानत जाचकजन, करत लोक-लोचन निहाल ॥३॥
रावन-दुरित-दुख दलैँ सुर कहैँ आजु, अवध सकल सुख को सुकाल।
तुलसी सराहैँ सिद्ध सुकृत कौसल्या जू के, भूरि-भाग-भाजन भुवाल ॥४॥४३॥

बपुष=शरीर। पदत्रान=पनहीं। सत्रुसाल=शत्रुहन। दुरित=पाप।

राग ललित

ललित ललित लघु लघु धनु सर कर,
तैसी तरकसी कटि कसे पट पियरे।
ललित पनहीं पाँय पैजनी-किङ्किनि-धुनि,
सुनि सुख लहै मन रहै नित नियरे॥
पहुँची अङ्गद चारु हृदय पदिकहारु,
कुंडल-तिलक-छबि गड़ी कवि जियरे।
सिरसि टिपारो लाल नीरज-नयन बिसाल,
सुन्दर बदन ठाढ़े सुरतरु सियरे॥
सुभग सकल अङ्ग अनुज बालक सङ्ग,
देखि नर-नारि रहैं ज्यों कुरङ्ग दियरे।
खेलत अवध खोरि गोली भौंरा चकडोरि,
मूरति मधुर बसै तुलसी के हियरे॥ ४४॥
छोटियै धनुहियाँ पनहियाँ पगनि छोटी,
छोटियै कछौटी कटि छोटियै तरकसी।
लसत झँगूली झीनी दामिनि की छबि छीनी,
सुन्दर बदन सिर पगिया जरकसी॥
बय-अनुहरत बिभूषन बिचित्र अँग,
जोहे जिय आवति सनेह की सरक सी।
मूरति की सूरति कही न परै तुलसी पै,
जानै सोई जाके उर कसकै करक सो॥ ४५॥

राग टोड़ी

राम लखन इक ओर भरत रिपुदवन लाल इक ओर भये।
सरजुतीर सम सुखद भूमि-थल, गनि गनि गोइयाँ बाँटि लये॥

अङ्गद=विजायठ। टिपारो=मुकुट के आकार की टोपी। सियरे=शीतल। दियरे=दीपक, मसाल। कछौटी=कछनी। जरकसी=जिस पर सोने के तार आदि लगे हों। सरक=मदिरा की खुमारी। कसकै=सालै। करक=पीड़ा।

कन्दुक-केलि-कुसल हय चढ़ि चढ़ि, मनकस कसि ठौंकि ठौंकि खये।
कर-कमलनि विचित्र चौगानैं, खेलन लगे खेल रिझये॥
ब्योम बिमाननि बिबुध बिलोकत, खेलक पेखक छाँह छये।
सहित समाज सराहि दसरथहि, बरषत निज तरु-कुसुम चये॥
एक लै बढ़त एक फेरत सब, प्रेम-प्रमोद-बिनोद-मये।
एक कहत भई हारि राम जू की, एक कहत भइया भरत जये॥
प्रभु बकसत गज बाजि बसन मनि, जय-धुनि गगन निसान हये।
पाइ सखा सेवक जाचक भरि, जनम न दुसरे द्वार गये।
नभ-पुर परति निछावरि जहँ तहँ, सुर सिद्धनि बरदान दये।
भूरि-भाग अनुराग उमँगि जे, गावत सुनत चरित नित ये॥
हारे हरष होत हिय भरतहि, जिते सकुच सिर नयन नये।
तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रङ्ग-रये॥ ४६॥

खेलि खेल सुखेलनिहारे।
उतरि उतरि चुचुकारि तुरङ्गनि, सादर जाइ जोहारे॥ १॥
बन्धु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह सँभारे।
दिये बसन गज बाजि साजि सुभ, साज सुभाँति सँवारे॥ २॥
मुदित नयन फल पाइ गाइ गुन, सुर सानन्द सिधारे।
सहित समाज राजमन्दिर कहँ, राम राउ पगु धारे॥ ३॥
भूप-भवन घरघर घमंड कल्यान कोलाहल भारे।
निरखि हरषि आरती निछावरि, करत सरीर बिसारे॥ ४॥
नित नये मङ्गल मोद अवध सब, सब बिधि लोग सुखारे।
तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्हके प्रभु,-तेँ प्रभु-चरित पियारे॥ ५॥ ४७॥

राग सारङ्ग

चहत महामुनिजाग जयो।
नीच निसाचर देत दुसह दुख, कृसतनु ताप-तयो॥ १॥

कन्दुकेलि=गेंद की खेल। मनकस=कमरबन्द, फटा। खये=भुजदंड। छये=छाये, ठहरे। चये=समूह। जये=जीत गये। हये=हने।

सापे पाप नये निदरत खल, तब यह मंत्र ठयो।
बिप्र-साधु-सुर-धेनु-धरनि-हित, हरि अवतार लयो ॥२॥
सुमिरत श्री सारङ्ग पानि छन, मैं सब सोच गयो।
चले मुदित कौसिक कोसलपुर, सगुननि साथ दयो ॥३॥
करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत आनन्द नयो।
तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग, मङ्गल-मूल भयो ॥४॥४८॥

आजु सकल सुकृत फल पाइहौं।
सुख की सींव अवधि आनँद की, अवध बिलोकिहौं जाइ हौं ॥१॥
सुतनि सहित दसरथहि देखिहौं, प्रेम पुलकि उर लाइहौं।
रामचन्द्र-मुखचन्द्र-सुधा-छबि, नयन चकोरनि प्याइहौं ॥२॥
सादर समाचार नृप बुझिहैं, हौं सब कथा सुनाइहौं ॥
तुलसी ह्वै कृतकृत्य आस्रमहिं, राम लखन लै आइहौं ॥३॥४९॥

राग नट

देखि मुनि रावरे पद आज।
भयो प्रथम गनती मैं अब तैं हौं जहँ लौं साधु-समाज ॥१॥
चरन वन्दि कर जोरि निहोरत, कहिय कृपा करि काज।
मेरे कछु न अदेय राम बिनु, देह गेह सब राज ॥२॥
भली कही भूपति-त्रिभुवन मैं, को सुकृती सिरताज।
तुलसि राम जनमहि तैं जनियत, सकल सुकृत को साज ॥३॥५०॥

राजन् ! राम लखन जौं दीजै।
जस रावरो लाभ ढोटनिहूं, मुनि सनाथ सब कीजै ॥१॥
डरपत हौं साँचे सनेह-बस, सुत-प्रभाव बिनु जाने।
बूझिय वामदेव अरु कुलगुरु, तुम पुनि परम सयाने ॥२॥
रिपु रन दलि मख राखि कुसल अति, अलप दिननि घर ऐहैं।
तुलसिदास रघुबंस-तिलक की, कविकुल कीरति गैहैं ॥३॥५१॥

सापे=शाप से, शाप पाये हुए।

रहे ठगि से नृपति सुनि मुनिवर के बयन।
कहि न सकत कछु राम-प्रेमबस, पुलक गात भरे नीर नयन ॥१॥
गुरु बसिष्ठ समुझाय कह्यो तब, हिय हरषाने जाने सेष-सयन।
सैांपे सुत गहि पानि पाँयपरि, भूसुर उर चले उमगि चयन ॥२॥
तुलसी प्रभु जोहत पोहत चित, सोहत मोहत कोटि मयन।
मधु माधव मूरति दोउ सँग मानोँ, दिनमनि गवन कियो उतर अयन ॥३॥५२॥

राग सारङ्ग

रिषि सँग हरषि चले दोउ भाई।
पितु-पद बन्दि सीस लियो आयसु, सुन सिब आसिष पाई ॥१॥
नील पीत पाथोज-बरन बपु, बय किसोर बनिआई।
सर धनु पानि पीत पट कटितट, कसे निखङ्ग बनाई ॥२॥
कलित कंठ मनि-माल कलेवर, चन्दन खैारि सुहाई।
सुन्दर बदन सरोरुह लोचन, मुखछबि बरनि न जाई ॥३॥
पल्लव पङ्ख सुमन सिर सोहत, क्याैं कहाैं बेष लुनाई।
मनु मूरति धरि उभय भाग भइ, त्रिभुवन सुन्दरताई ॥४॥
पैठत सरनि सिलनि चढ़ि चितवत, खग-मृग-बन-रुचिराई।
सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि, पुनि पुनि लेत बुलाई ॥५॥
एक तीर तकि हती ताड़का, विद्या बिप्र पढ़ाई।
राख्यो जज्ञ जीति रजनीचर, भइ जग बिदित बड़ाई ॥६॥
चरन-कमल-रज-परसि अहिल्या, निज पति-लोक पठाई।
तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि, सुरसरि कथा सुनाई ॥७॥ ॥५३॥

राग नट

दोउ राजसुवन राजत मुनि के सङ्ग।
नखसिख लोने लोने बदन लोने लोयन, दामिनि-बारिद-बरबरन अङ्ग ॥१॥

सेषसयन = विष्णु। चयन = चैन, आनन्द। पोहत = धँसते हैं, घुसते हैं। दिनमनि = सूर्य्य।
खैारि = तिलक। लुनाई = छबि।

सिरनि सिखा सुहाइ उपवीत पीटपट, धनु सर कर कसे कटि निखङ्ग।
मानौं मख-रुज-निसिचर हरिबे को सुत,पावक के साथ पठये पतङ्ग ॥२॥
करत छाँह घन बरषैं सुमन सुर, छबि बरनत अतुलित अनङ्ग।
तुलसी प्रभु बिलोकि मग लोग खग मृग, प्रेममगन रँगे रूप-रङ्ग ॥३॥५४॥

राग कल्यान

मुनि के सङ्ग बिराजत बीर।
काकपच्छधर कर कोदँड सर, सुभग पीतपट कटि तूनीर ॥१॥
बदन इन्दु अम्भोरुह लोचन, स्याम गौर सोभा-सदन सरीर।
पुलकत रिषि अवलोकि अमित छबि, उर न समाति प्रेम की भीर ॥२॥
खेलत चलत करत मग कौतुक, बिलँबत सरित-सरोवर-तीर।
तोरत लता सुमन सरसीरुह, पियत सुधा सम सीतल नीर ॥३॥
बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर, पुनि पुनि बरनत छाँह समीर।
देखत नटत केकि कल गावत, मधुप मराल कोकिला कीर ॥४॥
नयननि को फल लेत निरखि खग, मृग सुरभी ब्रजबधू अहीर।
तुलसी प्रभुहि देत सब आसन, निज निज मन-मृदु-कमल कुटीर ॥५॥५५॥

राग कान्हरा

सोहत मग मुनि सँग दोउ भाई।
तरुन तमाल चारु चम्पक छबि, कबि सुभाय कहि जाई ॥१॥
भूषन बसन अनुहरत अङ्गनि, उमगति सुन्दरताई।
बदन-मनोज सरोज-लोचननि, रही है लुभाइ लुनाई ॥२॥
अंसनि धनु सर कर कमलनि कटि, कसे हैं निखङ्ग बनाई।
सकल-भुवन-सोभा-सरबस लघु, लागति निरखि निकाई ॥३॥
महि मृदु पथ घन छाँह सुमन सुर,-बरषि पवन सुखदाई।
जल-थल-रुह फल फूल सलिल सब, करत प्रेम पहुनाई ॥४॥

पतङ्गसुत = सूर्य्य के तनय, अश्विनीकुमार। तूनीर = तरकस। नटत = नाचते हैं। केकि = मोर। कुटीर = कुटी, स्थान। अंसनि = कन्धों पर।

सकुच सभीत बिनीत साथ गुरु, बोलनि चलनि सुहाई।
खग मृग चित्र बिलोकत बिच बिच, लसति ललित लरिकाई ॥५॥
बिद्या दई जानि बिद्यानिधि, बिद्यहु लही बड़ाई।
ख्याल दली ताड़ुका देखि रिषि, देत असीस अघाई ॥६॥
बूझत प्रभु सुरसरि प्रसङ्ग कहि, निज कुल कथा सुनाई।
गाधिसुवन-सनेह-सुख-सम्पति, उर-आस्रम न समाई ॥७॥
बनबासी बटु जती जोगि-जन, साधु सिद्ध समुदाई।
पूजत पेखि प्रीति पुलकत तनु, नयन लाभ लुटि पाई ॥८॥
मख राख्यो खलदल दलि भुजबल, बाजत बिबुध बधाई।
नित पथ-चरित-सहित तुलसी-चित, बसत लखन रघुराई ॥९॥५६॥

मञ्जुल मङ्गलमय नृप-ढोटा।
मुनि मुनितिय मुनिसिसु बिलोकि कहैं, मधुर मनोहर जोटा ॥१॥
नाम-रूप-अनुरूप बेष बय, राम लखन लाल लोने।
इन्हतें लही है मानौं घन-दामिनि दुति, मनसिज मरकत सोने ॥२॥
चरन-सरोज पीतपट कटितट, तून-तीर-धनुधारी।
केहरिकन्ध काम-करि-करबर, बिपुल बाहु बल भारी ॥३॥
दूषन-रहित समय सम भूषन, पाइ सुअङ्गनि सोहैं।
नव-राजीव-नयन पूरन-बिधु, बदन मदन मन मोहैं ॥४॥
सिरनि सिखंड सुमन दल-मंडन, बाल सुभाय बनाये।
केलि-अङ्क तनु रेनु पङ्क जनु, प्रगटत चरित चोराये ॥५॥
मख राखिबे लागि दसरथ सौं, माँगि आस्रमहिं आने।
प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय, गाधिसुवन सनमाने ॥६॥
साधन-फल साधक सिद्धनि के, लोचन-फल सबहीं के।
सकल सुकृत-फल मातु पिता के, जीवनधन तुलसी के ॥७॥५७॥

चित्र=खेल, रङ्गबिरङ्ग। सिखंड=श्रीखंड, चन्दन। केलिअङ्क=खेलके चिन्ह। रेनु=धूलि। पङ्क=कीचड़।

राग सूहो

रामपद-पदुम-पराग परी।
रिषितिय तुरत त्यागि पाहन-तनु, छबिमय देह धरी ॥ १ ॥
प्रबल पाप पति-साप-दुसह-दव, दारुन जरनि जरी।
कृपा-सुधा सिँचि बिबुध बेलि ज्यौँ, फिर सुख-फरनि फरी ॥२॥
निगम-अगम मूरति महेस-मति,-जुवति बराय बरी।
सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ, इकटक तेँ न टरी ॥ ३ ॥
बरनति हृदय सरूप सील गुन, प्रेम-प्रमोद-भरी।
तुलसिदास अस केहि आरत की, आरति प्रभु न हरी ?॥४॥५८।

परत पद-पङ्कज रिषि-रवनी।
भई है प्रगट अति दिव्य देह धरि, मानोँ त्रिभुवन-छबि-छवनी॥१॥
देखि बड़ो आचरज पुलकि तनु, कहति मुदित मुनि-भवनी।
जो चलिहैँ रघुनाथ पयादेहि, सिला न रहिहि अवनी ॥ २ ॥
परसि जो पाँय पुनीत सुरसरी, सोहै तीनि-गवनी।
तुलसिदास तेहि चरन-रेनु की, महिमा कहै मति कवनी ॥३॥५९॥

भूरिभाग भाजनु भई।
रूपरासि अवलोकि बन्धु दोउ, प्रेम-सुरङ्ग रई ॥ १ ॥
कहा कहैँ केहि भाँति सराहैँ, नहिँ करतूति नई।
बिनु कारन करुनाकर रघुबर, केहि केहि गति न दई ? ॥ २ ॥
करि बहु बिनय राखि उर मूरति, मङ्गल-मोदमई।
तुलसी ह्वै बिसोक पति-लोकहि, प्रभुगुन गनत गई ॥ ३ ॥ ६० ॥

राग कान्हरा

कौसिक के मख के रखवारे।
नाम राम अरु लखन ललित अति, दसरथ-राज-दुलारे ॥ १ ॥

तीनिगवनी=तीनों लोक में गमन करनेवाली। रई=रंगी। कौसिक=विश्वामित्र।

मेचक पीत कमल कोमल कल, काकपच्छ-धर बारे।
सोभा सकल सकेलि मदन-बिधि, सुकर-सरोज सँवारे ॥ २ ॥
सहस समूह सुबाहु सरिस खल, समर सूर भट मारे।
केलि-तून-धनु-बान-पानि रन, निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥
रिषितिय तारि स्वयम्बर पेखन, जनक-नगर पगु धारे।
मग नरनारि निहारत सादर, कहैं बड़ भाग हमारे ॥ ४ ॥
तुलसी सुनत एक एकनि सों, चलत बिलोकनिहारे।
मूकनि बचन-लाहु मानों अन्धनि, लहे हैं बिलोचन-तारे ॥५॥६१॥

राग टोड़ी

आये सुनि कौसिक जनक हरषाने हैं।
बोलि गुरु भूसुर समाज सों मिलन चले,
जानि बड़े भाग अनुराग अकुलाने हैं ॥ १ ॥
नाइ सीस पगनि असीस पाइ प्रमुदित,
पाँवड़े अरघ देत आदर सों आने हैं।
असन बसन बास कै सुपास सब बिधि,
पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमाने हैं ॥२॥
बिनय बड़ाई रिषि-राजऊ परसपर,
करत पुलकि प्रेम आनँद अघाने हैं।
देखे राम लखन निमेषैं बिथकित भईं,
प्रानहुँ ते प्यारे लागे बिनु पहिचाने हैं ॥३॥
ब्रह्मानन्द हृदय दरस-सुख लोयननि,
अनुभये उभय सरस राम जाने हैं।
तुलसी बिदेह की सनेह की दसा सुमिरि,
मेरे मन माने राउ निपट सयाने हैं ॥४॥६२॥

सुकर सरोज=अपने कर कमलों से। पेखन=देखने को। बिथकित=अचल, स्थिर। अनुभये=अनुभव किये। सरस=अधिक, बढ़कर। निपट=निरार, केवल।

राग मलार

कोसलराय के कुअँरोटा।
राजत रुचिर जनक-पुर पैठत, स्याम गौर नीके जोटा ॥१॥
चौतनि सिरनि कनक-कली काननि, कटि पट पीत सोहाये।
उर मनि-माल बिसाल बिलोचन, सीय-स्वयम्बर आये ॥२॥
बरनि न जात मनहिं मन भावत, सुभग अबहिं बय थोरी।
भईं हैं मगन बिधुबदन बिलोकत, बनिता चतुर चकोरी ॥३॥
कहँ सिवचाप लरिकवनि बूझत, बिहँसि चितै तिरछौंहैं।
तुलसी गलिन भीर दरसन लगि, लोग अटनि आरोहैं ॥४॥६३॥

ये अवधेस के सुत दोऊ।
चढ़ि मन्दिरनि बिलोकत सादर, जनक नगर सब कोऊ ॥१॥
स्याम गौर सुन्दर किसोरतनु, तून-बान-धनुधारी।
कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि, भुज बिसाल बलभारी ॥२॥
मुखमयङ्क सरसीरुह-लोचन, तिलक भाल टेढ़ी भौंहैं।
कल कुंडल चौतनी चारु अति, चलत मत्त गज गौंहैं ॥३॥
बिस्वामित्र हेतु पठये नृप, इनहिं ताड़का मारी।
मख राख्यो रिपु जीति जान जग, मग मुनिबधू उधारी ॥४॥
प्रिय पाहुने जानि नरनारिन, नयननि अयन दये।
तुलसिदास प्रभु देखि लोग सब, जनक समान भये ॥५॥६४॥

राग टोड़ी

बूझत जनक नाथ ढोटा दोउ काके हैं?
तरुन तमाल चारु चम्पक बरन तनु,
कौने बड़े भागी के सुकृत परिपाके हैं ॥१॥
सुख के निधान पाये हिय के पिधान लाये,।

कुँअरोटा=कुँवर। बय=उमर। गौँ=चाल, ढब। अयन=स्थान। जनकसमान=विदेह। पिधान=आच्छादन, पर्दा।

ठग के से लाडू खाये प्रेम मधु छाके हैं।
स्वारथ रहित परमारथी कहावत हैं,
भे सनेह-बिबस बिदेहता बिबाके हैं ॥२॥
सील-सुधा के अगार सुखमा के पारावार,
पावत न पैरि पार पैरि पैरि थाके हैं।
लोचन ललकि लागे मन अति अनुरागे,
एक रसरूप चित सकल सभा के हैं ॥३॥
जिय जिय जोरत सगाई राम लखन सों,
आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं।
प्रीति को प्रतीति को सुमिरिबे को सेइबे को,
सरन को समरथ तुलसिहु ताके हैं ॥४॥६५॥

ए कौन कहाँ तें आये ?
नील-पीत-पाथोज-बरन मन, हरन सुभाय सुहाये ॥१॥
मुनिसुत किधौं भूप बालक किधौं, ब्रह्म-जीव जग जाये।
रूप जलधि के रतन सुछबि तिय,-लोचन ललित ललाये ॥२॥
किधौं रवि-सुवन मदन रितुपति किधौं, हरि हर बेष बनाये।
किधौं आपने सुकृत-सुरतरु के, सुफल रावरेहि पाये ॥३॥
भये विदेह बिदेह नेहबस, देहदसा बिसराये।
पुलक गात न समात हरष हिय, सलिल सुलोचन छाये ॥४॥
जनक बचन मृदु मञ्जु मधु-भरे,-भगति कौसिकहि भाये।
तुलसी अतिआनन्द उमँगि उर, राम लखन गुन गाये ॥५॥६६॥

कौसिक कृपाल हू को पुलकित तन भो।
उमँगत अनुराग सभा के सराहे भाग,
देखि दसा जनक की कहिबे को मन भो ॥१॥
प्रीति के न पातकी दियेहूँ साप पाप बड़ो,

मधु=मदिरा। छाके=अघाकर पान किये। बिदेहता बिबाके=देहीपन अगया। भाय=भाव, प्रेम। रविसुवन=अश्विनी कुमार।

मख मिस मेरो तब अवध गवन भो।
प्रानहूँ ते प्यारे सुत माँगे दिये दसरथ,
सत्यसिन्धु सोच सहे सूने सो भवन भो ॥२॥
काकसिखा सिर करि केलि-तून-धनु-सर,
बालक-बिनोद जातुधाननि सोँ रन भो।
बूझत बिदेह अनुराग-आचरज-बस,
रिषिराज-जाग भयो महाराज अनभो ॥३॥
भूमिदेव नरदेव सचिव परसपर,
कहत हमहिँ सुरतरु सिवधन भो।
सुनत राजा की रीति उपजी प्रतीति प्रीति,
भाग तुलसी के भले साहेब को जन भो ॥४॥६७॥

चारयो भले बेटा देव दसरथ राय के।
जैसे राम-लखन भरत-रिपुहन तैसे,
सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ॥१॥
ताड़का सँहारि मख राखे नीके पाले ब्रत,
कोटि कोटि भट किये एक एक घाय के।
एक बान बेगही उड़ाने जातुधान जात,
सूखि गये गात हैँ पतौआ भये बाय के ॥२॥
सिलाछोर छुअत अहल्या भई दिव्य देह,
गुन पेखे पारस के पङ्करुह पाय के।
राम के प्रसाद गुरु गौतम खसम भये,
रावरेहु सतानन्द पूत भये माय के ॥३॥
प्रेम-परिहास-पोख-बचन परसपर,
कहत सुनत सुख सबही सुभाय के।

अनभो=अनुभव, परिचय। सिवधन=कोदण्ड, शङ्करचाप। प्रभाकर=सूर्य्य। प्रभाय=प्रभाव।
घाय=चोट, वार। पतौआ=पत्ता। बाय=हवा।

तुलसी सराहैं भाग कौसिक जनक जू के,
बिधि के सुढर होत सुदर सुदाय के ॥४॥६८॥

ए दोऊ दसरथ के बारे।
नाम राम घनस्याम लखन लघु, नखसिख अँग उजियारे ॥१॥
निज हित लागि माँगि आने मैं, धर्म सेतु-रखवारे।
धीर बीर बिरदैत बाँकुरे, महाबाहु बल भारे ॥२॥
एक तीर तकि हती ताड़का, किये सुर साधु सुखारे।
जज्ञ राखि जग साखि तोषि रिषि, निदरि निसाचर मारे ॥३॥
मुनितिय तारि स्वयम्बर पेखन, आये सुनि बचन तिहारे।
एउ देखिहैं पिनाक नेकु जेहि, नृपनि लाज-ज्वर जारे ॥४॥
सुनि आनन्द सराहि सपरिजन, बारहि बार निहारे।
पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहि, भूपति सदन सिधारे ॥५॥
सोचत सत्य सनेह बिबस निसि, नृपहिँ गनत गये तारे।
पठये बोलि भोर गुरु के सँग, रङ्गभूमि पगु धारे ॥६॥
नगर लोग सुधि पाइ मुदित सबहो सब काज बिसारे।
मनहुँ मघा-जल उमगि उदधि-रुख, चले नदी नद नारे ॥७॥
ए किसोर धनु घोर बहुत बिलखात बिलोकनिहारे।
टर्‌यो न चाप तिन्हते जिन्ह सुभटनि, कौतुक कुधर उखारे ॥८॥
ए जाने बिनु जनक जानियत, करि पन भूप हँकारे।
नतरु सुधासागर परिहरि कत, कूप खनावत खारे ॥९॥
सुखमा सील सनेह सानि मनो, रूप बिरञ्चि सँवारे।
रोम रोम पर सोम काम सत,-कोटि वारि फेरि डारे ॥१०॥
कोउ कहै तेज प्रताप पुञ्ज चितये नहिँ जात भिया रे।
छुअत सरासन-सलभ जरैगो, ये दिनकर बंस-दिया रे ॥११॥

घोर=कठोर। बिलखात=दुखी होते हैं। कुधर=पर्वत, कैलास। सोम=चन्द्रमा। भिया रे=भैयारे
सलभ=पाँखा।

एक कहै कछु होउ सुफल भये, जीवन जनम हमारे ।
अवलोके भरि नयन आजु तुलसी के प्रानपियारे ॥१२॥६९॥

जनक बिलोकि बार बार रघुबर को ।
मुनिपद सीस नाय आयसु असीस पाई,
एई बातैं कहत गवन कियो घर को ॥१॥
नींद न परति राति प्रेम पन एक भाँति,
सोचत सकोचत बिरञ्चि हरि हर को ।
तुम्हते सुगम सब देव देखिबे को अब,
जस हंस किये जोगवत जुग पर को ॥२॥
ल्याये सङ्ग कौसिक सुनाये कहि गुनगन,
आये देखि दिनकर-कुल-दिनकर को ।
तुलसी तेऊ सनेह को सुभाउ बाउ मानौं,
चलदल को सो पात करै चित चर को ॥३॥७०॥

राग केदारा

रङ्ग-भूमि भोरेही जाइकै ।
राम लखन लखि लोग लूटिहैं, लोचन-लाभ अघाइकै ॥१॥
भूप-भवन घर घर पुर बाहर, इहै चरचा रही छाइकै ।
मगन मनोरथ मोद नारि नर, प्रेम-बिबस उठैं गाइकै ॥२॥
सोचत बिधि-गति समुझि परसपर, कहत बचन बिलखाइकै ।
कुँवर किसोर कठोर सरासन, असमञ्जस भयो आइकै ॥३॥
सुकृत सँभारि मनाइ पितर सुर, सीस ईसपद नाइकै ।
रघुबर-कर धनु-भङ्ग चहत सब, अपनो सो हित चित लाइकै ॥४॥
लेत फिरत कनसुई सगुन सुभ, बूझत गनक बोलाइकै ।
सुनि अनुकूल मुदित मन मानहुँ, धरत धीरजहि धाइकै ॥५॥

चलदल=पीपल का वृक्ष । चर=चलायमान, चञ्चल, चैतन्य । कनसुई=आहट, टोह । गनक=ज्योतिषी ।

कौसिक-कथा एक एकनि सोँ, कहत प्रभाउ जनाइकै।
सीय-राम सञ्जोग जानियत, रच्यो बिरञ्चि बनाइकै ॥६॥
एक सराहि सुबाहु-मथन बर, बाहु उछाह बढ़ाइकै।
सानुज राज़-समाज बिराजिहैँ, राम पिनाक चढ़ाइकै ॥७॥
बड़ी सभा बड़ो लाहु बड़ो जस, बड़ी बड़ाई पाइकै।
को सोहिहै और को लायक, रघुनायकहि बिहाइकै ॥८॥
गवनिहैँ गँवहिँ गँवाइ गरब गृह, नृपकुल बलहि लजाइकै।
भली भाँति साहब तुलसी के, चलिहैँ ब्याहि बजाइकै ॥९॥७१॥

राग टोड़ी

भोर फूल बीनबे को गये फुलवाईं हैँ।
सीसनि टिपारे-उपवीत पीत पट कटि,
दोना बाम करनि सलोने भे सवाइ हैँ ॥१॥
रूप के अगार भूप के कुमार सुकुमार,
गुरु के प्रानअधार सङ्ग सेवकाई हैँ।
नीच ज्योँ टहल करैँ राखैँ रुख अनुसरैँ,
कौसिक से कोही बस किये दुहुँ भाई हैँ ॥२॥
सखिन सहित तेहि औसर बिधि के सञ्जोग,
गिरजा जू पूजिबे को जानकी जू आई हैँ।
निरखि लखन राम जाने रितुपति काम,
मोहि मानोँ मदन मोहनी मूड़ नाई हैँ ॥३॥
राघौजू-श्रीजानकी-लोचन मिलिबे को मोद,
कहिबे को जोग न मैँ बातैँ सी बनाई हैँ।
स्वामी सीय सखिन्ह लखन तुलसी को तैसो,
तैसो मन भयो जाकी जैसियै सगाई हैँ ॥४॥७२॥

बजाइ कै=डंका देकर। टिपारे=राजकुमारों की टोपी। उपवीत=जनेऊ। कोही=क्रोधी। रितुपति=बसन्त। मूड़=मूठ, टोना। सगाई=सम्बन्ध, नाता।

पूजि पारबती भले भाय पाँय परिकै।
सजल सुलोचन सिथिल तनु पुलकित,
आवै न बचन मन रह्यो प्रेम भरिकै ॥१॥
अन्तरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोँहैाँ,
कही चाहैाँ बात मातु अन्त तौ हैाँ लरिकै।
मूरति कृपालु मञ्जु माल दै बोलत भई,
पूजो मनकामना भावतो बर बरिकै ॥२॥
राम कामतरु पाइ बेलि ज्योँ बौँड़ी बनाइ,
माँगि कोखि तोखि पोखि फैलि फूलि फरिकै।
रहैागी कहैागी तब साँची कही अम्बा सिय,
गहे पाँय द्वै उठाय माथे हाथ धरिकै ॥३॥
मुदित असीस सुनि सीस नाइ पुनि पुनि,
बिदा भई देवी सोँ जननि डर डरिकै।
हरषीं सहेली भयो भावतो गावतीँ गीत,
गवनी भवन तुलसीस हियो हरि कै ॥४॥७३॥

रङ्गभूमि आये दसरथ के किसोर हैँ।
पेखनो सो पेखन चले हैँ पुर-नर-नारि,
बारे बूढ़े अन्ध पङ्गु करत निहोर हैँ ॥१॥
नील-पीत-नीरज-कनक-मरकत-घन,
दामिनी-बरन तनु रूप के निचोरे हैँ।
सहज सलोने राम लखन ललित नाम,
जैसे सुने तैसेई कुँवर सिरमौर हैँ ॥२॥
चरन-सरोज चारु जङ्घा जानु उरु कटि,
कन्धर बिसाल बाहु बड़े बरजोर हैँ।

सोँहैाँ=सामने, सेमैँ। बर=दूलह। बरिकै=पाकर। पेखनो=तमाशा। निहोर=विनती प्रार्थना। निचोर=सार, तत्व। सिरमौर=सिरताज। जानु=घुटना। उरु=विस्तीर्ण, रान।

नीके कै निषङ्ग कसे कर कमलनि लसै,
बान बिसिषासन मनोहर कठोर हैं ॥३॥
काननि कनकफूल उपवीत अनुकूल,
पियरे दुकूल बिलसत आछे छोर हैं।
राजिव-नयन बिधुबदन टिपारे सिर,
नख सिख अङ्गनि ठगौरी ठौर ठौर हैं ॥ ४ ॥
सभा-सरवर लोक-कोकनद-कोकगन,
प्रमुदित मन देखि दिनमनि भोर हैं।
अबुध असैले मन-मैले महिपाल भये,
कछुक उलूक कछु कुमुद चकोर हैं ॥ ५ ॥
भाई सोँ कहत बात कौसिकहि सकुचात,
बोल घनघोर से बोलत थोर थोर हैं।
सनमुख सबहि बिलोकत सबहि नीके,
कृपा सोँ हेरत हँसि तुलसी की ओर हैं ॥ ६ ॥ ७४ ॥

एई राम लखन जे मुनि सँग आये हैं।
चौतनी चोलना काछे सखि! सोहैं आगे पाछे,
आछे हुते आछे आछे आछे भाय भाये हैं ॥ १ ॥
साँवरे गोरे सरीर महाबाहु महाबीर,
कटि तून तीर धरे धनुष सुहाये हैं।
देखत कोमल कल अतुल बिपुल बल,
कैासिक कोदंड-कला कलित सिखाये हैं ॥ २ ॥
इन्हहीं ताड़का मारी गैातम की तिय तारी,
भारी भारी भूरि भट रन बिचलाये हैं।
रिषि-मख रखवारे दसरथ के दुलारे,
रङ्गभूमि पगुधारे जनक बुलाये हैं ॥ ३ ॥

कनकफूल=कान का गहना। दुकूल=वस्त्र। छोर=किनारा। असैले=कुमार्गी। च
ढीला कुरता। काछे=पहने, सँवारे। कलित=सुन्दर।

इन्हके बिमल गुन गनत पुलकि तनु,
सतानन्द कौसिक नरेसहि सुनाये हैं ।
प्रभुपद मन दिये सो समाज चित्त किये,
हुलसि हुलसि हिये तुलसिहुँ गाये हैं ॥ ४ ॥ ७५ ॥

राग कान्हरा

सीय स्वयम्बर माई दोउ भाई आये देखन ।
सुनत चलीं प्रमदा प्रमुदित मन,
प्रेम पुलकि तनु मनहुँ मदन मञ्जुल पेखन ॥
निरखि मनोहरताई सुख पाई कहैं एक एक सोँ,
भूरि भाग हम धन्य आलि ! ए दिन ए खन ।
तुलसी सहज सनेह सुरग सब सो समाज,
चित-चित्रसार लागी लेखन ॥ ७६ ॥

राग गौरी

राम लखन जब दृष्टि परे री !
अवलोकत सब लोग जनकपुर, मानोँ बिधि बिबिध बिदेह करे री ॥१॥
धनुषजज्ञ कमनीय अवनि तल, कौतुकही भये आय खरे री ।
छबि सुरसभा मनहुँ मनसिज के, कलित कलपतरु रूख फरे री ॥२॥
सकल काम बरषत मुख निरखत, करषत चित हित हरष भरे री ।
तुलसी सबै सराहत भूपहि, भले पैंत पासे सुढर ढरे, री ॥ ३ ॥ ७७ ॥

नेकु सुमुखि चित लाइ चितौ री ।
राजकुँवर-मूरति रचिबे की रुचि, सुचिबिरञ्चि स्रम किया है कितौ री ॥१॥
नख सिख सुन्दरता अवलोकत, कह्यो न परत सुख होत जितौ री ।
साँवर-रूप-सुधा भरिबे कहँ नयन-कमल-कल-कलस रितौ री ॥२॥
मेरे जान इन्हैं बोलिबे कारन चतुर जनक ठयो ठाट इतौ री ।
तुलसी प्रभु भञ्जिहैं सम्भु-धनु, भूरि भाग सिय मातु पितौ री ॥३॥७८॥

प्रमदा = स्त्री । खन = क्षण । पैंत=दाँव । रितौ=खाली ।

राग सारङ्ग

जबतेँ राम लखन चितये री।
रहे इकटक नर-नारि जनकपुर, लागत पलक कलप बितये री ॥ १ ॥
प्रेम-बिबस माँगत महेस सोँ, देखत ही रहिये नित ये री।
कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि, कै ए नयन जाहु जित ये री ॥ २ ॥
कोउ समुझाइ कहै किन भूपहि, बड़े भाग आये इत ये री।
कुलिस कठोर कहाँ सङ्कर-धनु, मृदु मूरति किसोर कित ये री ॥ ३ ॥
बिरचत इन्हहिँ बिरञ्चि भुवन सब, सुन्दरता खोजत रितये री ॥
तुलसिदास ते धन्य जनम जन, मन क्रम बच जिन्हके हित ये री ॥ ४ ॥ ७९ ॥

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो री।
जेहि प्रसाद अवधेस-कुँवर दोउ, नगर-लोग अवलोकि जियो री ॥ १ ॥
मानि प्रतीति कहे मेरे तैँ कब, सँदेह-बस करति हियो री।
तैाैलाँ है यह सम्भु सरासन, श्रीरघुबर जौलौँ न लियो री ॥ २ ॥
जेहि बिरञ्चि रचि सीय सँवारी, औ रामहिँ ऐसो रूप दियो री।
तुलसिदास तेहि चतुर बिधाता, निज कर यह सञ्जोग सियो री ॥ ३ ॥ ८० ॥

अनुकूल नृपहि सूलपानि हैँ।
नीलकंठ कारुन्यसिन्धु हर, दीनबन्धु दिनदानि हैँ ॥ १ ॥
जो पहिलेहि पिनाक जनक कहँ, गये सैाँपि जिय जानि हैँ।
बहुरि त्रिलोचन लोचन के फल, सबहि सुलभ किये आनि हैँ ॥ २ ॥
सुनियत भव-भावते राम हैँ, सिय भावती-भवानि हैँ।
परखत प्रीति प्रतीति पयज पनु, रहे काज ठटु ठानि हैँ ॥ ३ ॥
भये बिलोकि बिदेह नेहबस, बालक बिनु पहिचानि हैँ।
होत हरे होने बिरवनि दल, सुमति कहति अनुमानि हैँ ॥ ४ ॥
देखियत भूप भोर के से उडुगन, गरत गरीब गलानि हैँ।
तेज प्रताप बढ़त कुँवरन को, जदपि सँकोची बानि हैँ ॥ ५ ॥

रितये=खाली कर दिया। सियो=मिलाया, बनाया। अनुकूल=प्रसन्न। सूलपानि=शिव। दिनदानि=सदा के दानी, रोज दान देनेवाले। त्रिलोचन=शङ्कर। भव=महेश। भावते=प्यारे।

बय किसोर बरजोर बाहुबल, मेरु मेलि गुन तानि हैं।
अवसि राम राजीव-बिलोचन, सम्भु सरासन भानि हैं ॥ ६ ॥
देखिहैं ब्याह-उछाह नारि-नर, सकल-सुमङ्गल-खानि हैं।
भूरि भाग तुलसी तेऊ जे, सुनिहैं गाइहैं बखानि हैं ॥ ७ ॥ ८१ ॥

राग केदारा

रामहिं नीके कै निरखि सुनैनी !
मनसहुँ अगम समुझि यह अवसरु, कत सकुचति पिकबैनी ॥१॥
बड़े भाग मख-भूमि प्रगट भइ, सीय सुमङ्गल-ऐनी।
जा कारन लोचन-गोचर भइ, मूरति सब-सुखदैनी ॥ २ ॥
कुलगुरु तिय के मधुर बचन सुनि, जनक-जुवति मति-पैनी।
तुलसी सिथिल देह सुधि बुधि करि, सहज-सनेह-बिषैनी ॥३॥८२॥

मिलो बरु सुन्दर सुन्दरि सीतहि लायक,
साँवरो सुभग सोभा हूँ को परम सिँगारु।
मनहूँ को मन मोहै उपमा को को है ? सोहै,
सुखमासागर-सङ्ग अनुज राजकुमारु ॥१॥
ललित सकल अङ्ग तनु धरे कै अनङ्ग,
नैननि को फल कैधौं सिय को सुकृत-सारु,
सरद-सुधा-सदन-छबिहि निन्दै बदन,
अरुन आयत नवनलिन-लोचन चारु ॥२॥
जनक-मन की रीति जानि बिरहित प्रीति,
ऐसीऔ मूरति देखे रह्यो पहिलो बिचारु।
तुलसी नृपहि ऐसो कहि न बुझावै कोउ,
पन औ कुँवर दोऊ प्रेम की तुला धौं तारु॥ ३ ॥ ८३ ॥

देखि देखि री ! दोउ राजसुवन।
गैार स्याम सलोने लोने लोने लोयननि,

भानिहैं=तोड़ेंगे। पैनी=चोखी। आयत=बड़े। तारु=तौल।

जिन्हकी सोभा तें सोहै सकल भुवन ॥ १ ॥
इन्हहीं ताड़का मारी मग मुनि-तिय तारी,
रिषिमख राख्यो रन दले हैं दुवन ।
तुलसी प्रभु के अब जनकनगर-नभ,
सुजस-बिमल-बिधु चहत उवन ॥ २ ॥८४॥

राग टोड़ी

राजा रङ्गभूमि आज बैठे जाइ जाइकै ।
आपने आपने थल आपने आपने साज,
आपनी आपनी बर बानिक बनाइ कै ॥ १ ॥
कैासिक सहित राम लखन ललित नाम,
लरिका ललाम लोने पठये बुलाइकै ।
दरसलालसा-बस लोग चले भाय भले,
बिकसत-मुख निकसत धाइ धाइ कै ॥ २ ॥
सानुज सानन्द हिये आगे ह्वै जनक लिये,
रचना रुचिर सब सादर देखाइ कै ।
दिये दिव्य आसन सुपास सावकास अति,
आछे आछे बीछे बीछे बिछौना बिछाइ कै ॥ ३ ॥
भूपति किसोर दुहुँ ओर बीच मुनिराउ,
देखिबे को दाउँ देखो देखिबो बिहाइ कै ।
उदय-सैल सोहैं सुन्दर कुँवर जोहैं,
मानैां भानु भोर भूरि किरनि छिपाइ कै ॥ ४ ॥
कौतुक कोलाहल निसान गान पुर नभ,
बरषत सुमन बिमान रहे छाइ कै ।
हित अनहित रत बिरत बिलोकि बाल,
प्रेम-मोद-मगन जनम-फल पाइ कै ॥ ५ ॥

दुवन=राक्षस । बानिक=बनावट, ठाटबाट । भाइ=भाव, प्रेम ।

राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ,
सतानन्द ल्याये सिय सिविका चढ़ाइ कै।
रूप-दीपिका निहारि मृग-मृगी नर-नारि,
बिथके बिलोचन निमेषैं बिसराइ कै ॥ ६ ॥
हानि लाहु अनख उछाहु बाहुबल कहि,
बन्दि बोले बिरद अकस उपजाइ कै।
दीप दीप के महीप आये सुनि पैज पन,
कीजै पुरुषारथ को अवसर भो आइ कै ॥ ७ ॥
आनाकानी कठहँसी मुँहा-चाहीं होन लगी,
देखि दसा कहत बिदेह बिलखाइ कै।
घरनि सिधारिये सुधारिये आगिलो काज,
पूजि पूजि धनु कीजै बिजय बजाइ कै ॥ ८ ॥
जनक-बचन छुये बिरवा लजारू के से,
बीर रहे सकल सकुचि सिर नाइ कै।
तुलसी लखन माषे रोषे राखे रामरुख,
भाषे मृदु परुष सुभायन रिसाइ कै ॥ ९ ॥ ८५ ॥

भूपति बिदेह कही नीकियै जो भई है।
बड़े ही समाज आजु राजनि की लाज-पति,
हाँकि आँक एक ही पिनाक छीनि लई है ॥ १ ॥
मेरो अनुचित न कहत लरिकाई-बस,
पन-परमिति और भाँति सुनि गई है।
नतरु प्रभु प्रताप उतरु चढ़ाय चाप,
देतो पै देखाइ बल फल पापमई है ॥ २ ॥
भूमि के हरैया उखरैया भूमि-धरनि के,
बिधि बिरचे प्रभाउ जाको जग-जई है।

सिविका=पालकी। अकस=लाग। आनाकानी=टालमटूल, सुनी अनसुनी। कठहँसी=दिखौआ हँसी। मुँहाचाहीं=काना फूसी। परुष=कड़े वचन।

बिहँसि हिये हरषि हटके लखन राम,
सोहत सकोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥
सहमी सभा सकल जनक भये बिकल,
राम लखि कौसिक असीस आज्ञा दई है।
तुलसी सुभाय गुरुपाँय लागि रघुराज,
रिषिराज की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८६ ॥

सोचत जनक पोच पेच परि गई है।
जोरि कर-कमल निहोरि कहैं कौसिक सों,
आयसु भो राम को सो मेरे दुचितई है ॥ १ ॥
बान जातुधानपति भूप दीप सातहूँ के,
लोकप बिलोकत पिनाक भूमि लई है।
जोतिलिङ्ग कथा सुनि जाको अन्त पाये बिनु,
आये बिधि हरि हारि सोई हाल भई है ॥ २ ॥
आपुही बिचारिये निहारिये सभा की गति,
बेद-मरजाद मानौ हेतुबाद हई है।
इन्हके जितेहैं मन सोभा अधिकानी तन,
मुखन की सुखमा सुखद सरसई है ॥ ३ ॥
रावरो भरोसो बल कै है कोऊ किये छल,
कैधौं कुल को प्रभाव कैधौं लरिकई है।
कन्या कल-कीरति बिजय बिस्व की बटोरि,
कैधौं करतार इन्हहीं को निरमई है ॥ ४ ॥
पन को न मोह न बिसेष चिन्ता सीता हू की,
लुनिहै पै सोई सोई जोई जेहि बई है।
रहै रघुनाथ की निकाई नीको नीके नाथ,

नारिनई=गरदन नीची हुई। पोचपेच=बुरी उलझन। जोतिलिङ्ग=जब शिव का ज्योतिलिंङ्ग प्रकट हुआ तब ब्रह्मा और विष्णु अन्त लेने को घूमते ही रह गये, पर अन्त नहीं मिला। हेतुवाद=नास्तिकपन। हई=नष्ट किया। सरसई=अधिकता।

हाथ सों तिहारे करतूति जाको नई है ॥५॥
कहि साधु साधु गाधि-सुवन सराहे राउ,
महाराज ! जानि जिय ठीक भली दई है।
हरषे लखन हरषाने बिलखाने लोग,
तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है ॥६॥८७॥

सुजन सराहैं जो जनक बात कही है।
रामहि सोहानी जानि मुनिमन-मानी सुनि,
नीच महिपावली दहन बिनु दही है ॥१॥
कहैं गाधिनन्दन मुदित रघुनन्दन सों,
नृपगति अगह गिरा न जाति गही है।
देखे सुने भूपति अनेक झूँठे झूँठे नाम,
साँचे तिरहुतिनाथ साखि देति मही है ॥२॥
रागऊ बिराग भोग जोग जोगवत मन,
जोगी जागबलिक-प्रसाद सिद्धि लही है।
ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरहू तें,
सहज समाधि निरुपाधि निरबही है ॥३॥
ऐसेउ अगाध बोध रावरे सनेह-बस,
बिकल बिलोकित दुचितई सही है।
कामधेनु-कृपा हुलसानी तुलसीस उर,
पन-सिसु हेरि मरजाद बाँधी रही है ॥४॥८८॥

रिषिराज राजा आजु जनक समान को ?।
आपु यहि भाँति प्रीति सहित सराहियत,
रागी औ बिरागी बड़भागी ऐसो आन को ? ॥१॥
भूमि भोग करत अनुभवत जोग-सुख,
मुनि-मन-अगम अलख गति जान को ?

साधु साधु=सत्य सत्य। जई=विजयी। अनुभवत=अनुभव करते हैं।

गुरु हर-पद-नेह गेह बसि भो बिदेह,
अगुन-सगुन-प्रभु-भजन-सयान को ? ॥२॥
कहनि रहनि एक बिरति बिवेक नीति,
बेद-बुध सम्मत पथी न निरवान को ।
गाँठि बिनु गुन की कठिन जड़ चेतन की,
छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥३॥
सुनि रघुबीर की बचन-रचना की रीति,
भयो मिथिलेस मानो दीपक बिहान को ।
मिट्यो महा मोह जी को छूट्यो पोच सोच सी को,
जान्यो अवतार भयो पुरुष-पुरान को ॥४॥
सभा नृप गुरु नर-नारि पुर नभ सुर,
सब चितवत मुख करुनानिधान को ।
एकै एक कहत प्रगट एक प्रेम-बस,
तुलसीस तोरिये सरासन इसान को ॥५॥८९॥

राग मारू ।

सुनो भैया भूप सकल दै कान ।
बज्ररेख गजदसन जनक-पन, बेद-बिदित जग जान ॥१॥
घोर कठोर पुरारि-सरासन, नाम प्रसिद्ध पिनाक ।
जो दसकंठ दियो बाँवों जेहि, हर-गिरि कियो है मनाक ॥२॥
भूमि-भाल भ्राजत न चलत सो, ज्यों बिरञ्चि को आँक ।
धनु तोरै सोई बरै जानकी, राउ होइ की राँक ॥३॥
सुनि आमरषि उठे अवनीपति, लगे बचन जनु तीर ।
टरै न चाप करैं अपनी सी, महा महा बलधीर ॥४॥
नमित-सीस सोचहिं सलज्ज सब, श्रीहत भये सरीर ।
बोले जनक बिलोकि सीय तन, दुखित सरोष अधीर ॥५॥

निरवान=मोक्ष । पुरुषपुरान=परमात्मा, नारायण। हरगिरि=कैलास। मनाक=थोड़ा, तुच्छ। आँक=अक्षर, लिखावट। राँक=दरिद्र। आमरषि=क्रोध करके। तन=ओर।

सप्त दीप नव खंड भूमि के, भूपति बृन्द जुरे ।
बड़ो लाभ कन्या कीरति को, जहँ तहँ महिप मुरे ॥६॥
डग्यौ न धनु जनु बीर-बिगत महि, किधौं कहूँ सुभट दुरे ।
रोषे लखन बिकट भृकुटी करि, भुज अरु अधर फुरे ॥७॥
सुनहु भानुकुल-कमल-भानु ! जो, अब अनुसासन पावौं ।
का बापुरो पिनाक मेलि गुन, मन्दर मेरु नवावौं ॥८॥
देखौ निज किङ्कर को कौतुक, क्यौं कोदंड चढ़ावौं ।
लै धावौं भञ्जौं मृनाल ज्यौं, तौ प्रभु अनुग कहावौं ॥९॥
हरषे पुर-नर-नारि सचिव नृप, कुँवर कहे बर बैन ।
मृदु मुसकाइ राम बरज्यौ प्रिय, बन्धु नयन की सैन ॥१०॥
कौसिक कह्यौ उठहु रघुनन्दन जगबन्दन बलऐन ।
तुलसिदास प्रभु चले मृगपति ज्यौं, निज भगतनि सुखदैन ॥११॥९०॥

जबहिँ सब नृपति निरास भये ।
गुरुपद-कमल बन्दि रघुपति तब, चाप-समीप गये ॥१॥
स्याम-तामरस-दाम-बरन बपु, उर भुज नयन बिसाल ।
पीत बसन कटि कलित कंठ सुन्दर सिन्धुर-मनि-माल ॥२॥
कल कुंडल पल्लव प्रसून सिर, चारु चौतनी लाल ।
कोटि-मदन-छबि-सदन बदन-बिधु, तिलक मनोहर भाल ॥३॥
रूप अनूप बिलोकत सादर, पुरजन राजसमाज ।
लखन कह्यौ थिर होहु धरनिधरि, धरनि धरनिधर आज ॥४॥
कमठ कोल दिग-दन्ति सकल अँग, सजग करहु प्रभु-काज ।
चहत चपरि सिव-चाप चढ़ावन, दसरथ को जुवराज ॥५॥
गहि करतल मुनि पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो ।
नृपगन-मुखनि समेत नमित करि, सजि सुख सबहि दियो ॥६॥

फुरे=फरकने लगे । अनुग=सेवक । सैन=इशारा । तामरस=कमल । दाम=माला । दिगदन्ति=दिग्गज ।

आकरष्यो सिय-मन समेत हरि, हरष्यो जनक-हियो।
भंज्यौ भृगुपति-गर्व सहित तिहुँ, लोक बिमोह कियो ॥७॥
भयो कठिन कोदंड-कोलाहल, प्रलय-पयोद समान।
चौँके सिव बिरञ्चि दिसि नायक, रहे मूँदि कर कान ॥८॥
सावधान ह्वै चढ़े बिमाननि, चले बजाइ निसान।
उमगि चल्यौ आनन्द नगर नभ, जयधुनि मङ्गलगान ॥९॥
बिप्र-बचन सुनि सखी सुआसिनि, चलीं जानकिहि ल्याइ।
कुँवर निरखि जयमाल मेलि उर, कुँवरि रही सकुचाइ ॥१०॥
बरसहिं सुमन असीसहिं सुर मुनि, प्रेम न हृदय समाइ।
सीय राम की सुन्दरता पर, तुलसिदास बलि जाइ ॥११॥९१॥

राग मलार

जब दोउ दसरथ कुँवर बिलोके।
जनक-नगर नर-नारि मुदित मन, निरखि नयन पल रोके ॥१॥
बय किसोर घन-तड़ित-बरन तनु, नखसिख अङ्ग लोभारे।
दै चित कै हित लै सब छबि-बित, बिधि निज हाथ सँवारे ॥२॥
सङ्कट नृपहि सोच अति सीतहि, भूप सकुचि सिर नाये।
उठे राम रघुकुल-कल-केहरि, गुरु अनुसासन पाये ॥३॥
कौतुक ही कोदंड खंडि प्रभु, जय अरु जानकि पाई।
तुलसिदास कीरति रघुपति की, मुनिन्ह तिहूँ पुर गाई ॥४॥९२॥

राग टोड़ी

मुनि-पदरेनु रघुनाथ माथे धरी है।
रामरुख निरखि लखन की रजाइ पाइ,
धरा धरा-धरनि सुसावधान करी है ॥१॥

लोभारे=लुभावने। रजाइ=आज्ञा। धरा=धरती। धराधरनि=पर्वतों को।

सुमिरि गनेस गुरु गौरि हर भूमिसुर,
सोचत सकोचत सकोची बानि खरी है ।
दीनबन्धु कृपासिन्धु साहसिक सीलसिन्धु,
सभा को सकोच कुलहू की लाज परी है ॥२॥
पेषि पुरुषारथ परखि पन पेम नेम,
सिय हिय की बिसेषि बड़ी खरभरी है ।
दाहिनो दियो पिनाक सहमि भयो मनाक,
महाब्याल बिकल बिलोकि जनु जरी है ॥ ३ ॥
सुर हरषत बरषत फूल बार बार,
सिद्धि मुनि कहत सगुन सुभ घरी है ।
रामबाहु-बिटप बिलास बौंड़ी देखियत,
जनक-मनोरथ कलपबेलि फरी है ॥ ४ ॥
लख्यौ न चढ़ावत न तानत न तोरत हू,
घोर धुनि सुनि सिव की समाधि टरी है ।
प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत सुख,
एक ही सुलाभ सबही की हानि हरी है ॥ ५ ॥ ९३ ॥

राग सारङ्ग

राम कामरिपु-चाप चढ़ायो ।
मुनिहिँ पुलक आनन्द नगर नभ, निरखि निसान बजायो ॥ १ ॥
जेहि पिनाक बिनु नाक किये नृप, सबहि बिषाद बढ़ायो ।
सोइ प्रभु कर परसत टूट्यो जनु, हुतो पुरारि पढ़ायो ॥ २ ॥
पहिराई जयमाल जानकी, जुवतिन्ह मङ्गल गायो ।
तुलसी सुमन बरषि हरषे सुर, सुजस तिहूँ पुर छायो ॥ ३ ॥ ९४ ॥

जरी=जड़ी ।

राग टोड़ी

जनक मुदित मन टूटत पिनाक के।
बाजे हैं बधावने सुहावने मङ्गल-गान,
भयो सुख एकरस रानी राजा राँक के॥ १॥
दुन्दुभी बजाइ गाइ हरषि बरषि फूल,
सुरगन नाचैं नाच नायकहू नाक के।
तुलसी महीस देखे दिन रजनीस जैसे,
सूने परे सून से मनो मिटाये आँक के॥ २॥ ९५॥

लाज तोरि साजि साज राजा राढ़ रोषे हैं।
कहा भो चढ़ाये चाप व्याह ह्वैहै बड़े खाये,
बोलैं खोलैं सेल असि चमकत चोखे हैं॥ १॥
जानि पुरजन त्रसे धीर दै लखन हँसे,
बल इनको पिनाक नीके नापे जोखे हैं।
कुलहि लजावैं बाल बालिस बजावैं गाल,
कैधौं कूर कालबस तमकि त्रिदोषे हैं॥ २॥
कुँवर चढ़ाई भौंहैं अब को बिलोकै सोहैं,
जहँ तहँ भे अचेत खेत के से धोखे हैं।
देखे नर-नारि कहैं साग खाइ जाये माइ,
बाहु पीन पाँवरनि पीना खाइ पोखे हैं॥ ३॥
प्रमुदित-मन लोक-कोकनद-कोकगन,
राम के प्रताप-रवि सोच-सर सोखे हैं
तब के देखैया तोषे तब के लोगनि भले,
अब के सुनैया साधु तुलसिहुँ तोषे हैं॥ ४॥ ९६॥

जयमाल जानकी जलजकर लई है।

नाक=मर्यादा। महीस=राजा। आँक=अक्षर। राढ़=मूर्ख, गँवार। बड़े खाये=बड़ी कठिनता से। बालिस=मूर्ख, नासमझ। खेत के धोखे=पशु पक्षियों को डराने के लिये खेत में खड़ा किया धोखे का पुतला। पीना=तिल की खली।

सुमन सुमङ्गल सगुन की बनाइ मञ्जु,
मानहुँ मदनमाली आपु निरमई है ॥ १ ॥
राज-रुख लखि गुरु भूसुर सुआसिनिन्हि,
समय समाज की ठवनि भली ठई है।
चलीं गान करत निसान बाजे गहगहे,
लहलहे लोयन सनेह सरसई है २ ॥
हनि देव दुन्दुभी हरषि बरषत फूल,
सफल मनोरथ भो सुख सुचितई है।
पुरजन परिजन रानी राउ प्रमुदित,
मनसा अनूप राम-रूप-रङ्ग रई है ॥ ३ ॥
सतानन्द सिख सुनि पाँय परि पहिराई,
माल सिय पिय-हिय सोहत सो भई है।
मानस तें निकसि बिसाल सु तमाल पर,
मानहुँ मरालपाँति बैठी बनि गई है ॥ ४ ॥
हितनि के लाह की उछाह की विनोद मोद,
सोभा की अवधि नहिँ अब अधिकई है।
याते बिपरीत अनहितन की जानि लीबी,
गति कहे प्रगट खुनिस खासी खई है ॥ ५ ॥
निज निज बेद की सप्रेम जोग-छेम-मई,
मुदित असीस विप्र बिदुषनि दई है।
छबि तेहि काल की कृपालु सीतादूलह की,
हुलसति हिये तुलसी के नित नई है ॥ ६ ॥ ९७ ॥

राग केदारा

लेहु री लोचननि को लाहु।
कुँवर सुन्दर साँवरो सखि, सुमुखि! सादर चाहु ॥ १ ॥

ठवनि=चाल। खुनिस=रिस। खई=झगड़ा टंटा। चाहु=देखु।

खंडि हर-कोदंड ठाढ़े, जानु लम्बित बाहु।
रुचिर उर जयमाल राजति, देत सुख सब काहु ॥ २ ॥
चितै चित हित-सहित नखसिख, अङ्ग-अङ्ग-निबाहु।
सुकृत निज सियरामरूप, बिरञ्चि-मतिहि सराहु ॥ ३ ॥
मुदित मन बरबदन-सोभा, उदित अधिक उछाहु।
मनहुँ दूरि कलङ्क करि ससि, समर सूद्यो राहु ॥ ४ ॥
नयन सुखमा-अयन हरत, सरोज सुन्दरताहु।
बसत तुलसीदास-उरपुर, जानकी को नाहु ॥ ५ ॥ ९८ ॥

राग सारङ्ग।

भूप के भाग की अधिकाई।
टूट्यो धनुष मनोरथ पूज्यौ, बिधि सब बात बनाई ॥ १ ॥
तब तेँ दिन दिन उदय जनक को, जब तेँ जानकी जाई।
अब यहि ब्याह सफल भयो जीवन, त्रिभुवन बिदित बड़ाई ॥२॥
बारहि बार पहुनई ऐहैँ, राम लखन दोउ भाई।
एहि आनन्द मगन पुरबासिन्ह, देहदसा बिसराई ॥ ३ ॥
सादर सकल बिलोकत रामहिँ, काम-कोटि-छबि छाई।
यह सुखसमउ समाज एक मुख, क्योँ तुलसी कहै गाई? ॥४॥९९॥

राग सोरठ

मेरे बालक कैसे धैाँ मग निबहहिँगे?
भूख पियास सीत स्रम सकुचनि, क्योँ कौसिकहि कहहिँगे? ॥१॥
को भोर ही उबटि अन्हवैहै, काढ़ि कलेऊ दैहै?
को भूषन पहिराइ निछावरि, करि लोचन-सुख लैहै? ॥२॥
नयन निमेषनि ज्योँ जोगवैँ नित, पितु परिजन महँतारी।
ते पठये रिषि साथ निसाचर,-मारन मख रखवारी ॥ ३ ॥

कलङ्क=धब्बा। सूद्यो=नाश किया।

सुन्दर सुठि सुकुमार सुकोमल, काकपच्छ-धर दोऊ।
तुलसी निरखि हरषि उर लैहौं, बिधि ह्वैहै दिन सोऊ ? ॥४॥१००॥

रिषि नृप-सीस ठगौरी सी डारी।
कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि, अवरेब न समुझि सुधारी ॥ १॥
सिरिस-सुमन-सुकुमार कुँवर दोउ, सूर सरोष सुरारी।
पठये बिनहिं सहाय पयादेहि, केलि-बान तनुधारी ॥ २ ॥
अति सनेह कातरि माता कहै, सुनि सखि ! बचन दुखारी।
बादि बीर-जननी-जीवन जग, छत्रि-जाति-गति भारी ॥ ३ ॥
जो कहिहै फिरे राम लखन घर, करि मुनिमख-रखवारी।
सो तुलसी प्रिय मोहिं लागिहै, ज्यों सुभाय सुत चारी ॥४॥१०१॥

जब तेँ लै मुनि सङ्ग सिधाये।
राम लखन के समाचार सखि ! तब तेँ कछुअ न पाये ॥ १ ॥
बिनु पानहीं गमन फल भोजन, भूमि सयन तरुछाहीं।
सर सरिता जलपान सिसुन के, सङ्ग सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥
कौसिक परम कृपालु परमहित, समरथ सुखद सुचाली।
बालक सुठि सुकुमार सकोची, समुझि सोच मोहिं आली ! ॥ ३ ॥
बचन सप्रेम सुमित्रा के सुनि, सब सनेह-बस रानी।
तुलसी आइ भरत तेहि औसर, कही सुमङ्गल-बानी ॥ ४ ॥ १०२ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाये।
पितु-समीप सब समाचार सुनि, मुदित मातु पहँ आये ॥ १ ॥
सजल नयन तनु पुलक अधर फरकत लखि प्रीति सुहाई।
कौसल्या लिये लाइ हृदय बलि, कहौ कछु है सुधि पाई ? ॥ २ ॥
सतानन्द उपरोहित अपने, तिरहुति-नाथ पठाये।
खेम कुसल रघुबीर-लखन की, ललित पत्रिका ल्याये ॥ ३ ॥

सुठि=अतिशय। नेवनि=मंत्री, नायब। अवरेब=उलझन।

दलि ताड़ुका मारि निसिचर मख, राखि विप्र-तिय तारी ।
दै विद्या लै गये जनकपुर, हैँ गुरु सङ्ग सुखारी ॥ ४ ॥
करि पिनाक-पन सुता-स्वयम्बर, सजि नृप-कटक बटोरयो ।
राजसभा रघुबर मृनाल ज्योँ, सम्भु-सरासन तोरयो ॥ ५ ॥
योँ कहि सिथिल सनेह बन्धु दोउ, अम्ब अङ्क भरि लीन्हेँ ।
बार बार मुख चूमि चारु मनि, बसन निछावरि कीन्हेँ ॥ ६ ॥
सुनत सुहावनि चाह अवध घर, घर आनन्द बधाई ।
तुलसिदास रनिवास रहस-बस, सखी सुमङ्गल गाई ॥ ७ ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा

राम लखन सुधि आई बाजै अवध बधाई ।
ललित लगन लिखि पत्रिका
उपरोहित के कर जनक-जनेस पठाई ॥ १ ॥
कन्या भूप विदेह की रूप की अधिकाई ।
तासु स्वयम्बर सुनि सब आये,
देस देस के नृप चतुरङ्ग बनाई ॥ २ ॥
पन पिनाक पवि मेरु तेँ गुरुता कठिनाई ।
लोकपाल महिपाल बान बानइत,
दसानन सके न चाप चढ़ाई ॥ ३ ॥
तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई ।
भञ्जि सरासन सम्भु को जग जय कल कीरति,
तिय तियमनि सिय पाई ॥ ४ ॥
पुर घर घर आनन्द महा सुनि चाह सुहाई ।
मातु मुदित मङ्गल सजैँ कहैँ मुनि,
प्रसाद भये सकल सुमङ्गल माई ॥ ५ ॥
गुरु आयसु मंडप रच्यो सब साज सजाई ।

जनेस=राजा । पन=प्रतिज्ञा । चाह=खबर ।

तुलसिदास दसरथ-बरात सजि,
पूजि गनेसहि चले निसान बजाई ॥ ६ ॥ १०४ ॥

राग केदारा

मन में मञ्जु मनोरथ हो री !।
सो हर-गौरि-प्रसाद एक तैं, कौसिक-कृपा चौगुनो भो री ! ॥ १ ॥
पन-परिताप चाप-चिन्ता-निसि, सोच-सकोच-तिमिर नहिँ थोरी ।
रविकुलरवि अवलोकि सभा-सर, हितचित-बारिज-बन बिकसो री ॥ २ ॥
कुँवर कुँवरि सब मङ्गलमूरति, नृप दोउ धरम धुरन्धर धोरी ।
राजसमाज भूरि-भागी जिन, लोचन-लाहु लह्यो एक ठौरी ॥ ३ ॥
ब्याह-उछाह राम-सीता को, सुकृत सकेलि बिरञ्चि रच्यो, री ।
तुलसिदास जानै सोइ यह सुख, जेहि उर बसति मनोहर जोरी ॥ ४ ॥ १०५ ॥

राजति राम जानकी जोरी ।
स्याम-सरोज जलद-सुन्दर बर, दुलहिनि तड़ित-बरन तनु गोरी ॥ १ ॥
ब्याह-समय सोहति बितान तर, उपमा कहुँ न लहति मति मोरी ।
मनहुँ मदन-मञ्जुल-मंडप महँ, छबि सिँगार सोभा इक ठौरी ॥ २ ॥
मङ्गलमय दोउ अङ्ग मनोहर, ग्रथित चूनरी पीत पिछौरी ।
कनककलस कहँ देत भाँवरी, निरखि रूप सारद भइ भोरी ॥ ३ ॥
इत बसिष्ठ मुनि उतहिँ सतानँद, बंस-बखान करैं दोउ ओरी ।
इत अवधेस उतहिँ मिथिलापति, भरत अङ्क सुख-सिन्धु हिलोरी ॥ ४ ॥
मुदित जनक रनिवास रहसबस, चतुर नारि चितवहिँ तृन तोरी ।
गान निसान बेदधुनि सुनि सुर बरसत सुमन हरष कहै को री ? ॥ ५ ॥
नयनन को फल पाइ प्रेम बस, सकल असीसत ईस निहोरी ।
तुलसी जेहि आनन्द-मगन मन, क्यों रसना बरनै सुख सो री ! ॥ ६ ॥ १०६ ॥

दूलह राम सीय दुलही री !

हो=था। धोरी=प्रधान, भार उठानेवाला। तर=नीचे। हिलोरी=लहर ली। मही=मथा, माठा।

घन-दामिनि-बर बरन हरन-मन, सुन्दरता नखसिख निबही री ॥१॥
ब्याह-बिभूषन-बसन-बिभूषित, सखि अवली लखि ठगि सी रही री।
जीवन-जनम-लाहु लोचन-फल, है इतनोइ लह्यो आजु सही री ॥ २ ॥
सुखमा सुरभि सिँगार-छीर दुहि, मयन अमिय-मय कियो है दही री।
मथि माखन सिय राम सँवारे, सकल-भुवन-छबि मनहुँ मही री ॥३॥
तुलसिदास जोरी देखत सुख, सोभा अतुल न जाति कही री।
रूप-रासि बिरची बिरञ्चि मनो, सिला लवनि रति-काम लही री ॥४॥ १०७॥

जैसे ललित लखनलाल लोने।
तैसिये ललित उरमिला परसपर, लखत सुलोचन कोने ॥ १ ॥
सुखमासार सिँगारसार करि, कनक रचे हैं तिहि सोने।
रूपप्रेम-परमिति न परत कहि, बिथकि रही है मति मैानै ॥ २ ॥
सोभा सील सनेह सोहावने, समउ केलिगृह गैाने।
देखि तियनि के नयन सफल भये, तुलसिदास हु के होने ॥ ३ ॥ १०८॥

राग बिलावल

जानकी-बर सुन्दर माई।
इन्द्रनील-मनि-स्याम सुभग अँग, अङ्ग मनोजनि बहु छबि छाई ॥१॥
अरुन चरन अङ्गुली मनोहर, नख दुतिवन्त कछुक अरुनाई।
कञ्जदलनि पर मनहुँ भैाम दस, बैठे अचल सु-सदसि बनाई ॥ २ ॥
पीन जानु उर चारु जटित मनि, नूपुर पद कल मुखर सोहाई।
पीतपराग भरे अलिगन जनु, जुगल जलज लखि रहे लोभाई ॥ ३ ॥
किङ्किनि कनक कञ्ज-अवली मृदु, मरकत सिखर मध्य जनु जाई।
गई न उपर सभीत नमित-मुख, बिकसि चहूँ दिसि रही लोनाई ॥४॥
नाभि गँभीर उदर रेखा बर, उर भृगु-चरन-चिन्ह सुखदाई।
भुज प्रलम्ब भूषन अनेक जुत, बसन पीत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥

सला=शीलावृत्ति। लवनि=लवाई, लहना, फसल काटने पर मज़दूरों को दिया जानेवाला बोझ। समौ=मङ्गल। सदसि=सभा।

यज्ञोपवीत बिचित्र हेममय, मुक्तामाल उरसि मोहिं भाई।
कन्द-तड़ित बिच जनु सुरपति-धनु, रुचिर बलाकपाँति चलि आई ॥६॥
कम्बु कंठ चिबुकाधर सुन्दर, क्यों कहौं दसनन की रुचिराई?
पदुमकोस महँ बसे बज्र मनो, निज सँग तड़ित-अरुन-रुचि लाई ॥७॥
नासिक चारु ललित लोचन भ्रू, कुटिल कचनि अनुपम छबि पाई।
रहे घेरि राजीव उभय मनो, चंचरीक कछु हृदय डराई ॥ ८ ॥
भाल तिलक कञ्चन किरीट सिर, कुंडल, लोल कपोलनि झाँई।
निरखहिं नारि-निकर बिदेहपुर, निमि नृप की मरजाद मिटाई ॥ ९ ॥
सारद सेस सम्भु निसि बासर, चिन्तत रूप न हृदय समाई।
तुलसिदास सठ क्यों करि बरनै, यह छबि निगम नेति कहि गाई ॥१०॥१०९॥

राग कान्हरा

भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी।
क्यों तोर्‌यौ कोमल कर-कमलनि, सम्भु-सरासन भारी? ॥१॥
क्यों मारीच सुबाहु महाबल, प्रबल ताड़का मारी?
मुनि-प्रसाद मेरे राम लखन की, बिधि बड़ि करवर टारी ॥२॥
चरनरेनु लै नयननि लावति, क्यों मुनिबधू उधारी?
कहौ धौं तात! क्यों जीति सकल नृप, बरी है विदेहकुमारी ॥३॥
दुसह-रोष-मूरति भृगुपति अति, नृपति-निकर-खयकारी।
क्यौं सौंप्यो सारङ्ग हारि हिय, करी है बहुत मनुहारी ॥४॥
उमँगि उमँगि आनन्द बिलोकति, बधुनसहित सुत चारी।
तुलसिदास आरती उतारति, प्रेम-मगन महँतारी ॥५॥११०॥

मुदित-मन आरती करैं माता।
कनक बसन मनि वारि वारि करि, पुलक प्रफुल्लित गाता ॥१॥

कन्द=बादल। तड़ित=बिजली। सुरपतिधनु=इन्द्रधनुष। लोल=हिलते डोलते। करवर=विघ्न,कठिनाई। खयकारी=नाश करनेवाले। मनुहारी=स्तुति।

पाँलागनि दुलहियन सिखावति, सरिस सासु सत-साता ।
देहिँ असीस ते बरिस कोटि लगि, अचल होउ अहिवाता ॥२॥
रामसीय-छबि देखि जुवतिजन, करहिँ परसपर बाता ।
अब जान्यो साँचहू सुनहु सखि ! कोबिद बड़ो बिधाता ॥३॥
मङ्गल-गान निसान नगर नभ, आनँद कह्यो न जाता ।
चिरजीवहु अवधेस-सुवन सब, तुलसिदास-सुखदाता ॥४॥१११॥

अयोध्या कांड

राग सोरठ

नृप कर जोरि कह्यो गुरु पाहीं ।
तुम्हरी कृपा असीस नाथ ! मेरी, सबै महेस निबाहीं ॥१॥
राम होहिं जुवराज जियत मेरे, यह लालच मन माहीं ।
बहुरि मोहि जियबे मरिबे की, चित चिन्ता कछु नाहीं ॥२॥
महाराज भलो काज बिचारयो, बेगि बिलम्ब न कीजै ।
बिधि दाहिनो होइ तौ सब मिलि, जनम-लाहु लुटि लीजै ॥३॥
सुनत नगर आनन्द बधावन, कैकेयी बिलखानी ।
तुलसीदास देवमायाबस, कठिन कुटिलता ठानी ॥४॥१॥

राग गौरी

सुनहु राम मेरे प्रानपियारे ।
वारौँ सत्यवचन स्रुति-सम्मत, जाते हौँ बिछुरत चरन तिहारे ॥१॥
बिनु प्रयास सब साधन को फल, प्रभु पायो सो तो नाहिँ सँभारे ।
हरि तजि धरमसील भयो चाहत, नृपति नारिबस सरबस हारे ॥२॥
रुचिर काँचमनि देखि मूढ़ ज्यौँ, करतल तेँ चिन्तामनि डारे ।

सतसाता=सात सौ। सरिस=बराबर। ठानी=दृढ़ता के साथ किसी कार्य को आरम्भ करना।

मुनि-लोचन-चकोर ससि-राघव, सिव-जीवनधन सोउ न बिचारे ॥३॥
जद्यपि नाथ तात मायाबस, सुखनिधान सुत तुम्हहिं बिसारे।
तदपि हमहिं त्यागहु जनि रघुपति, दीनबन्धु दयालु मेरे बारे ॥४॥
अतिसय प्रीति बिनीत बचन सुनि, प्रभु कोमल-चित चलत न पारे।
तुलसिदास जो रहौं मातु-हित, को सुर बिप्र भूमि भय टारे। ॥५॥२॥

रहि चलिये सुन्दर रघुनायक।
जो सुत तात-बचन-पालन-रत, जननिउ तात! मानिबे लायक ॥१॥
बेद-बिदित यह बानि तुम्हारी, रघुपति सदा सन्त-सुखदायक।
राखहु निज मरजाद निगम की, हौं बलिजाउँ धरहु धनुसायक ॥ २ ॥
सोक-कूप पुर परिहि मरिहि नृप, सुनि सँदेस रघुनाथ-सिधायक।
यह दूषन बिधि तोहिं होत अब, रामचरन-बियोग-उपजायक ॥ ३ ॥
मातु-बचन सुनि स्रवत नयन जल, कछु सुभाउ जनु नरतनु-पायक।
तुलसिदास सुरकाज न साध्यौ, तौ तो दोष मोहिं महि आयक ॥४॥३॥

राग सोरठ

राम! हौं कौन जतन घर रहिहौं?
बार बार भरि अङ्क गोद लै, ललन कौन सों कहिहौं ॥ १ ॥
एहि आँगन बिहरत मेरे बारे! तुम जो सँग सिसु लीन्हें
कैसे प्रान रहत सुमिरत सुत, बहु बिनोद तुम्ह कीन्हें ॥ २ ॥
जिन्ह स्रवननि कल बचन तिहारे, सुनि सुनि हौं अनुरागी।
तिन्ह स्रवननि बनगवन सुनति हौं, मो तें कौन अभागी? ॥ ३ ॥
जुग सम निमिष जाहिं रघुनन्दन, बदन कमल बिनु देखे।
जौ तनु रहै बरष बीते बलि, कहा प्रीति एहि लेखे? ॥ ४ ॥
तुलसीदास प्रेमबस श्रीहरि, देखि बिकल महँतारी।
गदगद कंठ नयन जल फिरि फिरि, आवन कह्यो मुरारी ॥ ५ ॥ ४ ॥

सिधायक=सिधारने का। पायक=पाने का। आयक=आने का।

राग बिलावल

रहहु भवन हमरे कहे कामिनि !
सादर सासु चरन सेवहु नित, जो तुम्हरे अति हित गृह-स्वामिनि ॥ १ ॥
राजकुमारि कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौ मृदु पद गजगामिनि ।
दुसह बात बरषा हिम आतप, कैसे सहिहौ अगनित दिन जामिनि ? ॥२॥
हौं पुनि पितु-आज्ञा प्रमान करि, ऐहौं बेगि सुनहु-दुति-दामिनि ।
तुलसिदास प्रभु-बिरह-बचन सुनि, सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥५॥

कृपानिधान सुजान प्रानपति, सङ्ग बिपिन हौं आवौंगी ।
गृह तें कोटि-गुनित सुख मारग, चलत साथ सचु पावौंगी ॥ १ ॥
थाके चरन कमल चापौंगी, स्रम भये बाउ डोलावौंगी ।
नयन-चकोरनि मुखमयङ्क-छबि, सादर पान करावौंगी ॥ २ ॥
जो हठि नाथ राखिहौ मोकहँ, तौ सँग प्रान पठावौंगी ।
तुलसिदास प्रभु-बिनु जीवत रहि, क्यों फिरि बदन दिखावौंगी ? ॥३॥६॥

कहौ तुम्ह बिनु गृह मेरो कौन काज ? ।
बिपिन कोटि सुरपुर समान मोको, जोपै पिय परिहरयो राज ॥ १ ॥
बलकल बिमल दुकूल मनोहर, कन्द मूल फल अमिय नाज ।
प्रभुपद कमल बिलोकिहौं छिनछिन, इहि तें अधिक कहा सुख-समाज ? ॥२॥
हौं रहौं भवन भोग लोलुप ह्वै, पति कानन कियो मुनि को साज ।
तुलसिदास ऐसे बिरह बचन सुनि, कठिन हियो बिहरो न आज ॥३॥७॥

पिय निठुर बचन कहे कारन कवन ?
जानत हौ सब के मन की गति, मृदुचित परमकृपाल रवन ! ॥ १ ॥
प्राननाथ सुन्दर सुजानमनि, दीनबन्धु जग आरति दवन ।
तुलसिदास प्रभु-पदसरोज तजि, रहिहौं कहा करौंगी भवन ? ॥२॥८॥

मैं तुम्ह सों सतिभाव कही है ।
बूझति और भाँति भामिनि कत, कानन कठिन कलेस सही है ॥ १ ॥

आतप = घाम, गरमी। सचु = आनन्द। बलकल = बोकला, छाल। दुकूल = वस्त्र। नाज = अन्न। लोलुप = लालची। सतिभाव = स्वाभाविक। कत = काहे को।

जौ चलिहौ तो चलौ चलि कै बन, सुनि सिय मन अवलम्ब लही है।
बूड़त बिरह बारिनिधि मानहुँ, नाह-बचनमिस बाँह गही है॥ २॥
प्राननाथ के साथ चलीं उठि, अवध सोकसरि उमँगि बही है।
तुलसी सुनी न कबहुँ काहु कहुँ, तनु परिहरि परिछाहिँ रही है॥३॥९॥

जबहिँ रघुपति सङ्ग सीय चली।
बिकल बियोग लोग पुरतिय कहैँ, अति अन्याउ अली॥ १॥
कोउ कहै मनिगन तजत काँच लगि, करत न भूप भली।
कोउ कहै कुबेल कुलि कैकेयी, दुख बिष फलनि फली॥ २॥
एक कहै बन जोग जानकी! बिधि बड़ बिषम बली।
तुलसी कुलिसहु की कठोरता, तेहि दिन दलकि दली॥ ३॥ १०॥

ठाढ़े हैं लखन कमलकर जोरे।
उर धकधकी न कहत कछु सकुचनि, प्रभु परिहरत सबनि तृन तोरे॥१॥
कृपासिन्धु अवलोकि बन्धु तन, प्रान-कृपान बीर सी छोरे।
तात बिदा माँगिये मातु सोँ, बनिहै बात उपाइ न औरे॥ २॥
जाइ चरन गहि आयसु जाँच्यो, जननि कहत बहुभाँति निहोरे।
सिय-रघुबर-सेवा सुनि ह्वैहो, तौ जानिहौँ सही सुत मोरे॥ ३॥
कीजहु इहै बिचार निरन्तर, राम समीप सुकृत नहिँ थोरे।
तुलसी सुनि सिख चले चकित-चित,
उड़्यो मानोँ बिहँग बधिक भये भोरे॥ ४॥ ११॥

राग सोरठ

मोको बिधुबदन बिलोकन दीजै
राम लखन मेरी यहै भेँट बलि, जाउँ मोहिँ मिलि लीजै॥ १॥
सुनि पितु-बचन चरन गहे रघुपति, भूप अङ्क भरि लीन्हैँ।
अजहुँ अवनि-बिदरत दरार मिस, सो अवसर-सुधि कीन्हैँ॥ २॥

दलकि=फटकर। दली=टुकड़े टुकड़े हुई। सुकृत=पुण्य। भोरे=अनभुल। बिलमिय=ठहरिये; विश्राम कीजिये।

पुनि सिर नाइ गवन कियो प्रभु, मुरछित भयो भूप न जाग्यो।
करम-चोर नृप-पथिक मारि मानों, राम-रतन लै भाग्यो ॥ ३ ॥
तुलसी रविकुल-रवि रथ चढ़ि चले, तकि दिसि दखिन सुहाई।
लोग नलिन भये मलिन अवध-सर, बिरह-बिषम-हिम पाई ॥ ४ ॥ १२ ॥

राग बिलावल

कहौ सो बिपिन है धौं केतिक दूरि।
जहाँ गवन कियो कुँवर कोसलपति, बूझति सिय पिय-पतिहि बिसूरि ॥१॥
प्राननाथ परदेस पयादेहि, चले सुख सकल तजे तृन तूरि।
करौं बयारि बिलमिय बिटपतर, झारौं हौं चरन-सरोरुह-धूरि ॥ २ ॥
तुलसिदास प्रभु प्रियावचन सुनि, नीरजनयन नीर आये पूरि।
कानन कहाँ अबहिं सुनु सुन्दरि, रघुपति फिरि चितये हित भूरि ॥३॥१३॥

फिरि फिरि राम सीयतनु हेरत।
तृषित जानि जल लेन लखन गये, भुज उठाइ ऊँचे चढ़ि टेरत ॥ १ ॥
अवनि कुरङ्ग बिहँग द्रुम-डारन, रूप निहारत पलक न प्रेरत।
मगन न डरत निरखि कर-कमलनि, सुभग सरासन सायक फेरत ॥२॥
अवलोकत मग लोग चहूँ दिसि, मनहुँ चकोर चन्द्रमहिं घेरत।
ते जन भूरिभाग भूतल पर, तुलसीराम-पथिक-पद जे रत ॥ ३ ॥ १४ ॥

नृपति-कुँवर राजत मग जात।
सुन्दर बदन सरोरुह-लोचन, मरकत-कनकबरन मृदुगात ॥ १ ॥
अंसनि चाप तून कटि मुनिपट, जटा मुकुट बिच नूतन पात ॥
फेरत पानि-सरोजनि सायक, चोरत चितहि सहज मुसुकात ॥ २ ॥
सङ्ग नारि सुकुमारि सुभग सुठि, राजति बिन भूषन नव-सात।
सुखमा निरखि ग्राम-बनितनि के, नलिन-नयन बिकसित मनो प्रात ॥३॥
अङ्ग अङ्ग अगनित अनङ्ग-छबि, उपमा कहत सुकबि सकुचात।
सिय समेत नित तुलसिदास चित, बसत किसोर पथिक दोउ भ्रात ॥४॥१५॥

द्रुम=वृक्ष। अंसनि=कन्धों पर। नवसात=सोलह शृंगार।

तू देखि देखि री! पथिक परम सुन्दर दोऊ।
मरकत-कलधौंत-बरन काम-कोटि-कान्तिहरन;
चरन-कमल कोमल अति राजकुँवर कोऊ॥ १॥
कर सर धनु कटि निषङ्ग मुनिपट सोहैं सुभग अङ्ग,
सङ्ग चन्द्रबदनि बधू सुन्दरि सुठि सोऊ।
तापस बर बेष किये सोभा सब लूटि लिये,
चित के चोर बय किसोर लोचन भरि जोऊ॥ २॥
दिनकर-कुलमनि निहारि प्रेम-मगन ग्राम-नारि,
परसपर कहैं सखि! अनुराग ताग पोऊ।
तुलसी यह ध्यान-सुधन जानि मानि लाभ सघन,
कृपन ज्यौं सनेह सो हिये-सुगेह गोऊ॥ ३॥ १६॥
कुँवर साँवरो री सजनी! सुन्दर सब अङ्ग।
रोम रोम छबि निहारि आलि वारि फेरि डारि,
कोटि भानु-सुवन सरद-सोम कोटि अनङ्ग॥ १॥
बाम अङ्ग लसत चाप मौलि मञ्जु जटा कलाप,
सुचि सर कर मुनिपट कटि-तट कसे निषङ्ग।
आयत उर बाहु नैन मुख-सुखमा को लहै न,
उपमा अवलोकि लोक गिरामति-गति भङ्ग॥ २॥
यों कहि भईं मगन बाल बियकौं सुनि जुवति-जाल,
चितवत चले जात सङ्ग धनुष मृग बिहङ्ग।
बरनौं किमि तिनकी दसहि निगम-अगम प्रेम-रसहि,
तुलसीमन-बसन रँगे रुचिर रूपरङ्ग॥ ३॥ १७॥

राग कल्यान

देखु कोऊ परम सुन्दर सखि! बटोही।
चलत महि मृदु चरन अरुन-बारिज-बरन,

कलधौंत=सुवर्ण। जोऊ=देखु। गोऊ=छिपाओ।

भूपसुत रूपनिधि निरखि हौं मोही ॥ १ ॥
अमल मरकत स्याम सीलसुखमाधाम,
गौरतनु सुभग सोभा सुमुखि जोही ।
जुगल बिच नारि सुकुमारि सुठि सुन्दरी,
इन्दिरा इन्दु-हरि मध्य जनु सोही ॥ २ ॥
करनि बर धनु तीर रुचिर कटि तूनीर,
धीर सुर-सुखद मर्दनअवनि-द्रोही ।
अम्बुजायत नयन बदन छबि बहु मयन,
चारु चितवनि चतुर लेति चित पोही ॥ ३ ॥
वचन प्रिय सुनि स्रवन राम करुनाभवन,
चितै सब अधिक हित सहित कछु ओही ।
दास तुलसी नेह-बिबस बिसरी देह,
जान नहिं आपु तेहि काल धौं कोही ॥ ४ ॥ १८ ॥

राग केदारा

सखि ! नीके कै निरखि कोउ सुठि सुन्दर बटोही ।
मधुर मूरति मदमोहन जोहन-जोग,
बदन सोभासदन देखिहौं मोही ॥ १ ॥
साँवरे गोरे किसोर सुर मुनि चित-चोर,
उभय-अन्तर एक नारि सोही ।
मनहुँ बारिद बिधु बीच ललित अति,
राजति तड़ित निज सहज बिछोही ॥ २ ॥
उर धीरजहि धरि जन्म सफल करि,
सुनहि सुमुखि ! जनि बिकल होही ।

बटोही=पथिक । इन्दिरा=लक्ष्मी । इन्दु=चन्द्रमा । हरि=विष्णु । अवनिद्रोही=राक्षस । निज सहज बिछोही=अपना चंचल स्वभाव छोड़कर ।

को जानै कौने सुकृत लह्यो है लोचन-लाहु,
ताहि तेँ बारहि बार कहति तोही ॥ ३ ॥

सखिहि सुसिख दई प्रेम-मगन भई,
सुरति बिसरि गई आपनी ओही ।
तुलसी रही है ठाढ़ी पाहन गढ़ी सी काढ़ी,
कौन जानै कहाँ तेँ आई कौन की को ही ॥ ४ ॥ १९ ॥

माई ! मन के मोहन जोहन-जोग जोही ।
थोरी ही बयस गोरे साँवरे सलोने लोने,
लोयन ललित बिधुबदन बटोही ॥ १ ॥
सिरनि जटा मुकुट मञ्जुल सुमनजुत,
तैसिये लसति नव पल्लव खोही ।
किये मुनि-बेष बीर धरे धनु तून तीर,
सोहैं मग को हैं लखि परे न मोही ॥२॥

सोभा को साँचो सँवारि रूप जातरूप ढारि,
नारि बिरची बिरञ्चि सङ्ग सोही ।
राजत रुचिर तनु सुन्दर स्रम के कन,
चाहे चकचौंधी लागै कहौँ का तोही ? ॥३॥

सनेह-सिथिल सुनि बचन सकल सिय,
चितई अधिक हित सहित ओही ।
तुलसी मनहुँ प्रभु कृपा को मूरति फिरि,
हेरि कै हरिष हिये लियो है पोही ॥४॥२०॥

सखि ! सरद-बिमल-बिधुबदनि बधूटी ।
ऐसी ललना सलोनी न भई न है न होनी,
रत्यो रची बिधि जो छोलत छबि छूटी ॥१॥

खोही=छतरी । स्रम के कन=पसीने की बूँदें । ललना=स्त्री ।

साँवरे गोरे पथिक बीच सोहति अधिक,
तिहुँ त्रिभुवन-सोभा मानहुँ लूटी।
तुलसी निरखि सिय प्रेमबस कहैं तिय,
लोचन-सिसुन्ह देहु अमिय घूटी ॥२॥२१॥

सोहैं साँवरे पथिक पाछे ललना लोनी।
दामिनि-बरन गोरी लखि सखि तृन तोरी,
बीती हैं बय किसोरी जोबन होनी ॥१॥
नीके कै निकाई देखि जनम सफल लेखि,
हम सी भूरि-भागिनि नभ न छोनी।
तुलसी-स्वामी-स्वामिनि जोहे मोही हैं भामिनि,
सोभा-सुधा पिये करि अँखियाँ दोनी ॥२॥२२॥

पथिक गोरे साँवरे सुठि लोने।
सङ्ग सुतिय जाके तनु तैं लही है द्युति, सोन सरोरुह सोने ॥१॥
बय किसोरसिरिपिार मनोहर, बयस-सिरोमनि होने।
सोभा-सुधा आलि! अँचवहु करि नयन मञ्जु मृदु दोने ॥२॥
हेरत हृदय हरत नहिं फेरत, चारु बिलोचन कोने।
तुलसी-प्रभु किधौं प्रभु को प्रेम पढ़े, प्रगट कपट बिनु टोने ॥३॥२३॥

मनोहरता के मानो ऐन।
स्यामल गौर किसोर पथिक दोउ, सुमुखि निरखु भरि नैन ॥१॥
बीच बधू बिधुबदनि बिराजित, उपमा कहुँ कोउ है न।
मानहुँ रति रितुनाथ सहित मुनि, बेष बनाये है मैन ॥२॥
किधौं सिंगार-सुखमा-सुप्रेम मिलि, चले जग-चित-बित लैन।
अद्भुत त्रयी किधौं पठई है बिधि, मग-लोगन्हि सुख दैन ॥३॥
सुनि सुचि सरल सनेह सुहावने, ग्रामबधुन्ह के बैन।
तुलसी प्रभु तरु तर बिलँबे किये, प्रेम कनौड़े कै न ॥४॥२४॥

छोनी = धरती। सोन = लाल, पीले। बयस सिरोमनि = युवावस्था। मैन = कामदेव।

बय किसोर गोरे साँवरे धनुबान धरे हैं ।
सब अङ्ग सहज सोहावने राजीव जिते, नैननि बदननि बिधु निदरे हैं ॥१॥
तून सुमुनिपट कटि कसे जटा मुकुट करे हैं ।
मञ्जु मधुर मृदु मूरति पानह्यौं न पायनि, कैसे धौं पथ बिचरे हैं ? ॥२॥
उभय बीच बनिता बनी लखि मोहि परे हैं ।
मदन सप्रिया सप्रिय सखा मुनिबेष बनाये लिये मनजात हरे हैं ॥३॥
सुनि जहँ तहँ देखन चले अनुराग भरे हैं ।
राम-पथिक छबि निरखि कै तुलसी,
मग-लोगनि धाम-काम बिसरे हैं ॥४॥२५॥

कैसे पितु मातु कैसे प्रिय परिजन हैं ?
जगजलधि ललाम लोने लोने गोरे स्याम,
जिन पठए हैं ऐसे बालकनि बन हैं ॥१॥
रूप के न पारावार भूप के कुमार मुनि-बेष,
देखत लोनाई लघु लागत मदन हैं ।
सुखमा की मूरति सी साथ निसिनाथ-मुखी,
नखसिख अङ्ग सब सोभा के सदन हैं ॥ २ ॥
पङ्कज-करनि चाप तीर तरकस कटि,
सरद-सरोजहु तें सुन्दर चरन हैं ।
सीता राम लखन निहारि ग्रामनारि कहैं,
हेरि हेरि हेरि हेली हिय के हरन हैं ॥ ३ ॥
प्रानहूँ के प्रान से सुजीवन के जीवन से,
प्रेमहू के प्रेम रङ्क कृपिन के धन हैं ।
तुलसी के लोचन-चकोर के चन्द्रमा से,
आछे मन-मोर चित-चातक के घन हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥

हेली=कौतुकी ।

राग भैरव

देखि ! द्वै पथिक गोरे साँवरे सुभग हैं।
सुतिय सलोनी सङ्ग सोहत सुमग हैं ॥ १ ॥
सोभासिन्धु-सम्भव से नीके नीके नग हैं।
मातु-पितु-भाग-बस गये परि फँग हैं ॥ २ ॥
पाइँ पनह्यौँ न मृदु पङ्कज से पग हैं।
रूप की मोहनी मेलि मोहे अग जग हैं ॥ ३ ॥
मुनि-बेष धरे धनु सायक सुलग हैं।
तुलसी हिये लसत लोने लोने डग हैं ॥ ४ ॥ २७

पथिक पयादे जात पङ्कज से पाय हैं।
मारग कठिन कुस कंटकनिकाय हैं ॥ १ ॥
सखी भूख प्यासे पै चलत चित चाय हैं।
इन्हके सुकृत सुर सङ्कर सहाय हैं ॥ २ ॥
रूप सोभा प्रेम के से कमनीय काय हैं।
मुनिबेष किये किधौं ब्रह्म जीव माय हैं ॥ ३ ॥
बीर बरियार धीर धनुधर-राय हैं।
दसचारि-पुर-पाल आली उरगाय हैं ॥ ४ ॥
मग-लोग देखत करत हाय हाय हैं।
बन इनको तो बाम बिधि के बनाय हैं ॥ ५ ॥
धन्य ते जे मीन से अवधि-अम्बु-आय हैं।
तुलसी प्रभु सोँ जिन्हहूँ के भले भाय हैं ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग आसावरी

सजनी ! हैं कोउ राजकुमार।
पन्थ चलत मृदु पद कमलनि दोउ, सील-रूप-आगार ॥ १ ॥

फँग=फन्दा। अगजग=जड़ चेतन। सुलग=पास। डग=क़दम। चाय=उत्साह। कमनीय=सुन्दर। काय=शरीर। उरगाय=विष्णु।

आगे राजिवनैन स्याम-तनु, सोभा अमित अपार।
डारौँ वारि अङ्ग अङ्गनि पर, कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥
पाछे गोर किसोर मनोहर, लोचन बदन उदार।
कटि तूनीर कसे कर सर धनु, चले हरन छिति भार ॥ ३ ॥
जुगल बीच सुकुमारि नारि इक, राजति बिनहि सिँगार।
इन्द्रनील हाटक मुकुतामनि, जनु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥
अवलोकहु भरि नैन बिकल जनि, होहु करहु सुबिचार।
पुनि कहँ यह सोभा कहँ लोचन, देह गेह संसार ? ॥ ५ ॥
सुनि प्रिय बचन चितै हित कै, रघुनाथ कृपा सुखसार।
तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के, मन तन रही न सँभार ॥ ६ ॥ २९ ॥

देखु री सखी ! पथिक नख-सिख नीके हैँ।

नीले पीले कमल से कोमल कलेवरनि,
तापस हू बेष किये काम कोटि फीके हैँ ॥ १ ॥
सुकृत सनेह सील सुखमा सुख सकेलि,
बिरचे बिरञ्चि किधौँ अमिय अमी के हैँ।
रूप की सी दामिनी सुभामिनी सोहति सङ्ग,
उमहु रमा तेँ आछे अङ्ग अङ्ग ती के हैँ ॥२॥
बन-पट कसे कटि तून तीर धनु धरे,
धीर बीर पालक कृपालु सबही के हैँ।
पानहीं न चरन-सरोजनि चलत मग,
कानन पठाये पितु-मात कैसे ही के हैँ ? ॥३॥
आली अवलोकि लेहु नयननि के फल येहु,
लाभ के सुलाभ सुखजीवन से जी के हैँ।
धन्य नर नारि जे निहारि बिनु गाहक हू,
आपने आपने मन मोल बिनु बीके हैँ ॥४॥

छिति=पृथ्वी। इन्द्रनील=नीलमणि, मरकत। हाटक=सुवर्ण। सकेलि=बटोर कर, इकट्ठा करके। बीके=बिके।

बिबुध बरखि फूल हरषि हिये कहत,
ग्राम-लोग मगन सनेह सिय-पीके हैं।
जोगीजन अगन दरस पायो पावँरनि,
प्रमुदित मन सुनि सुरप सची के हैं ॥५॥
प्रीति के सुबालक से लालत सुजान मुनि,
मग चारु चरित लखन राम सी के हैं।
जोग न बिराग जाग तप न तीरथ त्याग,
एही अनुराग भाग खुले तुलसी के हैं ॥६॥३०॥

रीति चलिबे की चाहि प्रीति पहिचानि कै।
आपनी आपनी कहैं प्रेम परबस अहैं,
मञ्जु मृदु बचन सनेह-सुधा सानि कै ॥१॥
साँवरे कुँवर के बराइ कै चरन के चिह्न,
बधू पग धरति कहा धौं जिय जानि कै।
जुगल कमल-पद-अङ्क जोगवत जात,
गोरे गात कुँवर महिमा महा मानि कै ॥२॥
उनकी कहनि नीकी रहनि लखन सी की,
तिनकी गहनि जे पथि उर आनि कै।
लोचन सजल तन पुलक मगन मन,
होत भूरिभागी जस तुलसी बखानि कै ॥३॥३१॥

राग केदारा

जेहि जेहि मग सिय राम लखन गये,
तहँ तहँ नर नारि बिनु छर छरिगे।
निरखि निकाई अधिकाई बिथकित भये।
बच बिय-नैन-सर सोभा-सुधा भरिगे ॥१॥

सुरप=सुरपति, इन्द्र । चाहि=देख कर। बिनुछर छरिगे=बिना छल के छले गये। बच=बचन। बिय=दोनों।

जोते बिनु बये बिनु निफन निराये बिनु,
सुकृत-सुखेत सुख-सालि फूलि फरिगे।
मुनिहुँ मनोरथ को अगम अलभ्य लाभ,
सुगम सो राम लघु लोगनि को करिगे ॥२॥

लालची कैाड़ी के कूर पारस परे हैं पाले,
जानत न को हैं कहा कीबो सो बिसरिगे।
बुधि न बिचार न बिगार न सुधार सुधि,
देह गेह नेह नाते मन से निसरिगे ॥३॥

बरषि सुमन सुर हरषि हरषि कहैं,
अनायास भवनिधि नीच नीके तरिगे।
सो सनेह समउ सुमिरि तुलसीहू के से,
भली भाँति भले पैंत भले पाँसे परिगे ॥४॥३२॥

बोले राज देन को रजायसु भो कानन को,
आनन प्रसन्न मन मोद बड़ो काज भो।
मातु-पिता-बन्धु-हित आपनो परम हित,
मोको बीसहू कै ईस अनुकूल आज भो ॥१॥
असन अजीरन को समुझि तिलक तज्यैा,
बिपिन-गवन भले भूखे को सुनाज भो !
धरम-धुरीन धीर बीर रघुबीरजू को,
कोटि राज सरिस भरत जू को राज भो ॥२॥
ऐसी बातैं कहत सुनत मग-लोगन की,
चले जात बन्धु दोउ मुनि को सो साज भो।
ध्याइबे को गाइबे को सोइबे सुमिरिबे को,
तुलसी को सब भाँति सुखद समाज भो ॥३॥३३॥

निफन=अच्छी तरह। सालि=धान। पैंत=दाँव। बीसहू कै=बीसो बिस्वे, पूरी तरह से।

सिरिस-सुमन-सुकुमारि सुखमा की सींव,
सीय राम बड़े ही सकोच सङ्ग लई है।
भाई के प्रान समान प्रिया के प्रान के प्रान,
जानि बानि प्रीति रीति कृपासील मई है ॥१॥
आलबाल-अवध सुकामतरु कामबेलि,
दूरि करि केकई बिपत्ति-बेलि बई है।
आप पति पूत गुरुजन प्रिय परिजन,
प्रजाहू को कुटिल दुसह दसा दई है ॥२॥
पङ्कज से पगनि पानह्यौं न परुष पन्थ,
कैसे निबहे हैं निबाहैंगे गति नई है ?।
एही सोच सङ्कट मगन मग-नर-नारि,
सबकी सुमति राम-राग-रँग-रई है ॥३॥
एक कहैं बाम बिधि दाहिनो हम को भयो,
उत कीन्हीं पीठि इत को सुडीठि भई है।
तुलसी सहित बनबासी मुनि हमरिऔ,
अनायास अधिक अघाइ बनि गई है ॥४॥२४॥

राग गौरी

नीके कै मैं न बिलोकन पाये।
सखि! यहि मग जुग पथिक मनोहर, बधु बिधु-बदनि समेत सिधाये ॥१॥
नयन सरोज किसोर बयस बर, सीस जटा रचि मुकुट बनाये।
कटि मुनि बसन तून धनु सर कर, स्यामल गौर सुभाय सोहाये ॥२॥
सुन्दर बदन बिसाल बाहु उर, तनु-छबि कोटि मनोज लजाये।
चितवत मोहिं लगी चौंधी सी, जानौं न कौन कहाँ तें धौं आये ॥३॥
मन गयो सङ्ग सोचबस लोचन, मोचत बारि कितो समुझाये।
तुलसिदास लालसा दरस की सोइ पुरवै, जेहिं आनि देखाये ॥४॥२५॥

परुष = कठोर। चौंधी=चकाचौंध।

पुनि न फिरे दोउ बीर बटाऊ ।
स्यामल गौर सहज सुन्दर सखि ! बारक बहुरि बिलोकिबे काऊ ॥१॥
कर-कमलनि सर सुभग सरासन, कटि मुनि बसन निषङ्ग सोहाये ।
भुज प्रलम्ब सब अङ्ग मनोहर, धन्य सो जनक जननि जेहि जाये ॥२॥
सदर-बिमल-बिधु-बदन जटा सिर, मञ्जुल अरुन-सरोरुह-लोचन ।
तुलसिदास मनमय मारग मैं, राजत कोटि-मदन-मदमोचन ॥३॥३६॥

राग केदारा

आली ! काहू तौ बूझौ न पथिक कहाँ धौं सिधैहैं ।
कहाँ तैं आये हैं को हैं कहा नाम स्याम गोरे,
काज कै कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ? ॥१॥
उठति बयस मसि भीँजति सलोने सुठि,
सोभा-देखवैया बिनु बित्त ही बिकैहैं ।
हिये हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत,
लोयननि लाहु देत जहाँ जहाँ जैहैं ॥२॥
राम-लखन-सिय-पथि की कथा पृथुल,
प्रेम बिथकीं कहति सुमुखि सबै हैं ।
तुलसी तिन्ह सरिस तेऊ भूरिभाग जेऊ,
सुनि कै सुचित तेहि समै समैहैं ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बहुत दिन बीते सुधि कछु न लही ।
गये जो पथिक गोरे साँवरे सलोने,
सखि ! सङ्ग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥
जानि पहिचानि बिनु आपु तैं आपुनेहु तैं,
प्रानहुँ तैं प्यारे प्रियतम उपही ।
सुधा के सनेह हू के सार लै सँवारे बिधि,
जैसे भावते हैं भाँति जाति न कही ॥ २ ॥

काऊ=कभी। उठति बयस=बढ़ती जवानी । पृथुल=बहुत, अधिक । उपही=बाहरी, व्यक्ति ।

बहुरि बिलोकिबे कबहुँक कहत,
तनु पुलक नयन जलधार बहो ।
तुलसी प्रभु सुमिरि ग्रामयुवती सिथिल,
बिनु प्रयास परीं प्रेम सही ॥ ३ ॥ ३८ ॥

आली री ! पथिक जे एहि पथ परौं सिधाये ।
तेतौ राम लखन अवध तें आये ॥ १ ॥
संग सिय सब अङ्ग सहज सोहाये ।
रति काम रितुपति कोटिक लजाये ॥ २ ॥
राजा दसरथ रानी कौसिला जाये ।
कैकेयी कुचालि करि कानन पठाये ॥ ३ ॥
बचन कुभामिनि के भूपहि क्यों भाये ?
हाय हाय राय बाम बिधि भरमाये ॥ ४ ॥
कुलगुरु सचिव काहू न समुझाये ।
काँच मनि लै अमोल मानिक गँवाये ॥ ५ ॥
भाग मग-लोगनि के देखन जे पाये ।
तुलसी सहित जिन गुन गन गाये ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सखि ! जबतें सीता समेत देखे दोउ भाई ।
तब तें परे न कल कछू न सोहाई ॥ १ ॥
नखसिख नीके नीके निरखि निकाई ।
तन सुधि गई मन अनत न जाई ॥ २ ॥
हेरनि हँसनि हिय लिये हैं चोराई ।
पावन-प्रेम-बिबस भई हौं पराई ॥ ३ ॥
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई ।
जीवत जीव के जीवन बनहिं पठाई ॥ ४ ॥

जाये=लड़के ।

समउ सो चित करि हिम अधिकाई ।
प्रीति ग्रामबधुन की तुलसिहुँ गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा

जब तेँ सिधारे यहि मारग लखन राम,
जानकी सहित तब तेँ न सुधि लही है।
अवध गये धौँ फिरि कैधौँ चढ़े बिन्ध्यगिरि,
कैधौँ कहुँ रहे सो कछू न काहू कही है ॥ १ ॥
एक कहै चित्रकूट निकट नदी के तीर,
परन कुटीर करि बसे बात सही है।
सुनियत भरत मनाइबे को आवत हैं,
होइगी पै सोई जो बिधाता चित्त चही है ॥ २ ॥
सत्य-सन्ध धरम-धुरीन रघुनाथ जू को,
आपनी निबाहिबे नृप की निरबही है।
दसचारि बरिस बिहार बन पदचार,
करिबे पुनीत सैल सर सरि मही है ॥ ३ ॥
मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज,
बिगरि बिगरि जहाँ जहाँ जाकी रही है।
पुर पाँउ धारिहैँ उधारिहैँ तुलसी हूँ से जन,
जिन जानि कै गरीबी गाढ़ो गही है ॥ ४ ॥ ४१ ॥

राग सारङ्ग

ये उपही कोउ कुँवर अहेरी।
स्याम गौर धनु-बान-तूनधर, चित्रकूट अब आइ रहे री ॥ १ ॥
इन्हहिँ बहुत आदरत महामुनि, समाचार मेरे नाह कहे री।
बनिता बन्धु समेत बसे बन, पितु हित कठिन कलेस सहे री ॥ २ ॥

पदचार=पैदल, पाँव पाँव।

बचन परस्पर कहति किरातिनि, पुलक गात जल नयन बहे री।
तुलसी प्रभुहि बिलोकति एकटक, लोचन जनु बिनु पलक लहे री ॥३॥४२।

राग चञ्चरी

चित्रकूट अति बिचित्र सुन्दर बन महि पवित्र,
पावनि पय सरित सकल मल-निकन्दिनी।
सानुज जहँ बसत राम लोक लोचनाभिराम,
वाम अङ्ग बामावर बिस्व-बन्दिनी ॥ १ ॥
चितवत मुनिगन चकोर बैठे निज ठौर ठौर,
अक्षय अकलङ्क सरद-चन्द-चन्दिनी।
उदित सदा बन-अकास मुदित बदत तुलसिदास,
जय जय रघुनन्दन जय जनकनन्दिनी ॥ २ ॥ ४३ ॥
फटिकसिला मृदु बिसाल सङ्कुल सुरतरु तमाल,
ललित-लता-जाल हरति छबि बितान की।
मन्दाकिनि तटिनि तीर मञ्जुल मृग बिहँग भीर,
धीर मुनिगिरा गँभीर सामगान की ॥ १ ॥
मधुकर पिक बरहि मुखर सुन्दर गिरि निर्झर झर,
जल-कन घन छाँह छन प्रभा न भान की।
सब रितु रितुपति प्रभाउ सन्तत बहै त्रिबिध बाउ,
जनु बिहार-बाटिका नृप पञ्चबान की ॥ २ ॥
बिरचित तहँ पर्नसाल अति बिचित्र लखन लाल,
निवसत जहँ नित कृपाल राम-जानकी।
निजकर राजीवनयन पल्लव-दल-रचित सयन,
प्यास परसपर पियूष प्रेम-पान की ॥ ३ ॥
सिय अँग लिखैं धातुराग सुमननि भूषन-बिभाग,
तिलक करनि का कहौं कलानिधान की।

निर्झर=झरना। पञ्चबान=कामदेव। पर्नसाल=पत्ते की कुटी। सयन=शय्या, बिस्तर। धातुराग=धातुओं से निकला हुआ रंग।

माधुरी बिलास हास गावत जस तुलसिदास,
बसति हृदय जोरी प्रिय परम प्रान को ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा

लोने लाल लखन सलोने राम लोनी सिय,
चारु चित्रकूट बैठे सुरतरु-तर हैं ।
गोरे साँवरे सरीर पीत नील नीरज से,
प्रेमरूप सुखमा के मनसिज-सर हैं ॥ १ ॥
लोने नख-सिख निरुपम निरखन जोग,
बड़े उर कन्धर-बिसाल भुज वर हैं ।
लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने,
लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥
लोने लोने धनुष विसिप कर कमलनि,
लोने मुनिपट कटि लोने सरधर हैं ।
प्रिया प्रिय बन्धु को दिखावत बिटप बेलि,
मञ्जु कुञ्ज सिलातल दल फूल फर हैं ॥३॥
बिपिन के आस्रम सराहैं मृग नाम कहैं,
लागी मधु सरित झरत निर्झर हैं ।
नाचत बरहि नीके गावत मधुप पिक,
बोलत बिहङ्ग नभ-जल-थल-चर हैं ॥४॥
प्रभुहि बिलोकि मुनिगन पुलके कहत,
भूरिभाग भये सब नीच नारि-नर हैं ।
तुलसी सो सुख-लाहु लूटत किरात कोल,
जाको सिसकत सुर बिधि हरि हर हैं ॥५॥४५॥

राग सारङ्ग

आइ रहे जब तें दोउ भाई ।
तब तें चित्रकूट-कानन-छबि, दिन दिन अधिक अधिक अधिकाई ॥१॥

सरधर=तरकस । सिसकत=तरसते हैं ।

सीता-राम-लखन-पद-अङ्कित, अवनि सोहावनि बरनि न जाई ।
मन्दाकिनि मज्जत अवलोकत, त्रिबिध पाप त्रयताप नसाई ॥ २ ॥
उकठेउ हरित भये जल-थलरुह, नित नूतन राजीव सुहाई ।
फूलत फलत पल्लवत पलुहत, बिटप बेलि अभिमत सुखदाई ॥३॥
सरित सरनि सरसीरुह-सङ्कुल, सदन सँवारि रमा जनु छाई ।
कूजत बिहँग मञ्जु गुञ्जत अलि, जात पथिक जनु लेत बुलाई ॥४॥
त्रिबिध समीर नीर झर झरननि, जहँ तहँ रहे रिषि कुटी बनाई ।
सीतल सुभग सिलनि पर तापस, करत जोग जप तप मन लाई ॥५॥
भये सब साधु किरात किरातिनि, राम-दरस मिटि गइ कलुषाई ।
खग मृग मुदित एक सँग बिहरत, सहज बिषम बड़ बैर बिहाई ॥६॥
कामकेलि बाटिका बिबुध-बन, लघु उपमा कबि कहत लजाई ।
सकल भुवन सोभा सकेलि मनो, राम बिपिन बिधि आनि बसाई ॥७॥
बन मिस मुनि मुनितिय मुनि-बालक, बरनत रघुबर-बिमल-बड़ाई ।
पुलक सिथिल तनु सजल सुलोचनु, प्रमुदित मन जीवन फल पाई ॥८॥
क्योँ कहौँ चित्रकूट-गिरि सम्पति, महिमा मोद मनोहरताई ।
तुलसी जहँ बसि लखन राम सिय, आनँद-अवधि अवध बिसराई ॥९॥४६॥

राग गौरी

देखत चित्रकूट बन मन, अति होत हुलास ।
सीताराम लखन प्रिय, तापस-वृन्द-निवास ॥१॥
सरित सोहावनि पावनि, पापहरनि पय नाम ।
सिद्धि-साधु-सुर-सेवित, देति सकल मनकाम ॥२॥
बिपट बेलि नव किसलय, कुसुमित सघन सुजाति ।
कन्दमूल जल-थलरुह अगनित, अनबन भाँति ॥३॥

उकठेउ=सुखाने हुए भी । रुह=वृक्ष । कलुषाई=पापीपन । किसलय=कोमल और लाल लालपत्ते । अनबन=भिन्न भिन्न ।

बञ्जुल मञ्जु बकुल कुल सुरतरु, ताल तमाल ।
कदलि कदम्ब सुचम्पक पाटल, पनस रसाल ॥४॥
भूरुह भूरि भरे जनु छबि, अनुराग सुभाग ।
बन बिलोकि लघु लागहिं, बिपुल बिबुध-बन-बाग ॥५॥
जाइ न बरनि राम-बन, चितवत चित हरि लेत ।
ललित-लताद्रुम-सङ्कुल, मनहुँ मनोज-निकेत ॥६॥
सरित सरनि सरसीरुह, फूले नाना रङ्ग ।
गुञ्जत मञ्जु मधुप गन कूजत, बिबिध बिहङ्ग ॥७॥
लखन कहेउ रघुनन्दन देखिय, बिपिन-समाज ।
मानहुँ चयन मयन-पुर आयउ, प्रिय रितुराज ॥८॥
चित्रकूट पर राउर जानि, अधिक अनुराग ।
सखा सहित जनु रतिपति, आयउ खेलन फाग ॥९॥
झिल्लि झाँझ झरना डफ नव मृदङ्ग निसान ।
भेरि उपङ्ग भृङ्ग रव, ताल कीर कलगान ॥१०॥
हंसक पोत कबूतर बोलत, चक्क चकोर ।
गावत मनहुँ नारिनर मुदित, नगर चहुँ ओर ॥११॥
चित्र बिचित्र बिबिध मृग, डोलत डाँगर डाँग ।
जनु पुरबीथिन बिहरत, छैल सँवारे स्वाँग ॥१२॥
नचहिं मोर पिक गावहिं, सुर बर राग बँधान ।
निलज तरुन तरुनी जनु, खेलहिं समय समान ॥१३॥
भरि भरि सुंड करिनि करि, जहँ तहँ डारहिं बारि ।
भरत परसपर पिचकनि मनहुँ, मुदित नर नारि ॥१४॥
पीठि चढ़ाइ सिसुन्ह कपि, कूदत डारहिं डार ।
जनु मुँह लाइ गेरु मसि, भये खरनि असवार ॥१५॥

पाटल=गुलाब । पनस=कटहर । रसाल=आम । भूरुह=वृक्ष। सङ्कुल=युक्त, समूह । उपङ्ग=नसतरङ्ग । डोंगर=पहाड़ी, टीला । डाँग=वन, जंगल । स्वाँग=वेष । पिचकन्हि=पिचकारियाँ

लिये पराग सुमनरस, डोलत मलय समीर।
मनहुँ अरगजा छिरकत, भरत गुलाल अबीर ॥१६॥
कोम कौतुकी एहि बिधि, प्रभुहित कौतुक कीन्ह।
रीझि राम रतिनाथहि, जग-बिजयी बर दीन्ह ॥१७॥
दुखवहु मोरे दास जनि, मानेहु मोरि रजाइ।
भलेहि नाथ माथे धरि, आयसु चलेउ बजाइ ॥१८॥
मुदित किरात किरातिनि, रघुबर-रूप निहारि।
प्रभुगुन गावत नाचत, चले जोहारि जोहारि ॥१९॥
देहिँ असीस प्रसंसहिँ, मुनि सुर बरषहिँ फूल।
गवने भवन राखि उर, मूरति मङ्गलमूल ॥२०॥
चित्रकूट कानन छबि, को कवि बरनै पार।
जहँ सिय लखन सहित नित, रघुबर करहिँ बिहार ॥२१॥
तुलसिदास चाँचरि मिस, कहे राम गुन-ग्राम।
गावहिँ सुनहिँ नारि नर, पावहिँ सब अभिराम ॥२२॥४७॥

राग बसन्त

आजु बन्यो है बिपिन देखो राम धीर। मानौँ खेलत फाग मुद मदन बीर॥१
बट बकुल कदम्ब पनस रसाल। कुसुमित तरु-निकर कुरव तमाल॥
मानौँ बिबिध बेष धरे छैल-जूथ। बिच बीच लता ललना बरूथ ॥२॥
पनवानक निर्झर अलि उपङ्ग। बोलत पारावत मानौँ डफ मृदङ्ग॥
गायक सुक कोकिल झिल्लि ताल। नाचत बहु भाँति बरहि मराल ॥३॥
मलयानिल सीतल सुरभि मन्द। बह सहित सुमन रस रेनु वृन्द॥
मनु छिरकत फिरत सबनि सुरङ्ग। भ्राजत उदार लीला अनङ्ग ॥४॥
क्रीड़त जीते सुर असुर नाग। हठि सिद्ध मुनिन के पन्थ लाग॥

चाँचरि=फाग, होली। अभिराम=आनन्द। बकुल=मौलसिरी। पनस=कटहर। कुरव=लालफूल की कटसरैया। पनवानक=ढोल और दुन्दुभी। उपङ्ग=नसतरङ्ग। बरहि=मोर। मलयानिल=पर्वतीयवायु। सुरभि=खुशबू।

कह तुलसिदास तेहि छाँड़ु मैन । जेहि राख राम राजीवनैन ॥५॥४८॥

रितु-पतिआयेभलोबन्योबनसमाज। मानौंभये हैं मदन महाराज आज ॥१॥
मनो प्रथम फाग मिस करि अनीति । होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥
मारुत मिस पत्र-प्रजा उजारि । नय नगर बसाये बिपिन भारि ॥२॥
सिंहासन सैल सिला सुरङ्ग । कानन छबि रति-परिजन कुरङ्ग ॥
सित छत्र सुमन वल्ली बितान । चामर समीर निर्भर निसान ॥३॥
मनो मधु माधव दोउ अनिप धीर । बर बिपुल बिटप बानैत बीर ॥
मधुकर सुक कोकिल बन्दि-वृन्द । बरनहिं बिसुद्ध जस बिबिध छन्द ॥४॥
महि परत सुमन-रस फल पराग । जनु देत इतर नृप कर-बिभाग ॥
कलि सचिव सहित नय-निपुन मार। कियो बिस्व बिबस चारिहु प्रकार॥५॥
बिरहिन पर नित नइ परै मारि । डाँटियत सिद्ध साधक प्रचारि ॥
तिनकी न काम सकै चापि छाँह । तुलसी जे बसहिं रघुबीर-बाहँ ॥६॥४९॥

राग मलार

सब दिन चित्रकूट नीको लागत ।
बरषारितु प्रवेस बिसेष गिरि, देखन मन अनुरागत ॥१॥
चहुँदिसि बन सम्पन्न बिहँग मृग, बोलत सोभा पावत ।
जनु सुनरेस देस पुर प्रमुदित, प्रजा सकल सुख छावत ॥२॥
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत, धातु रँगमगे सृङ्गनि ।
मनहुँ आदि अम्भोज बिराजत, सेवित सुर-मुनि-भृङ्गनि ॥३॥
सिखर परस घन घटहिं मिलति बग, पाँति सो छबि कबि बरनी ।
आदि बराह बिहरि बारिधि मनो, उठ्यो है दसन धरि धरनी ॥४॥
जल-जुत बिमल सिलनि झलकत नभ, बन-प्रतिबिम्ब तरङ्ग ।
मानहुँ जग-रचना बिचित्र बिलसति बिराट अँग अङ्ग ॥५॥

कुरङ्ग=मृग । पराग=धूलि । चापि=दबाई। अम्भोज=कमल । बगपाँति=बगुलों की कतार, बकमाला ।

मन्दाकिनिहि मिलत झरना झरि, झरि भरि जल आछे।
तुलसी सकल सुकृत सुख लागे, मानौं रामभगति के पाछे ॥६॥५०॥

राग सोरठ

आजु को भोर और सो माई।
सुनौं न द्वार बेद बन्दी धुनि, गुनिगन-गिरा सोहाई ॥१॥
निज निज सुन्दर पति सदननि तेँ, रूप-सील-छबि-छाई।
लेन असीस सीय आगे करि, मोपै सुतबधू न आई ॥२॥
बूझौ हौं न बिहँसि मेरे रघुबर कहाँ री! सुमित्रा माता?।
तुलसी मनहुँ महासुख मेरो, देखि न सकेउ बिधाता ॥३॥५१॥

जननी निरखति बान धनुहियाँ।
बार बार उर नैननि लावति, प्रभुजू की ललित पनहियाँ ॥१॥
कबहुँ प्रथम ज्योँ जाइ जगावति, कहि प्रिय बचन सबारे।
उठहु तात! बलि मातु बदन पर, अनुज सखा सब द्वारे ॥२॥
कबहुँ कहति यौं बड़ी बार भइ, जाहु भूप पहँ भैया।
बन्धु बोलि जेँइय जो भावै, गई निछावरि मैया ॥३॥
कबहुँ समुझि बनगवन राम को, रहि चकि चित्र लिखी सी।
तुलसिदास वह समय कहे तेँ, लागति प्रीति सिखी सी ॥४॥५२॥

माई री! मोहिँ कोउ न समुझावै।
राम-गवन साँचो किधौं सपनो, मन परतीति न आवै ॥१॥
लगेइ रहत मेरे नैननि आगे, राम लखन अरु सीता।
तदपि न मिटत दाह या उर को, बिधि जो भयो बिपरीता ॥२॥
दुख न रहै रघुपतिहि बिलोकत, तनु न रहै बिनु देखे।
करत न प्रान पयान सुनहु सखि! अरुझि परी यहि लेखे ॥३॥
कौसल्या के बिरह-बचन सुनि, रोइ उठीं सब रानी।
तुलसिदास रघुबीर-बिरह की, पीर न जाति बखानी ॥४॥५३॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो ।
तब तब बिकल होति कौसल्या, दिन दिन प्रति दुख दूनो ॥१॥
सुमिरत बाल-बिनोद राम के, सुन्दर मुनि-मन-हारी ।
होत हृदय अति सूल समुझि पद, पङ्कज अजिर-बिहारी ॥ २ ॥
को अब प्रात कलेऊ माँगत, रूठि चलैगो माई !
स्याम-तामरस-नैन स्रवत जल, काहि लेउँ उर लाई ॥ ३ ॥
जीवौं तो बिपति सहौं निसिबासर, मरौं तौ मन पछितायो ।
चलत बिपिन भरि नयन राम को, बदन न देखन पायो ॥ ४ ॥
तुलसिदास यह दुसह दसा अति, दारुन बिरह घनेरो ।
दूरि करै को भूरि कृपा बिनु, सोकजनित रुज मेरो ? ॥५॥५४॥

मेरो यह अभिलाष बिधाता ।
कब पुरवै सखि सानुकूल ह्वै, हरि सेवक सुखदाता ॥ १ ॥
सीता सहित कुसल कोसलपुर, आवत हैं सुत दोऊ ।
स्रवन-सुधा-सम बचन सखी कब , आइ कहैगो कोऊ ? ॥२॥
सुनि सन्देस प्रेम-परिपूरन, सम्भ्रम उठि धावौंगी ।
बदन बिलोकि रोकि लोचन-जल, हरषि हिये लावौंगी ॥ ३ ॥
जनकसुता कब सासु कहैं मोहि, रम लखन कहैं मैया ।
बाहु जोरि कब अजिर चलहिंगे, स्याम गौर दोउ भैया ॥ ४ ॥
तुलसिदास यहि भाँति मनोरथ, करत प्रीति अति बाढ़ी ।
थकित भई उर आनि राम-छबि, मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी ॥५॥५५॥

सुन्यौ जब फिरि सुमन्त पुर आयो ।
कहिहै कहा प्रानपति की गति, नृपति बिकल उठि धायो ॥ १ ॥
पाँय परत मंत्री अति ब्याकुल, नृप उठाइ उर लायो ।
दसरथ-दसा देखि न कह्यो कछु, हरि जो सँदेस पठायो ॥ २ ॥

रुज = रोग । सम्भ्रम = तुरन्त, शीघ्र ।

बूझि न सकत कुसल प्रीतम की, हृदय यहै पछितायो ।
साँचेहु सुत-बियोग सुनिबे कहँ, धिग बिधि मोहिँ जिआयो ॥ ३ ॥
तुलसिदास प्रभु जानि निठुर हौँ, न्याय नाथ बिसरायो ॥
हा ! रघुपति कहि परयौ अवनि जनु, जल तेँ मीन बिलगायो ॥४॥५६॥

मुयेहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ ।
नारिबस न बिचारि कीन्हौँ, काज सोचत राउ ॥ १ ॥
तिलक को बोल्यो दियो बन, चौगुनो चित चाउ ।
हृदय दाड़िम ज्यौँ न बिदरयो, समुझि सील सुभाउ ॥ २ ॥
सीय रघुबर लखन बिनु भय, भभरि भगी न आउ ।
मोहिँ बूझि न परत यातेँ, कौन कठिन कुघाउ ॥ ३ ॥
सुनि सुमन्त कि आनि सुन्दर, सुवन सहित जिआउ ।
दास तुलसी नतरु मोको, मरन-अमिय पिआउ ॥ ४ ॥ ५७ ॥

अवध बिलोकि हौँ जीवत रामभद्र-बिहीन ।
कहा करि हैँ आइ सानुज, भरत धरमधुरीन ॥ १ ॥
राम-सोक-सनेह-सङ्कुल, तनु बिकल मनु लीन ।
टूटि तारो गगन-मग ज्यौँ, होत छिन छिन छीन ॥ २ ॥
हृदय समुझि सनेह सादर, प्रेम-पावन-मीन ।
करी तुलसीदास दसरथ, प्रीति-परिमिति पीन ॥ ३ ॥ ५८ ॥

राग गौरी

करत राउ मन मोँ अनुमान ।
सोक-बिकल मुख बचन न आवै, बिछुरे कृपानिधान ॥ १ ॥
राज देन कहि बोलि नृप, [illegible] कह्यौ बन जान ।
आयसु सिर धरि चले हरषि हिय, कानन भवन समान ॥ २ ॥
ऐसे सुत के बिरह-अवधि लौँ, जौ राखौँ यह प्रान ।
तौ मिटि जाइ प्रीति की परमिति, अजस सुनौँ निज कान ॥ ३ ॥

दाड़िम=अनार । भभरि=डरकर । आउ=आयु, उमर । परिमिति=सीमा, मर्यादा ।

राम गये अजहूँ हौं जीवत, समुझत हिय अकुलान।
तुलसिदास तनु तजि रघुपति हित, कियो प्रेम परवान ॥ ४ ॥ ५९ ॥

ऐसे तैं क्यों कटु बचन कह्यो री ?

राम जाहु कानन कठोर तेरो, कैसे धौं हृदय रह्यो री ॥ १ ॥
दिनकर बंस पिता दसरथ से, राम लखन से भाई।
जननी ! तू जननी ? तौ कहा कहौं, बिधि केहि खोरि न लाई ? ॥२॥
हौं लहिहौं सुख राजमातु ह्वै, सुत सिर छत्र धरैगो।
कुल-कलङ्क मल-मूल मनोरथ, तव बिनु कौन करैगो ? ॥ ३ ॥
ऐहैं राम सुखी सब ह्वै हैं, ईस अजस मेरो हरिहैं।
तुलसिदास मोको बड़ो सोच है, तू जनम कौन बिधि भरिहैं ॥४॥६०॥

ताते हौं देत न दूषन तोहूँ।

रामबिरोधी उर कठोर तैं, प्रगट कियो है बिधि मोहूँ ॥ १ ॥
सुन्दर सुखद सुसील सुधानिधि, जरनि जाइ जिहि जोये।
बिष-बारुनी-बन्धु कहियत बिधु, नातो मिटत न धोये ॥ २ ॥
होते जो न सुजान-सिरोमनि, राम सब के मन माहीं ॥
तौ तोरी करतूति मातु ! सुनि, प्रीति प्रतीति कहा हीं ? ॥ ३ ॥
मृदु मञ्जुल साँची सनेह सुचि, सुनत भरत-बर-बानी।
तुलसी साधु साधु सुर नर मुनि, कहत प्रेम पहिचानी ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जो पै हौं मातु माते महँ ह्वै हौं।

तौ जननी ! जग में या मुख की, कहाँ क़ालिमा ध्वैहौं ? ॥ १ ॥
क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि, कौन मानिहै साँची ? ।
महिमा-मृगी कौन सुकृती की, खल-बच-बिसिखन बाँची ? ॥ २ ॥
गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै।
दीनबन्धु कारुन्य-सिन्धु बिनु, कौन हिये की बूझै ? ॥ ३ ॥

परवान=प्रमाण। खोरि=दोष। बिधु=चन्द्रमा। साधु साधु=सत्य सत्य। कालिमा=कालिमा।

तुलसी रामबियोग-विषम-बिष, बिकल नारिनर भारी।
भरत-सनेहसुधा सींचे सब, भये तेहि समय सुखारी ॥४॥६२॥

काहे को खोरि कैकयिहि लावौं ?
धरहु धीर बलि जाउँ तात ! मोको, आज बिधाता बावैं ॥ १ ॥
सुनिबे जोग बियोग राम को, हौं न होउँ मेरे प्यारे।
सो मेरे नयननि आगे तैं, रघुपति बनहिं सिधारे ॥ २ ॥
तुलसिदास समुझाइ भरत कहँ, आँसु पोँछि उर लाये।
उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित, मनहुँ राम फिरि आये ॥३॥६३॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है ?
करहु राज रघुराज-चरन तजि, लै लटि लोग रहा है ॥ १ ॥
धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि, राज-समाज ढहा है।
तापर मोकोँ प्रभु करि चाहत, सब बिनु दहन दहा है ॥ २ ॥
राम-सपथ कोउ कछू कहै जनि, मैं दुख दुसह सहा है।
चित्रकूट चलिये सब मिलि बलि, छमिये मोहिं हहा है ॥ ३ ॥
योँ कहि भोर भरत गिरिवर को, मारग बूझि गहा है।
सकल सराहत एक भरत जग, जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥
जानहिं सिय रघुनाथ भरत को, सील सनेह महा है।
कै तुलसी जाको राम-नाम सौं, प्रेम-नेम निबहा है ॥५॥६४॥

भाई ! हौं अवध कहा रहि लैहौं।
राम-लखन-सिय-चरन बिलोकन, काल्हि काननहिं जैहौं ॥ १ ॥
जद्यपि मोतैं कै कुमातु तैं, ह्वै आई अति पोची।
सन्मुख गये सरन राखहिंगे, रघुपति परम सँकोची ॥ २ ॥
तुलसी योँ कहि चले भोरहीं, लोग बिकल सँग लागे।
जनु बन जरत देखि दारुन दव, निकसि बिहँग मृग भागे ॥३॥६५॥

लै लटि लोग रहा है=लोग इसी धुन में हैरान हैं। प्रभु=राजा, मालिक। हहा=अविनय पोची=बिचाई, खोटापन।

सुक सोँ गहवर हिय कहै सारो।
बीर कीर ! सिय राम लखन बिनु, लागत जग अँधियारो ॥ १ ॥
पापिनि चेरि अयानि रानि नृप, हित अनहित न बिचारो।
कुलगुरु सचिव साधु सोचत बिधि, को न बसाइ उजारो ? ॥ २ ॥
अवलोके न चलत भरि लोचन, नगर कोलाहल भारो।
सुने न बचन करुनाकर के जब, पुर परिवार सँभारो ॥ ३ ॥
भैया भरत भावते के सँग, बन सब लोग सिधारो।
हम पर पाइ पींजरनि तरसत, अधिक अभाग हमारो ॥ ४ ॥
सुनि खग कहत अम्ब ! मौंगी रहि, समुझि प्रेमपथ न्यारो।
गये ते प्रभुहि पहुँचाइ फिरे पुनि, करत करम गुन गारो ॥ ५ ॥
जीवन जग जानकी लखन को, मरन महीप सँवारो।
तुलसी और प्रीति की चरचा, करत कहा कछु चारो ॥ ६ ॥ ६६ ॥

कहै सुक सुनहिं सिखावन सारो !।
बिधि करतब बिपरीत बाम गति, रामप्रेम-पथ न्यारो ॥ १ ॥
को नरनारि अवध खग मृग जेहि, जीवन राम तेँ प्यारो।
बिद्यमान सब के गवने बन, बदन करम को कारो ॥ २ ॥
अम्ब अनुज प्रिय सखा सुसेवक, देखि बिषाद बिसारो।
पंछी परबस परे पींजरनि, लेखो कौन हमारो ॥ ३ ॥
रही नृप की बिगरी है सब की, अब एक सँवार निहारो।
तुलसी प्रभु निज चरन-पीठ-मिस, भरत-प्रान रखवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

ता दिन सृङ्गबेरपुर आये।
राम सखा ते समाचार सुनि, बारि बिलोचन छाये ॥१॥
कुस साथरी देखि रघुपति की, हेतु अपनपौ जानी।
कहत कथा सिय राम लखन की, बैठेहि रैनि बिहानी ॥२॥

सुक=सुग्गा। सारो=मैना, सारिका। मौंगी=मौन, चुप। गारो=घमंड, प्रतिष्ठा। चारो=उपाय, तदबीर। कारो=काला। सँवार=सजाव, संजोग।

भोरहि भरद्वाज आस्रम ह्वै, करि निषादपति आगे।
चले जनु तक्यो तड़ाग तृषित गज, घोर घाम के लागे ॥३॥
बूझत चित्रकूट कहँ जेहि तेहि, मुनि बालकनि बतायो।
तुलसी मनहुँ फनिक मनि ढूँढ़त, निरखि हरषि हिय धायो ॥४॥६८॥

राग केदारा

बिलोके दूरि तेँ दोउ बीर।
उर आयत आजानु सुभग भुज, स्यामल गौर सरीर ॥ १ ॥
सीस जटा सरसीरुह लोचन, बने परिधन मुनचीर।
निकट निषङ्ग सङ्ग सिय सोभित, करनि धुनत धनु तीर ॥ २ ॥
मन अगहुँड़ तनु पुलक सिथिल भयो, नलनि नयन भरे नीर।
गड़त गोड़ मानोँ सकुच-पङ्क महँ, कढ़त प्रेम-बल धीर ॥ ३ ॥
तुलसिदास दसा देखि भरत की, उठि धाये अतिहि अधीर।
लिये उठाइ उर लाइ कृपानिधि, बिरह-जनित हरि पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

भरत भये ठाढ़े कर जोरि।
ह्वै न सकत सामुहेँ सकुचबस, समुझि मातुकृत खोरि ॥ १ ॥
फिरिहैँ किधौँ फिरन कहिहैँ प्रभु, कलपि कुटिलता मोरि।
हृदय सोच जल भरे बिलोचन, नेह देह भइ भोरि ॥ २ ॥
बनबासी पुरलोग महामुनि, किये हैँ काठ के से कोरि।
दै दै स्रवन सुनिबे के जहँ तहँ, रहे प्रेम मन बोरि ॥ ३ ॥
तुलसी राम-सुभाव सुमिरि उर, धरि धीरजहि बहोरि।
बोले बचन बिनीत उचित हित, करुना-रसहि निचोरि ॥ ४ ॥ ७० ॥

जानत हौँ सबही के मन की।
तदपि कृपालु करौँ बिनती सोइ, सादर सुनहु दीन हित जन की ॥१॥
ये सेवक सन्तत अनन्य अति, ज्योँ चातकहि एक गति घन की।
यह बिचारि गवनहु पुनीत पुर, हरहु दुसह आरति परिजन की ॥२॥

परिधन = धोती। धुनत = क्रीड़ावश धनुष की ताँत बुलाना।

मेरो जीवन जानिय ऐसोइ, जैसे अहि जासु गई मनि फन की ।
मेटहु कुलकलङ्क कोसलपति, आज्ञा देहु नाथ मोहिं बन को ॥ ३ ॥
मोकों जोइ लाइय लागै सोइ, उतपत है कुमातु तें तन की ।
तुलसिदास सब दोष दूरि करि, प्रभु अब लाज करहु निज पन की ॥४॥७१॥

तात ! बिचारो धौं हौं क्यों आवौं ।
तुम्ह सुचि सुहृद सुजान सकल बिधि, बहुत कहा कहि कहि समुझावौं ॥१॥
निज कर खाल खैंचि या तनु तें, जौ पितु पग पानहीं करावौं ।
होउँ न उरिन पिता दसरथ तें, कैसे ताके बचन मेटि पति पावौं ॥२॥
तुलसिदास जाको सुजस तिहूँ पुर, क्यों तेहि कुलहि कालिमा लावौं ।
प्रभुरुखनिरखिनिरासभरतभये, जान्योहैसबहिभाँतबिधिबावौं?॥३॥७२॥

बहुरो भरत कह्यो कछु चाहैं ।
सकुच-सिन्धु बोहित बिवेक करि, बुधि बल बचन नबाहैं ॥ १ ॥
छोटे हुते छोह करि आये, मैं सामुहैं न हेरो ।
एकहि बार आजु बिधि मेरो, सील सनेह निबेरो ॥ २ ॥
तुलसी जौ फिरिबो न बनै प्रभु, तौ हौं आयसु पावौं ।
घर फेरिये लखन लरिका हैं, नाथ साथ हौं आवौं ॥ ३ ॥ ७३ ॥

रघुपति ! मोहिं सङ्ग किन लीजै ? ।
बारबार पुर जाहु नाथ ! केहि, कारन आयसु दीजै ॥ १ ॥
जद्यपि हौं अति अधम कुटिल मति, अपराधिनि को जायो ।
प्रनतपाल कोमल-सुभाव जिय, जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥
जो मेरे तजि चरन आन गति, कहौं हृदय कछु राखी ।
तौ परिहरहु दयालु दीनहित, प्रभु अभिअन्तर-साखी ॥ ३ ॥
ताते नाथ ! कहौं मैं पुनि पुनि, प्रभु पितु मातु गोसाँई ।
भजन-हीन नरदेह बृथा खर, स्वान फेरु की नाँई ॥ ४ ॥
बन्धु-बचन सुनि स्रवन नयन, राजीव नीर भरि आये ।

हेरो=देखकर । पति=प्रतिष्ठा, मर्यादा । निबेरो छुड़ा दिया ।। फेरु=गीदड़ ।

तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि, बाँह भरत उर लाये ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि हिये हैा ?

प्रीति नीति गुन सील धर्म कहुँ, तुम अवलम्ब दिये हैा ॥ १ ॥
तात ! जात जानिबे न ए दिन, करि प्रमान पितु-बानी ।
ऐहैाँ बेगि धरहु धीरज उर, कठिन कालगति जानी ॥ २ ॥
तुलसिदास अनुजहिँ प्रबोधि प्रभु, चरनपीठ निज दीन्हेँ ।
मनहुँ सबनि के प्रान-पाहरू, भरत सीस धरि लीन्हेँ ॥३॥७५॥

बिनती भरत करत कर जोरे ।

दीनबन्धु दीनता दीन की, कबहुँ परै जिनि भोरे ॥ १ ॥
तुम्हसे तुम्हहिँ नाथ मोको, मोसे जन तुमको बहुतेरे ।
इहै जानि पहिचानि प्रीति , छमिये अघ औगुन मेरे ॥ २ ॥
योँ कहि सीय-राम-पाँयनि परि, लखन लाइ उर लीन्हेँ ।
पुलक सरीर नीर भरि लोचन, कहत प्रेम पन कीन्हेँ ॥ ३ ॥
तुलसी बीते अवधि प्रथम दिन, जो रघुबीर न ऐहैा ।
ते प्रभु-चरन-सरोज-सपथ, जीवत परिजनहिँ न पैहैा ॥ ४ ॥ ७६ ॥

अवसि हैाँ आयसु पाइ रहैाँगो ।

जनमि कैकेयी-कोखि कृपानिधि! क्योँ कछु चपरि कहैाँगो ॥ १ ॥
भरत भूप सिय राम लखन बन, सुनि सानन्द सहैाँगो ।
पुर परिजन अवलोकि मातु सब, सुख सन्तोष लहैाँगो ।
प्रभु जानत जेहि भाँति अवधि लैाँ, बचन पालि निबहैाँगो ।
आगे की बिनती तुलसी तब, जब फिरि चरन गहैाँगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

प्रभु सोँ मैँ ढीठो बहुत दई है ।

कीबी छमा नाथ आरति तैँ, कही कुजुगुति नई है ॥१॥
यैाँ कहि बार बार पायन्ह परि, पाँवरि पुलकि लई है ।
अपनो अदिन देखिहैाँ डरपत, जेहि बिष बेलि बई है ॥ २ ॥

चरनपीठ=खड़ाऊँ । भोरे=भूल मेँ । चपरि=सहसा, झुक कर । पाँवरि=पादुका, खड़ाऊँ ।

आये सदा सुधारि गोसाँई, जन तें बिगरि गई है।
थके बचन पैरत सनेह-सरि, परयो मानों घोर घई है ॥ ३ ॥
चित्रकूट तेहि समय सबनि की, बुद्धि बिषाद हई है।
तुलसी राम-भरत के बिछुरत, सिला सप्रेम भई है ॥ ४ ॥ ७८

जब तें चित्रकूट तें आये।
नन्दिग्राम खनि अवनि डासि कुस, परनकुटी करि छाये ॥ १
अजिन बसन फल असन जटा धरे, रहत अवधि चित दीन्हें
प्रभुपद-प्रेमनेमब्रत निरखत, मुनिन्ह नमित मुख कीन्हें ॥ २ ॥
सिंहासन पर पूजि पादुका, बारहिं बार जोहारे।
प्रभु-अनुराग माँगि आयसु-पुरजन सब काज सँवारे॥ ३ ॥
तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेज तनु, त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई।
भये न हैं न होहिंगे कबहूँ, भुवन भरत से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

राग रामकली

राखी भगति भलाई भली भाँति भरत।
स्वारथ परमारथ पथी जय जय जग करत ॥ १ ॥
जो ब्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत।
सो ब्रत लिये चातक ज्यों सुनत पाप हरत ॥ २ ॥
सिंहासन सुभग राम-चरन-पीठ धरत।
चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥
आपु अवध बिपिन बन्धु-सोच जरनि जरत।
तुलसी सम बिषम सुगम अगम लखि न परत ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहिं भावति कहि आवति नहिं भरत जू की रहनि।
सजल नयन सिथिल बयन, प्रभु-गुन-गन कहनि ॥ १ ॥
असन-बसन-अयन-सयन, धरम-गरुअ-गहनि।
दिन दिन पन प्रेम नेम, निरुपधि निरबहनि ॥ २ ॥

घई=भँवर, पानी का चक्कर। निरुपधि=निष्प्रयोजन, निःस्वार्थ भाव से।

सीता-रघुनाथ-लखन, बिरह पीर-सहनि।
तुलसी तजि उभय लोक, रामचरन-चहनि ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानो है सङ्कर हनुमान लखन भरत-रामभगति।
कहत सुगम करत अगम, सुनत मीठी लगति ॥ १ ॥
लहत सकृत चहत सकल, जुग जुग जगमगति।
राम-प्रेम-पथ तें कबहुँ, डोलति नहिं डगति ॥ २ ॥
रिधि सिधि बिधि चारि सुगति, जा बिनु गति अगति।
तुलसी तेहि सनमुख बिनु, बिषय-ठगिनि ठगति ॥३॥८२॥

राग गौरी

कैकेयी करी धौं चतुराई कौन ?।
राम लखन सिय बनहिं पठाये, पति पठये सुरमौन ॥ १ ॥
कहा भलो धौं भयो भरत को, लगे तरुन-तन दौन।
पुरबासिन्ह के नयन नीर बिनु, कबहुँ नो देखति हौं न ॥ २ ॥
कौसल्या दिन राति बिसूरति, बैठि मनहिं मन मौन।
तुलसी उचित न होइ रोइबो, प्रान गये सँग जौ न ॥३॥८३॥

हाथ मींजिबो हाथ रह्यो।
लगी न सङ्ग चित्रकूटहु तें, ह्याँ कहा जात बह्यो ॥ १ ॥
पति सुरपुर सिय राम लखन बन, मुनिब्रत भरत गह्यो।
हौं रहि घर मसान-पावक ज्यों, मरिबोइ मृतक दह्यो ॥ २ ॥
मेरोइ हिय कठोर करिबे कहँ, बिधि कहुँ कुलिस लह्यो।
तुलसी बन पहुँचाइ फिरी सुत, क्यों कछु परत कह्यो ? ॥३॥८४॥

राग सोरठ

हौं तो समुझि रहो अपनो सो।
राम लखन सिय को सुख मो कहँ, भयो सखी ! सपनो सो ॥ १ ॥

चहनि=प्रीत, चाह। दौन=दमन। मरिबोइ मृतक दह्यो=मरे मुर्दों को जलाया।

जिन्हके बिरह बिषाद बँटावन, खग मृग जीव दुखारी।
मोहिं कहा सजनी समुझावति, हौं तिन्हकी महतारी ॥ २ ॥
भरत दसा सुनि सुमिरि भूपँगति, देखि दीन पुरबासी।
तुलसी राम कहति हौं सकुचति, ह्वै है जग उपहासी ॥ ३ ॥ ८५ ॥

आली! हौं इन्हहिं बुझावौं कैसे ?।
लेत हिये भरि भरि पति को हित, मातुहेतु सुत जैसे ॥ १ ॥
बार बार हिहिनात हेरि उत, जो बोलै कोउ द्वारे।
अङ्ग लगाइ लिये बारे तें, करुनामय सुत प्यारे ॥ २ ॥
लोचन सजल सदा सोवत से, खान पान बिसराये।
चितवत चौंकि नाम सुनि सोचत, राम-सुरति उर आये ॥ ३ ॥
तुलसी प्रभु के बिरह बधिक हठि, राजहंस से जोरे।
ऐसेहु दुखित देखि हौं जीवति, राम लखन के घोरे ॥ ४ ॥ ८६ ॥

राघौ! एक बार फिरि आवौ।
ये बर बाजि बिलोकि आपने, बहुरो बनहिं सिधावौ ॥ १ ॥
जे पय प्याइ पोखि कर-पङ्कज, बार बार चुचुकारे।
क्यों जीवहिं मेरे राम लाड़िले! ते अब निपट बिसारे ॥ २ ॥
भरत सौगुनो सार करत हैं, अति प्रिय जानि तिहारे।
तदपि दिनहिं दिन होत झाँवरे, मनहुँ कमल हिम-मारे ॥ ३ ॥
सुनहु पथिक! जो राम मिलहिं बन, कहियो मातु सँदेसो।
तुलसी मोहिं और सबहिन तें, इन्हको बड़ो अँदेसो ॥ ४ ॥ ८७ ॥

राग केदारा

काहू सों काहू समाचार ऐसे पाये।
चित्रकूट तें राम लखन सिय, सुनियत अनत सिधाये ॥ १ ॥
सैल सरित निर्झर बन मुनिथल, देखि देखि सब आये।
कहत सुनत सुमिरत सुखदायक, मानस सुगम सुहाये ॥ २ ॥

सार=ख़बरदारी, संभाल।

बढ़ि अवलम्ब बाम-बिधि-बिघटित, बिषम बिषाद बढ़ाये।
सिरिस सुमन सुकुमार मनोहर, बालक बिन्ध्य चढ़ाये ॥ ३ ॥
अवध सकल नर नारि बिकल अति, अँकनि बचन अनभाये।
तुलसी राम-वियोग-सोग-बस, समुझत नहिं समुझाये ॥ ४ ॥ ८८ ॥

सुनो मैं सखि! मङ्गल चाह सुहाई।
सभ पत्रिका निषादराज की, आजु भरत पहँ आई ॥ १ ॥
कुँवर सो कुसल-छेम अलि! तेहि पल, कुलगुरु कहँ पहुँचाई।
गुरु कृपालु सम्भ्रम पुर घर घर, सादर सबहि सुनाई ॥ २ ॥
बधि बिराध सुर साधु सुखी करि, रिषि सिख आसिष पाई।
कुम्भज सिष्य समेत सङ्ग सिय, मुदित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥
बीच बिन्ध्य रेवा सुपास थल, बसे हैं परन-गृह छाई।
पन्थ-कथा रघुनाथ पथिक की, तुलसिदास सुनि गाई ॥ ४ ॥ ८९ ॥

अरण्य कांड

राग मलार

देखे राम-पथिक नाचत मुदित मोर।
मानत मनहुँ सतड़ित ललित घन, धनु सुरधनु गरजनि टङ्कोर ॥ १ ॥
कँपै कलाप बर बरहि फिरावत, गावत कल कोकिल-किसोर।
जहँ जहँ प्रभु बिचरत तहँ तहँ सुख, दंडकबन कैातुक न थोर ॥ २ ॥
सघन छाँह तम-रुचिर रजनि भ्रम, बदन-चन्द चितवत चकोर।
तुलसी मुनि खग मृगनि सराहत, भये हैं सुकृत सब इन्हकी ओर ॥३॥१॥

राग कल्यान

सुभग सरासन सायक जोरे।
खेलत राम फिरत मृगया बन, बसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥१॥

अनभाये=न सुहानवाले। चाह=समाचार। रेवा=नर्मदा। टङ्कोर=झनकार, टनाका। कलाप=समूह। बरहि=मुरैला।

पीत बसन कटि चारु चारि सर, चलत कोटि नट सो तृन तोरे।
स्यामल तनु स्रम-कन राजत ज्यौं, नव घन सुधा-सरोवर खोरे ॥२॥
ललित कन्ध बर भुज बिसाल उर, लेहि कंठ-रेखैं चित चोरे।
अवलोकत मुख देत परम सुख, लेत सरद-ससि की छबि छोरे ॥३॥
जटा मुकुट सिर सारस-नयननि, गोहैं तकत सुभौंह सकोरे।
सोभा अमित समाति न कानन, उमगि चली चहुँ दिसि मिति फोरे ॥४॥
चितवत चकित कुरङ्ग कुरङ्गिनि, सब भये मगन मदन के भोरे।
तुलसिदास प्रभु बान न मोचत, सहज सुभाय प्रेमबस थोरे ॥५॥ २ ॥

राग सोरठ

बैठे हैं राम लखन अरु सीता।
पञ्चबटी बर परनकुटी तर, कहैं कछु कथा पुनीता ॥१॥
कपट-कुरङ्ग कनकमनिमय लखि, प्रिय सों कहति हँसि बाला।
पाये पालिबे जोग मञ्जु मृग, मारेहुँ मञ्जुल छाला ॥२॥
प्रिया-बचन सुनि बिहँसि प्रेमबस, गवहि चाप सर लीन्हें।
चल्यो सो भाजि फिरि फिरि हेरत, मुनिमख-रखवारे चीन्हें ॥३॥
सोहति मधुर मनोहर मूरति, हेम-हरिन के पाछे।
धावनि नवनि बिलोकनि बिथकनि, बसै तुलसि उर आछे ॥४॥ ३ ॥

राग कल्यान

कर सर धनु कटि रुचिर निषङ्ग।
प्रिया-प्रीति-प्रेरित बन बीथिन्ह, बिचरत कपट-कनक-मृग सङ्ग ॥१॥
भुज बिसाल कमनीय कन्ध उर, स्रम-सीकर सोहैं साँवरे अङ्ग।
मनु मुकुता मनि-मरकतगिरि पर, लसत ललित रबि-किरनि प्रसङ्ग ॥२॥
नलिन नयन सिर जटा मुकुट बिच, सुमन-माल मनु सिव-सिर गङ्ग।
तुलसिदास ऐसी मूरति की बलि, छबि बिलोकि लाजै अमित अनङ्ग ॥३॥४॥

खोरे=गिलास। गोहैं=साथ ही, गोहन। सकोरे=सिकोड़ कर। मिति=सीमा। भोरे=धोखे।
कमनीय=सुन्दर।

राग केदारा

राघव भावति मोहि बिपिन की बीथिन्ह धावनि।
अरुन-कञ्ज-बरन चरन सोकहरन, अङ्कुस कुलिस केतु अङ्कित अवनि॥१॥
सुन्दर स्यामल अङ्ग बसन पीत सुरङ्ग, कटि निषङ्ग परिकर मेरवनि।
कनक-कुरङ्ग सङ्ग साजे कर सर चाप, राजिवनयन इत उत चितवनि॥२॥
सोहत सिर मुकुट जटा पटल निकर सुमन, लता सहित रची बनवनि।
तैसेई स्रम-सीकर रुचिर राजत मुख, तैसिये ललित भृकुटिन्ह की नवनि॥३॥
देखत खग-निकर मृग रवनिन्ह जुत, थकित बिसारि जहाँ तहाँ की भवनि।
हरि-दरसन-फल पायो है ज्ञान बिमल, जाँचत भगति मुनि चाहत जवनि॥४॥
जिन्हके मन मगन भये हैं रस सगुन, तिन्हके लेखे अगुन मुकुति कवनि।
स्रवन-सुख करनि भवसरिता तरनि, गावत तुलसिदास कीरति पवनि॥५॥

राग सोरठ

रघुबर दूरि जाइ मृग मारयो।
लखन पुकारि राम हरुये कहि, मरतहुँ बैर सँभारयो॥१॥
सुनहु तात! कोउ तुम्हहिं पुकारत, प्राननाथ की नाँई।
कह्यो लखन हत्यौ हरिन कोपि सिय, हठि पठयो बरिआँई॥२॥
बन्धु बिलोकि कहत तुलसी-प्रभु, भाई! भली न कीन्हीं।
मेरे जान जानकी काहू, खल छल करि हरि लीन्हीं॥३॥ ६॥

आरत बचन कहति बैदेही।
बिलपति भूरि बिसूरि दूरि गये, मृग सँग परम सनेही॥१॥
कहे कटु बचन रेख नाँघी मैं, तात छमा सो कीजै।
देखि बधिक-बस राज मरालिनि, लखन लाल छिनि लीजै॥२॥
बनदेवनि सिय कहन कहति यौं, छल करि नीच हरी हौं।
गोमर-कर सुरधेनु नाथ! ज्यौं, त्यौं पर-हाथ परी हौं॥३॥

मेरवनि=मिलवनि, मेल। पटल=पंक्ति। स्रमसीकर=पसीने की बुन्दें। पवनि=वाह, पावनि।
गोमर=कसाई।

तुलसिदास रघुनाथ-नाम-धुनि, अकनि गीध धुकि धायो।
पुत्रि पुत्रि! जनि डरहि न जैहै, नीच मीचु हौं आयो ॥४॥ ७॥

फिरत न बारहिं बार पचारयो।
चपरि चोँच चङ्गुल हय हति रथ, खंड खंड करि डारयो ॥१॥
विरथ बिकल कियो छीनि लीन्हि सिय, घन घायनि अकुलान्यौ।
तब असि काढ़ि काटि पर पाँवर, लै प्रभु-प्रिया परान्यौ ॥२॥
रामकाज खगराज आजु लरयो, जियत न जानकि त्यागी।
तुलसिदास सुर सिद्ध सराहत, धन्य बिहँग बड़भागी ॥३॥ ८॥

राग गौरी

हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुल-मनि,
लखन ललित कर लिये मृगछाल।
आस्रम आवत चले सगुन न भये भले,
फरके वाम बाहु लोचन बिसाल ॥ १ ॥
सरित जल मलिन सरनि सूखे नलिन,
अलि न गुञ्जत कल कूजैं न मराल।
कोलिनि कोल किरात जहाँ तहाँ बिलखात,
बन न बिलोकि जात खग-मृग-माल ॥ २ ॥
तरु जे जानकी लाये ज्याये हरि करि कपि,
हेरैं न हुँकरि झरैं फल न रसाल।
जे सुक सारिका पालेमातु ज्यों ललकि लाले,
तेऊ न पढ़त न पढ़ावैं मुनिबाल ॥ ३ ॥
समुझि सहमे सुठि प्रिया तौ न आई उठि,
तुलसी बिबरन परन-तृन साल।
औरै सो सब समाज कुसल न देखौं आज,
गहबर हिय कहैं कोसलपाल ॥ ४ ॥ ९ ॥

अकनि=सुनकर। धुकि=झुककर। चपरि=फुरती से। घनघायनि=गहरी चोटों से। गहबर=उद्विग्न, व्याकुल।

आस्रम निरखि भूले द्रुम न फले न फूले,
अलि खग मृग मानों कबहुँ न हे ।
मुनि न मुनिबधूटी उजरी परनकुटी,
पञ्चबटी पहिचानि ठाढ़ेई रहे ॥ १ ॥
उठी न सलिल लिये प्रेम प्रमुदित हिये,
प्रिया न पुलकि प्रिय बचन कहे ।
पल्लव-सालन हेरी प्रानबल्लभा न टेरी,
बिरह बिथकि लखि लखन गहे ॥ २ ॥
देखे रघुपति-गति बिबुध बिकल अति,
तुलसी गहन बिनु दहन दहे ।
अनुज दियो भरोसो तौलौं है सोच खरो सो,
सिय-समाचार प्रभु जौलौं न लहे ॥ ३ ॥ १० ॥

राग सोरठ

जबहिं सिय-सुधि सब सुरनि सुनाई ।
भये सुनि सजग बिरहसरि पैरत, थके थाह सी पाई ॥१॥
कसि तूनीर तीर धनु-धर-धुर, धीर बीर दोउ भाई ।
पञ्चबटी गोदहि प्रनाम करि, कुटी दाहिनी लाई ॥२॥
चले बूझत बन बेलि बिटप खग, मृग अलि अवलि सुहाई ।
प्रभु की दसा सो समौ कहिबे को, कबि उर आह न आई ॥३॥
रटनि अकनि पहिचानि गीध फिरे, करुनामय रघुराई ।
तुलसी रामहिं प्रिया बिसरि गई, सुमिरि सनेह सगाई ॥४॥ ११॥

मेरे एकौ हाथ न लागी ।
गयो बपु बीति बादि कानन ज्यौं, कलपलता दव दागी ॥१॥
दसरथ सोँ न प्रेम प्रतिपाल्यौ, हुतो जो सकल जग साखी ।
बरबस हरत निसाचरपति सोँ, हठि न जानकी राखी ॥२॥

हे=थे, रहे । सालन=सालुओं । गहन=जंगल । खरोसो=थोड़ा सा । गोदहि=गोदावरी
आह=पीड़ा, साहस ।

भरत न मैं रघुबीर बिलोके, तापस वेष बनाये।
चाहत चलन प्रान पाँवर बिनु, सिय-सुधि प्रभुहि सुनाये ॥३॥
बारबार कर मींजि सीस धुनि, गीधराज पछिताई।
तुलसी प्रभु कृपालु तेहि औसर, आइ गये दोउ भाई ॥४॥ १२ ॥

राघौ गीध गोद करि लीन्हौं।
नयन-सरोज सनेह-सलिल सुचि, मनहुँ अरघजल दीन्हौं ॥१॥
सुनहु लखन ! खगपतिहि मिले बन, मैं पितु-मरन न जान्यौ।
सहि न सक्यौ सो कठिन बिधाता, बड़ो पछु आजुहि भान्यौ ॥२॥
बहु बिधि राम कह्यौ तनु राखन, परम धीर नहिं डोल्यौ।
रोकि प्रेम अवलोकि बदनबिधु, बचन मनोहर बोल्यौ ॥३॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि, समय न धोखो लैहौं।
जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ, तुमहिं कहाँ पुनि पैहौं ॥४॥ १३ ॥

नीके कै जानत राम हियो हौं।
प्रनतपाल सेवक कृपालु-चित, पितु पटतरहि दियो हौं ॥१॥
त्रिजगजोनि-गत गीध जनम भरि, खाइ कुजन्तु जियो हौं।
महाराज सुकृती-समाज सब,ऊपर आजु कियो हौं ॥२॥
स्रवन बचन मुख नाम रूप चख, राम उछङ्ग लियो हौं।
तुलसी मो समान बड़भागी, को कहि सकै बियो हौं ॥३॥ १४ ॥

मेरे जान तात कछू दिन जीजै।
देखिय आपु सुवन-सेवासुख, मोहिं पितु को सुख दीजै ॥१॥
दिव्य-देह इच्छा-जीवन जग, बिधि मनाइ माँगि लीजै।
हरि हर सुजस सुनाइ दरस दै, लोग कृतारथ कीजै ॥२॥
देखि बदन सुनि बचन अमिय तन, रामनयन-जल भीजैं।
बोल्यो बिहँग बिहँसि रघुबर बलि, कहौं सुभाय पतीजै ॥३॥

पछु=पक्ष, बल। भान्यो=नष्ट कर दिया। कुजन्तु=बुरे जीवोंके माँस। उछङ्ग=गोद। बियो=दूसरो। पतीजै=विश्वास कीजिये।

मेरे मरिबे सम न चारि फल, होँहिं तौ क्योँ न कहीजै ?।
तुलसी प्रभु दियो उतरु मौन हीं, परी मानौँ प्रेम सहीजै ॥४॥ १५ ॥

मेरो सुनियो तात ! सँदेसो ।
सीय-हरन जनि कहेहु पिता सौँ, ह्वैहै अधिक अँदेसो ॥ १॥
रावरे पुन्यप्रताप-अनल महँ, अलप दिननि रिपु दहिहैँ ।
कुल समेत सुरसभा दसानन, समाचार सब कहिहैँ ॥२॥
सुनिप्रभु बचन राखि उर मूरति, चरनकमल सिर नाई ।
चल्यो नभ सुनत राम-कल-कीरति, अरु निज भाग बड़ाई ॥३॥
पितु ज्योँ गीध-क्रिया करि रघुपति, अपने धाम पठायो ।
ऐसो प्रभु बिसारि तुलसी सठ, तू चाहत सुख पायो ॥४॥ १६ ॥

राग सूहो

सबरी सोइ उठी फरकत बाम बिलोचन बाहु ।
सगुन सुहावने सूचक मुनि-मन-अगम उछाहु ॥

ह० छन्द

मुनि-अगम उर आनन्द लोचन, सजल तनु पुलकावली ।
तृन-पर्नसाल बनाइ जल भरि, कलस फल चाहन चली ॥
मञ्जुल मनोरथ करति सुमिरति, बिप्र-बरबानी भली ।
ज्योँ कल्प-बेलि सकेलि सुकृत, सुफूल-फूली सुख-फली ॥१॥
प्रानप्रिय पाहुने ऐहैँ रामलखन मेरे आजु ।
जानत जन-जिय की मृदु चित राम गरीबनिवाजु ॥

ह० छन्द

मृदु चित गरीबनिवाज आजु, बिराजिहैँ गृह आइकै ।
ब्रह्मादि सङ्कर गौरि पूजित, पूजिहौँ अब जाइकै ॥
लहि नाथ हौँ रघुनाथ-बानो, पतितपावन पाइकै ।
दुहूँ ओर लाहु अघाइ तुलसी, तीसरेहु गुन गाइकै ॥ २ ॥

दोना रुचिर रचे पूरन कन्द मूल फल फूल।
अनुपम अमियहु तें अम्बक अवलोकत अनुकूल॥
ह० छं०-अनुकूल अम्बक अम्ब ज्यौं निज, डिम्भ हित सब आनिकै।
सुन्दर सनेह सुधा सहस जनु, सरस राखे सानिकै॥
छन भवन छन बाहर बिलोकति, पन्थ भू पर पानिकै।
दोउ भाइ आये सबरिका के, प्रेम-पन पहचानिकै॥३॥
स्त्रवन सुनत चली आवत देखि लखन रघुराउ।
सिथिल सनेह कहै है सपना बिधि कैधौं सतिभाउ॥
ह० छन्द-सतिभाउ कै सपनो निहारि, कुमार कोसलराय के।
गहे चरन जे अघहरन नत-जन, बचन-मानस-काय के।
लघु-भाग-भाजन उदधि उमग्यो, लाभ सुख चित चाय के।
सो जननि ज्यौं आदरी सानुज, राम भूखे भाय के॥ ४॥
प्रेम पट पाँवड़े देत सुअरघ बिलोचन बारि।
आस्त्रम लै दिये आसन पङ्कज-पाँय पखारि॥
ह० छं०-पद-पङ्कजात पखारि पूजे, पन्थ-स्त्रम-बिरहत भये।
फल फूल अङ्कुर मूल धरे, सुधारि भरि दोना नये॥
प्रभु खात पुलकित गात स्वाद, सराहि आदर जनु जये।
फल चारिहू फल चारि दहि, परचारि फल सबरी दये॥ ५॥
सुमन बरषि हरषे सुर मुनि मुदित सराहि सिहात।
केहि रुचि केहि छुधा सानुज माँगि माँगि प्रभु खात!
ह० छं०-प्रभु खात माँगत देति सबरी, राम भोगी जाग के।
पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि भाजन-भाग के॥
बालक सुमित्रा कौसिला के, पाहुने फल साग के।
सुनु समुझि तुलसी जानु रामहिं, सब अमल अनुराग के॥ ६॥

अम्बक=नेत्र, आँख। डिम्भ=बालक। पानिकै=पानी का छिड़काव करके। फलचारिहू=अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष।

रघुबर अँचइ उठे सवरी करि प्रनाम करि जोरि।
हौं बलि बलि गई पुरई मञ्जु मनोरथ मोरि॥
ह० छं०—पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहु पूरन करी।
अघ अवगुनन्हि की कोठरी करि, कृपा मुदमङ्गल भरी॥
तापस किरातिनि कोल मृदु, मूरति मनोहर मन धरी।
सिर नाइ आयसु पाइ गवने, परमनिधि पाले परी॥ ७॥
सिय-सुधि सब कही नख सिख निरखि निरखि दोउ भाइ।
दै दै प्रदच्छिना करति प्रनाम न प्रेम अघाइ॥
ह० छं०—अति प्रीति मानस राखि रामहिं, राम-धामहिं सो गई।
तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने, हाथ जलअञ्जलि दई॥
तुलसी-भनति सवरी-प्रनति रघुबर प्रकृति करुनामई।
गावत सुनत समुझत भगति हिय, होय प्रभुपद नित नई॥८॥१७॥

किष्किन्धा कांड

राग केदारा

भूषन बसन बिलोकत सिय के।
प्रेम-बिबस मन कम्प पुलक तनु, नीरजनयन नीर भरे पिय के॥१॥
सकुचत कहत सुमिरि उर उमगत, सील सनेह सुगुनगन तिय के।
स्वामिदसा लखि लखन सखा कपि, पिघले हैं आँच माठ मानो घिय के॥२॥
सोचत हानि मानि मन गुनि गुनि, गये निघटि फल सकल सुकिय के।
बरने जामवन्त तेहि अवसर, बचन बिबेक बीररस बिय के॥३॥
धीर बीर सुनि समुझि परसपर, बल उपाय उघटन निज हिय के।
तुलसिदास यह समउ कहे तें कबि, लागत निपट निठुर जड़ जिय के॥४॥१॥

प्रभु कपि-नायक बोलि कह्यो है।
बरषा गई सरद आई, अब लगि नहिं सिय-सोध लह्यो है॥१॥

माठ=हौज, मटका। सुकिय=सुकृत। बिय=दूसरे। उघटत=उमड़ना।

जा कारन तजि लोकलाज तनु, राखि वियोग सह्यौ है।
ताको तौ कपिराज आज लगि, कछु न काज निबह्यौ है ॥२॥
सुनि सुग्रीव सभीत नमित-मुख, उतरु न देन चह्यौ है।
आइ गये हरि-जूथ देखि उर, पूरि प्रमोद रह्यौ है ॥३॥
पठये बदि बदि अवधि दसहुँ दिसि, चले बल सबनि गह्यौ है।
तुलसी सिय लगि भवदधि-निधि मनु, फिर हरि चहत मह्यौ है ॥४॥२॥

सुन्दर कांड

राग केदारा

रजायसु राम को जब पायो।
गाल मेलि मुद्रिका मुदित मन, पवनपूत सिर नायो ॥१॥
भालुनाथ नल नील साथ चले, बली बालि को जायो।
फरकि सुअंग भये सगुन कहत मानों, मग मुद-मङ्गल छायो ॥२॥
देखि बिबर सुधि पाइ गीध सौं,सबनि अपनो बल मायो।
सुमिरि राम तकि तरकि तोयनिधि, लङ्क लूक सो आयो ॥३॥
खोजत घर घर जनु दरिद्र-मनि, फिरत लागि धन धायो।
तुलसी सिय बिलोकि पुलक्यो तनु, भूरिभाग भयो भायो ॥४॥१॥

देखी जानकी जब जाइ।
परम धीर समीरसुत के, प्रेम उर न समाइ ॥१॥
कृस सरीर सुभाय सोभित, लगी उड़ि उड़ि धूलि।
मनहुँ मनसज मोहिनी-मनि, गयो भोरे भूलि ॥२॥
रटति निसि बासर निरन्तर, राम राजिवनैन।
जात निकट न बिरहिनी-अरि, अकनि नाते बैन ॥३॥
नाथ के गुनगाथ कहि कपि, दई मुँदरी डारि।
कथा सुनि उठि लई कर वर, रुचिर नाम निहारि ॥४॥

मायो=आज़माया, अटकल लगाया। लूक=उल्का। अकनि=सुन कर।

हृदय हरष बिषाद अति पति,-मुद्रिका पहिचानि ।
दास तुलसी दसा सो केहि, भाँति कहै बखानि ॥ ५ ॥ २ ॥

राग सोरठ

बोलि बलि मूँदरी ! सानुज, कुसल कोसलपाल ।
अमिय बचन सुनाइ मेटहि, बिरह-ज्वाला-जाल ॥ १ ॥
कहत हित अपमान मैं कियोँ, होत हिय सोइ भाल ।
रोष छमि सुधि करत कबहूँ, ललित लछिमन लाल ॥ २ ॥
परस्पर पति देवरहि का, होति चरचा चाल ।
देवि ! कहु केहि हेत बोले, बिपुल बानर भाल ॥ ३ ॥
सीलनिधि समरथ सुसाहिब, दीनबन्धु दयाल ।
दासतुलसी प्रभुहि काहु न, कह्यो मेरो हाल ॥ ४ ॥ ३ ॥

सदल सलखन हैं कुसल, कृपाल कोसल-राउ ।
सील-सदन सनेह-सागर, सहज सरल सुभाउ ॥ १ ॥
नींद भूख न देवरहि परिहरे को पछिताउ ।
धीरधुर रघुबीर को नहिं, सपनेहूँ चित चाउ ॥ २ ॥
सोध बिनु अनुरोध रितु के, बोध बिहित उपाउ ।
करत हैं सोइ समय साधन, फलति बनत बनाउ ॥ ३ ॥
पठय कपि दिसि दसहुँ जे, प्रभुकाज कुटिल न काउ ।
बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥ ४ ॥
दई हैाँ सङ्केत कहि कुसलात सियहि सुनाउ ।
देखि दुर्ग बिसेष जानकि, जानि रिपु-गति आउ ॥ ५ ॥
कियो सीय प्रबोध मुँदरी, दियो कपिहि लखाउ ।
पाइ अवसर नाइ सिर तुलसीस गुनगन गाउ ॥ ६ ॥ ४ ॥

सुवन समीर को धीर धुरीन बीर बड़ोइ ।
देखि गति सिय मुद्रिका की, बाल ज्यौं दियो रोइ ॥ १ ॥

अकनि कटु बानी कुटिल की, क्रोध-बिन्ध्य बढ़ोइ ।
सकुचि सम भयो ईस-आयसु, कलसभव जिय जोइ ॥२॥
बुद्धि बल साहस पराक्रम, अछत राखे गोइ ।
सकल साज समाज साधक, समउ कहै सब कोइ ॥३॥
उतरि तरु तें नमत पद, सकुचात सोचत सोइ ।
चुके अवसर मनहुँ सुजनहिं, सुजन सनमुख होइ ॥४॥
कहे बचन बिनीत प्रीति, प्रीतीति नीति निचोइ ।
सीय सुनि हनुमान जान्यौ, भली भाँति भलोइ ॥५॥
देवि ! बिनु करतूति कहिबो, जानिहैं लघु लोइ ।
कहैंगो मुख की समरसरि, कालि कारिख धोइ ॥६॥
करत कछू न बनत हरिहिय, हरष सोक समोइ।
कहत मन तुलसीस लंका, करहुँ सघन घमोइ ॥७॥ ५ ॥

राग केदारा

हौं रघुबंसमनि को दूत ।
मातु मानु प्रतीति जानकि ! जानि मारुतपूत ॥१॥
मैं सुनी बातैं असैली जे, कही निसिचर नीच ।
क्यौं न मारै गाल बैठो, काल-डाढ़नि बीच ॥२॥
निदरि अरि रघुबीर-बल लै, जाउँ जौ हठि आज ।
डरौं आयसु-भङ्ग तैं अरु, बिगरिहै सुरकाज ॥३॥
बाँधि बारिधि साधि रिपु, दिन चारि में दोउ बीर ।
मिलहिंगे कपि-भालु-दल सँग, जननि उर धरु धीर ॥४॥
चित्रकूट कथा कुसल कहि, सीस नायो कीस ।
सुहृद सेवक नाथ को लखि, दई अचल असीस ॥५॥

कलसभव=अगस्त्य, जिन्होंने विंध्यपर्वत को बढ़ने से रोक दिया था। लोइ=लोग। समोइ=समाकर। घमोइ=सत्यानाशी, भरभंडा का क्षुप। असैली=नीति-विरुद्ध, अनिष्ट। डाढ़नि=चौभड़, दाँत।

भये सीतल स्रवन तन मन, सुने बचन-पियूख।
दास तुलसी रही नयननि, दरस ही की भूख ॥६॥ ६ ॥

तात ! तोहूँ सोँ कहत होति हिये गलानि।
मन को प्रथम पन समुझि अछत तनु,
लखि नइ गति भइ मति मलानि ॥१॥

पिय को बचन परिहर्‍यौ जिय के भरोसे,
सङ्ग चली बन बड़ो लाभ जानि।
पीतम-बिरह तो सनेह सरबस सुत !
औसर को चूकिबो सरिस न हानि ॥२॥

आरज-सुवन के तो दया दुवनहुँ पर,
मोहिं सोच मोतेँ सब बिधि नसानि।
अपनी भलाई भलो कियो नाथ सबही को,
मेरे हीअ दिन बस बिसरी बानि ॥३॥

नेम तो पपीहा ही के प्रेम प्यारो मीन ही के,
तुलसी कही है नीके हृदय आनि।
इतनी कही सो कही सीय ज्योँहीं त्योँहीं रही,
प्रीति परी सही बिधि सोँ न बसानि ॥४॥ ७ ॥

मातु काहे को कहति अति बचन दीन ?
तब की तुम्हीं जानति अब की हौँ हीँ कहत,
सब के जिय की जानत प्रभु प्रबीन ॥१॥

ऐसे तो सोचहिं न्याय-निठुर-नायक-रत,
सलभ खग कुरङ्ग कमल मीन।
करुनानिधान को तो ज्योँ ज्योँ तनु छीन भयो,
त्योँ त्योँ मन भयो तेरे प्रेम पीन ॥२॥

आरजसुवन = रामचन्द्रजी। दुवनहुँ = राक्षसों। सलभ = पाँखी। खग = चातक

सिय को सनेह रघुबर की दसा सुमिरि,
पवनपूत देखि भयो प्रीति-लीन।
तुलसी जन की जननी प्रबोध कियो,
समुझि तात जग बिधि-अधीन ॥३॥ ८॥

राग जयतिश्री

कहु कपि कब रघुनाथ कृपा करि, हरिहैं निज वियोग-सम्भव दुख।
राजिवनयन मयन-अनेक-छबि रविकुल-कुमुद सुखद मयङ्क-मुख ॥१॥
बिरह-अनल स्वासा-समीर निज तनु, जरिबे कहँ रही न कछू सक।
अति बल जल बरषत दोउ लोचन, दिन अरु रैन रहत एकहि तक ॥२॥
सुदृढ़ ज्ञान अवलम्बित सुनहु सुत! राखति प्रान बिचारि दहन मत।
सगुन रूप लीला-बिलास-सुख, सुमिरति करति रहति अन्तरगत ॥३॥
सुनु हनुमन्त! अनन्त-बन्धु करुना सुभाव सीतल कोमल अति।
तुलसिदास यहि त्रास जानि जिय, बरु दुख सहौं प्रगट कहि न सकति॥४॥९॥

राग केदारा

कबहूँ कपि! राघव आवहिंगे?।
मेरे नयन चकोर प्रीतिबस, राकाससि मुख दिखरावहिंगे ॥१॥
मधुप मराल मोर चातक ह्वै, लोचन बहु प्रकार धावहिंगे।
अङ्ग अङ्ग छबि भिन्न भिन्न सुख, निरखि निरखि तहँ तहँ छावहिंगे ॥२॥
बिरह-अगिनि जरि रही लता ज्यों, कृपादृष्टि-जल पलुहावहिंगे।
निज-वियोग-दुख जानि दयानिधि, मधुर बचन कहि समझावहिंगे ॥३॥
लोकपाल सुर नाग मनुज सब, परे बन्दि कब मुकतावहिंगे।
रावनबध रघुनाथ-बिमल-जस, नारदादि मुनिजन गावहिंगे ॥४॥
यह अभिलाष रैन दिन मेरे, राज बिभीषन कब पावहिंगे।
तुलसिदास प्रभु मोहजनित भ्रम, भेद-बुद्धि कब बिसरावहिंगे ॥५॥१०॥

सत्य बचन सुनु मातु जानकी!।

एकहि तक = एकतार, एकरस। राकाससि = पूर्णिमा के चन्द्रमा।

जन के दुख रघुनाथ दुखित अति, सहज प्रकृति करुनानिधान की ॥१॥
तुव वियोग-सम्भव दारुन दुख, बिसरि गई महिमा सुबान की।
नतु कहु कहँ रघुपति-सायक-रवि, तम अनीक कहँ जातुधान की॥२॥
कहँ हम पसु साखामृग चञ्चल, बात कहौं मैं विद्यमान की।
कहँ हरि सिव-अज-पूज्य ज्ञानघन, नहिं बिसरति वह लगनि कान की ॥३॥
तुव दरसन सँदेस सुनि हरि को, बहुत भई अवलम्ब प्रान की।
तुलसिदास गुन सुमिरि राम के, प्रेम मगन नहिं सुधि अपान की ॥४॥११॥

राग कान्हरा

रावन! जु पै राम रन रोषे।
को कहि सकै सुरासुर समरथ, बिसिष काल दसननि तैं चोषे ॥१॥
तपबल भुजबल कै सनेह बल, सिव बिरञ्चि नीकी बिधि तोषे।
सो फल राजसमाज सुवन जन, आपुन नास आपने पोषे ॥२॥
तुला पिनाक साहु नृप त्रिभुवन, भट बटोरि सबके बल जोषे।
परसुराम से सूर-सिरोमनि, पल मैं भये खेत के धोषे ॥३॥
कालि की बात बालि की सुधि करि, समुझिहि ता हित खोलि झरोषे।
कह्यो कुमंत्रिन को न मानिये, बड़ी हानि जिय जानि त्रिदोषे ॥४॥
जासु प्रसाद जनमि जग पुरषनि, सागर सृजे खने अरु सोखे।
तुलसिदास सो स्वामि न सूझेउ, नयन बीस मन्दिर के से मोखे ॥५॥१२॥

राग मारू

जो हौं प्रभु-आयसु लै चलतो।
तौ यहि रिस तोहिं सहित दसानन, जातुधान दल दलतो ॥१॥
रावन सो रसराज सुभट रस, सहित लङ्क खल खलतो।
करि पुटपाक नाक नायकहित, घने घने घर घलतो २॥

वियोगसम्भव=वियोग से उत्पन्न। साखामृग=बन्दर। विद्यमान=वर्तमान समय, उपस्थित काल। लगनि=मुहब्बत। कान=मर्यादा, बड़प्पन। तोषे=प्रसन्न किये। सृजे=बनाये, उत्पन्न किये। मोखे=मुक्का, छोटी खिड़की। रसराज=पारा। खलतो=खरल करता अर्थात् पीस डालता।

बड़े समाज लाज भाजन भयो, बड़ो काज बिनु छलतो।
लङ्कनाथ ! रघुनाथ बैरुतरु, आजु फैलि फूलि फलतो ॥३॥
कालकरम दिगपाल सकल जग,-जाल जासु करतल तो।
ता रिपु सों पर भूमि राति रन, जीवन मरन सुथल तो ॥४॥
देखी मैं दसकंठ-सभा सब, मोंते कोउ न सबल तो।
तुलसी अरि उर आनि एक अब, एती गलानि न गलतो ॥५॥१३॥

तौलौं मातु ! आपु नीके रहिबो।
जौलौंहौं ल्यावौं रघुबीरहिं, दिन दस और दुसह दुख सहिबो ॥१॥
सोखि कै खेत कै बाँधि सेतु करि, उतरिबो उदधि न बोहित चहिबो।
प्रबल दनुज-दल दलि पल आध मैं, जीवत दुरित-दसानन गहिबो ॥२॥
बैरि-बृन्द-बिधवा-बनितनि को, देखिबो बारि-बिलोचन बहिबो।
सानुज सेन समेत स्वामिपद, निरखि परम मुद मङ्गल लहिबो ॥३॥
लङ्कदाह उर आनि मानिबो, साँच राम सेवक को कहिबो।
तुलसी प्रभु को सुर सुजस गाइहैं, मिटि जैहै सबको सोच दव दहिबो ॥४॥१४॥

कपि के चलत सिय को मन गहबरि आयो।
पुलक सिथिल भयो सरीर, नीर नयनन्हि छायो ॥१॥
कहनचह्योसन्देस नहिंकह्यो, पियकेजियकीजानिहृदयदुसह दुख दुरायो।
देखि दसा ब्याकुल हरीस ग्रीषम के पथिक ज्यों धरनि तरनितायो ॥
मीचतें नीच लगी अमरता छल को न बल निरखि थल परुष प्रेम पायो।
कै प्रबोध मातु प्रीति सों असीस दीन्हीं ह्वैहै तिहारोई मन भायो ॥३॥
करुना कोप लाज भय भरो कियो गौन, मौन ह्वौं चरन-कमल सीस नायो।
यह सनेहसरबस समौ तुलसीरसना रूखी ताहि तें परत गायो ॥४॥१५॥

तो = था। गलतो = पिघलता। गहबरि आयो = करुणा से भर आया मीच ते नीच ... प्रेम पायो = (सीताजी का ऐसा विरह दुःख देखकर) हनुमान जी को अपनी अमरता मृत्यु से भी अधिक दुःखदायिनी लगी, और उन्होंने उस स्थल पर बल छल का अवसर न देख अपने प्रेम को बहुत कठोर और दारुण पाया। समौ = प्रसंग, अवसर। बोहित = जहाज। दुरित दसानन = पापी रावन। तरनि तायो = सूर्य्य से तपायी हुई।

राग वसंत

रघुपति ! देखो आयो हनूमन्त । लङ्केसनगर खेल्यो बसन्त ।
टे०–श्रीराम काजहित सुदिन सोधि। साधो प्रबोधि लाँध्यो पयोधि॥
सियपाँय पूजि आसिषा पाइ। फल अमिय सरिस खायो अघाइ॥
कानन दलि होरी रचि बनाइ । हठि तेल बसन बालधि बँधाइ ॥ १ ॥
लिये ढोल चले सँग लोग लागि । बरजोर दई चहुँ ओर आगि ॥
आखत आहुति किये जातुधान । लखि लपट भभरि भागे बिमान ॥
नभतल कैातुक लङ्का बिलाप । परिनाम पचहि पातकी पाप ॥ ३ ॥
हनुमान-हाँक सुनि बरषि फूल । सुर बार बार बरनहिं लँगूर ॥
भरि भुवन सकल कल्यान-धूम । पुर जारि बारिनिधि बोरि लूम ॥४॥
जानकी तोषि पोषेउ प्रताप । जय पवन-सुवन दलि दुअन-दाप ॥
नाचहिं कूदहिं कपि करि बिनोद । पीवत मधु मधुबन मगन मोद ॥५॥
योँ कहत लखन गहे पाँय आइ । मुनि सहित मुदित भैंठ्यो उठाइ ।
लगे सजन सेन भयो हिय हुलास । जय जय जसगावततुलसिदास ॥६॥१६॥

राग जयतिश्री

सुनहु राम बिश्रामधाम ! हरि, जनकसुता अति बिपति जैसे सहति ।
हे सैामित्रि-बन्धु करुनानिधि, मन महँ रटति प्रगट नहिं कहति॥१॥
निजपद-जलज बिलोकि सोकरत, नयननि बारि रहत न एक छन ।
मनहुँ नील नीरज ससि-सम्भव, रबि बियोग दोउ स्रवत सुधाकन ॥२॥
बहु राक्षसी सहित तरु के तर, तुम्हरे बिरह निज जनम बिगोवति ।
मनहुँ दुष्ट इन्द्रिय सङ्कट महँ, बुद्धि-बिवेक-उदय मग जोवति ॥ ३ ॥
सुनि कपि बचन बिचारि हृदय हरि, अनपायनी सदा सो एक मन ।
तुलसिदास दुख-सुखातीतहरि, सोच करत मानहुँ प्राकृत जन ॥४॥१७॥

बालधि = लूम, पूछ । जोवति = प्रतीक्षा करती है, जोहती है ।

राग केदारा

रघुकुल-तिलक वियोग तिहारे।
मैं देखी जब जाइ जानकी, मनहुँ विरह-मूरति मन मारे ॥१॥
चित्र से नयन अरु गढ़े से चरन कर, मढ़े से स्रवन नहिं सुनति पुकारे।
रसना रटति नाम कर सिर चिर, रहै नित निजपद-कमल निहारे ॥२॥
दरसन-आस-लालसा मन महँ, राखे प्रभु ध्यान प्रान-रखवारे।
तुलसिदास पूजति त्रिजटा नीके, रावरे गुन-गन-सुमन सँवारे ॥३॥१८॥

आतिहि अधिक दरसन की आरति।
राम-वियोग असोक-बिटप तर, सीय निमेष कलप सम टारति ॥१॥
बार बार बर बारिजलोचन भरि,-भरि बरत बारि उर ढारति।
मनहुँ विरह के सद्य घाय हिये, लखि तकि तकि धरि धीरज तारति ॥२॥
तुलसिदास जद्यपि निसि बासर, छिन छिन प्रभु मूरतिहि निहारति।
मिटत न दुसह ताप तउ तनु को, यह बिचारि अन्तरगति हारति ॥३॥१९॥

तुम्हरे बिरह भई गति जौन।
चित दै सुनहु राम करुनानिधि! जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ॥१॥
लोचन-नीर कृपिन के धन ज्यों, रहत निरन्तर लोचनन-कोन।
हा धुनि-खगी लाज-पिंजरी महँ, राखि हिये बड़े बधिक हठि मौन ॥२॥
जेहि वाटिका बसति तहँ खग मृग, तजि तजि भजे पुरातन भौन।
स्वास-समीर भेंट भइ भोरेहुँ, तेहि मग पगु न धरयो तिहुँ पौन ॥३॥
तुलसिदास प्रभु! दसा सीय की, मुख करि कहत होति अति गौन।
दीजै दरस दूरि कीजै दुख, हौ तुम्ह आरत-आरति-दौन ॥४॥२०॥

कपि के सुनि कल कोमल बैन।
प्रेम पुलकि सब गात सिथिल भये, भरे सलिल सरसीरुह नैन ॥१॥

मढ़े=मूदे, ढँके। बरत=तपता हुआ, गरम। तारति=तरेरा या पानी की धारा देती है। अन्तरगति=हृदय की शक्ति, मन का बल। खगी=पक्षी। गौन=गौण, अप्रधान। दौन=नाशक।

सिय-वियोग-सागर नागर मन, बूड़न लग्यो सहित चित चैन।
लही नाव पवनज प्रसन्नता, बरबस तहाँ गह्यो गुन मैन ॥२॥
सकत न बूझि कुसल बूझे बिन, गिरा बिपुल व्याकुल उर ऐन।
ज्यों कुलीन सुचि सुमति बियोगिनि, सनमुख सहै बिरह सर पैन ॥३॥
धरि धरि धीर बीर कोसलपति, किये जतन सकै उत्तरु दै न।
तुलसिदास प्रभु सखा अनुज सों, सैनहिं कह्यो चलहु सजि सैन ॥४॥२१॥

राग मारू

जब रघुबीर पयानो कीन्हों।
छुभित सिन्धु डगमगत महीधर, सजि सारँग कर लीन्हों ॥१॥
सुनि कठोर टङ्कोर घोर अति, चौंके बिधि त्रिपुरारि।
जटापटल ते चली सुरसरी, सकत न सम्भु सँभारि ॥२॥
भये बिकल दिगपाल सकल भय, भरे भुवनि दसचारि।
खरभर लङ्क ससङ्क दसानन, गर्भ स्रवहिं अरि-नारि ॥३॥
कटकटात भट भालु बिकट मरकट करि केहरि-नाद।
कूदत करि रघुनाथ-सपथ, उपरी-उपरा बदि बाद ॥४॥
गिरि-तरुधर नख मुख कराल रद, कालहु करत बिषाद।
चले दस दिसि रिस भरि धर धरु कहि, को बराक मनुजाद ? ॥५॥
पवन पङ्गु पावक पतङ्ग ससि, दुरि गये थके बिमान।
जाचत सुर निमेष सुरनायक, नयन-भार अकुलान ॥६॥
गये पूरि सर धूरि भूरि भय, अग थल जलधि समान।
नभ निसान हनुमान हाँक सुनि, समुझत कोउ न अपान ॥७॥
दिग्गज कमठ कोल सहसानन, धरत धरनि धरि धीर।
बारहिं बार अमरषत करषत, करकैं परी सरीर ॥८॥
चली चमू चहुँ ओर सोर कछु, बनै न बरनत भीर।
किलकिलात कसमसत कोलाहल, होत नीरनिधि-तीर ॥९॥

मैन=कामदेव। पैन=चोखे। उपरीउपरा=चढ़ा उपरी, होड़। बदिबाद=बाजी लगाकर। बराक=बपुरे। मनुजाद=राक्षस। पतंग=सूर्य। अग=पहाड़।

जातुधानपति जानि कालबस, मिले बिभीषन आइ।
सरनागत-पालक कृपालु कियो, तिलक लियो अपनाइ ॥ १० ॥
कौतुकहीं बारिधि बँधाइ उतरे सुबेल तट जाइ।
तुलसिदास गढ़ देखि फिरे कपि, प्रभु आगमन सुनाइ ॥ ११ ॥ २२ ॥

राग आसावरी

आये देखि दूत सुनि सोच सठ मन मैं।
बाहर बजावै गाल भालु कपि कालबस,
मोसे बीर सौं चहत जीत्यो रारि रन मैं ॥ १ ॥
राम छाम लरिका लखन बालि-बालकहि,
घालि को गनत? रीछ जल ज्यौं न घन मैं।
काज को न कपिराज कायर कपिसमाज,
मेरे अनुमान हनुमान हरि गन मैं ॥ २ ॥
समय सयानी मृदु बानी रानी कहै पिय!
पावक न होइ जातुधान-धेनु-बन मैं।
तुलसी जानकी दिये स्वामी सौं सनेह किये,
कुसल नतरु सब ह्वैहै छार छन मैं ॥ ३ ॥ २३ ॥

आपनी आपनी भाँति सब काहू कही है।
मन्दोदरी महोदर मालवान महामति,
राजनीति-पहुँच जहाँ लौं जाकी रही है ॥ १ ॥
महामद-अन्ध दसकन्ध न करत कान,
मीचु-बस नीच हठि कुगहनि गही है।
हँसि कहै सचिव सयाने मोसौं यों कहत,
चहै मेरु उड़न बड़ी बयारि बही है ॥ २ ॥
भालु नर बानर अहार निसिचरनि को,
सोऊ नृप-बालकनि माँगी धारि लही है।

छाम=दुर्बल, खिन्न। घालि=घलुआ, कुछ नहीं। धारि=फौज।

देखो कालकौतुक पिपीलिकनि पङ्ख लागे,
भाग मेरे लोगनि के भई चित्त-चही है ॥३॥
तोसोँ न तिलोक आजु साहस समाज-साजु,
महाराज-आयसु भो जोई सोई सही है ।
तुलसी प्रनाम कै विभीषन बिनती करै,
ख्याल बेधे ताल कपि केलि लङ्का दही है ॥४॥ २४॥

दूसरो न देखत साहिब सम रामैँ ।
बेदऊ पुरान कबि कोबिद बिरद-रत,
जाको जस सुनत गावत गुन ग्रामैं ॥१॥
माया जीव जग-जाल करम सुभाउ काल,
सबको सासक सबमैँ सब जामैँ ।
बिधि से करनिहार हरि से पालनिहार,
हर से हरनिहार जपैँ जाके नामैँ ॥२॥
सोइ नरबेष जानि जन की बिनती मानि,
मतो नाथ सोई जा तेँ भलो परिनामैँ ।
सुभट-सिरोमनि कुठारपानि सारिखेहू,
लखी औ लखाई इहाँ किये सुभ सामैँ ॥३॥
बचन-बिभूषन बिभीषन-बचन सुनि,
लागे दुख दूषन से दाहिनेउ बामैँ ।
तुलसी हुमकि हिये हन्यो लात भले तात,
चल्यो सुरतरु ताकि तजि घोर घामैँ ॥४॥ २५ ।

जाय माय पायँ परि कथा सो सुनाई है
समाधान करति बिभीषन को बार बार,
कहा भयो तात लात मारे बड़ो भाई है ॥१॥

पिपीलिकनि = चिउँटियाँ । सासक = आज्ञा करनेवाले ।

साहिब पितु समान जातुधान को तिलक,
ताके अपमान तेरी बड़िये बड़ाई है।
गरत गलानि जानि सनमानि सिख देति,
रोष किये दोष सहैं समुझैं भलाई है ॥२॥
इहाँ तें बिमुख भये राम की सरन गये,
भलो नेकु लोक राखे निपट निकाई है।
मातु मग सीस नाइ तुलसी असीस पाइ,
चले भले सगुन कहत मनभाई है ॥३॥ २६ ॥

भाई को सो करौं डरौं कठिन कुफेरै।
सुकृत-सङ्कट परयो जात गलानिन्ह गरयो,
कृपानिधि को मिलैं पै मिलि कै कुबेरै ॥१॥
जाइ गहे पाँय धाइ धनद उठाइ भेट्यो,
समाचार पाइ पोच सोचत सुमेरै।
तहँई मिले महेस दियो हित उपदेस,
राम की सरन जाहि सुदिन न हेरै ॥२॥
जाको नाम कुम्भज कलेस-सिन्धु सोखिबे को,
मेरो कह्यो मानि तात बाँधे जिनि बेरै।
तुलसी मुदित चले पाये हैं सगुन भले,
रङ्कु लूटिबे को मानोँ मनिगन-ढेरै ॥३॥ २७ ॥

राग केदारा

सङ्कर सिख आसिष पाइकै।
चले मनहिं मन कहत बिभीषन, सीस महेसहि नाइकै ॥१॥
गये सोच भये सगुन सुमङ्गल, दस दिसि देत देखाइकै।
सजल नयन सानन्द हृदय तनु, प्रेम पुलक अधिकाइकै ॥२॥
अन्तहु भाव भलो भाई को, कियो अनभलो मनाइकै।

सुकृतसङ्कट=धर्मसङ्कट। बेरा=बेड़ा, सागर में तैराने के लिये लकड़ियों का समूह।

भइ कूबरे की लात बिधाता, राखी बात बनाइकै ॥३॥
नाहित क्यों कुबेर घर मिलि हर, हितु कहते चित लाइकै।
जो सुनि सरन राम ताके मैं, निज बामता बिहाइकै ॥४॥
अनायास अनुकूल सूलधर, मग मुदमूल जनाइकै।
कृपासिन्धु सनमानि जानि जन, दीन लियो अपनाइकै ॥५॥
स्वारथ परमारथ करतलगत, स्रमपथ गयो सिराइकै।
सपने कै सौतुख सुख-सासि सुर, सींचत देत निराइकै ॥६॥
गुरु गौरीस साँइ सीतापति, हित हनुमानहिं जाइकै।
मिलिहौं मोहिं कहा कीबे अब, अभिमत अवधि अघाइकै ॥७॥
मरतो कहाँ जाइ को जानै, लटि लालची ललाइकै।
तुलसिदास भजिहौं रघुबीरहि, अभय निसान बजाइकै ॥८॥ २८ ॥

पदपद्म गरीबनिवाज के।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन-फल, हित सुर साधु समाज के ॥१॥
गई-बहोर ओर निरबाहक, साजक बिगरे साज के।
सबरी सुखद गीध गतिदायक, समनसोक कपिराज के ॥२॥
नाहिंन मोहि और कतहूँ कछु, जैसे काग जहाज के।
आयो सरन सुखद पदपङ्कज, चोंथे रावन बाज के ॥३॥
आरतिहरन सरन समरथ सब, दिन अपने की लाज के।
तुलसी पाहि कहत नत-पालक, मोहुँ से निपट निकाज के ॥४॥ २९ ।

महाराज राम पहँ जाउँगो।
सुख स्वारथ परिहरि करिहौं सोइ, ज्यौं साहिबहि सुहाउँगो ॥१॥
सरनागत सुनि बेगि बोलिहैं, हौं निपटहिं सकुचाउँगो।
राम गरीबनिवाज निवाजिहैं, जानिहै ठाकुर ठाउँ गो ॥२॥
धरिहैं नाथ हाथ माथे एहि, तें केहि लाभ अघाउँगो ?
सपनो सो अपनो न कछू लखि, लघु लालच न लोभाउँगो ॥३॥

सास=कृषी, खेती। निकाज=बिना काम का।

कहिहैं बलि रोटिहा रावरो, बिनु मोल ही बिकाउँगो ।
तुलसी पट ऊतरे ओढ़िहौं, उबरी जूठनि खाउँगो ॥४॥ ३० ॥

आइ सचिव बिभीषन के कही ।
कृपासिन्धु दसकन्धबन्धु लघु, चरन-सरन आयो सही ॥१॥
विषम-बिषाद-बारिनिधि बूड़त, थाह कपीस कथा लही ।
गये दुख दोष देखि पदपङ्कज, अब न साध एकौ रही ॥२॥
सिथिल सनेह सराहत नखसिख, नीक निकाई निरबही ।
तुलसी मुदित दूत भयो मानहुँ, अमिय-लाहु माँगत मही ॥३॥३१॥

बिनती सुनि प्रभु प्रमुदित भये ।
रीछराज कपिराज नील नल, बोलि बालिनन्दन लये ॥१॥
बूझिये कहा ? रजाइ पाइ नय, धरम सहित ऊतर दये ।
बली बन्धु ताको जेहिं बिमोह-बस, बैर-बीज बरबस बये ॥२॥
बाँह-पगार द्वार तेरे तेँ, सभय न कबहूँ फिरि गये ।
तुलसी असरन-सरन स्वामि के, बिरद बिराजत नित नये ॥३॥३२॥

हिय बिहँसि कहत हनुमान सोँ ।
सुमति साधु सुचि सुहृद बिभीषन, बूझि परत अनुमान सोँ ॥१॥
हौं बलिजाउँ और को जानै ? कहो कपि कृपानिधान सोँ ।
छली न होइ स्वामि सनमुख ज्योँ, तिमिर सातहय-जान सोँ ॥२॥
खोटो खरो सभीत पालिये, सो सनेह सनमान सोँ ।
तुलसी प्रभु कीबो जो भलो सोइ, बूझि सरासन बान सोँ ॥३॥३३॥

साँचेहु बिभीषन आइ है ?
बूझत बिहँसि कृपालु लखन सुनि, कहत सकुचि सिर नाइ है ॥१॥
ऐहै कहा नाथ आयो ह्याँ, क्योँ कहि जात बनाइ है ।
रावन-रिपुहि राखि रघुबर बिनु, को त्रिभुवनपति पाइहै ॥२॥

बये = बोये । पगार = दीवार । सातहयजान = सूर्य्य । रजाइ = आज्ञा ।

प्रभु प्रसन्न सब सभा सराहति, दूत-बचन मन भाइ है।
तुलसी बोलिये बेगि लखन सौं, भइ महाराज रजाइ है ॥३॥३४॥

चले लेन लखन हनुमान हैं।
मिले मुदित बूझि कुसल परसपर, सकुचत करि सनमान हैं ॥१॥
भयो रजायसु पाँउ धारिये, बोलत कृपानिधान हैं।
दूरि तैं दीनबन्धु देखे जनु, देत अभय बरदान हैं ॥२॥
सील सहस हिमभानु तेज सत, कोटि भानु के भानु हैं।
भगतनि को हित कोटि मातुपितु, अरिन्ह को कोटि कृसानु हैं ॥३॥
जन गुन रज गिरि गनि सकुचत निज, गुन गिरि रज परमान हैं।
बाँह-पगार बोल को अबिचल, बेद करत गुनगान हैं ॥४॥
चारु चाप तूनीर तामरस, करनि सुधारत बान हैं।
चरचा चलति बिभीषन की सोइ, सुनत सुचित दै कान हैं ॥५॥
हरषत सुर बरषत प्रसून सुभ, सगुन कहत कल्यान हैं।
तुलसी ते कृतकृत्य जे सुमिरत, समय सुहावनो ध्यान हैं ॥६॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारिकै।
उठे उँमगि आनन्द-प्रेम, परिपूरन बिरद बिचारिकै ॥१॥
भयो बिदेह बिभीषन उत, इत प्रभु अपनपौ बिसारिकै।
भली भाँति भावते भरत ज्यौं, भैंट्यो भुजा पसारिकै ॥२॥
सादर सबहिं मिलाइ समाजहिं, निपट निकट बैठारिकै।
बूझत छेम कुसल सप्रेम, अपनाइ भरोसे भारिकै ॥३॥
नाथ! कुसल कल्यान सुमङ्गल, बिधि सुख सकल सुधारिकै।
देत लेत जे नाम रावरो, बिनय करत मुख चारि कै ॥४॥
जे मूरति सपने न बिलोकत, मुनि महेस मन मारिकै।
तुलसी तेहि हौं लियो अङ्क भरि, कहत कछू न सँवारिकै ॥५॥३६॥

करुनाकर की करुना भई।

हिमभानु=चंद्रमा। तूनीर=तरकस। तामरस=कमल। भावते=प्यारे।

मिटी मीचु लहि लङ्क सङ्क गइ, काहू सोँ न खुनिस खई ॥१॥
दसमुख तज्यो दूध-माखी ज्योँ, आपु काढ़ि साढ़ी लई ।
भव-भूषन सोइ कियो बिभीषन, मुद-मङ्गल-महिमामई ॥२॥
बिधि हरि मुनि सिद्ध सराहत, मुदित देब दुन्दुभी दई ।
बारहिँ बार सुमन बरषत, हिय हरषत कहि जै जै जई ॥३॥
कैासिक सिला जनक सङ्कट हरि, भृगुपति की टारी टई ।
खग मृग सबर निसाचर सबकी, पूँजी बिनु बाढ़ी सई ॥४॥
जुग जुग कोटि कोटि करतब, करनी न कछू बरनी नई ।
राम-भजन-महिमा हुलसी हिय, तुलसीहू की बनि गई ॥५॥३७॥

मञ्जुल मूरति मङ्गलमई ।
भयो बिसोक बिलोकि बिभीषन, नेह देह सुधिसींव गई ॥१॥
उठि दाहिनी ओर तेँ सनमुख, सुखद माँगि बैठक लई ।
नखसिख निरखि निरखि सुख पावत, भावत कछु कछु और भई ॥२॥
बार कोटि सिर काटि साटि लटि, रावन सङ्कर पै लई ।
सोइ लङ्का लखि अतिथि अनवसर, राम तृनासन ज्योँ दई ॥३॥
प्रीति-प्रतीत-रीति-सोभासरि, थाहत जहँ जहँ तहँ घई ।
बाहु-बली बानैत बोल को, बीर बिस्वबिजयी जई ॥४॥
को दयालु दूसरो दुनी जेहि, जरनि दीन-हिय की हई ? ।
तुलसी काको नाम जपत जग, जगती जामति बिनु बई ॥५॥३८॥

सब भाँति बिभीषन की बनी ।
कियो कृपालु अभय कालहु तेँ, गइ संसृति साँसति घनी ॥१॥
सखा लखन हनुमान सम्भु गुरु, धनी राम कोसलधनी ।
हिय ही और और कीन्हीं बिधि, रामकृपा औरै ठनी ॥२॥

खुनिस=रिस। खई=लड़ाई। साढ़ी=मलाई। जई=जयी, विजयी। टई=घात। सई=वृद्धि, बरकत। साटि=जुटाकर। घई=पानी का भँवर। हई=नाश किया। जगती=धरती। ही=थी।

कलुष-कलङ्क कलेस-कोस भयो, जो पद पाय रावन रनी ।
सोइ पद पाय बिभीषन भो भव,-भूषन दलि दूषन-अनी ॥३॥
बाँह पगार उदार-सिरोमनि, नत-पालक पावन-पनी ।
सुमन बरषि रघुबर-गुन बरनत, हरषि देव दुन्दुभी हनी ॥४॥
रङ्क-निवाज रङ्क राजा किये, गये गरब गरि गरि गनी ।
राम-प्रनाम महामहिमा-खनि, सकल सुमङ्गलमनि जनी ॥५॥
होय भलो ऐसे ही अजहुँ गये, राम-सरन परिहरि मनी ।
भुजा उठाइ साखि सङ्कर करि, कसम खाइ तुलसी भनी ॥६॥३९॥

कहो क्योँ न बिभीषन की बनै ?
गयो छाँड़ि छल सरन राम की, जो फल चारयो जनै ॥१॥
मङ्गलमूल प्रनाम जासु जग, मूल अमङ्गल के खनै ।
तेहि रघुनाथ हाथ माथे दियो, को ताकी महिमा भनै ? ॥२॥
नाम-प्रताप पतित-पावन किये, जे न अघाने अघ अनैं ।
कोउ उलटो कोउ सूधो जपि भये, राजहंस बायस-तनै ॥३॥
हुतो ललात कृसगात खात खरि, मोद पाइ कोदो-कनै ।
सो तुलसी चातक भयो जाँचत, राम स्याम सुन्दर घनै ॥४॥४०॥

अति भाग बिभीषन के भले ।
एक प्रनाम प्रसन्न राम भये, दुरित दोष दारिद दले ॥१॥
रावन कुम्भकरन बर माँगत, सिव बिरञ्चि बाचा छले ।
राम-दरस पायो अबिचल पद, सुदिन सगुन नीके चले ॥२॥
मिलनि बिलोकि स्वामि सेवक को, उकठे तरु फूले फले ।
तुलसी सुनि सनमान बन्धु को, दसकन्धर हँसि हिय जले ॥३॥४१॥

गये राम सरन सबको भलो ।
गनी-गरीब बड़ो छोटो बुध, मूढ़ हीनबल अतिबलो ।

पनी=प्रतिज्ञावाले। गनी=अमीर। खनि=खानि, खोद कर। जनी=उत्पन्न किया। मनी=घमंड। अनै=अनीति, अत्याचार। कनै=कना, चावल की धूल।

पङ्गु अन्ध निरगुनी निसम्बल, जो न लहै जाँचे जलो।
सो निबह्यो नीके जो जनमि जग, राम-राजमारग चलो ॥२॥
नाम-प्रताप-दिवाकर-कर खर, गरत तुहिन ज्यौं कलिमलो।
सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि, गयो अजामिल सो खलो॥३॥
प्रभुपद-प्रेम प्रनाम कामतरु, सद्य बिभीषन को फलो।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को, मङ्गलमय नभ जल थलो ॥४॥४२॥

सुजस सुनि स्रवन हौं नाथ! आयौं सरन।
उपल केवट गीध सबरि संसृत-समन,
सोक स्रमसीव सुग्रीव आरतिहरन ॥१॥
राम राजीव लोचन बिमोचन बिपति,
स्याम नव तामरस-दाम बारिद-बरन।
लसत जटजूट सिर चारु मुनि चीर कटि,
धीर रघुबीर तूनीर-सर-धनु-धरन ॥२॥
जातुधानेस भ्राता बिभीषन नाम,
बन्धु अपमान गुरु ग्लानि चाहत गरन।
पतितपावन प्रनतपाल करुनासिन्धु!
राखिये मोहिं सौमित्रि-सेवित-चरन ॥३॥
दीनता प्रीति सङ्कलित मृदुबचन सुनि,
पुलकि तन प्रेम जल नयन लागे भरन।
बोलि लङ्केस कहि अङ्क भरि भैंटि प्रभु,
तिलक दियो दीन-दुख-दोष-दरिद-दारन ॥४॥
रातिचर-जाति आराति सब भाँति गत,
कियो सो कल्यान-भाजन सुमङ्गल करन।

पंगु=पंगुल। निसम्बल=बिना खर्च के बल का। सद्य=तुरन्त, तत्क्षण। उपल=अहिल्या। सङ्कलित=रची हुई। आराति=शत्रु।

दास तुलसी सदय हृदय रघुबंसमनि,
पाहि कहे काहि कीन्हों न तारनतरन ॥५॥ ४३ ॥

दीन-हित बिरद पुराननि गायो।
आरत-बन्धु कृपाल मृदुल-चित, जानि सरन हौं आयो ॥१॥
तुम्हरे रिपु को अनुज बिभीषन, बंस निसाचर जायो।
सुनि गुन सील सुभाउ नाथ को, मैं चरननि चित लायो ॥२॥
जानत प्रभु दुख सुख दासनि को, तातें कहि न सुनायो।
करि करुना भरि नयन बिलोकहु, तब जानौं अपनायो ॥३॥
बचन बिनीत सुनत रघुनायक, हँसि करि निकट बुलायो।
भेंट्यो हरि भरि अङ्क भरत ज्यों, लङ्कापति मन भायो ॥४॥
कर पङ्कज सिर परसि अभय कियो, जन पर हेतु दिखायो।
तुलसिदास रघुबीर भजन करि, को न परमपद पायो ॥५॥ ४४ ॥

राग धनाश्री

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ।
सुनहु सखा कपिपति लङ्कापति, तुम्हसन कौन दुराउ ॥१॥
सब बिधि हीन दीन अति जड़मति, जाको कतहुँ न ठाउँ।
आयो सरन भजौं न तजौं तिहि, यह जानत रिषिराउ ॥२॥
जिन्हके हौं हित सब प्रकार चित, नाहिन और उपाउ।
तिनहिं लागि धरि देह करौं सब, डरौं न सुजस नसाउ ॥३॥
पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं, सकल सभा पतिआउ।
नहिं कोऊ प्रिय मोहिं दास सम, कपट प्रीति बहि जाउ ॥४॥
सुनि रघुपति के बचन बिभीषन, प्रेम मगन मन चाउ।
तुलसिदास तजि आस त्रास सब, ऐसे प्रभु कहँ गाउ ॥५॥ ४५ ॥

नाहिन भजिबे जोग बियो।
श्रीरघुबीर समान आन को, पूरन कृपा हियो ॥१॥

तारन तरन=दूसरों को तारने वाले और स्वयम् तरने वाले। लङ्कपति=बिभीषन। रिषिराउ=बाल्मीक। चाउ=प्रसन्नता। बियो=दूसरो।

कहहु कैान सुर सिला तारि पुनि, केवट मीत कियो ?।
कैाने गीध अधम को पितु ज्यों, निज कर पिंड दियो ॥२॥
कैान देव सबरी के फल करि, भोजन सलिल पियो ?।
बालित्रास-बारिधि बूड़त कपि, केहि गहि बाहँ लियो ॥३॥।
भजन प्रभाव बिभीषन भाष्यौ, सुनि कपि-कटुक जियो।
तुलसिदास को प्रभु कोसलपति, सब प्रकार बरियो ।४॥ ४६॥

राग जयतिश्री

कब देखैाँगी नयन वह मधुर मूरति ?
राजिवदल-नयन कोमल-कृपाअयन, मयननि, बहु छबि अङ्गनि दूरति।१॥
सिरसि जटा-कलाप पानि सायक चाप, उरसि रुचिर बनमाल लूरति।
तुलसिदास रघुबीरकी सोभा सुमिरि, भई है मगन नहिं तनकी सूरति। २।४७॥

राग केदारा

कहु कबहुं देखिहौं आली! आरज सुवन ॥१॥
सानुज सुभग-तन जब तें बिछुरे बन, तब तें दव सी लागी तीनिहुं भुवन।
मूरति सूरति किये प्रगट प्रीतम हिये, मन के करन चाहैं चरन छुवन।
चित चढ़िगो बियोग दसान कहिबेजोग, पुलकगात लागे लोचन चुवन॥२॥
तुलसी त्रिजटा जानी सिय अति अकुलानी, मृदुबानी कह्यौ। ऐहैं दवन-दुवन।
तमीचर-तमहारी सुरकञ्ज सुखकारी, रबिकुल-रबि अब चाहत उवन ॥३॥४८॥

अबलौं मैं तोसैाँ न कहे री।
सुनु त्रिजटा! प्रिय प्राननाथ बिनु, बासर निसि दुख दुसह सहे री ॥१॥
बिरह बिषम बिष-बेलि बढ़ी उर, ते सुख सकल सुभाय दहे री।
सोइ सींचिबे लागि मनसिज के, रहट नयन नित रहत नहे री ॥२॥
सर-सरीर सूखे प्रान बारिचर, जीवन आस तजि चलन चहे री।
तैं प्रभु-सुयस-सुधा सीतल करि, राखे तदपि न तृपित लहे री ॥३॥

बारियों=बलवान, ज़ोरावर। दूरति=दूर करना। उरसि=हृदय। लूरति=लटकना। दव=अग्नि। दवनदुवन=राक्षसों के नाशक रामचन्द्र। रहट=पानी निकालने का यंत्र। नहे=जुते, नधे,।

रपु-रिस घोर नदी बिवेक बल, धीर सहित हुते जात बहे री।
दै मुद्रिकाटेकि तेहि औसर, सुचि समीरसुत पैरि गहे री ॥४॥
तुलसिदास सब सोच पोच मृग, मन कानन भरि पूरि रहे री।
अब सखि सिय सँदेह परिहरु हिय, आइ गये दोउ बीर अहेरी ॥५ ४९॥

राग बिलावल

सो दिन सोने को कहु कब ऐहै ?
जा दिन बँध्यौ सिन्धु त्रिजटा सुनु, तू सम्भ्रम आनि मोहिँ सुनैहै ॥१॥
बिस्वदवन सुर-साधुसतावन, रावन कियो आपनो पैहै।
कनक-पुरी भयो भूप बिभीषन, बिबुध-समाज बिलोकन धैहै ॥२॥
दिव्य दुन्दुभी प्रसंसिहैँ मुनिगन, नभतल बिमल बिमाननि छैहै।
बरषिहैँ कुसुम भानुकुल-मनि पर, तब मोको पवनपूत लै जैहै ॥३॥
अनुज सहित सोभिहैँ कपिन महँ, तनु-छबि कोटि मनोज-हितैहै।
इन नयनन्हि यहि भाँति प्रानपति, निरखि हृदय आनन्द न समैहै ॥४॥
बहुरो सदल सनाथ सलछिमन, कुसल कुसल बिधि अवध देखैहै।
गुरु पुर लोग सासु दोउ देवर, मिलत दुसह उर तपनि बुतैहै ॥५॥
मङ्गल कलस बधावने घर घर, पैहै माँगने जो जेहि भैहै।
बिजय राम राजाधिराज को, तुलसिदास पावन जस गैहै ॥६॥ ५० ॥

सिय धीरज धरिये राघो अब ऐहैँ।
पवनपूत पै पाइ तिहारी सुधि, सहज कृपालु बिलम्ब न लैहैँ ॥१॥
सेन साजि कपि भालु काल सम, कैातुक ही पाथोधि बँधैहैँ।
घेराइ पै देखिबो लङ्कगढ़, बिकल जातुधानी पछितैहैँ ॥२॥
निसिचर सलभ कृसानु राम सर, उड़ि उड़ि परत जरत जड़ जैहैँ।
रावन करि परिवार अगमनो, जमपुर जात बहुत सकुचैहैँ ॥३॥
तिलक सारि अपनाय बिभीषन, अभय-बाँह दै अमर बसैहैँ।
जय धुनि मुनि बरषिहैँ सुमन सुर, ब्योम बिमान निसान बजैहैँ ॥४॥

अहेरी=शिकारी। अगमनो=आगे करके। सारि=देकर, लगाकर।

बन्धु समेत प्रान बल्लभपद, परसि सकल परिताप नसैहैं ।
राम बाम दिसि देखि तुमहिं सब, नयनवन्त लोचन फल पैहैं ॥५॥
तुम अति हित चितइहौ नाथ-तनु, बार बार प्रभु तुमहिं चितैहैं ।
वह सोभा सुख समय बिलोकत, काहू तौ पलकैं नहिं लैहैं ॥६॥
कपिकुल लखन सुजस जय जानकि सहित कुसल नित नगर सिधैहैं ।
प्रेम पुलकि आनन्द मुदित मन, तुलसिदास कल कीरति गैहैं ॥७॥५१॥

लंकाकांड

राग मारू

मानु अजहुँ सिख परिहरि क्रोध ।
पिय पूरो आयो अब काहि कहु, करि रघुबीर-बिरोध ॥१॥
जेहि ताडुका सुबाहु मारि मख,-राखि जनायो आप ।
कौतुक ही मारीच-नीचमिसं, प्रगट्यो बिसिष-प्रताप ॥२॥
सकल भूप बल गरब-सहित, तोरयो कठोर सिवचाप ।
ब्याही जेहि जानकी जीति जग, हर्यौ परसुधर-दाप ॥३॥
कपट काक साँसति प्रसाद करि, बिनु स्रम बध्यो बिराधु ।
खर दूषन त्रिसिरा कबन्ध हति, कियो सुखो सुर साधु ॥४॥
एकहि बान बालि मार्यो जेहि, जो बल-उदधि अगाध ।
कहु धौं कन्त कुसल बीतो केहिं, किये राम-अपराध ॥५॥
लाँघि न सके लोक-बिजयी तुम, जासु अनुज-कृत-रेष ।
उतरि सिन्धु जार्यो प्रचारि पुर, जाको दूत बिसेष ॥६॥
कृपासिन्धु खलबनकृसानु सम, जस गावत स्रुति सेखु ।
सोइ बिरदैत बीर कोसलपति, नाथ समझि जिय देखु ॥७॥
मुनि पुलस्त्य के जस-मयङ्क महँ, कत कलङ्क हठि होहि ।
और प्रकार उबार नहीं कहुँ, मैं देख्योँ जग जोहि ॥८॥

दाप=घमंड। प्रसाद=प्रसन्नता, रिहाई। मयङ्क=चन्द्रमा। जोहि=खोजकर

चलु मिलु बेगि कुसल सादर सिय, सहित अग्र करि मोहिं।
तुलसिदास प्रभु सरन सब्द सुनि, अभय करैंगे तोहिं ॥६॥ १ ॥

राग कान्हरा

तू दसकंठ भले कुल जायो।
तामहँ सिव-सेवा बिरञ्चिबर, भुजबल बिपुल जगत जस पायो ॥१॥
खर दूषन त्रिसिरा कबन्ध रिपु, जेहि बाली जमलोक पठायो।
ताको दूत पुनीत चरित हरि, सुभ सन्देस कहन हौं आयो ।२॥
श्रीमद नृप-अभिमान मोहबस, जानत अनजानत हरि लायो।
तजि ब्यलीक भजु कारुनीक प्रभु, दै जानकिहि सुनहि समझायो ॥३॥
जातें तव हित होइ कुसल कुल, अचल राज चलिहै न चलायो।
नाहित रामप्रताप-अनल महँ, ह्वै पतङ्ग परिहै सठ धायो ॥४॥
जद्यपि अङ्गद नीति परम हित, कह्यौ तथापि न कछु मन भायो
तुलसिदास सुनि बचन क्रोध अति, पावक जरत मनहुँ घृत नायो ॥५॥२॥

तैं मेरो मरम कछू नहिं पायो।
रे कपि कुटिल ढीठ पसु पाँवर! मोहिं दास ज्यौं डाँटन आयो ॥१॥
भ्राता कुम्भकरन रिपुघातक, सुत सुरपतिहि बन्दि करि ल्यायो।
निज भुजबल अति अतुल कहौं क्यौं, कन्दुक लौं कैलास उठायो ॥२॥
सुर नर असुर नाग खग किन्नर, सकल करत मेरो मन भायो।
निसिचर रुचिर अहार मनुज-तनु, ताको जस खल मोहिं सुनायो ॥३॥
कहा भयो बानर सहाय मिलि, करि उपाय जो सिन्धु बँधायो।
जो तरिहै भुज बीस घोरनिधि, ऐसो को त्रिभुवन मैं जायो? ॥४॥
सुनि दससीस-बचन कपि-कुञ्जर, बिहँसि ईसमायहि सिर नायो।
तुलसिदास लङ्केस कालबस, गनत न कोटि जतन समझायो ॥५॥३॥

सुनु खल मैं तोहिं बहुत बुझायो।
एते मान सठ भयो मोहबस, जानतहूँ चाहत बिष खायो ॥१॥

ब्यलीक=कपट। लौं=समान। कुञ्जर=श्रेष्ठ। एतेमान=इतना अभिमान।

जगत-बिदित अति बीर बालि-बल, जानत हौं किधौं अब बिसरायो।
बिनु प्रयास सोउ हत्यो एक सर, सरनागत पर प्रेम देखायो ॥२॥
पावहुगे निज करम जनित फल, भले ठौर हठि बैर बढ़ायो ।
बानर भालु चपेट लपेटनि, मारत तब ह्वैहै पछितायो ॥३॥
हौं ही दसन तोरिबे लायक, कहा करौं जो न आयसु पायो ।
अब रघुबीर बान बिदलित उर, सोवहिगो रनभूमि सुहायो ॥४॥
अविचल राज्य बिभीषन को सब, जेहि रघुनाथ चरन चित लायो।
तुलसिदास यहि भाँति बचन कहि, गरजत चल्यो बालि-नृप-जायो॥५॥४॥

राग केदारा

राम लखन उर लाय लये हैं ।
भरे नीर राजीवनयन सब, अँग परिताप तये हैं ॥१॥
कहत ससोक बिलोकि बन्धु-मुख, बचन प्रीति गुथ ये हैं ।
सेवक सखा भगति भायप गुन, चाहत अब अथये हैं ॥२॥
निज कीरति करतूति तात ! तुम, सुकृती सकल जये हैं ।
मैं तुम्ह बिनु तनु राखि लोक, अपने अपलोक लये हैं ॥३॥
मेरे पन की लाज इहाँ लौं, हठि प्रिय प्रान दये हैं ।
लागति साँगि बिभीषन-ही पर, सीपर आपु भये हैं ॥४॥
सुनि प्रभु-बचन भालु कपि-गन सुर, सोच सुखाइ गये हैं ।
तुलसीआइ पवनसुत-बिधि मानौं, फिरि निरमये नये हैं ।५॥ ५॥

राग सोरठ

मोपै तौ न कछू ह्वै आई ।
ओर निबाहि भली बिधि भायप, चल्यो लखन सो भाई ॥१॥
पुर पितु मातु सकल सुख परिहरि, जेहि बन-बिपति बँटाई ।
ता सँग हौं सुरलोक सोक तजि, सक्यौं न प्रान पठाई ॥२॥

गथ मूल्य । लये=लिये । सीपर=ओड़न, ढ़ाल । भायप=भाई भाई का व्यवहार ।

जानत हौँ या उर कठोर तेँ कुलिस कठिनता पाई।
सुमिरि सनेह सुमित्रा-सुत को, दरकि दरार न जाई ॥३॥
तात-मरन तिय-हरन गीध-बध, भुज दाहिनी गँवाई।
तुलसी मैं सब भाँति आपने, कुलहि कालिमा लाई ॥४॥ ६ ॥

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बन्धु-बाहु बिनु, करौँ भरोसो काको ॥१॥ ?
सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर, फेर्यो बदन बिधाता।
ऐसे समय समर-सङ्कट हौँ, तज्यौँ लखन सो भ्राता ॥२॥
गिरि कानन जैहैँ साखामृग, हौँ पुनि अनुज सँघाती।
ह्वै है कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ॥३॥
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि, सकल बिकल हिय हारे।
जामवन्त हनुमन्त बोलि तब, औसर जानि प्रचारे ॥४॥ ७ ॥

राग मारू

जो हौँ अब अनुसासन पावौँ।
तौ चन्द्रमहिँ निचोरि चैल ज्यौँ, आनि सुधा सिर नावौँ ॥१॥
कै पाताल दलौँ ब्यालावलि, अमृत-कुंड महि लावौँ।
भेदि भुवन करि भानु बाहिरो, तुरत राहु दै तावौँ ॥२॥
बिबुध-बैद बरबस आनौँ धरि, तौ प्रभु अनुग कहावौँ।
पटकौँ मीच नीच मूषक ज्यौँ, सबहि को पापु बहावौँ ॥३॥
तुम्हरिहि कृपा प्रताप तिहारेहि, नेकु बिलम्ब न लावौँ।
दीजै सोइ आयसु तुलसीप्रभु, जेहि तुम्हरे मन भावौँ ॥४॥ ८ ॥

सुनि हनुमन्त-बचन रघुबीर।
सत्य समीर-सुवन सब लायक, कह्यो राम धरि धीर ॥
चाहिय बैद ईस-आयसु धरि,-सीस कीस बलऐन।
आन्यो सदन-सहित सोवत ही, जौलौँ पलक परै न ॥२॥

दरकि=फटकर। दरार=शिगाफ़। चैल=वस्त्र कपड़ा। भेदि=छेद करके। बिबुध बैद=अश्विनीकुमार।

जियै कुँवर निसि मिलै मूलिका, कीन्हीं बिनय सुषेन ।
उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति, चल्यो सजीवनि लेन ॥३॥
कालनेमि दलि बेगि बिलोक्यौ, द्रोनाचल जिय जानि ।
देखी दिव्य ओषधी जहँ तहँ, जरी न परी पहिचानि ॥४॥
लियो उठाय कुधर कन्दुक ज्यौँ, बेग न जाइ बखानि ।
ज्यौँ धाये गजराज उधारन, सपदि सुदरसनपानि ॥५॥
आनि पहार जोहारे प्रभु, कियो बैदराज उपचार ।
करुनासिन्धु बन्धु भैँट्यो मिटि गयो सकल दुख भार ॥६॥
मुदित भालु-कपि-कटक लह्यो जनु, समर-पयोनिधि पार ।
बहुरि ठौरही राखि महीधर, आयो पवनकुमार ॥७॥
सेन सहित सेवकहि सराहत, पुनि पुनि राम सुजान ।
बरषि सुमन हिय हरषि प्रसंसत, बिबुध बजाइ निसान ॥८॥
तुलसिदास सुधि पाइ निसाचर, भये मनहुँ बिनु प्रान ।
परी भोरही रोर लङ्कगढ़, दई हाँक हनुमान ॥९॥९॥

राग केदारा

कैातुक ही कपि कुधर लियो है ।
चल्यो नभ नाइ माथ रघुनाथहि, सरिस न बेग बियो है ॥१॥
देख्यो जात जानि निसिचर बिनु, फर सर हयो हियो है।
परयो कहि राम पवन राख्यो गिरि, पुर तेहि तेज पियो है ॥२॥
जाइ भरत भरि अङ्क भैँटि निज, जीवन-दान दियो है ।
दुख लघु लखन मरम-घायल सुनि, सुख बड़ो कीस जियो है ॥३॥
आयसु इतहि स्वामि-सङ्कट उत, परत न कछू कियो है ।
तुलसिदास बिहरयो अकास सो, कैसेकै जात सियो है ॥४॥१०॥
भरत सत्रुसूदन बिलोकि कपि चकित भयो है ।
राम लखन रन जीति अवध आये, कैधौँ मोहिँ भ्रम कैधौँ काहू कपट ठयो है ॥१॥

जरी = जड़ी । कन्दुक = गेंद । सपदि = शीघ्रता से । सुदरसनपानि = विष्णु । उपचार = इलाज । रोर = हुल्लड़ । बियो = दूसरा ।

प्रेम पुलकि पहिचानि कै, पदपदुम नयो है।
कह्यो न परत जेहि भाँति दुहूँ भाइन, सनेह सोँ सो उर लाय लयो है॥२॥
समाचार कहि गहरु भो तेहि ताप तयो है।
कुधरसहित चढ़ौ बिसिष बेगि पठवौँ, सुनि हरिहिय गरब गूढ़ उपयो है॥३॥
तीर तेँ उतरि जस कह्यो चहै, गुनगननि जयो है।
धनि भरत! धनि भरत! करत भयो मगन, मौन रह्यो मन अनुराग रयो है॥४॥
यह जलनिधि खन्यो मथ्यो, लंघ्यो बाँध्यो अँचयो है।
तुलसिदास रघुवीर-बन्धु-महिमा को सिन्धु, तरि को कवि पार गयो है॥५॥११॥

होतो नहिँ जो जग जनम भरत को।
तौ कपि कहत कृपान-धार-मग, चलि आचरत बरत को? ॥१॥
धीरज-धरम-धरनिधर-धुरहू तेँ, गुरु धुर धरनि धरत को?
सब सद्गुन सनमानि आनि उर, अघ औगुन निदरत को?॥२॥
सिवहु न सुगम सनेह रामपद, सुजननि सुलभ करत को?
सृजि निज जस-सुरतरु तुलसी कहँ, अभिमत फरनि फरत को?॥३॥१२॥

सुनि रन घायल लखन परे हैँ।
स्वामि-काज संग्राम सुभट सोँ, लोहे ललकारि ऌरे हैँ॥१॥
सुवन-सोक सन्तोष सुमित्रहि, रघुपति-भगति बरे हैँ।
छिन छिन गात सुखात छिनहि छिन, हुलसत होत हरे हैँ॥२॥
कपि सोँ कहति सुभाय अम्ब के, अम्बक अम्बु भरे है।
रघुनन्दन बिनु बन्धु कुअवसर, जद्यपि धनु दुसरे हैँ॥३॥
तात! जाहु कपि सँग रिपुसूदन उठि कर जोरि खरे हैँ।
प्रमुदित पुलकि पैँत पूरे जनु, बिधिबस सुढर ढरे हैँ॥४॥
अम्ब-अनुज-गति लखि पवनज, भरतादि गलानि गरे हैँ।
तुलसी सब समुझाइ मातु तेहि, समय सचेत करे हैँ॥५॥१३॥

गहरु=विलम्ब। हरिहिय=कपि के मन में। उपयो=उत्पन्न हुआ। रयो=रङ्गो। बरे=बड़े। अम्ब॥ माता सुमित्रा। अम्बक=नेत्र। अम्बु=जल। धनु=शत्रुघ्न। पैँत=दाँव, बाजी।

विनय सुनाइबी परि पाय।
कहैाँ कहा कपीस तुम्ह सुचि, सुमति सुहृद सुभाय ॥१॥
स्वामि सङ्कट हेतु हैाँ जड़, जननि जनम्यो जाय।
समौ पाइ कहाइ सेवक, घट्यो तौ न सहाय ॥२॥
कहत सिथिल सनेह भो, जनु धीर घायल घाय।
भरत गति लखि मातु सब रहि, ज्यौं गुड़ी बिनु बाय ॥३॥
भेँट करि कहिबो कह्यो यौँ, कठिन-मानस माय।
लाल ! लोने लखन-सहित, सुललित लागत नाँय ॥४॥
देखि बन्धु सनेह अम्ब, सुभाउ लखन कुठाय ॥
तपत तुलसी तरनि त्रासक, एहि नये तिहुँ ताय ॥५॥ १४ ॥

हृदय-घाव मेरे पीर रघुबीरै।
पाइ सजीवन जागि कहत यौँ, प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै ॥१॥
मोहिँ कहा बूझत पुनि पुनि जैसे, पाठ अरथ चरचा कीरै।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कान्ति मोल हीरै ॥२॥
तुलसी सुनि सौमित्र-बचन सब, धरि न सकत धीरौ धीरै।
उपमा राम-लखन की प्रीति की, क्यौँ दीजै खीरै-नीरै ॥३॥ १५ ॥

राग कान्हरा

राजत राम काम-सत-सुन्दर।
रिपु रन जीति अनुज सँग सोभित, फेरत चाप बिसिष बनरुह-कर ॥१॥
स्याम सरीर रुचिर स्रमसीकर, सोनित-कन बिच बीच मनोहर।
जनु खद्योत-निकर हरिहित-गन, भ्राजत मरकत-सैल-सिखर पर ॥२॥
घायल बीर बिराजत चहुँ दिसि, हरषित सकल रिच्छ अरु बनचर।
कुसुमित किंसुक-तरु समूह महँ, तरुन तमाल बिसाल बिटप बर ॥३॥

घट्यो=कियो। गुड़ी=गुड्डी,पतंग। बाय=हवा। नाँय=नहीं। कुठाय=कुजगह। खीरनीर=दूध पानी। बनरुह=कमल। स्रमसीकर=पसीने की बूँदें। हरिहित=बीरबहूटी। किंसुक=पलाश।

राजिव-नयन बिलोकि कृपा करि, किये अभय मुनि नाग बिबुध नर।
तुलसिदास यह रूप अनूपम, हिय सरोज बसि दुसह बिपतिहर, ॥४॥१६॥

राग आसावरी

अवधि आजु किधौं औरो दिन द्वै हैं।
चढ़ि धौरहर बिलोकि दखिन दिसि, बूझ धौं पथिक कहाँ ते आये वै हैं ॥१॥
बहुरि बिचारि हारि हिय सोचति, पुलकिगात लागे लोचन च्वै हैं।
निज बासरनि बरष पुरवैगो बिधि, मेरे तहाँ करम कठिनकृत कै हैं ॥२॥
बन रघुबीर मातु गृह जीवति, निलज प्रान सुनि सुनि सुख स्वैहैं।
तुलसिदास मोसी कठोर-चित, कुलिससाल-भञ्जनि को है हैं ॥३॥ १७॥

आली! अब राम-लखन कित ह्वै हैं।
चित्रकूट तज्यौ तब तें न लही सुधि, बधू-समेत कुसल सुत द्वै है ॥१॥
बारि बयारि बिषम हिम आतप, सहि बिनु बसन भूमितल स्वैहैं।
कन्द मूल फल फूल असन बन, भोजन समय मिलत कैसे वैहै ॥२॥
जिन्हहिं बिलोकि सोचिहैं लता द्रुम, खग मृग मुनि लोचन जल च्वैहैं।
तुलसिदास तिन्हकी जननी हौं, मो सी निठुर चित औरो कहुँ ह्वै हैं ॥३॥१८॥

राग सोरठ

बैठी सगुन मनावति माता।
कब ऐहैं मेरे बाळ कुसल घर, कहहु काग फुरि बाता ॥१॥
दूध भात की दोनी दैहौं, सोने चोंच मढ़ैहौं।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि, राम-लखन उर लैहौं ॥२॥
अवधि समीप जानि जननी जिय, अति आतुर अकुलानी।
गनक बोलाय पाँय परि पूछति, प्रेम-मगन मृदु बानी ॥३॥
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें, समाचार लै आयो।
प्रभु आगमन सुनत तुलसी मनो, मीन मरत जल पायो ॥ ४॥ १-

धौरहर=ऊँची अटारी।

राग गौरी

छेमकरी बलि बोलि सुबानी।
कुसल छेम सिय राम लखन कब, ऐहैं अम्ब अवध रजधानी ॥१॥
ससिमुखि कुङ्कुम-बरनि सुलोचनि, मोचनि सोच तूँ बेद बखानी।
देवि! दया करि देहि दरस फल, जोरि पानि बिनवहिं सब रानी ॥२॥
सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै, मञ्जुल मंडल कै मड़रानी।
सुभ मङ्गल आनन्द गगन-धुनि, अकनि अकनि उर जेरनि जुड़ानी ॥३॥
फरकन लगे सुअङ्ग बिदिसि दिसि, मन प्रसन्न दुख-दसा सिरानी।
करहिं प्रनाम सप्रेम पुलकि तनु, मानि बिबिध बलि सगुन सयानी।
तेहि अवसर हनुमान भरत सोँ, कही सकल कल्यान-कहानी।
तुलसिदास सोइ चाह सजीवनि, बिषम बियोगव्यथा बड़ि भानी ॥४॥२०॥

राग धनाश्री

सुनियत सागरसेतु बँधायो।
कोसलपति की कुसल सकल सुधि, कोउ इक दूत भरत पहँ ल्यायो ॥१॥
बध्यो बिराध त्रिसिर खर दूषन, सूर्पनखा को रूप नसायो।
हति कबन्ध बल-अन्ध बालि दलि, कृपासिन्धु सुग्रीव बसायो ॥२॥
सरनागत अपनाइ बिभीषन, रावन सकुल समूल बहायो।
बिबुध-समाज निवाजि बाँह दै, बन्दिछोर बर बिरद कहायो ॥३॥
एक एक सोँ समाचार सुनि, नगरलोग जहँ तहँ सब धायो।
घन-धुनि अकनि मुदित मयूर ज्योँ, बूड़त जलधि पार सो पायो ॥४॥
अवधि आजु योँ कहत परसपर, बेगि बिमान निकट पुर आयो।
उतरि अनुज अनुगनि समेत प्रभु, गुरु द्विजगन चरननि सिर नायो ॥५॥
जो जेहि जोग राम तेहि बिधि मिलि, सबके मन अति मोद बढ़ायो।
भेंटी मातु भरत भरतानुज, क्योँ कहैाँ प्रेम अमित अनमायो ॥६॥

चाह=खबर, समाचार। अनुगनि=सेवकों। अनमायो=छलहीन, अपार। छेमकरी=सफ़ेद कंठ की चील्ह।

तेही दिन मुनिवृन्द अनन्दित, तुरत तिलक को साज सजायो ।
महाराज रघुबंस नाथ को, सादर तुलसिदास गुन गायो ॥७।२१॥

राग जयतश्री

रन जीति राम राउ आये ।
सानुज सदल ससीय कुसल आजु अवध अनन्द बधाये ॥१॥
अरिपुर जारि उजारि मारि रिपु, बिबुध सुबास बसाये ।
धरनि धेनु महिदेव साधु सबके सब सोच नसाये ॥२॥
दई लङ्क थिर थपे बिभीषन, बचन पियूष पिआये ।
सुधा सींचि कपि कृपा नगर नर, नारि निहारि जिआये ॥३॥
मिलि गुरु बन्धु मातु जन परिजन, भये सकल मन भाये ।
दरस हरष दसचारि बरष के, दुख पल में बिसराये ॥४॥
बोलि सचिव सुचि सोधि सुदिन मुनि, मङ्गल साज सजाये ।
महाराज अभिषेक बरषि सुर, सुमन निसान बजाये ॥५॥
लै लै भेंट नृप अहिप लोकपति, अति सनेह सिर नाये ।
पूजि प्रीति पहिचानि राम, आदरे अधिक अपनाये ॥६॥
दान मान सनमानि जानि रुचि, जाचक जन पहिराये ।
गये सोक-सर सूखि मोद-सरिता-समुद्र गहिराये ॥७॥
प्रभु प्रताप रवि अहित अमङ्गल, अघ-उलूक-तम ताये ।
किये बिसोक हित-कोक-कोकनद, लोक सुजस सुभ छाये ॥८॥
राम राज कुलकाज सुमङ्गल, सबनि सबै सुख पाये ।
देहिँ असीस भूमिसुर प्रमुदित, प्रजा प्रमोद बढ़ाये ॥९॥
आस्रम-धरम-बिभाग बेदपथ, पावन लोग चलाये ।
धर्म-निरत सिय-राम-चरन-रत, मनहुँ राम-सिय-जाये ॥१०॥
कामधेनु महि बिटप कामतरु, कोउ बिधि बाम न लाये ।
ते तब अब तुलसी तेउ जिन्ह हित,-सहित राम-गुन गाये ॥११॥ ॥२२॥

राग टोड़ी

आजु अवध आनन्द बधावन, रिपु रन जीति राम आये।
सजि सुबिमान निसान बजावत, मुदित देव देखन धाये ॥१॥
घर घर चारु चौक चन्दन मनि, मङ्गल-कलस सबनि साजे।
ध्वज पताक तोरन बितान बर, बिबिध भाँति बाजन बाजे ॥२॥
राम-तिलक सुनि दीप दीप के, नृप आये उपहार लिये।
सीय सहित आसीन सिंहासन, निरखि जोहारत हरष हिये ॥३॥
मङ्गल गान वेदधुनि जयधुनि, मुनि-असीस-धुनि भुवन भरे।
बरषि सुमन सुर सिद्ध प्रसंसत, सबके सब सन्ताप हरे ॥४॥
राम-राज भइ कामधेनु महि, सुख सम्पदा लोक छाये।
जनम जनम जानकीनाथ के, गुनगन तुलसिदास गाये ॥५॥ २३॥

उत्तर कांड

राग सोरठ

बन तेँ आइकै राजा राम भये भुवाल।
मुदित चौदह भुवन सब सुख, सुखी सब सब काल ॥१॥
मिटे कलुष कलेस कुलषन, कपट कुपथ कुचाल।
गये दारिद दोष दारुन, दम्भ दुरित दुकाल ॥२॥
कामधुक महि कामतरु तरु, उपर मनि गन लाल।
नारि नर तेहि समय सुकृती, भरे भाग सुभाल ॥३॥
बरन-आस्रम-धर्मरत मन, वचन बेष मराल।
राम-सिय सेवक सनेही, साधु सुमुख रसाल ॥४॥
राम-राज-समाज बरनत, सिद्ध सुर दिगपाल।
सुमिरि सो तुलसी अजहुँ हिय, हरष होत बिसाल ॥५॥ १॥

उपहार = भेंट, नज़र। आसीन = विराजमान। कुलषन = कुलक्षण। दुरित = पाप। कामधुक = कामधेनु।

राग ललित

भोर जानकीजीवन जागे।
सूत मागध प्रबीन, बेनु बीना धुनि द्वारे, गायक सरस राग रागे ॥१॥
स्यामल सलोने गात, आलसबस जँभात, प्रिया प्रेमरस पागे।
उनींदे लोचन चारु, मुख सुखमा सिँगार, हेरि हारे मार भूरि भागे ॥२॥
सहज सुहाई छबि, उपमा न लहैं कबि, मुदित बिलोकन लागे।
तुलसिदास निसि बासर अनूप रूप रहत प्रेम-अनुरागे ॥३॥ २ ॥

राग कल्यान

रघुपति राजीवनयन, सोभातनु कोटि मयन;
करुनारस-अयन चयन-रूप भूप माई।
देखो सखि अतुलित छबि, सन्त कञ्ज-कानन-रवि,
गावत कल कीरति कबि कोबिद समुदाई ॥१॥
मज्जन करि सरजुतीर, ठाढ़े रघुबंसबीर,
सेवत पद कमल धीर निरमल चित लाई।
ब्रह्ममंडली-मुनीन्द्रवृन्द-मध्य इन्दुबदन,
राजत सुखसदन लोकलोचन-सुखदाई ॥२॥
बिथुरित सिररुह-बरूथ, कुञ्चित बिच सुमन-जूथ,
मनिजुत सिसु-फनि-अनीक ससि समीप आई।
जनु सभीत दै अँकोर, राखे जुग रुचिर मोर,
कुंडल-छबि निरखि चोर सकुचत अधिकाई ॥३॥
ललित भृकुटि तिलक भाल, चिबुक अधर द्विज रसाल,
हास चारुतर कपोल नासिका सुहाई।
मधुकर जुग पङ्कज बिच, सुक बिलोकि नीरज पर,
लरत मधुप-अवलि मानौं बीच कियो आई ॥४॥

उनींदे=नींद भरे। सिररुह=बाल, केश। कुञ्चित=घूघरवाले। अँगकोर=घूस, रिशवत। चिबुक=ठुड्ढी। द्विज=दाँत। बीचकियो=बीच बिचाव करके झगड़ा मिटाया। चञ्चरीक=भ्रमर।

सुन्दर पटपीत बिसद, भ्राजत बनमाल उरसि,
तुलसिका-प्रसून-रचित बिबिध बिधि बनाई।
तरु तमाल अधबिच जनु, त्रिबिध कीरपाँति रुचिर,
हेमजाल अन्तर परि ताते न उड़ाई ॥५॥
सङ्कर-हृदि-पुंडरीक, निवसत हरिचञ्चरीक,
निर्व्यलीक मानस-गृह सन्तत रहे छाई।
अतिसय आनन्दमूल, तुलसिदास सानुकूल,
हरनसकल सूल अवध-मंडन रघुराई ॥६॥ ३ ॥

राजत रघुबीर धीर, भञ्जन भवभीर पीर,
हरन सकल सरजुतीर निरखहु सखि! सोहैं।
सङ्ग अनुज मनुज-निकर, दनुज-बल-बिभङ्ग-करन,
अङ्ग अङ्ग छबि अनङ्ग अगनित मन मोहैं ॥१॥
सुखमा-सुख-सील-अयन, नयन निरखि निरखि नील,
कुञ्चित कच कुंडल कल नासिक चित पोहैं।
मनहुँ इन्दुबिम्ब मध्य, कञ्ज मीन खञ्जन लखि,
मधुप मकर कीर आये तकि तकि निज गोहैं ॥२॥
ललित गंड मंडल सुविसाल भाल तिलक झलक,
मञ्जुतर मयङ्क-अङ्क रुचिर बङ्क भौहैं।
अरुन अधर मधुर बोल, दसन दमक दामिनि दुति,
हुलसति हिय हँसनि चारु चितवनि तिरछौहैं ॥३॥
कम्बु कंठ भुज बिसाल, उरसि तरुन तुलसिमाल,
मञ्जुल मुकतावलि जुत जागति जिय जोहैं।
जनु कलिन्दनन्दिनि मनि-इन्द्रनील-सिखर परसि,
धँसति लसति हंससेनि सङ्कुल अधिकौहैं ॥४॥

निर्व्यलीक = बिना कपट। सन्तत = निरन्तर। गोहैं = साथी, सङ्गी। कम्बु = शंख। इन्द्रनील = मरकत मणि। भव्य = सुन्दर।

दिव्यतर दुकूल भव्य नव्य रुचिर चम्पक चय,
चञ्चला कलाप कनक निकर अलि किधौं हैं ।
सज्जन-चख-झख-निकेत, भूषन मनिगन समेत,
रूप-जलधि-वपुष लेत मन-गयन्द बोहैं ॥५॥
अकनि वचन चातुरी, तुरीय पेखि प्रेम मगन,
पग न परत इत उत सब चकित तेहि समै हैं ।
तुलसिदास यह सुधि नहिं, कौन की कहाँ तें आई,
कौन काज काके ढिग कौन ठाउँ को हैं ॥६॥ ४ ॥

देखु सखि ! आजु रघुनाथ सोभा बनी ।
नील-नीरद-बरन-वपुष भुवनाभरन,
पीत-अम्बर-धरन हरन दुति-दामिनी ॥१॥
सरजु मज्जन किये सङ्ग सज्जन लिये,
हेतु जन पर हिये कृपा कोमल घनी ।
सजनि आवत भवन मत्त-गजबर-गवन,
लंक मृगपति ठवनि कुँवर कोसलधनी ॥२॥
सघन चिक्कन कुटिल चिकुर बिलुलित मृदुल,
करनि बिवरत चतुर सरस सुखमा जनी ।
ललित अहि-सिसु-निकर मनहुँ ससि सन समर,
लरत धरहरि करत रुचिर जनु जुग फनी ॥३॥
भाल भ्राजत तिलक जलज लोचन पलक,
चारु भ्रू नासिका सुभग सुक-आननी ।
चिबुक सुन्दर अधर अरुन द्विज दुति सुघर,
बचन गम्भीर मृदुहास भव-भाननी ॥४॥
स्रवन कुंडल विमल गंड मंडित चपल,
कलित कल कान्ति अति भाँति कछु तिन्ह तनी ।

नव्य = नवीन । कलाप = समूह । बोहैं = डुब्की, स्नान । चिकुर = बाल । जनी = उत्पन्न
धरहरि = बीच बिचाव । भवभाननी = संसार का दुःख नसानेवाली ।

जुगल कञ्चन-मकर मनहुँ विधुकर मधुर,
पियत पहिचानि करि सिन्धुकीरति भनी ॥५॥
उरसि राजत पदिक ज्योति रचना अधिक,
माल सुविसाल चहुँ पास बनि गजमनी।
स्याम नव जलद पर निरखि दिनकर-कला,
कौतुकी मनहुँ रही घेरि उडुगन-अनी ॥६॥
मन्दिरनि पर खरी नारि आनँद-भरी,
निरखि बरषहिं विपुल कुसुम कुङ्कुम-कनी।
दासतुलसी राम परम करुनाधाम,
काम सत कोटि मद हरत छबि आपनी ॥७॥५॥

आजु रघुबीर छबि जाति नहिं कछु कही।
सुभग सिंहासनासीन सीतारमन,
भुवनअभिराम बहु काम सोभा सही ॥१॥
चारु चामर ब्यजन छत्र मनिगन बिपुल,
दाम मुकुतावली जोति जगमगि रही।
मनहुँ राकेस सँग हंस उडुगन बरहि,
मिलन आये हृदय जानि निज नाथही ॥२॥
मुकुट सुन्दर सरसि भालवर तिलक भ्रू,
कुटिल कच कुंडलनि परम आभा लही।
मनहुँ हर-डर जुगल मारध्वज के मकर,
लागि स्रवननि करत मेरु की बतकही ॥३॥
अरुन-राजीव-दल-नयन करुना-अयन,
बदन सुखमासदन हास त्रय-तापही।
विविध कङ्कन हार उरसि गजमनि-माल,
मनहुँ बग-पाँति जुग मिलि चली जलद ही ॥४॥

कनी=बुन्द। चामर=चँवर। व्यजन=पंखा। दाम=माला। बरहि=मोर। मारध्वज=कामदेव की ध्वजा। मेरु=मेल, सुलह।

पीत निर्मल चैल मनहुँ मरकत सैल,
पृथुल दामिनि रही छाइ तजि सहज ही।
ललित सायक चाप पीन भुज बल अतुल,
मनुज तनु दनुजबन दहन मंडन-मही ॥५॥
जासु गुन रूप नहिं कलित निर्गुन सगुन,
सम्भु सनकादि सुक भक्ति दृढ़ करि गही।
दासतुलसी राम-चरन-पङ्कज सदा,
बचन मन कर्म चहै प्रीति नित निर्बही ॥६॥ ६॥

रामराज राजमौलि मुनिवर-मन-हरन सरन,
लायक सुखदायक रघुनायक देखौ री।
लोक लोचनाभिराम नीलमनि-तमाल-स्याम,
रूप सीलधाम अङ्ग छवि अनङ्ग को री? ॥१॥
भ्राजत सिर मुकुट पुरट-निर्मित मनि-रचित चारु,
कुञ्चित कच रुचिर परम सोभा नहिं थोरी।
मनहुँ चञ्चरीक-पुञ्ज कञ्जवृन्द प्रीति लागि,
गुञ्जत कल गान तान दिनमनि रिझयो री ॥२॥
अरुनकञ्ज-दल-बिसाल लोचन भ्रू तिलक भाल,
मंडित स्रुति कुंडल वर सुन्दरतर जोरी।
मनहुँ सम्बरारि मारि ललित मकर-जुग बिचारि,
दीन्हें ससि कहँ पुरारि भ्राजत दुहुँ ओरी ॥३॥
सुन्दर नासा कपोल चिबुक अधर अरुन बोल,
मधुर दसन राजत जब चितवत मुख मोरी।
कम्बु कोस भीतर जनु कञ्जराग-सिखर निकर,
रुचिर रचित बिधि बिचित्र तड़ित-रङ्ग बोरी ॥४॥

पृथुल=बहुत, अधिक। कलित=सुसज्जित। पुरट=स्वर्ण। सुन्दरतर=अत्यन्त शोभन। [कञ्ज]राग=पद्मराग मणि। कम्बु=शंख। सम्बरारि=कामदेव।

कम्बु कंठ उर बिसाल तुलसिका नवीन माल,
मधुकर बर बास बिवस उपमा सुनु सो री !
जनु कलिन्दजा सुनील सैल तें धसी समीप,
कन्द वृन्द बरषत छबि मधुर घोरि घोरी ॥५॥
निर्मल अति पीत चैल-दामिनि जनु जलद नील,
राखी निज सोभाहित बिपुल बिधि निहोरी।
नयनन्हि को फल बिसेष ब्रह्म अगुन सगुन बेष,
निरखहु तजि पलक सफल जीवन लेखो री ॥६॥
सुन्दर सीता समेत सोभित करुनानिकेत,
सेवक सुख देत लेत चितवत चित चोरी।
बरनत यह अमित रूप थकित निगम नागभूप,
तुलसिदास छबि बिलोकि सारद भइ भोरी ॥७॥ ७ ॥

राग केदारा

सखि ! रघुनाथ-रूप निहारु।
सरद-बिधु रबि-सुवन मनसिज, मान-भञ्जनिहारु ॥१॥
स्याम सुभग सरीर जनु, मन-काम-पूरनिहारु।
चारु चन्दन मनहुँ मरकत,-सिखर लसत निहारु ॥२॥
रुचिर उर उपबीत राजत, पदिक गजमनि हारु।
मनहुँ सुरधनु नखतगन बिच, तिमिर भञ्जनिहारु ॥३॥
बिमल पीत दुकूल दामिनि, दुति बिनिन्दनिहारु।
बदन सुखमासदन सोभित, मदन मोहनिहारु ॥४॥
सकल अङ्ग अनूप नहिं कोउ, सुकबि बरननिहारु !
दासतुलसी निरखतहि सुख, लहत निरखनिहारु ॥५॥८॥

सखि ! रघुबर मुखछबि देखु।
चित्त-भीति सुप्रीति-रङ्ग सुरूपता अवरेखु ॥१॥

कन्द=मेघ। घोरिघोरी=गरज गरज कर। रबिसुवन=अश्विनीकुमार। मान=घमंड।

नयन सुखमा निरखि नागरि ! सफल जीवन लेखु।
मनहुँ बिधि जुग जलज बिरचे, ससि सुपूरन मेखु ॥२॥
भृकुटि भाल बिसाल राजत, रुचिर कुङ्कुम रेखु।
भ्रमर द्वै रबिकिरनि ल्याये, करन जनु उनमेखु ॥३॥
सुमुखि ! केस सुदेस सुन्दर, सुमन-सञ्जुत पेखु।
मनहुँ उडुगन निबह आये, मिलन तम तजि द्वेषु ॥४॥
स्रवन कुंडल मनहुँ गुरु कबि, करत बाद बिसेषु।
नासिका द्विज अधर जनु रह्यो, मदन करि बहु बेषु ॥५॥
रूप बरनि न सकत नारद, सम्भु सारद सेषु।
कहै तुलसीदास क्यों मतिमन्द सकल नरेसु ॥६॥ ९॥

राग जयतिश्री

देखौ राघव बदन बिराजत चारु।
जात न बरनि बिलोकत ही सुख, मुख किधौं छबि बर नारि सिंगारु १॥
रुचिर चिबुक रद जोति अनूपम, अधर अरुन सित हास निहारु।
मनौं ससिकर बस्यो चहत कमल महँ, प्रगटत दुरत न बनत बिचारु ॥२॥
नासिक सुभग मनहुँ सुक सुन्दर, चितवत चकि आचरज अपारु।
कल कपोल मृदु बोल मनोहर, रीझि चित चतुर अपनपौ वारु ॥३॥
नयनसरोज कुटिल कच कुंडल, भृकुटि सुभाल तिलक सोभा सारु।
मनहुँ केतु के मकर चाप सर, गयो बिसारि भयो मोहित मारु ॥४॥
निगम सेष सारद सुक सङ्कर, बरनत रूप न पावत पारु।
तुलसिदास कहै कहौं धौं कौन बिधि, अति लघुमति जड़ कूर गँवारु ॥५॥ १०॥

राग ललित

आज रघुपति-मुख देखत लागत सुख,
सेवक सरुख सोभा सरद ससि सिहाइ।

ससि पूरन मेखु=शरत् कालके पूर्ण चन्द्रमा। उन मेख=आँख का खुलना, विकास। निबह= समूह। गुरुकबि=बृहस्पति और शुक्र।

दसन बसन लाल बिसद हास रसाल,
मानोँ हिमकर कर राखे राजीव मनाइ ॥१॥
अरुन नैन बिसाल ललित भृकुटि माल,
तिलक चारु कपोल चिबुक नासा सुहाइ।
बिथुरे कुटिल कच मानहुँ मधु लालच अलि
नलिन-जुगल उपर रहे लोभाइ ॥२॥
स्रवन सुन्दर सम कुंडल कल जुगम,
तुलसिदास अनूप उपमा कही न जाइ।
मानो मरकत सीप सुन्दर ससि समीप,
कनक मकरजुत बिधि बिरची बनाइ ॥३॥११॥

राग भैरव

प्रातकाल रघुबीर-बदन-छबि, चितै चतुर चित मेरे।
होहिं बिबेक-बिलोचन निर्मल, सुफल सुसीतल तेरे ॥१॥
भाल बिसाल बिकट भृकुटी बिच, तिलकरेख रुचि राजे।
मनहुँ मदन तम तकि मरकत धनु, जुगल कनक सर साजै ॥२॥
रुचिर पलक-लोचन जुग तारक, स्याम अरुन सित कोये।
जनु अलि नलिन-कोस महँ बन्धुक,-सुमन सेज सजि सोये ॥३॥
बिलुलित ललित कपोलनि पर कच, मेचक कुटिल सुहाये।
मनो बिधु महँ बनरुह बिलोकि अलि, बिपुल सकौतुक आये ॥४॥
सोभित स्रवन कनक-कुंडल कल, लम्बित बिबि भुजमूले।
मनहुँ केकि तकि गहन चहत जुग, उरग इन्दु प्रतिकूले ॥५॥
अधर अरुन-तर दसन-पाँति बर, मधुर मनोहर हासा।
मनहुँ सोन-सरसिज महँ कुलिसनि, तड़ित सहित कृत बासा ॥६॥

दसन-बसन=रदच्छद=ओठ। कोये=आँख का कोना। बन्धुकसुमन=उड़हुल का फूल। बिलुलित=बिखरे हुए।

चारु चिबुक सुकतुंड-बिनिन्दक, सुभग सुउन्नत नासा ।
तुलसिदास छबिधाम राममुख, सुखद समन भवत्रासा ॥७॥ १२ ॥

राग केदारा

सुमिरत श्री रघुबीर की बाहैं ।
होत सुगम भव-उदधि अगम अति, कोउ लाँघत कोउ उतरत थाहैं ॥१॥
सुन्दर-स्याम-सरीर-सैल तैं, धँसि जनु जुग जमुना अवगाहैं ।
अमित अमल जल-बल परिपूरन, जनु जनमी सिँगार-सविता हैं ॥२॥
धारैं बान कूल धनु भूषन, जलचर भँवर सुभग सब घाहैं ।
बिलसति बीचि बिजय-बिरदावलि, कर-सरोज सोहत सुखमा हैं ॥३॥
सकल-भुवन-मङ्गल-मन्दिर के, द्वार बिसाल सुहाईं साहैं ।
जे पूजी कौसिक-मख रिषयनि, जनक गनप सङ्कर गिरिजा है ॥४॥
भवधनु दलि जानकी बिवाही, भये बिहाल नृपाल त्रपा हैं ।
परसु पानि जिन्ह किये महामुनि, जे चितये कबहूँ न कृपा हैं ॥५॥
जातुधान-तिय जानि वियोगिनि, दुखई सीय सुनाइ कुचाहैं ।
जिन्ह रिपु मारि सुरारि-नारि तेइ, सीस उघारि दिवाईं धाहैं ॥६॥
दसमुख-बिबस तिलोक लोकपति, बिकल बिनाये नाक चना हैं ।
सुबस बसे गावत जिन्हके जस, अमर-नाग-नर-सुमुखि सनाहैं ॥७॥
जे भुज बेद पुरान सेष सुक, सारद सहित सनेह सराहैं ।
कलपलताहु की कलपलता वर, कामदुहा की कामदुहा हैं ॥८॥
सरनागत आरत प्रनतनि को, दै दै अभयपद ओर निबाहैं ।
करि आईं करिहैं करतीहैं, तुलसिदास दासनि पर छाहैं ९॥१३॥

राग भैरव

रामचन्द्र-करकञ्ज कामतरु, वामदेव-हितकारी ।
सियसनेह-बर-बेलि-वलित वर, प्रेमबन्धु बर बारी ॥१॥

सविता=सूर्य । घाहैं=घाई, उँगलियों के बीच की सन्धि । साहैं=सार, दरवाज़े में लगी खड़ी लकड़ी
त्रपा=लज्जा, शरम । धाहैं=धाड़ मार कर रोना । सनाहैं=पति के सहित ।

मञ्जुल-मङ्गल मूल मूल-तनु, करज मनोहर साखा।
रोम परन नख सुमन सुफल सब,-काल सुजन अभिलाखा ॥२॥
अबिचल अमल अनामय अबिरल, ललित रहित-छल-छाया।
समन सकल सन्ताप पाप रुज, मोह मान मद माया ॥३॥
सेवहिं सुचि मुनि-भृङ्ग-बिहँग मन,-मुदित मनोरथ पाये।
सुमिरत हिय हुलसत तुलसी अनुराग उमँगि गुन गाये ॥४॥१४॥

रामचरन अभिराम कामप्रद, तीरथ-राज बिराजै।
सङ्कर-हृदय भगति भूतल पर प्रेम-अछयवट भ्राजै ॥१॥
स्यामबरन पद-पीठ अरुन तल, लसति बिसद नखस्रेनी।
जनु रबिनसुता सारदा सुरसरि, मिलि चलीं ललित त्रिबेनी ॥२॥
अङ्कुस कुलिस कमल-धुज सुन्दर, भँवर तरङ्ग बिलासा।
मज्जहिं सुर सज्जन मुनिजन मन,-मुदित मनोहर बासा ॥३॥
बिनु बिराग जप जाग जोग व्रत, बिनु तप बिनु तनु त्यागे।
सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभु, पद-प्रयाग अनुरागे ॥४॥ १५॥

राग बिलावल

रघुबर-रूप बिलोकु नेकु मन।
सकल लोक-लोचन-सुखदायक, नखसिख सुभग स्यामसुन्दर तन ॥१॥
चारु चरन-तल-चिह्न चारि फल, चारि देत परचारि जानि जन।
राजत नखजनु कमल-दलनि पर, अरुन-प्रभा-रञ्जित तुषारकन ॥२॥
जङ्घा जानु आनु केदलि उर, कटि किङ्किनि पटपीत सुहावन।
रुचिर निषङ्ग नाभि रोमावलि, त्रिबलि-वलित उपमा कछु आवन ॥३॥
भृगुपद-चिह्न पदिक उर सोभित, मुकुतमाल कुङ्कुम अनुलेपन।
मनहुँ परसपर मिलि पङ्कज रवि, प्रगट्यो निज अनुराग सुजस घन ॥४॥
बाहु बिसाल ललित सायक धनु, कर कङ्कन केयूर महाधन।

करज=उँगली। परचारि=ललकार कर। केयूर=बिजायठ। द्विज=दाँत।

बिमल दुकूल दलन दामिनि दुति, यज्ञोपवीत लसत अति पावन ॥५॥
कम्बुग्रीव छबिसींवँ चिबुक द्विज, अधर कपोल बोल भय-मोचन ।
नासिक सुभग कृपापरिपूरन, तरुन अरुन राजीव बिलोचन ॥६॥
कुटिल भृकुटिबर भाल तिलक रुचि, सुचि सुन्दरता स्रवन बिभूषन ।
मनहुँ मारि मनसिज पुरारि दिय, ससिहि चापसर मकर अदूषन ॥७॥
कुञ्चित कच कञ्चन-किरीट सिर, जटित ज्योतिमय बहु बिधि मनिगन ।
तुलसिदास रबिकुल-रबि-छबि कवि, कहि न सकत सुक सम्भु सहस फन ॥८॥१६॥

राग कान्हरा

देखो रघुपति-छबि अतुलित अति ।
जनु तिलोक सुखमा सकेलि बिधि, राखी रुचिर अङ्ग अङ्गनि प्रति ॥१॥
पदुमराग रुचि मृदु पदतल धुज, अङ्कुस कुलिस कमल यहि सूरति ।
रही आनि चहुँ बिधि भगतनि की, जनु अनुराग भरी अन्तरगति ॥२॥
सकल सुचिह्न सुजन सुखदायक, ऊरधरेख बिसेष बिराजति ।
मनहुँ भानु-मंडलहि सँवारत, धरयो सूत बिधि-सुत बिचित्र मति ॥३॥
सुभग अँगुष्ठ अङ्गुली अबिरल, कछुक अरुन नख-ज्योति जगमगति ।
चरन पीठ उन्नत नत-पालक, गूढ़ गुलुफ जङ्घा कदलीजति ॥४॥
काम-तून-तल सरिस जानु जुग, उरु करि-कर करभहि बिलखावति ।
रसना रचित रतन चामीकर, पीत बसन कटि कसे सरसावति ॥५॥
नाभी सर त्रिबली निसेनिका, रोमराजि सैवल छबि पावति ।
उर मुकुतामनि-माल मनोहर, मनहुँ हंस-अवली उड़ि आवति ॥६॥
हृदय पदिक भृगु-चरन-चिह्न बर, बाहु बिसाल जानु लगि पहुँचति ।
कल केयूर पूर-कञ्चन-मनि, पहुँची मञ्जु कञ्जकर सोहति ॥७॥
सुजस सुरेख सुनख अङ्गुलिजुत, सुन्दर पानि मुद्रिका राजति ।
अङ्गुलित्रान कमान बानछबि, सुरनि सुखद असुरनि-उर सालति ॥८॥

धुज=ध्वजा । धरयो सूत=सिधाई के लिये कारीगर के समान सूत रक्खा । बिधिसुत=विश्वकर्मा । कदलीजति=केला को जीतनेवाली । गुलुफ=एड़ी के ऊपर की गाँठ । उरु=जंघा । निसेनिका=सीढ़ी । सैवल=सेवार । जानु=घुटना ।

स्याम सरीर सुचन्दन-चर्चित, पीत दुकूल अधिक छबि छाजति।
नील जलद पर निरखि चन्द्रिका, दुरनि तर्यांग दामिनि जनु दमकति ॥९॥
यज्ञोपवीत पुनीत बिराजत, गूढ़ जत्रु बनि पीन अंस तति।
सुगढ़ पुष्ट उन्नत कृकाटिका, कम्बु कंठ सोभा मन मानति ॥१०॥
सरद-समय-सरसीरुह-निन्दक, मुख-सुखमा कछु कहत न बानति।
निरखत ही नयननि निरुपम सुख, रबिसुत मदन सोम-दुति निदरति॥११॥
अरुन अधर द्विजपाँति अनूपम, ललित हँसनि जनु मन आकरषति।
विद्रुम-रचित बिमान मध्य जनु, सुरमंडली सुमन-चय बरषति ॥१२॥
मञ्जुल चिबुक मनोरम हनुथल, कल कपोल नासा मन मोहति।
पङ्कज-मान-बिमोचन लोचन, चितवनि चारु अमृत-जल सींचति ॥१३॥
केस सुदेस गँभीर बचन बर, स्रुति कुंडल-डोलनि जिय जागति।
लखि नव नील पयोद रवित सुनि, रुचिर मोर जोरी जनु नाचति ॥१४॥
भौंहैं बङ्क मयङ्क-अङ्क रुचि, कुङ्कमरेख भाल भलि भ्राजति।
सिरसि हेम-हीरक-मानिकमय, मुकुट-प्रभा सबभुवनप्रकासति ॥१५॥
बरनत रूप पार नहिं पावत, निगम सेष सुक सङ्कर भारति।
तुलसिदास केहि बिधि बखानि कहै, यह मन बचन अगोचर मूरति ॥१६॥१७॥

राग मलार

ओली री! राचौ के रुचिर हिंडोलना झूलन जैये।
टेक०–फटिक भीति सुचारु चहुँ दिसि, मंजु मनिमय पौंरि।
गच काँच लखि मन नाच सिखि जनु, पाँचसर सु फँसौरि॥
तोरन बितान पताक चामर, धुज सुमन फल-घौरि।
प्रतिछाँह-छवि कवि साखि दै, प्रति सौं कहै गुरु हौं रि! ॥१॥
मदन जय के खम्भ से रचे, खम्भ सरल बिसाल।
पाटीर पाटि बिचित्र भँवरा, बलित बेलिन लाल॥
डाँड़ी कनक कुङ्कुम-तिलक, रेखैं सो मनसिज-भाल।

दुकूल=वस्त्र। जत्रु=हँसिया, गले की हड्डी। तति=श्रेणी, समूह। कृकाटिका=माथा। रवित=आवाज़। पौंरि=ड्योढ़ी। फँसौरि=फन्दा। घौरि=घौदा। पाटीर पाटि=चन्दन की पाटी।

पटुली पदिक रति-हृदय जनु, कलधौत-कोमल-माल ॥२॥
उनये सघन घनघोर मृदु झरि, सुखद सावन लाग।
बगपाँति सुरधनु दमक दामिनि, हरित भूमि-बिभाग
दादुर मुदित भरे सरित सर, महि उमँग जनु अनुराग।
पिक मोर मधुप चकोर चातक, सोर उपबन बाग ॥ ॥३॥
सो समौ देखि सुहावनो नवसत सँवारि सँवारि।
गुन-रूप-जोबन सींव सुन्दरि, चलीं झुंडनि झारि॥
हिंडोल-साल बिलोकि सब, अञ्चल पसारि पसारि।
लागीं असीसन राम सीतहि, सुख समाज निहारि ॥४॥
झूलहिँ झुलावहिं ओसरिन्ह, गावैँ सुहो गौड-मलार।
मञ्जीर-नूपुर-बलय-धुनि जनु, काम-करतल तार॥
अति मुचत स्रमकन मुखनि, बिथुरे चिकुर बिलुलित हार।
तम तड़ित उडुगन अरुन बिधु, जनु करत ब्योम बिहार ॥५॥
हिय हरषि बरषि प्रसून निरखति, बिबुध तिय तृन तूरि।
आनन्द जल लोचन मुदित मन, पुलक तनु भरिपूरि॥
सब कहहिँ अबिचल राज नित, कल्यान मङ्गल भूरि।
चिरजियौ जानकिनाथ जग, तुलसी सजीवनि मूरि ॥६॥१८॥

राग सूहो

कोसलपुरी सुहावनी सरि सरजू के तीर।
भूपावली-मुकुटमनि नृपति जहाँ रघुबीर॥
पुरनर नारि चतुर अति धरमनिपुन रत नीति।
सहज सुभाय सकल उर श्रीरघुबर-पद-प्रीति ॥१॥
ह० छ०–श्रीरामपद जलजात सब के, प्रीति अविरल पावनी।
जो चहत सुक सनकादि सम्भु, बिरञ्चि मुनिमन भावनी॥

नवसत=सोलह श्रृङ्गार। बलय=कङ्कण। तार=ताल। मुचत=गिरते हुए, छूटते हुए। तूरि=तोड़ कर।

सबही के सुन्दर मन्दिराजिर, राउ रङ्क न लखि परै।
नाकेस दुर्लभ भोग लोग करहिँ न मन बिषयनि हरै ॥१॥
सब रितु सुखप्रद सो पुरी पावस अति कमनीय।
निरखत मनहिँ हरत हठि हरित अवनि रमनीय ॥
बीरबहूटि बिराजहीँ दादुर-धुनि चहुँ ओर।
मधुर गरजि घन बरषहिँ सुनि सुनि बोलत मोर ॥२॥
ह० छं०-बोलत जो चातक मोर कोकिल, कीर पारावत घने।
खग बिपुल पाले बालकनि कूजत उड़ात सुहावने ॥
बकराजि राजति गगन हरिधनु, तड़ित दिसि दिसि सोहहीँ।
नभ नगर की सोभा अतुल अवलोकि मुनि मन मोहहीँ ॥३॥
गृह गृह रचे हिँडोलना महि गच काँच सुढार।
चित्र बिचित्र चहूँ दिसि परदा फटिक पगार ॥
सरल बिसाल बिराजहीँ बिद्रुम-खम्भ-सुजोर।
चारु पाटि पटी पुरट की झरकत मरकत भैाँर ॥४॥

ह० छन्द

मरकत भँवर डाँड़ी कनक मनि, जटित दुति जगमगि रही।
पटुली मनहुँ बिधि निपुनता निज, प्रगट करि राखी सही ॥
बहुरङ्ग लसत बितान मुकुता,-दाम सहित-मनोहरा।
नव सुमन माल सुगन्ध लोभे, मञ्जु गुञ्जत मधुकरा ॥ ५ ॥
झुंड झुंड झूलन चलीँ गजगामिनि वर नारि।
कुसुँभि चीर तनु सोहहिँ भूषन बिबिध सँवारि ॥
पिकबयनी मृगलोचनी सारद ससि सम तुंड।
राम-सुजस सब गावहीँ सुसुर सुसारँग गुंड ॥६॥

ह० छन्द

सारंग गुंडमलार सोरठ सुहव सुघरनि बाजहीँ।

नाकेस=इन्द्र, देवता । हरिधनु=इन्द्रधनुष । पगार=दीवाल । सुसुर=सुन्दर स्वर । गुंड=राग का एक भेद।

बहु भाँति तान-तरङ्ग सुनि, गन्धर्व किन्नर लाजहीं॥
अति मचत छूटत कुटिल कच छबि, अधिक सुन्दरि पावहीं।
पट उड़त भूषन खसत हँसि हँसि, अपर सखी झुलावहीं॥ ७॥
फिरि फिरि झूलहिं भामिनी अपनी अपनी वार।
बिबुध-बिमान थकित भये देखत चरित अपार॥
बरषि सुमन हरषहिं उर बरनहिं हरिगुन-गाथ।
पुनि पुनि प्रभुहि प्रसंसहीं जय जय जानकिनाथ॥८॥

हृ० छन्द

जय जानकीपति विसद कीरति, सकल-लोक-मलापहा।
सुरबधू देहिं असीस चिरजिव, राम सुख सम्पति महा॥
पावस समय कछु अवध बरनत, सुनि अघौघ नसावहीं।
रघुबीर के गुनगन नवल नित, दास तुलसी गावहीं॥ ९ ॥ १९ ॥

राग आसावरी

साँझ समय रघुबीर पुरी की सोभा आजु बनी।
ललित दीपमालिका बिलोकहिं, हित करि अवधधनी॥१॥
फटिकभीत सिखरन पर राजति, कञ्चन-दीप-अनी।
जनु अहिनाथ मिलन आयो मनि, सोभित सहसफनी॥२॥
प्रति मन्दिर कलसनि पर भ्राजहिं, मनिगन दुति अपनी।
मानहुँ प्रगटि बिपुल लोहितपुर, पठइय दिय अवनी॥३॥
घर घर मङ्गलचार एक रस, हरषित रङ्क गनी।
तुलसिदास कल कीरति गावहिं, जो कलिमल-समनी॥४॥२०॥

रागगौरी

अवध नगर अति सुन्दर, वर सरिता के तीर।
नीति-निपुन नर तिय सबहिं, धरम धुरन्धर धीर॥१॥

अनी=समूह। लोहितपुर=मंगललोक। रङ्क गनी=गरीब अमीर।

सकल रितुन्ह सुखदायक, तामहँ अधिक वसन्त।
भूप-मौलि-मनि जहँ बस, नृपति जानकीकन्त ॥२॥
बन उपबन नव किसलय, कुसुमित नाना रङ्ग।
बोलत मधुर मुखर खग, पिकबर गुञ्जत भृङ्ग ॥३॥
समय बिचारि कृपानिधि, देखि द्वार अति भीर।
खेलहु मुदित नारि नर, बिहँसि कहेउ रघुबीर ॥४॥
नगर नारि नर हरषित, सब चले देखन फाग।
देखि राम छबि-अतुलित, उमगत उर अनुराग ॥५॥
स्याम-तमाल-जलदतनु, निर्मल पीत दुकूल।
अरुन-कञ्ज-दल-लोचन, सदा दास अनुकूल ॥६॥
सिर किरीट स्रुति कुंडल, तिलक मनोहर भाल।
कुञ्चित केस-कुटिल भ्रुव चितवनि भगत-कृपाल ॥७॥
कल कपोल सुक नासिक, ललित अधर द्विज-जोति।
अरुन कञ्ज महँ जनु जुग, पाँति रुचिर गज मोति ॥८॥
वर दर-ग्रीव अमितबल, बाहु सुपीन बिसाल।
कङ्कन हार मनोहर, उरसि लसति बनमाल ॥९॥
उर भृगु-चरन बिराजत, द्विज प्रिय चरित पुनीत।
भगत हेतु नरविग्रह, सुरवर गुन गोतीत ॥१०॥
उदर त्रिरेख मनोहर सुन्दर, नाभि गँभीर।
हाटक-घटति जटित मनि, कटितट रट मञ्जीर ॥११॥
उरु अरु जानु पीन मृदु, मरकत खम्भ समान।
नूपुर मुनि मन मोहत, करत सुकोमल गान ॥१२॥
अरुन बरन पदपङ्कज, नखदुति इन्दु-प्रकास।
जनक-सुता-करपल्लव, लालित बिपुल बिलास ॥१३॥
कञ्ज कुलिस धुज अङ्कुस, रेख चरन सुभ चारि।
जन-मन-मीन हरन कहँ, बंसी रची सँवारि ॥१४॥

अङ्ग अङ्ग प्रति अतुलित, सुखमा बरनि न जाइ।
एहि सुख मगन होइ मन, फिरि नहिं अनत लोभाइ ॥१५॥
खेलत फागु अवधपति, अनुज सखा सब सङ्ग।
बरषि सुमन सुर निरखहिं, सोभा अमित अनङ्ग ॥१६॥
ताल मृदङ्ग झाँझ डफ, बाजहिं पनव निसान।
सुघर सरस सहनाइन्ह, गावहिं समय समान ॥१७॥
बीना बेनु मधुर धुनि, सुनि किन्नर गन्धर्व।
निज गुरु गरुअ हरुअ अति, मानहिं मन तजि गर्व ॥१८॥
निज निज अटनि मनोहर, गान करहिं पिकबैनि।
मनहुँ हिमालय सिखरनि, लसहिं अमर-मृगनैनि ॥१९॥
धवल धाम तें निकसहिं, जहँ तहँ नारि बरूथ।
मानहुँ मथत पयोनिधि, बिपुल अपसरा-जूथ ॥२०॥
किंसुक बरन सुअंसुक, सुखमा सुखनि समेत।
जनु बिधु-निवह रहे करि, दामिनि-निकर निकेत ॥२१॥
कुङ्कुम सुरस अबीरनि, भरहिं चतुर बर नारि।
रितु सुभाय सुठि सोभित, देहिं बिबिध बिधि गारि ॥२२॥
जो सुख जोग जाग जप, तप तीरथ तें दूरि।
राम-कृपा तें सोइ सुख, अवध गलिन्ह रह्यो पूरि ॥२३॥
खेलि बसन्त कियो प्रभु, मज्जन सरजूनीर।
बिबिध भाँति जाचक जन, पाये भूषन चीर ॥२४॥
तुलसिदास तेहि अवसर, माँगी भगति अनूप।
मृदु मुसुकाइ दीन्हि तब, कृपादृष्टि रघुभूप ॥२५॥२१॥

राग बसन्त

खेलत बसन्त राजाधिराज। देखत नभ कौतुक सुर-समाज ॥
टेक०—सोहैं सखा अनुज रघुनाथ साथ। झोलिन्ह अबीर पिचकारि हाथ ॥

पनव=ढोल। अमरमृगनैनि=देवाङ्गना। अंशुक=वस्त्र, कपड़ा। निवह=समूह।

बाजहिं मृदङ्ग डफ ताल बेनु । छिरकैं सुगन्ध-भरे मलय-रेनु ॥१॥
उत जुवति-जूथ जानकी सङ्ग । पहिरे पट भूषन सरस रङ्ग ॥
लिये छरी बैंत सोधैं बिभाग । चाँचरि झूमक कहैं सरस राग ॥२॥
नूपुर-किंकिनि-धुनि अति सोहाइ । ललना-गन जब जेहि धरइँ धाइ ॥
लोचन आँजहिं फगुआ मनाइ । छाँड़हिं नचाइ हाहा कराइ ॥३॥
चढ़े खरनि बिदूषक स्वाँग साजि । करैं कूटि निपट गइ लाज भाजि ॥
नर नारि परसपर गारि देत । सुनि हँसत राम भाइन समेत ॥४॥
बरषत प्रसून बर-बिबुध-बृन्द । जय जय दिनकर-कुल-कुमुद-चन्द ॥
ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास । गावत कल कीरति तुलसिदास ॥५॥ २२ ॥

राग केदारा

देखत अवध को आनन्द ।
हरषि बरषत सुमन दिन दिन, देवतनि को वृन्द ॥१॥
नगर-रचना सिखन को बिधि, तकत बहु बिधिबन्द ।
निपट लागत अगम ज्यों, जलचरहि गमन सुछन्द ॥२॥
मुदित पुर लोगनि सराहत, निरखि सुखमाकन्द ।
जिन्हके सुअलि-चख पियत राम,-मुखारबिन्द-मरन्द ॥३॥
मध्य ब्योम बिलम्बि चलत, दिनेस उडुगन चन्द ।
रामपुरी बिलोकि तुलसी, मिटत सब दुख-द्वन्द ॥४॥ २३ ॥

राग सोरठ

पालत राज यों राजा-राम धरमधुरीन ।
सावधान सुजान सब दिन, रहत नय-लयलीन ॥१॥
स्वान खग जति न्याउ देख्यो, आपु बैठि प्रवीन ।
नीच हति महिदेव बालक, कियो मीचुबिहीन ॥२॥
भरत ज्यों अनुकूल जग, निरुपाधि नेह नवीन ।
सकल चाहत राम ही ज्यों, जल अगाधहि मीन ॥३॥

बिधिबन्द=रचना के भेद। मकरन्द=पुष्परस। जति=सन्यासी। निरुपाधि=निरुपद्रव।

गाइ राज-समाज जाँचत, दास तुलसी दीन।
लेहु निज करि देहु निज पदप्रेम पावन पीन ॥४॥ २४ ॥

सङ्कट सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ।
सहस द्वादस पञ्चसत मैं, कछुक है अब आउ ॥१॥
भोग पुनि पितु-आयु को, सोउ किये बनै बनाउ।
परिहरे बिनु जानकी नहिं, और अनघ उपाउ॥२॥
पालिबे असिधार-व्रत प्रिय, प्रेम पाल सुभाउ।
होइ हित केहि भाँति नित, सुविचार नहिं चित चाउ ॥३॥
निपट असमञ्जसहु बिलसति, मुख मनोहरताउ।
परम धीर-धुरीन हृदय कि, हरष बिसमय काउ? ॥४॥
अनुज सेवक सचिव हैं, सब सुमति साधु सखाउ।
जान कोउन जानकी बिनु, अगम अलख लखाउ ॥५॥
राम जोगवत सीय-मन प्रिय, मनहिं प्रानप्रियाउ।
परम पावन प्रेम-परमिति, समुझि तुलसी गाउ ॥६॥ २५ ॥

राम बिचारि के राखी ठीक दै मन माहिं।
लोक बेद सनेह पालत, पल कृपालहि जाहिं ॥१॥
प्रियतमा-पति-देवता जिहि, उमा रमा सिहाहिं।
गुरुविनी सुकुमारि सिय तियमनि समुझि सकुचाहिं ॥२॥
मेरेही सुख सुखी सुख अपनो सपनहूँ नाहिं।
गेहिनी गुन-गेहिनी गुन, सुमिरि सोच समाहिं ॥३॥
राम सीय सनेह बरनत, अगम सुकबि सकाहिं।
रामसीय-रहस्य तुलसी, कहत राम कृपाहिं ॥४॥ २६ ॥

चरचा चरनि सों चरची जानमनि रघुराइ।
दूत-मुख सुनि लोक-धुनि घर,-घरनि बूझी आइ ॥१॥

आउ=आयु। गुरुविनी=गुर्विणी, गर्भवती। गेहनी=गृहभार्य्या। चरनि=दूत, गुप्तचरों। चरची=सुनी।

प्रिया निज अभिलाष रुचि कहि, कहति सिय सकुचाइ ।
तीय तनय समेत तापस, पूजिहौँ बन जाइ ॥२॥
जानि करुनासिन्धु भावी, बिवस सकल सहाइ ।
धीर धरि रघुबीर भोरहि, लिये लखन बोलाइ ॥३॥
तात तुरतहि साजि स्यन्दन, सीय लेहु चढ़ाइ ।
बालमीकि मुनीस-आस्रम, आइयहु पहुँचाइ ॥४॥
भले हि नाथ सुहाथ माथे, राखि राम-रजाइ ।
चले तुलसी पालि सेवक, धरम-अवधि-अघाइ ॥५॥२७॥

आये लखन लै सौँपी सिय मुनीसहि आनि ।
नाइ सिर रहे पाइ आसिष, जोरि पङ्कजपानि ॥१॥
बालमीकि बिलोकि ब्याकुल, लखन गरत गलानि ।
सर्वविद बूझत न बिधि की, बामता पहिचानि ॥२॥
जानि जिय अनुमान ही सिय, सहस बिधि सनमानि ।
राम सद्गुन-धाम परमिति, भई कछुक मलानि ॥३॥
दीनबन्धु दयालु देवर, देखि अति अकुलानि ।
कहति बचन उदास तुलसीदास त्रिभुवन-रानि ॥४॥२८॥

तौलौँ बलि आपुही कीबी बिनय समुझि सुधारि ।
जौलोँ हौँ सिखि लेउँ बन रिषि, रीति बसि दिन चारि ॥१॥
तापसी कहि कहा पठवति, नृपनि को मनुहारि ।
बहुरि तेहि बिधि आइ कहिहै, साधु कोउ हितकारि ॥२॥
लखन लाल कृपाल ! निपटहि, डारिबी न बिसारि ।
पालबी सब तापसनि ज्यौँ, राजधरम बिचारि ॥३॥
सुनत सीता-बचन मोचत, सकल लोचन-बारि ।
बालमीकि न सके तुलसी, सो सनेह सँभारि ॥४॥२९॥

सुनि ब्याकुल भये उतरु कछु कह्यो न जाइ।
जानि जिय बिधि बाम दीन्होँ, मोहिँ सरुष सजाइ ॥१॥
कहत हिय मेरी कठिनई, लखि गई प्रीति लजाइ।
आजु अवसर ऐसे हूँ जौँ न, चले प्रान बजाइ ॥२॥
इतहि सीय-सनेह-सङ्कट, उतहिँ राम-रजाइ।
मैानहीं गहि चरन गैाने, सिख सुआसिष पाइ ॥३॥
प्रेम-निधि पितु को कहे मैं, परुष-बचन अघाइ।
पाप तेहि परिताप तुलसी, उचित सहे सिराइ ॥४॥३०॥

गैाने मैानही बारहि बार परि परि पाय।
जात जनु रथ चोर कर, लछिमन मगन पछिताय ॥१॥
असन बिनु बन बरम बिनु रन, बच्यो कठिन कुघाय।
दुसह साँसति सहन को, हनुमान ज्यायो जाय ॥२॥
हेतु हैाँ सियहरन को तब, अबहुँ भयोँ सहाय।
होत हठि मोहिँ दाहिनो दिन, दैव दारुन-दाय ॥३॥
तज्यो तनु संग्राम जेहि लगि, गीध जसी जटाय।
ताहि हैाँ पहुँचाइ कानन, चल्योँ अवध सुभाय ॥४॥
घोर हृदय कठोर करतब, सृज्यो हैाँ बिधि बायँ।
दासतुलसी जानि राख्यो, कृपानिधि रघुराय ॥५॥३१॥

पुत्रि! न सोचिये आई हैाँ जनक-गृह जिय जानि।
कालिही कल्यान कैातुक, कुसल तव कल्यानि ॥१॥
राजरिषि पितु ससुर प्रभु पति, तू सुमङ्गल खानि।
ऐसेहूँ थल बामता बड़ि, बाम बिधि की बानि ॥२॥
बोलि मुनि कन्या सिखाई, प्रीति-गति पहिचानि।
आलसिन्ह की देवसरि सिय, सेइयहु मन मानि ॥३॥

सरुष=रोष से, क्रोध करके। बरम=कवच। दाय=दाँव। बाँयँ=टेढ़े, वाम।

न्हाइ प्रातहि पूजिबो बट, बिटप अभिमतदानि।
सुवन-लाहु उछाहु दिन दिन, देखि अनहित-हानि ॥४॥
पाप-ताप-विमोचनी कहि, कथा सरस पुरानि।
बालमीकि प्रबोधि तुलसी, गई गरुइ गलानि ॥५॥ ३२॥

जब तें जानकी रही रुचिर आस्रम आइ।
गगन जल थल बिमल तब तें, सकल मङ्गलदाइ ॥१॥
निरस भूरुह सरस फूलत, फलत अति अधिकाइ।
कन्द मूल अनेक अङ्कुर, स्वाद सुधा लजाइ ॥२॥
मलय मरुत मराल-मधुकर, मोर पिक समुदाइ।
मुदित मन मृग बिहँग बिरहत, बिषम बैर बिहाइ ॥३॥
रहत रबि अनुकूल दिन ससि, रजनि सजनि सुहाइ।
सीय सुनि सादर सराहति, सखिन्ह भलो मनाइ ॥४॥
मोद-बिपिन-बिनोद चितवत, लेत चितहि चोराइ।
राम बिनु सिय सुखद बन, तुलसी कहै किमि गाइ ॥५॥ ३३॥

सुभ दिन सुभ घरी नीको नखत लगन सुहाइ
पूत जाये जानकी द्वै, मुनिबधू उठीं गाइ ॥१॥
हरषि बरषत सुमन सुर, गहगहे बधाये बजाइ।
भुवन कानन आस्रमनि रहे, मोद मङ्गल छाइ ॥२॥
तेहि निसा तहँ सत्रुसूदन, रहे बिधिबस आइ।
माँगि मुनि सों बिदा गवने, भोर सो सुख पाइ ॥३॥
मातु मौसी बहिनिहू तें, सासु तें अधिकाइ।
करहिँ तापस-तीय-तनया, सीय-हित चित लाइ ॥४॥
किये बिधि ब्यवहार मुनिवर, विप्रवृन्द बोलाइ।
कहत सब रिषिकृपा को फल, भयो आजु अघाइ ॥५॥

गरुइ=भार, बड़ा। भूरुह=वृक्ष।

सुरुष रिषि सुख सुतनि को, सिय सुखद सकल सहाइ।
सूल राम-सनेह को, तुलसी न जिय तें जाइ ॥६॥ ३४॥

मुनिवर करि छठी कीन्हीं बारहैं की रीति।
बन-बसन पहिराइ तापस, तोषि पोषे प्रीति ॥१॥
नामकरन सुअन्नप्रासन, बेदबाँधी नीति।
समय सब रिषिराज करत, समाज साज समीति ॥२॥
बाल लालहिं कहहिं करिहैं, राज सब जग जीति।
राम सिय सुत गुरु अनुग्रह, उचित अचल प्रतीति ॥३॥
निरखि बाल-बिनोद तुलसी, जात बासर बीति।
पिय-चरित सिय-चित चितेरो, लिखत नित हित-भीति ॥४॥३५॥

बालक सीय के बिहरत मुदित मन दोउ भाइ।
नाम लव कुस राम-सिय,-अनुहरति सुन्दरताइ ॥१॥
देत मुनि मुनि-सिसु खेलौना, ते लै धरत दुराइ।
खेल खेलत नृप-सिसुन्ह के, बालबृन्द बोलाइ ॥२॥
भूप भूषन बसन बाहन, राज-साज सजाइ।
बरम चरम कृपान सर धनु, तून लेत बनाइ ॥३॥
दुखी सिय पिय-बिरह तुलसी, सुखी सुत-सुख पाइ।
आँच पय उफनात सींचत, सलिल ज्यों सकुचाइ ॥४॥३६॥

कैकेयी जौलौं जियति रही।
तौलौं बात मातु सों मुहँ भरि, भरत न भूलि कही ॥१॥
मानी राम अधिक जननी तें, जननिहु गँस न गही।
सीय लखन रिपुदवन राम-रुख, लखि सब की निबही ॥२॥
लोक-बेद-मरजाद दोष गुन, गति चित चखन चही
तुलसी भरत समुझि सुनि राखी, राम सनेह सही ॥३॥३७॥

समीति = सभा, जलसा। दुराइ = छिपाकर। चरम = ढाल। गँस = गाँस, वैरभाव।

राग रामकली

रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर, गावहिँ सकल अवधवासी।
अति उदार अवतार मनुज-बपु, धरे ब्रह्म अज अविनासी ॥१॥
प्रथम ताड़का हति सुबाहु बधि, मख राख्यो द्विज-हितकारी।
देखि दुखी अति सिला सापबस, रघुपति बिप्रनारि तारी ॥२॥
सब भूपन को गरब हरयो हरि, भंज्यो सम्भुचाप भारी।
जनकसुता समेत आवत गृह, परसुराम अति मदहारी ॥३॥
तात-बचन तजि राज काज सुर, चित्रकूट मुनिबेस धरयो।
एक नयन कीन्हीँ सुरपतिसुत, बधि बिराध रिषि-सोक हरयो ॥४॥
पञ्चबटी पावन राघव करि, सूपनखा कुरूप कीन्हीँ।
खर दूषन संहारि कपटमृग, गीधराज कहँ गति दीन्हीँ ॥५॥
हति कबन्ध सुग्रीव सखा करि, बेधे ताल बालि मारयो।
बानर रीछ सहाय अनुज सँग, सिन्धु बाँधि जस बिस्तारयो ॥६॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन, मारि अखिल सुर-दुख टारयो।
परमसाधु जिय जानि बिभीषन, लङ्कापुरी तिलक सारयो ॥७॥
सीता अरु लछिमन सँग लीन्हे, औरहु जिते दास आये।
नगर निकट बिमान आये सब, नर नारी देखन धाये ॥८॥
सिव बिरञ्चि सुक नारदादि मुनि, अस्तुति करत बिमल बानी।
चौदह भुवन चराचर हरषित, आये राम राजधानी ॥९॥
मिले भरत जननी गुरु परिजन, चाहत परम अनन्द भरे।
दुसह-बियोग-जनित दारुन दुख, रामचरन देखत बिसरे ॥१०॥
बेद पुरान बिचारि लगन सुभ, महाराज अभिषेक कियो।
तुलसिदास जिय जानि सुअवसर, भगति-दान तब माँगि लियो ॥३८॥

कृष्णगीतावली

राग बिलावल

माता लै उछङ्ग गोविन्दमुख बार बार निरखै ।
पुलकित तनु आनन्दघन, छन छन मन हरखै ॥१॥
पूछत तोतरात बात, मातहि जदुराई ।
अतिसय सुख जाते तोहिँ, मोहिँ कहु समुझाई ॥२॥
देखत तव बदन-कमल, मन अनन्द होई ।
कहै कौन रसन मौन, जानै कोइ कोई ॥३॥
सुन्दर मुख मोहिँ देखाउ, इच्छा अति मोरे ।
मम समान पुन्यपुञ्ज, बालक नहिँ तोरे ४॥॥
तुलसी प्रभु प्रेमबस्य, मनुज-रूप धारी ।
बालकेलि लीलारस, ब्रजजन-हितकारी ॥५॥ १॥

राग ललित

छोटी मोटी मीसी रोटी चिकनी चुपरि कै तू,
दे री मैया लै कन्हैया सो कब ? अबहिँ तात ।
सिगरियै हौँ हीं खैहौँ बलदाऊ को न दैहौँ,
सो क्यौँ भटू तेरो कहा कहि इत उत जात ॥१॥
बाल बोलि डहकि बिरावत चरित लखि,
गोपीगन महरि मुदित पुलकित गात ।
नूपुर की धुनि किङ्किनि के कलरव सुनि,
कूदि कूदि किलकि किलकि ठाढ़े ठाढ़े खात ॥२॥

मीसी=मली हुई । डहकि=धोखा देकर, छल करके । महरि=महिला, स्त्री ।

तनियाँ ललित कटि बिचित्र टेपारो सीस,
मुनि-मन हरत बचन कहैं तोतरात।
तुलसी निरखि हरषत बरषत फूल,
भूरिभागी ब्रजबासी बिबुध सिद्ध सिहात ॥३॥२॥

राग आसावरी

तोहिं स्याम की सपथ जसोदा, आइ देखु गृह मेरे।
जैसी हाल करी यह ढोटा, छोटे निपट अनेरे ॥१॥
गोरस-हानि सही न कहौं कछु, यहि ब्रजबास बसेरे।
दिनप्रति भाजन कैान बेसाहै? घर निधि काहू केरे ॥२॥
किये निहारो हँसत खिझै तैं, डाटत नयन तरेरे।
अबहीं तैं ये सिखे कहाधैाँ, चरित ललित सुत तेरे ॥३॥
बैठो सकुचि साधु भयो चाहत, मातुबदन तन हेरे।
तुलसिदास प्रभु कहौं ते बातैं, जे कहि भजे सबेरे ॥४॥३॥

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिं।
मैया! इन्हहिं बानि परगृह की, नाना जुगुति बनावहिं ॥१॥
इन्हके लिये खेलिबो छाँड्यौं, तऊ न उबरन पावहिं।
भाजन फोरि बोरि कर गोरस, देन उरहनो आवहिं ॥२॥
कबहुँक बाल रोवाइ पानि गहि, मिस करि उठि उठि धावहिं।
करहिं आपु सिर धरहिं आन के, बचन बिरञ्चि हरावहिं ॥३॥
मेरी टेव बूझि हलधर को, सन्तत सङ्ग खेलावहिं।
जे अन्याउ करहिं काहूको, ते सिसु मोहिं न भावहिं ॥४॥
सुनि सुनि बचन-चातुरी ग्वालिनि, हँसि हँसि बदन दुरावहिं।
बाल गोपाल केलि-कल-कीरति, तुलसिदास मुनि गावहिं ॥५॥४॥

कबहुँ न जात पराये धामहिं।
खेलत ही देखौं निज आँगन, सदा सहित बलरामहिं ॥१॥

तनियाँ=कछनी। टेपारो=मुकुट के आकार की टोपी। अनेरे=अन्यायी, झूठ। निधि=खज़ाना। टेव=आदत।

मेरे कहाँ थाकु गोरस को, नवनिधि मन्दिर यामहिँ।
ठाली ग्वालि ओरहने के मिस, आइ बकहिँ बेकामहिँ ॥२॥
हौं बलिजाउँ जाहु कितहूँ जनि, मातु सिखावति स्यामहिँ।
बिनु कारन हठि दोष लगावति, तात गये गृह तामहिँ ॥३॥
हरिमुख निरखि परुष बानी सुनि, अधिक अधिक अभिरामहिँ।
तुलसिदास प्रभु देख्योइ चाहति, श्रीउरललित-ललामहिँ ॥४॥५॥

अब सब साँची कान्ह तिहारी।
जो हम तजे पाइ गौं मोहन, गृह आये दै गारी ॥१॥
सुसुकि सभीत सकुचि रूखे मुख, बातैं सकल सँवारी।
साधु जानि हँसि हृदय लगाये, परम प्रीति महँतारी ॥२॥
कोटि जतन करि सपथ कहैं हम, मानै कौन हमारी?
तुमहिँ बिलोकि आन की ऐसी, क्यों कहिहै बर नारी ॥३॥
जैसे हौ तैसे सुखदायक, ब्रजनायक बलिहारी।
तुलसिदास प्रभु मुखछबि निरखत, मन सब जुगुति बिसारी ॥४॥६॥

राग केदारा

महरि तिहारे पाँय परौं अपनो ब्रज लीजै।
सहि देख्यो तुम्हसों कह्यो अब नाकहि आई, कौन दिनहु दिन छीजै ॥१॥
ग्वालिनि तौ गोरस सुखी, ता बिनु क्यों जीजै।
सुत समेत पाँउ धारिये आपुहि भवन मेरे, देखिये जो न पतीजै ॥२॥
अति अनीति नीकी नहीं, अजहूँ सिख दीजै।
तुलसिदास प्रभु सों कहै उर लाइ जसोमति, ऐसी बलि कबहूँ नहिं कीजै॥३॥७॥

अबहिं उरहनो दै गई, बहुरो फिरि आई।
सुनु मैया! तेरी सौं करौं याकी टेव लरन की, सकुच बेंचि सी खाई ॥१॥
या ब्रज में लरिका घने, हौंहीं अन्याई।
मुँह लाये मूड़हि चढ़ी अन्तहु अहिरिनि, तू सूधी करि पाई ॥२॥

थाकु=राशि, अटाला। ठाली=खाली, बेकाम। गौं=मौका। मूड़हि=सिर।

सुनि सुत की अति चातुरी, जसुमति मुसुकाई।
तुलसिदास ग्वालिनी ठगी आयो न उतर कछु, कान्ह ठगौरी लाई ॥३॥८॥

राग गौरी

अब ब्रजबास महरि किमि कीबो ?।
दूध दह्यो माखन ढारत हैं, हुतो पोसात दान दिन दीबो ॥१॥
अब तौ कठिन कान्ह के करतब, तुम्ह हो हँसति कहा कहि लीबो ?
लीजै गाँउ नाउँ लै रावरो, है जग ठाउँ कहूँ है जीबो ॥२॥
ग्वालिवचन सुनि कहति जसोमति, भलो न भूमि पर बादर छीबो।
दैअहि लागि कहौ तुलसी-प्रभु, अजहुँ न तजत पयोधर पीबो ॥३॥९॥

जानी है ग्वालि परी फिरि फीके।
मातुकाज लागी लखि डोटत, है बायनो दियो घर नीके ॥१॥
अब कहि देउँ कहति किन यौं कहि, माँगत दहिउ धरयो जो है छीके।
तुलसी प्रभुमुख निरखि रहीच कि, रह्यो न सयानप तन मन तीके ॥२॥१०॥

जैलौं हौं कान्ह ! रहौं गुन गोये।
तौलौं तुम्हहिं पत्यात लोग सब, सुसुकि सभीत साँच सो रोये ॥१॥
हौ भले नग-फँग परे गढ़ीवे, अब ये गढ़त महरि-मुख जोये।
चुपकि न रहत कह्यो कछु चाहत है है कीच कोठिला धोये ॥२॥
गरजति कहा तरजनिन्ह तरजति, बरजति सैन नयन के कोये।
तुलसी मुदित मातु सुतगति लखि, विथकी है ग्वालि मैनमन-मोये ॥३॥११॥

भूलि न जात हौं काहू के काऊ।
साखि सखा सब सुबल सुदामा, देखिधौं बूझि बोलि बलदाऊ ॥१॥
यह तो मोहिं खिझाइ कोटि विधि, उलटि बिवादन आइ अगोऊ।
याहि कहा मैया मुँह लावति, गनति कि ये लङ्गरि झगराऊ ॥२॥
कहति परसपर बचन जसोमति, लखि नहिं सकति कपट सतिभाऊ।
तुलसिदास ग्वालिनि अति नागरि, नट नागर मनि नन्द ललाऊ ॥३॥१२॥

छीके = सिकहर। सयानप = चतुराई। पत्यात = विश्वास करता है। नगफंद = अटलफन्दा। झगराऊ = पेशगी। लङ्गरि = शरारती। नागरि = चतुर।

छाँड़ो मेरे ललित ललन लरिकाई।
ऐहैं सुत देखुवार कालि तेरे, बवै ब्याह की बात चलाई ॥१॥
डरिहैं सासु ससुर चोरी सुनि, हँसिहैं नई दुलहिया सुहाई।
उबटौं न्हाहु गुहौं चोटिया बलि, देखि भलो बर करिहिं बड़ाई ॥२॥
मातु कह्यो करि कहत बोलि दै, भइ बड़ि बार कालि तौ न आई।
जब सोइबो तात यों हाँकहि, नयन मीचि रहे पौढ़ि कन्हाई ॥३॥
उठि कह्यो भोर भयो झँगुलीदै, मुदित महरि लखि आतुरताई।
बिहँसी ग्वालि जानि तुलसी प्रभु, सकुचि लगे जननी उर धाई ॥४॥१३॥

राग केदारा

हरि को ललित बदन निहारु।
निपटहि डाँटति निठुर ज्यों, लकुट कर तें डारु ॥१॥
मञ्जु अञ्जन सहित जल-कन, चुवत लोचन चारु।
स्यामसारस मग मनो ससि, स्रवत सुधा-सिंगारु ॥२॥
सुभग उर दधिबुन्द सुन्दर, लखि अपनपौ वारु।
मानहुँ मरकत-मृदु-सिखर पर, लसत बिषद तुषारु ॥३॥
कान्हहू पर सतर भौंहैं, महरि मनहिं बिचारु।
दासतुलसी रहति क्यों रिस, निरखि नन्दकुमारु ॥४॥१४॥

लेत भरि भरि नीर कान्ह कमलनैन।
फरकै अधर डर निरखि लकुट कर, कहि न सकत कछु बैन ॥१॥
दुसह दाँवरी छोरि थोरी खोरि कहा कीन्हौं,
चीन्हो री सुभाय तेरो आजु लगे माई मैं न।
तुलसिदास नन्द-ललन लखि, रिस क्यों रहति उर-ऐन ॥२॥ १५ ॥

हहा री महरि बारो कहा रिसबस भई,
कोखि के जाये सो रोष केतो बड़ो कियो है।
ढीली करि दाँवरी बावरी साँवरेहिं देखि,

लकुट=छड़ी, साटी। दाँवरी=रस्सी, डोरी।

सकुचि सहमि सिसु भारी भय भियो है ॥१॥
दूध दधि माखन भो लाखन गोधन धन,
जबते जनम हलधर हरि लियो है।
खायो कै खवायो कै बिगारयो ढारयो लरिका री,
ऐसे सुत पर कोह कैसो तेरो हियो है ॥२॥
मुनि कहैं सुकृती न नन्द जसुमति सम,
न भयो न भावी नहिं बिद्यमान बियो है।
कौन जानै कौने तप कौने जोग जाग जप,
कान्ह सो सुवन तोको महादेव दियो है ॥३॥
इन्हहीं के आये ते बधाये ब्रज नित नये,
नादत बाढ़त सब सब सुख जियो है।
नन्दलाल-बाल-जस सन्त-सुर-सरबस,
गाइ सो अमिय रस तुलसिहु पियो है ॥४॥ १६ ॥
ललित लालन निहारि महरि मन बिचारि,
डारि दे घर-बसी लकुटी बेगि कर तैं।
कछु न कहि सकत सुसुकत सकुचत,
डरहूँ को डर कान्ह डरै तेरे डर तैं ॥१॥
कह्यौ मेरो मानि हित जानि तू सयानी बड़ी,
बड़े भाग पायो पूत बिधि हरि हर तैं।
ताहि बाँधिबे को धाई ग्वालिनी गोरसहाँई,
लै लै आईं बावरी दाँवरी घर घर तैं ॥२॥
कुल-गुरु-तिय के वचन कमनीय सुनि,
सुधि भये बचन जे सुने मुनिबर तैं।
छोरि लिये लाय उर बरषैं सुमन सुर,
मङ्गल है तिहूँ पुर हरि हलधर तैं ॥३॥
आनन्द-बधावनो मुदित गोप-गोपीगन,

भियो=डरा, भयभीत। बिद्यमानबियो=दूसरा वर्तमान में। घरबसी=घरवाली।

आजु परी कुसल कठिन करवर तेँ।
तुलसी जे तोरे तरु किये देव दिये बरु
कै न लह्यो कौन फरु देव दामोदर तेँ ॥४॥१७॥

राग मलार

ब्रज पर घन घमंड करि आये।
अति अपमान बिचारि आपनो, कोपि सुरेस पठाये॥१॥
दमकति दुसह दसहुँ दिसि दामिनि, भयो तम गगन गँभीर।
गरजत घोर बारिधर धावत, प्रेरित प्रबल समीर॥२॥
बार बार पविपात उपल घन, बरषत बूँद बिसाल।
सीत-सभीत पुकारत आरत, गो गोसुत गोपी ग्वाल॥३॥
राखहु राम कान्ह यहि अवसर, दुसह दसा भइ आइ।
नन्द बिरोध कियो सुरपति सों, सो तुम्हरो बल पाइ॥४॥
सुनि हँसि उठ्यो नन्द को नाहर, लियो कर कुधर उठाइ।
तुलसिदास मघवा अपने सोँ, करि गयो गर्व गँवाइ॥५॥१८॥

राग गौरी

टेरि कान्ह गोबर्धन चढ़ि गैया।
मथि मथि पियो बारि चारिक मेँ, भूख न जाति अघाति न घैया॥१॥
सैल-सिखर चढ़ि चितै चकित चित, अतिहित बचन कह्यो बलभैया।
बाँधि लकुट पट फेरि बोलाई, सुनि कल बेनु धेनु धुकि धैया॥२॥
बलदाऊ देखियत दूरि ते आवति, छाक पठाई मेरी मैया।
किलकि सखा सब नटत मोर ज्योँ, कूदत कपि कुरङ्ग की नैया॥३॥
खेलत खात परसपर डहकत, छीनत कहत करत रोगदैया।
तुलसी बालकेलि-सुख निरखत, बरषत सुमन सहित सुरसैया॥४॥१९॥

राग नट

गावत गोपाललाल नाके राग नट हैँ।

करवर=विघ्न, बाधा। घैया=ताजा दूध से निकाला मक्खन। धुकि=शीघ्र। छाक=दोपहर का भोजन। रोगदैया=रोनहसा, बेईमानी।

चलि री आली देखन लोयन-लाहु, पेखन ठाढ़े सुरतरु-तर तटिनी के तट हैं॥१॥
मोरचन्दा चारु सिर मञ्जु गुञ्जा पुञ्ज धरे, बनि बन-धातु तन ओढ़े पीत पट है।
मुरली तान-तरङ्ग मोहे कुरङ्ग बिहङ्ग, जोहैं मूरति त्रिभङ्ग निपट-निकट हैं॥२॥
अम्बर अमर हरषत बरषत फूल, सनेह-सिथिल गोप गाइन्ह के ठट हैं।
तुलसी प्रभु निहारि जहाँ तहाँ ब्रजनारि ठगी ठाढ़ी मग लिये रीते भरे घट हैं॥३॥२०॥

राग बिलावल

देखु सखी हरि बदन इन्दु पर।
चिक्कन कुटिल अलक-अवली-छबि, कहि न जाइ सोभा अनूप बर॥१॥
बाल-भुअङ्गिनि-निकर मनहुँ मिलि, रहीं घेरि रस जानि सुधाकर।
तजि न सकहिं नहिं करहिं पान कहो, कारन कौन बिचारि डरहिं डर॥२॥
अरुन बनज-लोचन कपोल सुभ, स्रुति मंडित कुंडल अति सुन्दर।
मनहुँ सिन्धु निज सुतहि मनावन, पठये जुगल बसीठ बारिचर॥३॥
नँदनन्दन मुख की सुन्दरता, कहि न सकत स्रुति सेष उमावर।
तुलसिदास त्रैलोक-बिमोहन, रूप कपट नर त्रिबिध सूलहर॥४॥२१॥

आजु उनींदे आये मुरारी।
आलसवन्त सुभग लोचन सखि, छिन मूँदत छिन देत उघारी॥१॥
मनहु इन्दु पर खञ्जरीट दोउ, कछुक अरुन बिधि रचे सँवारी।
कुटिल अलक जनु मार फन्द कर, गहे सजग ह्वै रह्यो सँभारी॥२॥
मनहुँ उड़न चाहत अति चञ्चल, पलक पङ्ख छिन देत पसारी।
नासिक कीर बचन पिक सुनि करि, सङ्गति मनु गुनि रहत बिचारी॥३॥
रुचिर-कपोल चारु कुंडल बर, भ्रुकुटि सरासन की अनुहारी।
परम चपल तेहि त्रास मनहुँ खग, प्रगटत दुरत न मानत हारी॥४॥
जदुपति मुखछबि कलप कोटि लगि, कहि न जाइ जाके मुख चारी।
तुलसिदास जेहि निरखि ग्वालिनी, भजीं तात पति तनय बिसारी॥५॥२२॥

लोयन=लोचन। तटिनी=नदी। मोरचन्दा=मोरपक्ष की आँख। त्रिभङ्ग=टेढ़ी। अलक=केश। बसीठ=दूत, पठावन।

राग गौरी

गोपाल गोकुल-बल्लभी-प्रिय, गोप गोसुत-बल्लभं ।
चरनारबिन्दमहम्भजे भजनीय, सुर-मुनि-दुल्लभं ॥१॥
घनश्याम काम अनेक छबि, लोकाभिराम मनोहरं ।
किञ्जल्क-बसन किसोर मूरति, भूरि गुन करुनाकरं ॥२॥
सिर केकि-पच्छ बिलोल कुंडल, अरुन बनरुह-लोचनं ।
गुञ्जावतंस बिचित्र सब अँग, धातु भवभय-मोचनं ॥३॥
कच कुटिल सुन्दर तिलक भ्रू, राका-मयङ्क-समाननं ।
अपहरन तुलसीदास त्रास, बिहार वृन्दाकाननं ॥४॥२३॥

राग बिलावल

बिछुरत श्रीब्रजराज आजु इन, नयनन की परतीति गई ।
उड़ि न लगे हरि सङ्ग सहज तजि, ह्वै न गये सखि स्याममई ॥१॥
रूपरसिक लालची कहावत, सो करनी कछु तो न भई ।
साँचेहु क्रूर कुटिल सित मेचक, बृथा मीनछबि छीनि लई ॥२॥
अब काहे सोचत मोचत जल, समय गये चित सूल नई ।
तुलसिदास तब अजहुँ से भये जड़, जब पलकनि हठि दगा दई ॥३॥२४॥

राग कान्हरा

नहिँ कछु दोष स्याम को माई !
जो दुख मैँ पायोँ सुनि सजनी, सो तो सबै मन की चतुराई ॥१॥
निज हित लागि तबहिँ ये बञ्चक, सब अङ्गनि बसि प्रीति बढ़ाई ।
लियो जो सकलसुख हरि-अँग-सँग को, जहँ जेहि बिधि तहँ सोइ बनाई ॥२॥
अब नँदलाल-गवन सुनि मधुबन, तनहिँ तजत नहिँ बार लगाई ।
रुचिर रूप-जल मोँ रसेस ह्वै, मिलि न फिरन की बात चलाई ॥३॥
एहि सरीर बसि सखि वा सठ कहँ, कहि न जाइ जो निधि फबि आई ।
तदपि कछू उपकार न कीन्होँ, निज मिलन्यो नहिँ मोहिँ सिखाई ॥४॥

किञ्जल्क = पद्मकेसर।

आपु मिल्यो यहि भाँति जाति तजि, तन मिलयो जल-पय की नाईं ।
ह्वै मराल आयो सुफलकसुत, लै गयो छीर नीर बिलगाईं ॥५॥
मन हौं तजी कान्ह हौं त्यागी, प्रानौ चलिहैं परमिति पाई ।
तुलसिदास रीतेहु तनु ऊपर, नयननि की ममता अधिकाई ॥६॥२५॥

राग धनाश्री

करी है हरि बालक की सी केलि
हरष न रचत विषाद न बिगरत, डगरि चले हँसि खेलि ॥१॥
बई बनाइ बारि बृन्दावन, प्रीति सजीवनि-बेलि ।
सींचि सनेह सुधा खनि काढ़ी, लोक-बेद पर हेलि ॥२॥
तन ज्यों तजी पालितनु ज्यों हम, बिधि बासव बल पेलि ।
एतेहुँ पर भावत तुलसी प्रभु, गये मोहनी मेलि ॥३॥ २६ ॥

आली अब कहौ निज नेह निहारि ।
समुझै सहे हमारो है हित, बिधि-बामता बिचारि ॥१॥
सत्य सनेह सील सोभा सुख, सब गुन-उदधि अघारि ।
देख्यो सुन्यो न कबहुँ काहु कहुँ, मीन-बियोगी बारि ॥२॥
कहियत काकु कूबरी हूँ को, सो कुबानि-बस नारि ।
बिष तें बिषम बिनय अनहित की, सुधा सनेही गारि ॥३॥
मन फेरियत कुतर्क कोटि करि, कुबल भरोसे भारि ।
तुलसी जग दूजो न देखियत, कान्हकुँवर अनुहारि ॥४॥ २७ ॥

लागियै रहति नयननि आगे तें न टरति मोहन मूरति ।
नीलनलिन स्याम सोभा अगनित काम, पावन हृदय जेहि उर फूरति ॥१॥
सारद अमित सेष नहिं कहि सकत, अँग अँग सूरति ।
तुलसिदास बड़े भाग मन लागेहु तैं, सब सुख पूरति ॥२॥ २८ ॥

जब तैं ब्रज तजि गये कन्हाई ।
तब तैं बिरह-रबि उदित एकरस, सखि बिछुरनि-बृष पाई ॥१॥
घटत न तेज चलत नाहिं न रथ, रह्यो उर-नभ पर छाई ।

रसत = प्रसन्न होते । हेलि = ठेल कर । काकु = कटुवचन ।

इन्द्रिय रूपरासि सोचहिं सुठि, सुधि सब की बिसराई ॥२॥
भयो सोक-भय-कोक-कोकनद, भ्रम-भ्रमरनि सुखदाई।
चित चकोर मनमोर कुमुद मुद, सकल बिकल अधिकाई ॥३॥
तनु तड़ाग बल बारि सूखन लाग्यो, परि कुरूपता काई।
प्रानमीन दिन दीन दूबरे, दसा दुसह अब आई ॥४॥
तुलसीदास मनोरथ मन मृग, मरत जहाँ तहँ धाई।
राम स्याम सावन भादौं बिनु, जिय की जरनि न जाई ॥५॥२९॥

ससि तें सीतल मोको लागे माई री! तरनि।
याके उए बरति अधिक अँग अँग दव, वाके उए मिटति रजनि-जनित जरनि॥१॥
सब बिपरीत भये माधव बिनु, हित जो करत अनहित की करनि।
तुलसिदास स्यामसुन्दर-बिरह की दुसह दसा, सो मोपै परति नहीं बरनि॥२॥३०॥

सन्तत दुखद सखी! रजनीकर
स्वारथरत तब अबहुँ एकरस, मोको कबहुँ न भयो तापहर ॥१॥
निज अंसिक सुखलागि चतुर अति, कीन्हीं है प्रथम निसा सुभ सन्दर।
अब बिनु मन तन दहत दया तजि, राखत रवि हू नयन बारिधर ॥२॥
जद्यपि है दारुन बड़वानल, राख्यो है जलधि गँभीर धीरतर।
ताहू तें परम कठिन जान्यो ससि, तज्यो पिता तब भयो ब्योमचर ॥३॥
सकल बिकार कोस बिरहिनि रिपु, काहे तें याहि सराहत सुर नर?
तुलसिदास त्रैलोक्य मान्य भयो, कारन इहै गह्यो गिरिजावर ॥४॥३१॥

राग मलार

कोउ सखि नई चाह सुनि आई।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सों, मदन मिलिक करि पाई ॥१॥
घन धावन बगपाँति पटोसिर, बैरख तड़ित सोहाई।
बोलत पिक नकीब गरजनि मिस, मानहुँ फिरति दोहाई ॥२॥
चातक मोर चकोर मधुप सुक, सुमन समीर सहाई।
चाहत कियो बास वृन्दावन, बिधि सों कछु न बसाई ॥३॥

अंसिक=हिस्सेदार। चाह=खबर, चर्चा। मिलिक=मिलकियत। पटोसिर=सिरबन्ध, साफा। बैरख=पताका।

सींव न चाँपि सको कोऊ तब, जब हुते राम कन्हाई।
अब तुलसी गिरिधर बिनु गोकुल, कौन करिहि ठकुराई? ॥४॥२३॥

राग सोरठ

ऊधो या ब्रज की दसा बिचारो।
ता पाछे यह सिद्धि आपनी, जोगकथा बिस्तारो ॥१॥
जा कारन पठये तुम माधव, सो सोचहु मन माहीँ।
केतिक बीच बिरह परमारथ, जानत हौ किधौँ नाहीँ? ॥२॥
परम चतुर निज दास स्याम के, सन्तत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलम्ब फेन को, फिर फिर कहा कहत हौ? ॥३॥
वह अति ललित मनोहर आनन, कौने जतन बिसारौँ।
जोग जुगुति अरु मुकुति बिबिध बिधि, वा मुरली पर वारौँ ॥४॥
जेहि उर बसत स्यामसुन्दर घन, तेहि निर्गुन कस आवै।
तुलसिदास सो भजन बहाओ, जाहि दूसरो भावै ॥५॥२२॥

मधुकर कहहु कहन जो पारो।
नाहिँन बलि अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ॥१॥
नहिँ तुम ब्रज बसि नन्दलाल को, बालबिनोद निहारो।
नाहिँन रासरसिक रस चाख्यो, तातेँ डेल सो डारो ॥२॥
तुलसी जौ न गये प्रीतम सँग, प्रान त्यागि तनु न्यारो।
तौ सुनिबो देखिबो बहुत अब, कहा करम सोँ चारो? ॥३॥२३॥

ऊधोजू कह्यो तिहारोइ कीबो।
नीके जिय की जानि अपनपौ, समुझि सिखावन दीबो ॥१॥
स्यामवियोगी ब्रज के लोगनि, जोग जोग जो जानो।
तौ सकोच परिहरि पालागौँ, परमारथहि बखानो ॥२॥
गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब, रहत रूप अनुरागे।
दीन मलीन छीन तनु डोलत, मीन मजा सोँ लागे ॥३॥

साध=ख्वाहिश। डेल=पत्थर। चारो=वश, क़ाबू। जोगजोग=योग के योग्य। मजा=माँजा, मछलियों का संक्रामक रोग।

तुलसी है सनेह दुखदायक, नहिँ जानत ऐसो को है ? ॥
तऊ न होत कान्ह को सो मन, सबै साहिबहि सोहै ॥४॥३५॥

राग बिलावल

सो कहैा मधुप जो मोहन कहि पठई।
तुम सकुचत कत ? हैाँ हौँ नीके जानति, नँदनन्द हो निपट करो सठई॥१॥
हुतो न साँचो सनेह मिट्यो मन को सँदेह, हरि परे उघरि सँदेसहु ठठई।
तुलसिदासकौन आसमिलनकी,कहिगयेसोतौकछुएको न चित ठई॥२॥३६॥

मेरे जान और कछु न मन गुनिये।
कूबरीरवन कान्ह कही जो मधुप सोँ,
सोई सिख सजनी ! सुचित दै सुनिये ॥१॥
काहे को करति रोष देहि धैाँ कैाने को दोष,
निज नयननि को बयो सब लुनिये।
दारु सरीर कीट पहिले सुख,
सुमिरि सुमिरि बासर निसि घुनिये ॥२॥
ये सनेह सुचि अधिक अधिक रुचि,
बरज्यो न करत कितो सिर धुनिये।
तुलसिदास अब नन्दसुवन-हित
बिषम-बियोग-अनल तनु हुनिये ॥३॥३७॥

भली कही आली ! हमहुँ पहिचाने।
हरि निर्गुन निर्लेप निरपने, निपट निठुर निज काज सयाने ॥१॥
ब्रज को बिरह अरु सङ्ग महर को, कुबरिहि बरत न नेकु लजाने।
समुझि सो प्रीति की रीति स्यामकी,सोइ बावरि जो जोपरेखो उर आने॥२॥
सुनत न सिख लालची बिलोचन, एतेहु पर रुचि रूप लोभाने।
तुलसिदास इहै अधिक कान्ह पहिँ, नीकेई लागत मनरहत समाने॥३॥३८॥

उघरि=प्रकट हुए, जाहिर हो पड़े। ठठई=ठटा। ठई=ठाना है। दारु=लकड़ी।

राग मलार

जोपै अलि ! अन्त इहै करिबे हो।
तौ अतुलित अहीर अबलनि को, हठि न हियो हरिबे हो ॥१॥
जौ प्रभु च परिनाम प्रेम फिरि, अनुचित आचरिबे हो।
तौ मथुराहि महामहिमा लहि, सकल ढरनि ढरिबे हो ॥२॥
दै कूबरिहि रूप ब्रजसुधि भये, लौकिक डर डरिबे हो।
ज्ञान बिराग काल कृत करतब, हमरेहि सिर धरिबे हो ॥३॥
उन्हहिं राग रबि नीरद-जल ज्यौं, प्रभु-परमिति परिबे हो।
हमहुँ निठुर-निरुपाधि नेह निधि, निज भुजबल तरिबे हो ॥४॥
भलो भयो सब भाँति हमारो, एकबार मरिबे हो।
तुलसी कान्हबिरह नित नव जर, जारि जीवन भरिबे हो ॥५॥ ३९

ऊधो ! यह ह्याँ न कछू कहिबे ही।
ज्ञानगिरा कूबरीरवन की, सुनि बिचारि गहिबे ही ॥१॥
पाइ रजाइ नाइ सिर गृह ह्वै, गति परमिति लहिबे ही।
मति-मटुकी मृगजल भरि घृतहित, मनहीं मन महिबे ही ॥२॥
गाढ़े भली उखारे अनुचित, बनिआये बहिबे ही।
तुलसी प्रभुहिं तुम्हहिं हमहूँ हिय, साँसति सी सहिबे ही ॥३॥ ४० ॥

मधुकर ! कान्ह कहो ते न होँहीं।
कै ये नई सिखी सिखई हरि, निज-अनुराग-बिछोहीं ॥१॥
राखी सचि कूबरी पीठ पर, ये बातैं बकुचौहीं।
स्याम सो गाहक पाइ सयानी, खोलि देखाई है गौँहीं ॥२॥
नागरमनि सोभासागर जेहि, जग जुवती हँसि मोही।
लियो रूप दै ज्ञान-गाँठरी, भलो ठग्यो ठग ओही ॥३॥
है निर्गुन सारी बारिक बलि, घरी करो हम जोही।

हो=था। वहिबे ही बनिआये=आपड़ने पर निबाहना ही पड़ेगा। बकुचौँही=[illegible] कर। गौँही=मोके से। बारिक=सूक्ष्म, बारीक। घरी=घई, तह, परत। जोही=देखा।

तुलसी ये नागरिन्ह जोग पट, जिन्हहिं आजु सब सोही ॥४॥४१॥

मधुप तुम्ह कान्ह ही की कही क्यों न कही है ?
यह बतकही चपल चेरी की, निपट चरेरीयै रही है ॥१॥
कब ब्रज तज्यौ ज्ञान कब उपज्यौ ? कब बिदेहता लही है।
गये बिसारि रीति गोकुल की, अब निर्गुन गति गही है ॥२॥
आयसु देहु करहिँ सोइ सिर धरि, प्रीति-परमिति निरबही है।
तुलसी परमेस्वर न सहैगो, हम अबलनि सब सही है ॥३॥ ४२ ॥

दीन्हीं है मधुप सबहि सिख नीकी।
सोइ आदरौ आस जाके जिय, बारि बिलोवत घी की ॥१॥
बूझी बात कान्ह कुबरी की, मधुकर कछु जनि पूछौ।
ठालीं ग्वालि जानि पठये अलि, कह्यो है पछोरन छूँछो ॥२॥
हमहूँ कछुक लखी हो तब की, औरेबैं नन्दलला की।
ये अब लही चतुर चेरी पै, चोखी चालि चलाकी ॥३॥
गये कर तैं घर तैं आँगन तैं, ब्रजहू तैं ब्रजनाथ।
तुलसी प्रभु गयो चहत मनहुँ तैं, सो तो है हमारे हाथ ॥४॥ ४३ ॥

ताकी सिख ब्रज न सुनैगो कोउ भोरे।
जाकी कहनि रहनि अनमिल अलि, सुनत समुझियत थोरे ॥१॥
आपु कुसुमकरन्द सुधाह्रद, हृदय रहत नित बोरे।
हम सोँ कहत बिरह-स्रम जैहै, गगन कूप खनि खोरे ॥२॥
धान को गाँव पयार तैं जानिय, ज्ञान बिषय मन मोरे।
तुलसी अधिक कहे न रहै रस, गूलरि को फल फोरे ॥३॥४४॥

आली! अति अनुचित उतरु न दीजै।
सेवक सखा सनेही हरि के, जो कुछ कहैं सो कीजै ॥१॥
देस काल उपदेस सँदेसो, सादर सब सुनि लीजै।
कै समुझिबो कै ये समुझैहैं, हारेहु मानि सहीजै ॥२॥

चरेरीयै=कर्कश ही। ठालीं=निकम्मी, बेकाम की। औरेबैं=टढ़ी चाल। सुधाह्रद=अमृतकुंड। खोरे=स्नान करना।

सखि सरोषि प्रियदोष बिचारत, प्रेम पीन पन छीजै ।
खग मृग मीन सलभ सरसिज गति, सुनि पाहनौ पसीजै ॥३॥
ऊधो परम हितू हित सिखवत, परमिति पहुँचि पतीजै ।
तुलसिदास अपराध आपनो, नन्दलाल बिनु जीजै ॥४॥ ४५॥

ऊधो हैँ बड़े कहैँ सोइ कीजै ।
अलि पहिचानि प्रेम की परमिति, उतरु फेरि नहिँ दीजै ॥१॥
जननी जनक जरठ जानो जन, परिजन लोग न छीजै ।
दै पठयो पहिलो बिढ़तो ब्रज, सादर सिर धरि लीजै ॥२॥
कंस मारि जदुबंस सुखी कियो, स्रवन सुजस सुनि जीजै ।
तुलसी त्योँ त्योँ होइगी गरुई, ज्योँ ज्योँ कामरि भीजै ॥३॥ ४६ ॥

कान्ह अलि ! भये नये गुरु ज्ञानी ।
तुम्हरे कहत आपने समुझत, बात सही उर आनी ॥१॥
लिये अपनाइ लाइ चन्दन तन, कछु कटु चाह उड़ानी ।
जरी सुँघाइ कूबरी कौतुक, करि जोगी बघा जुड़ानी ॥२॥
ब्रज बसि रास-बिलास मधुपुरी, चेरी सोँ रति मानी ।
जोग-जोग ग्वालिनी बियोगिनि, जान-सिरोमनि जानी ॥३॥
कहिबे कछू कछू कहि जैहै, रहो आलि ! अरगानी ।
तुलसी हाथ पराये प्रीतम, तुम्ह प्रिय-हाथ बिकानी ॥४॥ ४७॥

सब मिलि साहस करिये सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पाँय परि, कान्ह कूबरी रानी ॥१॥
बसैँ सुबास सुपास होहिँ सब, फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिँ सुख-जीवन, खुलहि मोद-मनि-खानी ॥२॥
तजि अभिमान अनख अपनो हित, कीजिय मुनिवर बानी ।
देखिबो दरस दूसरेहु चैाथेहु, बड़ो लाभ लघु हानी ॥३॥

बिढ़तो=कमाई। चाह उड़ानी खबर उड़ी। अरगानी=मौन, चुप। महरिमहर=नन्द यशोदा।

पावक परत निषिद्ध लाकरी, होति अनल जग जानी।
तुलसी सो तिहुँ भुवन गाइबी, नन्दसुवन सनमानी ॥४॥४८॥

कही है भली बात सब के मनमानी।
प्रियसम प्रियसनेह-भाजन सखि! प्रीति-रीति जगजानी ॥१॥
भूषन भूति गरल परिहरि कै, हरमूरति उर आनी ?।
मज्जन पान कियो कै सुरसरि, कर्मनास-जल छानी ? ॥२॥
पूछ सोँ प्रेम बिरोध सींग सोँ, यहि बिचार हितहानी।
कीजै कान्ह-कूबरी सोँ नित, नेह करम मन बानी ॥३॥
तुलसी तजिय कुचालि आलि अब, सुधरै सबइ नसानी।
आगे करि मधुकर मधुरा कहँ, सोधिय सुदिन सयानी ॥४॥४९॥

राग कान्हरा

हे हम समाचार सब पाये।
अब बिसेष देखे तुम्ह देखे हैं, कूबरी हाँक से लाये ॥१॥
मथुरा बड़ो नगर नागर जन, जिन्ह जातहि जदुनाथ पढ़ाये।
समुझि रहनि सुनि कहनि बिरह ब्रन, अनष अमिय औषध सरुहाये ॥२॥
मधुकर रसिक सिरोमनि कहियत, कैाने यह रसरीति सिखाये।
बिनु आखर को गीत गाइ गाइ, चाहत ग्वालिनि ग्वाल रिझाये ॥३॥
फल पहिले ही लह्यो ब्रजबासिन्ह, अब साधन उपदेसन आये !
तुलसी अलि अजहूँ नहिँ बूझत, कैान हेतु नँदलाल पठाये ॥४॥५०॥

कौन सुनै अलि की चतुराई।
अपनिहि मतिबिलास अकास महँ, चाहत सियनि चलाई ॥१॥
सरल सुलभ हरिभगति-सुधाकर, निगम पुरानिनि गाई।
तजि सोइ सुधा मनोरथ करि करि, को मरिहै री माई ॥२॥
जद्यपि ताको सोइ मारगप्रिय, जाहि जहाँ बनिआई।
मैन के दसन कुलिस के मोदक, कहत सुनत बैाराई ॥३॥

लाकरी = लकड़ी। कै = किसने ?। हे = थे। व्रन = फोड़ा। सरुहाये = आरोग्य किया।

सगुन छीरनिधितीर बसत ब्रज, तिहुँ पर बिदित बड़ाई।
आक दुहन तुम्ह कह्यो सो परिहरि, हम यह मति नहिं पाई ॥४॥
जानत हैं जदुनाथ सबन की, बुधि बिबेक जड़ताई।
तुलसिदास जनि बकहि मधुप सठ! हठ निसि दिन अँवराई ॥५॥ ५१॥

राग केदारा

गोकुल प्रीति नित नई जानि।
जाइ अनत सुनाइ मधुकर, ज्ञानगिरा पुरानि ॥१॥
मिलहिं जोगी जरठ तिन्हहिं, दिखाउ निरगुन-खानि।
नवल नन्दकुमार के ब्रज, सगुन सुजस बखानि ॥२॥
तू जो हम आदरयो सो तो, नव कमल की कानि।
तजहि तुलसी समुझि यह, उपदेसिबे की बानि ॥३॥ ५२॥

काहे को कहत बचन सवाँरि।
ज्ञानगाहक नाहिनै ब्रज, मधुप अनत सिधारि ॥१॥
जुगुति धूम बघारिबे की, समुझिहैं न गँवारि।
जोगिजन मुनिमंडली मोँ, जाइ रीतो ढारि ॥२॥
सुनै तिन्ह की कौन तुलसी, जिन्हहिं जीति न हारि।
सकति खारो कियो चाहत, मेघहू को बारि ॥३॥ ५३॥

ऐसे हौं हुँ जानति भृङ्ग।
नाहिंनै काहू लहो सुख, प्रीति करि इक अङ्ग ॥१॥
कौन भीर जो नीरदहि जेहि, लागि रटत बिहङ्ग?
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै, सलिल सहज असङ्ग ॥२॥
पीर कछू न मानिहिं जाके, बिरह-बिकल भुअङ्ग।
ब्याध-बिसिष बिलोक नाहिं कलगानलुबुध कुरङ्ग ॥३॥
स्यामघन गुनवारि छबिमनि, मुरलि-तान-तरङ्ग।

आक = मदार। अँवराई = आम का बगीचा। रीति = खाली, छूछ।

लग्यो मन बहु भाँति तुलसी, होइ क्यों रसभङ्ग ? ॥४॥५४॥

ऊधो! प्रीति करि निरमोहियन सों, को न भयो दुखदीन ?
सुनत समुझत कहत हम सब, भई अति अप्रवीन ॥१॥
अहि कुरङ्ग पतङ्ग पङ्कज, चारु चातक मीन।
बैठि इनकी पाँति अब सुख, चहत मन मतिहीन ॥२॥
निठुरता अरु नेह की गति, कठिन परति कही न।
दासतुलसी सोच नित निज, प्रेम जानि मलीन ॥३॥५५॥

राग गौरी

सुनत कुलिस सम बचन तिहारे।
चित दै मधुप सुनहु सोउ कारन, जाते जात न प्रान हमारे ॥१॥
ज्ञान कृपान समान लगत उर, बिहरत छिन छिन होत निनारे।
अवधि-जरा जोरति हठि पुनि पुनि, याते तनु रहत सहत दुख भारे ॥२॥
पावक-बिरह समीर-स्वास तनु, तूल मिले तुम्ह जारनिहारे।
तिन्हहिं निदरि अपने हित कारन, राखत नयन निपुन रखवारे ॥३॥
जीवन कठिन मरन की यह गति, दुसह बिपति ब्रजनाथ निवारे।
तुलसिदास यह दसा जानि जिय, उचित होइ सो कहो अलि प्यारे ॥४॥५६॥

छपद ! सुनहु बर बचन हमारे।
बिनु ब्रजनाथ ताप नयनन की, कौन हरै हरि अन्तर-कारे ॥१॥
कनककुम्भ भरि भरि पियूषजल, बरषत सक्र कलपसत हारे।
कदलि सीप चातक को कारज, स्वाति-बारि बिनु कोउ न सँवारे ॥२॥
सब अँग रुचिर किसोर स्यामघन, जेहि हृदि-जलज बसत हरि प्यारे।
तेहि उर क्यों समाय बिराटबपु, स्यों महि सरित सिन्धु गिरि भारे ॥३॥
बढ़्यो अति प्रेम प्रलय के बट ज्यों, बिपुल जोगजल बोरि न पारे।
तुलसिदास ब्रजबनितन को ब्रत, समरथ को करि जतन निवारे ॥४॥५७॥

जरा=वृद्धावस्था। तूल=रुई। छपद=भ्रमर। स्यों=साथ।

मधुप ! समुझि देखहु मन माहीँ ।
प्रेमपियूषरूप उडुपति बिनु, कैसे हौँ ! अलि पैयत रबि पाहीँ ॥१॥
जद्यपि तुम हित लागि कहत सुनि, स्रवन बचन नहिँ हृदय समाहीँ ।
मिलहि न पावक महँ तुषार कन, जौँ खोजत सत कलप सिराहीँ ॥२॥
तुम कहि रहे हमहुँ पचि हारी, लोचन हठी तजत हठ नाहीँ ।
तुलसिदास सोइ जतन करहु कछु, बारक स्याम इहाँ फिरि जाहीँ ॥३॥५८॥

मोको अब नयन भये रिपु माई ।
हरि-बियोग तनु तजेहि परमसुख, ए राखहिँ सोइ है बरियाई ॥१॥
बरु मन कियो बहुत हित मेरो, बारहिबार काम दव लाई ।
बरषि नीर ये तबहिँ बुझावहिँ, स्वारथ निपुन अधिक चतुराई ॥२॥
ज्ञानपरसु दै मधुप पठायो, बिरहबेलि कैसेहु कहि जाई ।
सो थाक्यो बरह्योँ एकहि तक, देखत इनकी सहज सिँचाई ॥३॥
हारत हू न हारि मानत सखि, सठ सुभाव कन्दुक की नाईं ।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे, समुझत नहिँ उन्हको निठुराई ॥४॥
ए हठ-निरत दरस लालचबस, परे जहाँ बुधिबल न बसाई ।
तुलसिदास इन्हपर जो द्रवहिँ हरि, तौ पुनि मिलौँ बैर बिसराई ॥५॥५९॥

राग आसावरी

कहा भयो कपट जुआ जो हौँ हारी ?
समरधीर महाबीर पाँचपति, क्योँ दैहैँ मोहिँ होन उघारी ॥१॥
राजसमाज सभासद समरथ, भीषम द्रोन धर्मधुरधारी ।
अबला अनघ अनवसर अनुचित, होति हेरिँ करिहैँ रखवारी ॥२॥
योँ मन गुनति दुसासन दुरजन, तमक्यो तकि गहि दुहुँ कर सारी ।
सकुचि गात गोवति कमठी ज्योँ, हहरो हृदय बिकल भइ भारी ॥३॥
अपनेनि को अपनो बिलोकि बल, सकल आस बिस्वास बिसारी ।

बरह्योँ=बरहे में । एकहितक=लगातार ।

हाथ उठाइ अनाथ नाथ सोँ पाहि पाहि प्रभु पाहि पुकारी ॥
तुलसी परखि प्रतीति प्रीतिगति, आरतपाल कृपालु मुरारी।
बसन बेष राखी बिसेषि लखि, बिरदावलि मूरति नरनारी ॥५॥६०॥

गहगह गगन दुन्दुभी बाजी।
बरषि सुमन सुरगन गावत जस, हरष-मगन मुनि सुजन समाजी ॥१॥
सानुज सगन ससचिव सुजोधन, भये मुख मलिन खाइ खल खाजी।
लाज गाज उनवनि कुचाल कलि, परी बजाइ कहूँ कहुँ गाजी ॥२॥
प्रीति प्रतीति द्रुपद-तनया की, भली भूरि भय भभरि न भागी।
कहि पारथ-सारथिहि सराहत, गई-बहोरि गरीब-निवाजी ॥३॥
सिथिल-सनेह मुदित मन ही मन, बसन बीच बिच बधू बिराजी।
सभासिन्धु जदुपति जय जय जनु, रमा प्रगटि त्रिभुवनभरि भ्राजी ॥४॥
जुग जुग जग साके केसव के, समन-कलेस कुसाज-सुसाजी।
तुलसी को न होइ सुनि कीरति, कृष्णकृपालु-भगतिपथ राजी? ॥५॥६१॥



नरनारी = द्रौपदी। खाजी = मुँह की खाकर। गाज = बिजली। उनवनि = ओनघना।

विनय-पत्रिका

राग-बिलावल ।

गाइय श्रीगनपति जगबन्दन । सङ्कर-सुवन भवानी-नन्दन ॥
सिद्धि सदन गज-बदन बिनायक । कृपासिन्धु सुन्दर सब लायक ॥१॥
मोदक-प्रिय मुद-मङ्गल-दाता । बिद्या-बारिधि बुद्धि-बिधाता ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं राम सिय मानस मोरे ॥२॥१॥
दीनदयाल दिवाकर देवा । कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा ॥
हिम तम करि केहरि करमाली । दहन दोष दुख दुरित रुजाली ॥१॥
कोक कोकनद लोक प्रकासी । तेज प्रताप रूप रस रासी ॥
सारथि पङ्गु दिब्य- रथ-गामी । हरि सङ्कर बिधि मूरति स्वामी ॥२॥
बेद पुरान प्रगट जस जागै । तुलसी रामभगति बर माँगै ॥३॥२॥

को जाचिये सम्भु तजि आन ।

दीनदयाल भगत आरति हर, सब प्रकार समरथ भगवान ॥१॥
कालकूट ज्वर जरत सुरासुर, निज पन लागि कियो बिष पान ।
दारुन दनुज जगत दुखदायक, जारेउ त्रिपुर एकहो बान ॥२॥
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत सन्त स्रुति सकल पुरान ।
सोगति मरनकाल अपने पुर, देत सदा सिव सबहि समान ॥३॥
सेवत सुलभ उदार कलपतरु, पारबती-पति परम सुजान ।
देहु राम-पद नेहु कामरिपु, तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥४॥३॥

दानी कहुँ सङ्कर सम नाहीं ।

दीनदयाल देबोई भावइ, जाचक सदा सुहाहीं ॥१॥

नन्दन=आनन्द देने वाले, पुत्र । करमाली=सूर्य्य । दुरित=पाप । रुजाली=रोग समूह । कोक=चकवापक्षी । कोकनद=कमल ।

मारि के मार थपेउ जग जाकी, प्रथम रेख भट माहीं।
ता ठाकुर को रीझि निवाजब, कहि न परत मो पाहीं ॥२॥
जोग कोटि करि जो गति हरि सों, मुनि माँगत सकुचाहीं।
बेद बिदित तेहि पद पुरारि पुर, कोट पतङ्ग समाहीं ॥३॥
ईस उदार उमापति परिहरि, अनत जे जाचन जाहीं।
तुलसिदास ते मूढ़ माँगने, कबहुँ न पेट अघाहीं ॥४॥४॥

बावरो रावरो नाह भवानी।
दानि बड़ो दिन देत दिये बिनु, बेद बड़ाई भानी ॥१॥
निज घर की बर बात बिलोकहु, हौ तुम्ह परम सयानी।
सिव की दई सम्पदा देखत, श्री सारदा सिहानी ॥२॥
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुख की नहीं निसानी।
तिन्ह रङ्कन्ह को नाक सँवारत, हौं आयउँ नकवानी ॥३॥
दुख दीनता दुखी इनके दुख, जाचकता अकुलानी।
यह अधिकार सौंपिये औरहि, भीख भली मैं जानी ॥४॥
प्रेम प्रसंसा बिनय ब्यङ्ग जुत, सुनि बिधि की बर बानी।
तुलसी मुदित महेस मनहिं मन, जगतमातु मुसुकानी ॥५॥ ५॥

माँगिये गिरिजापति कासी। जासु भवन अनिमादिक दासी ॥१॥
अवढर दानि द्रवत सुठि थोरे। सकत न देखि दीन कर जोरे ॥
सुख सम्पति मति सुगति सुहाई। सकल सुलभ सङ्कर सेवकाई ॥२॥
गये सरन आरति के लीन्हे। निरखि निहाल निमिष महँ कीन्हे ॥
तुलसिदास जाचक जस गावै। बिमल भगति रघुपति की पावै ॥३॥ ६॥

कस न दीन पर द्रवहु उमाबर। दारुन बिपति हरन करुनाकर ॥१॥
बेद पुरान कहत उदार हर। हमरि बेर कस भयहु कृपिन तर ॥
कवन भगति कीन्ही गुननिधि-द्विज। होइ प्रसन्न दीन्हेउ सिवपद-निज ॥२॥

दिन=रोज़ रोज़। भानी=नष्ट कियना। सिहानी=बड़ाई करती हैं। लिपि=लिखावट। नाक=स्वर्गसुख। नकवानी=नाक में दम, नाकोदम। अवढर=मनमौजी, पात्रापात्र का विचार न कर दान देनेवाले। निहाल=प्रसन्न। तर=अधिक। गुननिधि=एक तस्करब्राह्मण,

जो गति अगम महामुनि गावहिँ। तव पुर कीन पतङ्गहु पावहिँ॥७॥
देहु कामरिपु राम-चरन-रति। तुलसिदास प्रभु हरहु भेद-मति ॥३॥

देव बड़े दाता बड़े सङ्कर बड़े भोरे। किये दूर दुख सबनि के जिन
जिन कर जोरे॥ सेवा सुमिरन पूजिबो पात-आखत थोरे।
दियो जगत जहँ लगि सबहि सुख गज-रथ-घोरे ॥१॥
गाँउ बसत बामदेव मैं कबहुँ न निहोरे। अधिभौतिक बाधा
भई ते किङ्कर तोरे॥ बेगि घोलि बलि बरजिये करतूति कठोरे।
तुलसी दलि रूँधो चहइ सठ साख सिहोरे ॥२॥८॥

सिव सिव होइ प्रसन्न करु दाया।
करुनामय उदार कीरति बलि,-जाउँ हरहु निज माया ॥१॥८॥
जलज-नयन गुन-अयन मयन-रिपु, महिमा जान न कोई।
बिनु तव कृपा राम-पद-पङ्कज, सपनेहुँ भगति न होई ॥२॥
रिषय सिद्ध मुनि मनुज दनुज सुर, अपर जीव जग माहीँ।
तव पद-बिमुख पार नहिँ पावत, कलप-कोटि चलि जाहीँ ॥३॥
अहि-भूषन दूषन-रिपु-सेवक, देव देव त्रिपुरारी।
मोह निहार दिवाकर सङ्कर, सरन सोक भय हारी ॥ ४ ॥
गिरिजा मन-मानस मराल, कासीस मसान निवासी।
तुलसिदास हरि-चरन-कमल बर, देहु भगति अबिनासी ॥ ५ ॥९॥

राग-धनाश्री।

मोह-तम-तरनि-हर रुद्र सङ्कर सरन, हरन मम सोक लोकाभिरामं।
बाल-ससि भाल सुबिसाल लोचन-कमल, काम सत-कोटि लावन्य-
धामं ॥१॥

अधिभौतिक बाधा = शरीरधारियों द्वारा प्राप्त हुई पीड़ा। सिहोरे = एक प्रकार का काँटेदार वृक्ष जो बबूर की जाति में माना जाता है। मयनरिपु = कामदेव के शत्रु। दूषनरिपु = रामचन्द्रजी। निहार = कुहिरा। लावन्य = सुन्दरता।

कम्बु कुन्देन्दु कर्पूर बिग्रह रुचिर, तरुन रवि कोटि तनु तेज भ्राजै। भस्म सर्बाङ्ग अर्द्धाङ्ग सैलात्मजा, व्याल नृ-कपाल-माला बिराजै ॥ २ ॥

मौलि सङ्कुल जटा-मुकुट बिद्युच्छटा, तटिनि बर बारि हरि-चरन-पूतं। स्रवन कुंडल गरल-कंठ करुनाकन्द, सच्चिदानन्द बन्देवधूतं ॥३॥

सूल सायक पिनाकासि कर सत्रु बन, दहन इव धूमध्वज वृषभ-जानं। व्याघ्र गज चर्म परिधान बिज्ञान-घन, सिद्ध सुर मुनि मनुज सेब्यमानं ॥ ४ ॥

तांडवित नृत्य पर डमरु डिमडिम प्रबर, असुभ इव भाति कल्यान-रासी। महाकल्पान्त ब्रह्मांड-मंडल दवन, भवन-कैवल्य आसीन कासी ॥ ५ ॥

तज्ञ सर्बज्ञ यज्ञेस अच्युत बिभव, बिस्व भवदंस-सम्भव पुरारी। इन्द्र चन्द्रार्क बरुनाग्नि बसु मरुत जम, अर्चि भवदंघ्रि सर्वाधिकारी ॥६॥

अकल निरुपाधि निर्गुन निरञ्जन ब्रह्म, कर्मपथमेकमज निर्बिकारं। अखिल बिग्रह उग्ररूप सिव-भूप-सुर, सर्बगत सर्ब सर्बोपकारं ॥७॥

ज्ञान बैराग्य धन धर्म कैवल्य सुख, सुभग सौभाग्य सिव सानुकूलं। तदपि नर मूढ़ आरूढ़ संसार-पथ, भ्रमत भव बिमुख तव पाद-मूलं ॥८॥

नष्ट मति दुष्ट अति कष्ट रत खेद गत, दासतुलसी सम्भु सरन आया। देहि कामारि श्रीराम-पदपङ्करुह, भक्ति भव-हरनि गत भेद माया ॥९॥१०॥

भीषनाकार भैरव भयङ्कर भूत, प्रेत प्रमथाधिपति बिपति हर्त्ता। मोह मूषक मार्जार संसार भय-हरन तारन तरन अभय कर्त्ता ॥१॥

बिग्रह=शरीर। नृकपाल=मनुष्य की खोपड़ी। मौलि=मस्तक। संकुल=भरा। पूत=पवित्र। धूमध्वज=अग्नि। डिमडिम=डुगडुगिया बाजा। प्रबर=श्रेष्ठ। भाति=शोभित, जान पड़ते हैं। तज्ञ=तत्वदर्शी। भवदंस=आप का अंश। चन्द्रार्क=चन्द्रमा और सूर्य्य। अर्चि=अग्नि। भवदंघ्रि आप का चरण। गत=प्राप्त। मार्जार=बिलाव।

अतुल बल बिपुल बिस्तार बिग्रह गौर, अमल अति धवल धरनीधराभं। सिरसि सङ्कुलित कल कूट पिङ्गल जटा, पटल सतकोटि बिद्युच्छटाभं॥ २॥

भ्राज बिबुधापगा आप पावन परम, मौलि मालेव सोभा बिचित्रं। ललित लल्लाट पर राज रजनीस कल,-कलाधर नौमि हर धनद मित्रं॥ ३॥

इन्दु-पावक-भानु-नयन मर्दन-मयन, ज्ञान गुन अयन बिज्ञान रूपं। रवन गिरिजा भवन भूधराधिप सदा, स्रवन कुंडल बदन छबि अनूपं॥ ४॥

चर्म असि सूल धर डमरु सायक चाप, जान बृषभेस करुना-निधानं। जरत सुर असुर नर लोक सोकाकुलं, मृदुल चित अजित कृत गरल पानं॥ ५॥

भस्म तनु भूषनं ब्याघ्रचर्माम्बरं, उरग नरमौलि उर माल धारी। डाकिनी साकिनी खेचरी भूचरी, यन्त्र भञ्जन प्रबल कलमषारी॥६॥

काल अतिकाल कलि ब्याल ब्यालाद,-खग, त्रिपुर-मर्दन भीम-कर्म भारी। सकल लोकान्त कल्पान्त सूलाग्रकृत, दिग्गजब्यक्त गुन नृत्यकारी॥ ७॥

पाप सन्ताप घनघोर संसृति दीन, भ्रमत जग जोनि नहिँ कोपि त्राता। पाहि भैरव रूप राम रूपी रुद्र, बन्धु गुरु जनक जननी बिधाता॥ ८॥

यस्य गुन गन गनति बिमल मति सारदा, निगम नारद प्रमुख ब्रह्मचारी। सेष सर्बेस आसीन आनन्दबन, प्रनत तुलसीदास त्रास-हारी॥ ९॥ ११॥

धरनीधर=पर्वत, हिमवान। सिरसि=मस्तक। सङ्कुलित=अच्छी तरह फैला हुआ। कूट=ऊँचा। पिङ्ग=पीत वर्ण। विबुधापगा=गङ्गा। आप=जल। डाकिनी=चुड़इल। साकिनी=योगिनी। खेचरी=आकाशचारीग्रह। ६ भूचरी=भूमिचारीजीव। कलमषारी=पाप के शत्रु। अतिकाल=महाकाल। ब्यालाद=गरुड़। भीम=भयानक। प्रमुख=प्रधान, मुखिया।

सङ्कुरं सम्प्रदं सज्जनानन्दं, सैलकन्यावरं परमरम्यं। काम मद मोचनं तामरस-लोचनं, बामदेवं भजे भाव-गम्यं ॥१॥
कम्बु कुन्देन्दु कर्पूर गौरं सिवं, सुन्दरं सच्चिदानन्द कन्दं। सिद्ध सनकादि जोगीन्द्र वृन्दारका, बिष्नु बिधि बन्द्य चरनारबिन्दं ॥२॥
ब्रह्मकुल-बल्लभं सुलभमतिदुर्लभं, बिकट बेषं बिभुं बेद पारं। नौमि करुनाकरं गरल-गङ्गा-धरं, निर्मलं निर्गुनं निर्बिकारं ॥३॥
लोकनाथं सोक-सूल-निर्मूलिनं, सूलिनं मोह-तम भूरि-भानुं। कालकालं कलातीतमजरं हरं, कठिन कलिकाल-कानन कृसानुं ॥४॥
तज्ञमज्ञान-पाथोधि-घटसम्भवं, सर्बगं सर्बं सौभाग्यमूलं। प्रचुर-भव-भञ्जनं प्रनत-जन-रञ्जनं, दासतुलसी सरन सानुकूलं ॥५॥१२॥

राग-वसन्त

सेवहु सिव-चरन-सरोज रेनु। कल्यान अखिल-प्रद कामधेनु ॥१॥
कर्पूर गौर करुना उदार। संसार-सार भुजगेन्द्र हार ॥
सुख-जन्म भूमि महिमा अपार। निर्गुन गुन-नायक निराकार ॥२॥
त्रय-नयन मयन-मर्दन महेस। अहंकार निहार उदित दिनेस ॥
बर-बाल-निसाकर मौलि भ्राज। त्रैलोक-सोक-हर प्रमथराज ॥३॥
जिन कहँ बिधि सुगति न लिखी भाल। तिन्ह की गति कासी-पति कृपाल ॥ उपकारी को पर हर समान। सुर-असुर जरत कृत गरल पान ॥४॥
बहु कल्प उपाय करिय अनेक। बिनु सम्भु कृपा नहिं भव बिबेक ॥
बिज्ञान-भवन-गिरि-सुता-रमन। कह तुलसिदास मम त्रास समन ॥५॥ १३॥
देखो बन बनेउ आज उमाकन्त। जनु पेखन आई रितु-बसन्त ॥१॥
मनु तनु दुति चम्पक-कुसुम-माल। बर बसन नील नूतन तमाल ॥
कल कदलि जङ्घ पद-कमल-लाल। सूचक कटि केहरि गति-मराल ॥२॥

सङ्कर=कल्याण करनेवाले। सम्प्रद=श्रेष्ठ दानी। कम्बु=शंख। वृन्दारक=देवता। बल्लभ=प्रिय। सूलिन=त्रिशूल धर। घटसम्भव=अगस्त्यमुनि। निहार=कुहिरा।

भूषन प्रसून बहु बिबिध रङ्ग। नूपुर किङ्किनि कलरव बिहङ्ग ॥
कर नवल बकुल-पल्लव रसाल। श्रीफल-कुच कञ्चुकि-लता-जाल ॥३॥
आनन सरोज कच-मधुप-पुञ्ज। लोचन बिसाल नव नील-कञ्ज ॥
पिक बचन चरित बर बरहि कीर। सित-सुमन-हास लीला-समीर ॥४॥
कह तुलसिदास सुनु सिव सुजान। उर बसि प्रपञ्च रच पञ्चबान ॥ करि कृपा हरिय भ्रम-फन्द-काम। जेहि हृदय बसहिँ सुख-रासि राम ॥५॥ १४॥

राग-मारू।

दुसह दोष दुख दलनि करु देबि दाया। बिस्व-मूलासि जन सानुकूलासि सर,-सूल धारिनि महा-मूल-माया ॥१॥
तड़ित गर्भाङ्ग सर्बाङ्ग सुन्दर लसत, दिब्य-पट भव्य-भूषन बिराजै। बाल-मृग मञ्जु खञ्जन-बिलोचन चन्द,-बदन लखि कोटि रति-मार लाजै ॥२॥
रूप सुख-सील सोमासि भीमासि रामासि बामासि बर-बुद्धि-बानी। छमुख-हेरम्ब-अम्बासि जगदम्बिके, सम्भु-जायासि जय जय भवानी ॥३॥
चंड भुजदंड खंडनि बिहंडनि मुंड, महिष मद भङ्ग करि अङ्ग तोरे। सुम्भ निःसुम्भ कुम्भीस रन केसरिन, क्रोध-बारिधि बैरि बृन्द बोरे ॥४॥
निगम आगम अगम गुर्बि तब गुन कथन-उर्बिधर कहत जेहिं सहस जीहा। देहि मा मोहि पन-प्रेम निज-नेम यह, राम-घन-स्याम तुलसी पपीहा ॥५॥ १५॥

कलरव=कोकिल। पिक=कोयल। समीर=पवन। पञ्चबान=कामदेव। तड़ित=बिजली। गर्भाङ्ग=गर्भ का अङ्ग, पैदाइश की जगह। छमुख=षड़ानन। हेरम्ब=गणेश अम्बासि=माता हो। चंड=तीव्र, राक्षस बिशेष। मुंड=दैत्य विशेष। महिष=महिषासुर। कुम्भीस=मत्तगयन्द, मस्त हाथी। निगम=वेद। आगम=शास्त्र। श्रेष्ठ स्त्री=सरस्वती। उर्बिधर=शेषनाग।

राग-सारङ्ग

जय जय जगजननि देबि, सुर नर मुनि असुर सेबि, भक्त मुक्ति-दायनि भय हरनि कालिका। मङ्गल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्ब सर्बरीस बदनि, ताप तिमिर तरुन तरनि किरन मालिका ॥१॥
बर्म चर्म कर कृपान, सूल सेल धनुष बान, धरनि दलनि दानव-दल रन करालिका। पूतना पिसाच-प्रेत, डाकिनि साकिनि समेत, भूत-प्रमथ-ग्रह खगालि हेतु जालिका ॥ २ ॥
जय महेस भामिनी, अनेक रूप नामिनी, समस्त लोक स्वामिनि हिम-सैलबालिका। रघुपति-पद-पदुम प्रेम, तुलसी चह अचल नेम, देहि होइ प्रसन्न पाहि प्रनत-पालिका ॥ ३ ।१६॥

जय भगीरथ-नन्दिनि-मुनि, चय चकोर चन्दिनि, नर नाग बिबुध बन्दिनि जय जन्हु-बालिका। बिष्णु-पद-सरोजजासि ईस सीस पर बिभासि, त्रिपथगासि पुन्यरासि पाप-छालिका ॥ १ ॥
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रय ताप हारि, भँवर बर बिभङ्ग तर तरङ्ग मालिका। पुरजन पूजोपहार, सोभित ससि धवल धार, भञ्जन भुबि भार भक्त-कल्प-थालिका ॥ २ ॥
निज-तट-बासी बिहङ्ग, जल-थल-चर पसु पतङ्ग, कीट जटिल तापस सब सरिस पालिका। तुलसी तव तीर तीर, सुमिरत रघुबंस बीर, बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका ॥३ १७॥

राग-रामकली

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी। बिष्नु-पद-कञ्ज मकरन्द इव अम्बु बर, बहसि दुख दहसि अघ-बृन्द-बिद्रावनी ॥१॥
मिलित-जलपात्र अज जुक्त हरि-चरन रज, बिरज तर बारि

पर्ब = पूर्णिमा। सर्बरीस = चन्द्रमा। तरनि = सूर्य्य। बर्म = कवच। चर्म = ढाल। चय = समूह। बिभासि = शोभनीय। पापछालिका = पापों को धोनेवाली। बिभङ्ग = बड़ी लहर। तर = अधिक। तरङ्ग = लहर। पूजोपहार = पूजा का सामान। जटिल = ढ़िसक, जटाधारी। जगदखिल = सम्पूर्ण संसार। अम्बु = जल। भूधरद्रोनि = पर्वत और नौका। बिरजतर = अतिनिर्मल।

त्रिपुरारि सिर धामिनी। जन्हुकन्या धन्य पुन्य कृत सगर-सुत, भूधरद्रोनि बिद्दरनि बहु नामिनी ॥ २ ॥
जच्छ गन्धर्व मुनि किन्नरोरग दनुज, मनुज मज्जहिं सुकृत-पुञ्जजुत कामिनी। स्वर्ग सोपान विज्ञान ज्ञान प्रदे, मोह-मद-मदन-पाथोज हिम-जामिनी ॥३॥
हरित गम्भीर बानीर दुहुँ तीर बर, मध्य धारा बिसद बिस्व-अभिरामिनी। नील परजङ्क कृत सयन सर्पेस जनु, सहस सीसावली स्रोत सुर-स्वामिनी ॥ ४ ॥
अमित महिमा अमित-रूप भूपावली, मुकुटमनि बन्दिते लोक त्रय गामिनी। देहि रघुबीर-पद-प्रीति निर्भर मातु, दासतुलसी त्रास हरनि भव-भामिनी ॥ ५ ॥ १८ ॥

हरति पाप त्रिबिध ताप, सुमिरत सुरसरित। बिलसत महि कल्पबेलि मुद-मनोरथ-फरित ॥ १ ॥
सोहत ससि-धवल-धार, सुधा-सलिल भरित। बिमल तर तरङ्ग लसत, रघुबर से चरित ॥ २ ॥
तो बिनु जगदम्ब गङ्ग कलियुग का करित। घोर भव अपार सिन्धु, तुलसी किमि तरित ॥ ३ ॥ १९ ॥

ईस सीस बससि त्रिपथ लससि नभ पताल धरनि। मुनि सुर नर नाग सिद्ध, सुजन मङ्गल-करनि ॥ १ ॥
देखत दुख-दोष-दुरित, दाह-दारिद दरनि। सगर-सुवन साँसति समन, जलनिधि जल-भरनि ॥२॥
महिमा की अवधि करसि, बहु बिधिहरि-हरनि। तुलसी करु बानि बिमल, बिमल-बारि-बरनि ॥ ३ ॥ २० ॥

दुरित=पाप। पाथोज=कमल। हिमजामिनी=पाला की रात्रि। बानीर=बेतवृक्ष। परजङ्क=पलंग। स्रोत=सोता। निर्भर=पूर्ण।

राग-बिलावल।

जमुना ज्यौँ ज्यौँ लागी बाढ़न। त्यौँ त्यौँ सुकृत सुभट कलि-भूपहि, निदरि लगे बहि काढ़न॥ १॥
ज्यौँ ज्यौँ जल मलीन त्यौँ त्यौँ जम-गन मुख मलीन लह आढ़ न। तुलसिदास जगदघ जवास ज्यौँ, अनघ-आगि लगे डाढ़न॥२॥ २१॥

राग-भैरव।

सेइय सहित सनेह देह-भरि, कामधेनु कलि कासी। समन सोक-सन्ताप-पाप-रुज, सकल सुमङ्गल रासी॥ १॥
मरजादा चहुँ ओर चरन बर, सेवत सुर-पुरबासी। तीरथ सब सुभ अङ्ग रोम सिव,-लिङ्ग अमित अबिनासी॥२॥
अन्तर-अयन अयन भल थन-फल, बच्छ-बेद-बिस्वासी। गल-कम्बल बरना बिभाति जनु, लूम लसति सरितासी॥३॥
दंडपानि भैरव बिषान मल,-रुचि खल-गन भयदा-सी। लोल-दिनेस त्रिलोचन लोचन, करनघंट घंटा सी॥४॥
मनिकर्निका बदन ससि सुन्दर, सुरसरि-सुख सुखमा सी। स्वारथ परमारथ परिपूरन, पञ्चकोस महिमा सी॥५॥
बिस्वनाथ पालक कृपाल चित, लालति नित गिरिजा सी। सिद्धि सची सारद पूजहिँ मन,-जोगवत रहित रमा सी॥६॥
पञ्चाच्छरी-प्रान मुद माधव, गव्य सु-पञ्च-नदासी। ब्रह्म जीव सम रामनाम दोउ,आखर बिस्व-बिकासी॥७॥
चारित चरति करम कुकरम करि, मरत जीव-गन घासी। लहत परम-पद पय पावन जेहि, चाहत प्रपञ्च-उदासी॥८॥

बहि=बाहर। आढ़=आड़, ओट। जगदघ=संसार का पाप। अनघआगि=निष्पापतारूपी अग्नि। डाढ़न=जलना। अन्तरअयन=अन्तर्गृही। अयन=स्थान। गलकम्बल=ललरी। लूम=पूछ। विषान=सींग। लोलदिनेस=लोलार्कतीर्थ। करनघंट=कर्णघंटातीर्थ। पाञ्चच्छरी=शिवमंत्र, नमःशिवाय। गव्य=पञ्चगव्य। चारित=चालचलन।

कहत पुरान रची केसव निज, कर करतूति-कला सी। तुलसी असि हरपुरी राम जपु, जो भयो चहइ सुपासी ॥ ९ ॥ २२ ॥

राग-वसन्त।

सब सोच विमोचन चित्रकूट। कलि हरन करन कल्यान-बूट ॥१॥
टेक० सुचि अवनि सुहावनि आलबाल। कानन बिचित्र बारी बिसाल॥
मन्दाकिनि मालिन सदा सींच। वार वारि बिषम नर नारि नीच ॥२॥
साखा सुसृङ्ग भूरुह सुपात। निर्भर मधु बर मृदु मलय बात॥
सुक-पिक-मधुकर मुनिबर-बिहारु। साधन-प्रसून फलचारि-चारु ॥३॥
भव घोर घाम हर सुखद छाँह। थपेउ थिर प्रभाउ जानकी नाह॥ साधक सुपथिक बड़ भाग पाइ। पावत अनेक अभिमत अघाइ ॥४॥
रसएक रहित गुन कर्म काल। सियरामलखन पालक कृपाल॥
तुलसी जो राम-पद चहिय प्रेम। सेइय गिरि करि निरुपाधि नेम ॥५॥२३॥

राग-कान्हरा।

अब चित चेति चित्रकूटहि चल कोपित कलि लोपित मङ्गल मग, बिलसत बढ़त मोहि-माया-मल ॥१॥
भूमि बिलोकि राम-पद-अङ्कित, बन बिलोकि रघुबर बिहार-थल। सैल-सृङ्ग भव भङ्ग हेतु लखि, दलन कपट-पाखंड-दम्भ-दल ॥२॥
जहँ जनमे जग-जनक जगतपति, बिधि हरि हर परिहरि प्रपञ्चछल। सकृत प्रबेस करत जेहि आस्रम, बिगत बिषाद भये पारथ नल ॥३॥
न करु बिलम्ब बिचारु चारु-मति, बरिस पाछिले सम आगिलो पल। मन्त्र सो जाइ जपहि जो जपत भये, अजर अमर हर अँचइ हलाहल ॥४॥

आलबाल=थाला। बारी=बगीचा। मलय=सुगन्ध। लोपित=छिपा दिया। कल=पाप। सकृत=एक बार। हलाहल=विष।

राम-नाम जप-जाग करत नित, मज्जत पय पावन पीवत जल।
करिहैं राम भावतो मन को, सुख-साधन अनयास महाफल ॥५॥
कामद-मनि कामता-कलपतरु, सो जुग जुग जागत जगतीतल।
तुलसी तोहि बिसेष बूझिये, एक प्रतीत-प्रीति एकइ बल ॥ ६ ॥ २४ ॥

राग-धनाश्री।

अञ्जनागर्भ-अम्भोधि-सम्भूत-बिधु, बिबुध-कुल-कैरवानन्दकारी।
केसरी चारु लोचन चकोरक सुखद, लोक-गन सोक-सन्ताप हारी ॥१॥
जयति जय बाल-कपि-केलि कौतुक उदित,-चंडकर-मंडल ग्रास कर्त्ता। राहु रबि सक्र पबि गर्ब खर्बीकरन, सरन भय हरन जय भुवन-भर्त्ता ॥२॥
जयति रनधीर रघुबीर-हित देवमनि, रुद्र अवतार संसारपाता। बिप्र सुर सिद्ध मुनि आसिषाकर बपुष, विमल गुन बुद्धि-बारिधि-बिधाता ॥३॥
जयति सुग्रीव सिच्छादि रच्छन निपुन, बालि बल-सालि बध मुख्य हेतू। जलधि लङ्घन सिंह सिंहिका-मद-मथन, रजनिचर-नगर उत्पात केतू ॥४॥
जयति भू-नन्दिनी सोच मोचन बिपिन,-दलन घननाद-बस बिगत सङ्का। लूम-लीला अनल-ज्वालमालाकुलित, होलिका करन लङ्केस लङ्का ॥५॥
जयति सौमित्रि रघुनन्दनानन्दकर, रिच्छ-कपि-कटक सङ्घट बिधाई। बाँधि बारिधि सेतु अमर मङ्गल हेतु, भानुकुल-केतु रन-बिजयदाई ॥६॥
जयति जय बज्रतनु दसन मुख नख बिकट, चंड भुजदंड तरु

जागत = प्रसिद्ध, ज़ाहिर। सम्भूत = उत्पन्न। बिधु = चन्द्रमा। चंडकर = सूर्य्य। खर्बीकरन = तुच्छ करनेवाले। भूनन्दिनी = सीता। मोचन = छुड़ानेवाले। सङ्घट = समूह। बिधाई = विधानकर्त्ता। चंड = तीव्र।

सैल पानी । समर तैलिकजन्त्र तिल-तमीचर-निकर, पेरि डारे सुभट घालि घानी ॥७॥

जयति दसकंठ घटकरन बारिदनाद, कदन-कारन कालनेमि-हन्ता । अघट घटना सुघट सुघट-बिघटन बिकट, भूमि पाताल जल गगन गन्ता ॥८॥

बिस्व बिख्यात बानइत बिरदावली, बिदुष बरनत बेद बिमल बानी । दासतुलसी त्रास समन सीता-रमन, सङ्ग सोभित राम-राजधानी ॥९॥२५॥

मर्कटाधीस मृगराजबिक्रम महा,-देव मुद मङ्गलालय कपाली । मोह मद कोह कामादि-खल-सङ्कुला, घोर संसार-निसि किरन माली ॥१॥

जयति लसदञ्जनादितिज कपि केसरी,-कस्यपप्रभव जगदार्त्ति हर्त्ता । लोक लोकप कोक-कोकनद सोक हर, हंस-हनुमान कल्यान-कर्त्ता ॥२॥

जयति सुबिसाल बिकराल-बिग्रह बज्र,-सार सर्बाङ्ग भुजदंड भारी । कुलिस नख दसन बर लसत बालधि बृहद, बीर सस्त्रास्त्रधर कुधर-धारी ॥३॥

जानकी सोच सन्ताप मोचन राम, लछमनानन्द बारिज बिकासी । कीस कौतुक केलि लूम लङ्का दहन, दलन कानन तरुन-तेज-रासी ॥४॥

जयति पाथोधि पाषान जल-जान कर, जातुधान प्रचुर हर्ष-हाता । दुष्ट रावन कुम्भकर्न पाकारिजित, मर्मभित्कर्म परिपाक-दाता ॥५॥

जयति भुवनैक-भूषन बिभीषन बरद, बिहित कृत राम-संग्राम-साका । पुष्पकारूढ़ सौमित्रि सीता सहित, भानुकुल भानु-कीरति-पताका ॥६॥

तैलिक जंत्र = कोल्हू । घटकरन = कुम्भकर्ण । घननाद = मेघनाद । कदन = नाश । अघट = न होने योग्य । घटना = काम । सुघट = होने योग्य बात । बानैत = नामवर । बिदुष = पण्डित । प्रभव = उत्पन्न । हंस = सूर्य्य । बालधि = पूछ, लूम । जलजान = जहाज । मर्मभित् = भेद जानने वाले । परिपाक = फल । बिहित = ख्याति । साका = बहादुरी का काम ।

जयति पर जन्त्र-मन्त्राभिचार ग्रसन, कार्मन-कूट कृत्यादि हन्ता। साकिनी डाकिनी पूतना प्रेत बेताल भूत प्रमथ जूथ जन्ता॥७॥
जयति वेदान्त विधि विविध विद्या विसद, वेद वेदाङ्ग-विद ब्रह्मवादी। ज्ञान वैराग्य विज्ञान भाजन विभव, विमल गुन गनत सुक नारदादी॥ ८॥
काल गुन कर्म माया मथन निस्चल, ज्ञान व्रत सत्य-रत धर्म-चारी। सिद्ध सुरबृन्द जोगीन्द्र सेवित सदा, दासतुलसी प्रनत भय तमारी॥ ९॥२६॥

मङ्गलागार संसार भारापहर, वानराकार-विग्रह पुरारी। राम रोपानल ज्वालमालामिष,-ध्वान्तचर-सलभ संहारकारी॥१॥
जयति मरुदञ्जनामोद-मन्दिर नतग्रीव सुग्रीव दुःखैक बन्धो। जातुधानोद्धत क्रुद्ध कालाग्नि हर, सिद्ध-सुर-सज्जनानन्द सिन्धो॥२॥
जयति रुद्राग्रनी विस्व विद्याग्रनी, विस्व विख्यात भट चक्रवर्ती। सामगाताग्रनी काम-जेताग्रनी, राम हित राम भक्तानुवर्ती॥३॥
जयति संग्राम जय राम सन्देह हर, कोसला कुसल कल्यान भाखी। राम विरहार्क सन्तप्त भरतादि नर,-नारि सीतल करन कल्पसाखी॥ ४॥
जयति सिंहासनासीन सीता-रमन, निरखि निर्भर हरष नृत्यकारी। राम-सम्भ्राज सोभा सहित सर्वदा, तुलसि-मानस-रामपुर विहारी॥ ५॥ ॥ २७॥

वात सञ्जात विख्यात विक्रम वृहद्बाहु बल विपुल बालधि विसाला। जातरूपाचलाकार-विग्रह-लसत, लोम विद्युल्लता ज्वाल-माला॥ १॥

अभिचार=यंत्र मंत्र द्वारा मारणादि प्रयोग। कार्मन=मंत्र तंत्र का प्रयोग। कूट=धोखा, गुप्तरहस्य। कृत्या=राक्षसी विशेष। बेताल=मुर्दे में प्रेत का प्रवेश होने से वह जीवित जान पड़े। प्रमथ=रुद्रगण, पिशाच की एक जाति। ध्वान्तचर=राक्षस। कल्पसाखी=कल्पवृक्ष। वात-सञ्जात=पवन से उत्पन्न। जातरूपाचल=सुमेरुपर्वत। लोम=रोयाँ।

जयति बालार्क बर बदन पिङ्गल-नयन, कपिस कर्कस जटा जूट-धारी। बिकट भृकुटी बज्र-दसन,-नख बैरि मद, मत्त कुञ्जर पुञ्ज कुञ्जरारी ॥ २ ॥

जयति भीमार्जुन-ब्यालसूदन-गर्ब,-हर धनञ्जय रथ-त्रानकेतू। भीषम द्रोन करनादि पालित काल,-दृक सुजोधन चमू निधन हेतु॥३॥

जयति गत राज दातार हरतार संसार-सङ्कट दनुज-दर्प-हारी। ईति अति भीति ग्रह प्रेत चौरानल,-ब्याधि बाधा समन घोरमारी ॥४॥

जयति निगमागम-ब्याकरन कर्नलिपि, काब्य कौतुक कला कोटि सिन्धो। सामगायक भक्त-काम-दायक बामदेव श्रीराम प्रिय प्रेम-बन्धो ॥ ५ ॥

जयति घर्मान्सु सन्दग्ध सम्पाति नव,-पच्छ लोचन दिब्य देह दाता। काल कलि पाप सन्ताप सङ्कुल सदा, प्रनत तुलसीदास तात माता ॥ ६ ॥ २८ ॥

निर्भरानन्द-सन्दोह कपि-केसरी, केसरी-सुवन भुवनैक भर्त्ता। दिब्य भूम्यञ्जना मञ्जुलाकर मने, भक्त-सन्ताप-चिन्तापहर्त्ता ॥१॥

जयति धर्मार्थ कामापबर्गद बिभो, ब्रह्मलोकादि बैभव बिरागी। बचन मानस कर्म सत्य धर्मब्रती, जानकीनाथ चरनानुरागी ॥२॥

जयति बिहँगेस बल बुद्धि बेगाति मद,-मथन मन्मथ मथन ऊर्धरेता। महानाटक निपुन कोटि कबि-कुल-तिलक, गान गुन-गर्ब गन्धर्ब-जेता ॥ ३ ॥

जयति मन्दोदरी केस करषन बिद्यमान दसकंठ-भट-मुकुट मानी। भूमिजा दुःख-सञ्जात रोषान्तकृज्जातना जन्तु कृत जातुधानी ॥४॥

कपिस=ललाई मिला भूरा रंग। कर्कस=कठोर। ब्यालसूदन=गरुड़। धनञ्जय=अर्जुन। घोरमारी=महमारी। कर्नलिपि=सुनने के मान लिखने की शैली। घर्मान्सु=सूर्य्य। सन्दग्ध=जला हुआ। निर्भरानन्द-सन्दोह=पूर्णानन्द की राशि। मञ्जुलाकर=सुन्दरखानि। मने=मणि। ऊर्धरेता=बालब्रह्मचारी। बिद्यमान=उपस्थित, मौजूद। भूमिजा=सीता।

जयति रामायन स्रवन सञ्जात रोमाञ्च लोचन सजल सिथिल बानी। राम-पद पद्म-मकरन्द मधुकर पाहि, दासतुलसी सरन सूल-पानी ॥ ५ ॥२९॥

राग-सारङ्ग

जाके गति है हनुमान की। ताकी पैज पूजिआई यह रेखा कुलिस पखान की ॥ १ ॥
अघटित-घटन सुघट बिघटन अस, बिरदावली न आन की।
सुमिरत सङ्कट सोच बिमोचन, मूरति मोद-निधान की ॥ २ ॥
ता पर सानुकूल गिरिजा हर, लखन राम अरु जानकी।
तुलसी कपि की कृपा-बिलोकनि, खानि सकल कल्यान की ॥३॥३०॥

राग-गौरी।

ताकिहै तमकि ताकी ओर को। जाको है सब भाँति भरोसो, कपि केसरी-किसोर को ॥ १ ॥
जन-रञ्जन अरि-गन-गञ्जन मुख,-भञ्जन खल बरजोर को,
बेद पुरान प्रगट पुरुषारथ, सकल-सुभट-सिरमोर को ॥ २ ॥
उथपे-थपन थप्यो उथपन करि, बिबुधन्ह बन्दीछोर को।
जलधि लङ्घि दहिलङ्क प्रबल दल, दलन निसाचर घोर को ॥ ३ ॥
जा को बाल-बिनोद समुझि जिय, डरत दिवाकर भोर को।
जाकी चिबुक चोट चूरन किय, रद मद कुलिस कठोर को ॥ ४ ॥
लोकपाल अनुकूल बिलोकब, चहत बिलोचन कोर को।
सदा अभय जय मुद-मङ्गलमय, जे सेवक रनरोर को ॥ ५ ॥
भगत कामतरु नाम राम, परिपूरन चन्द चकोर को।
तुलसी फल चारो करतल जस,-गावत गई-बहोर को ॥ ६ ॥ ३१ ॥

सञ्जात=उत्पन्न। पैज=पराक्रम। पूजिआई=पूरी पड़ी। अघटितघटन=अनहोनी के करनेवाले। सुघटविघटन=होनेवाली बात को बिगाड़ने वाले। बिरदावली=नामवरी। तमकि=क्रोध करके। भोर=प्रातःकाल। चिबुक=ठोढ़ी। रनरोर=युद्ध में हाहाकार।

राग-बिलावल।

ऐसी तोहि न बूझिये हनुमान हठीले। साहेब कहूँ न राम से तुम से न वसीले ॥ १ ॥
तेरे देखत सिंह के सिसु, मेढक लीले। जानत हैाँ कलि तेरऊ मनु-गुन-गन कीले ॥ २ ॥
हाँक सुनत दसकन्ध के भये, बन्धन ढीले। सो बल गयउ किधैाँ अब भये, गर्ब गहीले ॥ ३ ॥
सेवक को परदा फटै तुम,-समरथ सी ले, अधिक आपु तेँ आपनो सुनि, मानस हीले ॥ ४ ॥
सासति तुलसीदास की लखि, सुजस तुहीँ ले। तिहूँ काल तिनको भलो जो, राम रँगीले ॥ ५ ॥ ३२ ॥

समरथ सुवन समीर के रघुबीर पियारे। मो पर कीबे तोहि जो करि लेहि भिया रे ॥ १ ॥

तेरी महिमा तेँ चलइ चिञ्चिनी चियाँ रे।
अँधियारो मेरी बार क्याेँ त्रिभुवन उँजियारे ॥ २ ॥
केहि करनी जन जानि के सनमान किया रे।
केहि अघ अवगुन आपनो करि छाड़ि दिया रे ॥ ३ ॥
खाई खोँची माँगि मैँ तुव नाम लिया रे।
तेरे बल बलि आज लैाँ जग जागि जिया रे ॥ ४ ॥
जैाँ तो सोँ हाेता फिरो मम हेतु हिया रे।
तौ क्याेँ बदन दिखावतो कहि बचन इयारे ॥ ५ ॥
तो से ज्ञान-निधान को सर्बज्ञ बिया रे।
समुझत साँई द्रोह की गति छार छिया रे ॥ ६ ॥

वसीला = ज़रिया। कीले = रूँध दिया। गहीले = गहनेवाले। मानस = मन। हीले = हिलता था। भिया = भैया। चिञ्चिनी = इमली। खोँची = भिक्षा। इयारे = मित्र। बिया = दूसरा। छार = राख। छिया = मल, पुरीष।

तेरे स्वामी राम से स्वामिनी सिया रे ।
तहँ तुलसी कहँ कौन को काको तकिया रे ॥ ७ ॥ ३३ ॥

अति-आरत अति-स्वारथी, अति-दीन-दुखारी ।
इनको बिलग न मानिये, बोलहिं न बिचारी ॥ १ ॥
लोक रीति देखी सुनी, ब्याकुल नर नारी ।
अतिबरषे-अनबरषेहूँ देहिं दैवहि गारी ॥ २ ॥
नाकहि आये नाथ सों, सासति भइ भारी ।
कहि आयउ कीबी छमा, निज ओर निहारी ॥ ३ ॥
समय साँकरे सुमिरिये, समरथ हितकारी ।
सो सब बिधि उपकार कर, अपराध बिसारी ॥ ४ ॥
बिगरी सेवक की सदा, साहेबहि सुधारी ।
तुलसी पर तेरी कृपा, निरुपाधि निरारी ॥ ५ ॥ ३४ ॥

कटु कहिये गाढ़े परे, सुनि समुझि सुसाँई ।
करहिं अनभले को भलो, आपनी भलाई ॥ १ ॥
समरथ सुभ जे पावहीं, बीर पीर पराई ।
ताहि तके सब ज्यों नदी, बारिधि न बुलाई ॥ २ ॥
अपने अपने को भलो, चहइँ लोग लुगाई ।
भावइ जो जेहि तेहि भजइ, सुभ असुभ सगाई ॥ ३ ॥
बाँह बोल देइ थापिये, जो निज बरिआई ।
बिनु सेवा सो पालिये, सेवक की नाँई ॥ ४ ॥
चूक चपलता मेरियै, तू बड़ो बड़ाई ।
होत आदरे ढीठ है, अति नीच निचाई ॥ ५ ॥
बन्दिछोर बिरदावली, निगमागम गाई ।
नीको तुलसीदास को, तेरियै निकाई ॥ ६ ॥ ३५ ॥

तकिया सहारा । नाकहि आये=नाकोदम होने से । निरारी=अनोखी । तके=देखकर । सगाई=नाता ।

राग-गौरी।

मङ्गल-मूरति मारुत-नन्दन। सकल अमङ्गल-मूल-निकन्दन॥ १॥
पवन-तनय सन्तन्ह हितकारी। हृदय बिराजत अवध-बिहारी।
मातु पिता गुरु गनपति सारद। सिवा समेत सम्भु सुक नारद॥२॥
चरन बन्दि बिनवउँ सब काहू। देहु राम-पद नेहु निबाहू॥
बन्दउँ राम लखन बैदेही। जे तुलसी के परम सनेही॥ ३॥३६॥

लाड़िले लखनलाल हित हौ जन के।
सुमिरे सङ्कट हारि सकल मङ्गलकारि, पालक कृपाल आपने के पन के॥ १॥
धरनी धरनहार भञ्जन भुवन भार, अवतार साहसी सहस फन के। सत्यसन्ध सत्यब्रत परम-धरम-रत, निर्मल करम बचन अरु मन के॥२॥
रूप के निधान धनु-बान-पानि तून कटि, महाबीर बिदित जितैया बड़े रन के। सेवक सुखदायक सबल सब लायक, गायक जानकीनाथ गुन गन के॥ ३॥
भावते भरत के सुमित्रा सीता के दुलारे, चातक चतुर राम स्याम घन के। बल्लभ उर्मिला के सुलभ सनेह बस, धनी-धन तुलसी से निरधन के॥ ४॥३७॥

राग-धनाश्री।

लक्ष्मनानन्त भगवन्त धर भुजगराज भुवनेस भू-भार हारी। प्रलय पावक महाज्वालमाला बमन, समन सन्ताप लीलावतारी॥ १॥
दासरथि समर समरथ सुमित्रा-सुवन, सत्रुसूदन-भरत-राम बन्धो। चारु चम्पक बरन बसन भूषन धरन, दिव्यतर भव्य लावन्यसिन्धो॥२॥
जयति गाधेय गौतम-जनक सुख-जनक, बिस्व कंटक कुटिल कोटि हन्ता। बचन चय चातुरी परसु-धरगर्ब-हर, सर्बदा रामभद्रानुगन्ता॥३॥

सिवा=पार्वती। तून=तरकस। गायक=गानेवाले। जनक=विदेहराज, उत्पन्न कर्ता।

जयति सीतेस सेवा सरस बिषय-रस,-निरस निरुपाधि धुर-धर्म-धारी।
बिपुल-बल मूल सार्दूल बिक्रम जलदनाद मर्दन महाबीर भारी ॥ ४ ॥
जयति संग्राम-सागर-भयङ्कर तरन, राम हित करन बर बाहु सेतू ॥
उर्मिला-रवन कल्यान-मङ्गल-भवन, दासतुलसी दोष दवन हेतू ॥५॥३८॥

भूमिजा-रमन-पद-कञ्ज मकरन्द रस, रसिक-मधुकर भरत भूरि भागी।
भुवन-भूषन भानुबंस-भूषन भूमिपाल-मनि रामचन्द्रानुरागी ॥ १ ॥
जयति बिबुधेस-धनदादि दुर्लभ महा,-राज सम्राज सुख-पद-बिरागी ।
खड्गधारा ब्रती प्रथम रेखा प्रगट, सुद्ध मति-जुबति पति-प्रेम-पागी ॥२॥
जयति निरुपधि भक्ति-भाव जन्त्रित हृदय, बन्धु हित चित्रकूटाद्रिचारी । पादुका नृप सचिव पुहुमि पालक परम, धीर गम्भीर बर बीर भारी ॥ ३ ॥
जयति सञ्जीवनी समय सङ्कट हनूमान धनु-बान महिमा बखानी । बाहु-बल बिपुल परमित पराक्रम अतुल गूढ़ गति जानकी-जान जानी ॥४॥
जयति रन-अजिर गन्धर्ब-गन गर्ब-हर, फेरि किय राम-गुन-गाथ गाता । मांडवी चित्त चातक नवाम्बुद बरन, सरन तुलसीदास अभय-दाता ॥ ५ ॥ ३९ ॥

जयति जय सत्रु-करि केसरी सत्रुहन, सत्रु-तम-तुहिन-हर किरन केतू ।
देव महिदेव महि धेनु सेवक सुजन, सिद्ध मुनि सकल कल्यान-हेतू ॥१॥
जयति सर्बाङ्ग सुन्दर सुमित्रा-सुवन, भुवन बिख्यात भरतानुगामी ।
बर्म चर्मासि धनु बान तूनीर धर, सत्रु-सङ्कट समन यत्प्रनामी ॥ २ ॥
जयति लवनाम्बुनिधि कुम्भ-सम्भव महा,-दनुज दुर्जन दवन दुरित-हारी ।
लछमनानुज भरत-राम-सीता चरन,-रेनु भूषित भाल तिलक-धारी ॥३॥
जयति स्रुतिकीर्ति-बल्लभ सुदुर्लभ, सुलभ, नमत नर्मद भक्त भक्ति दाता ।
दासतुलसी चरन-सरन सीदत बिभो, पाहि दीनार्त्त सन्ताप-हाता ॥४॥४०॥

गाधेय=विश्वामित्र । सादूल=सिंह । दवन=नाश । खड्गधाराव्रती=तलवार की धार पर चलना । पादुका=खड़ाऊँ । पुहुमि=पृथ्वी । रनअजिर=संग्रामभूमि । करि=हाथी । केसरी=सिंह । तुहिन=पाला । तूनीर=तरकस । नर्मद=कल्याण दाता ।

राग-केदारा

कबहुँक अम्ब अवसर पाइ।
मेरियो सुधि द्याइबी कछु, करुन कथा चलाइ ॥ १ ॥
दीन सब अँग-हीन छीन, मलीन अघी अघाइ।
नाम लेइ भरै उदर एक प्रभु,-दासी दास कहाइ ॥ २ ॥
बूझिहैं सो कौन कहिबी, नाम दसा जनाइ।
सुनत राम कृपाल के मम, बिगरियो बनि जाइ ॥ ३ ॥
जानकी जग-जननि जन की, किये बचन सहाइ।
तरइ तुलसीदास भव तव, नाथ गुन-गन गाइ ॥ ४ ॥ ४१ ॥
कबहुँ समय सुधि द्याइबी, मेरि मातु जानकी।
जन कहाइ नाम लेत हौँ किये पन, चातक ज्यौँ प्यास प्रेमपान की ॥१॥
सरल प्रकृति आपु जानिये, करुनानिधान की।
निज-गुन अरिकृत-अनहितउ दास-दोष, सुरति चित रहति न दिये दान की ॥ २ ॥
बानि बिसारन सील है, मानद अमान की।
तुलसिदास न बिसरिये मन क्रम बचन, जा के सपनेहुँ गति न आन की ॥ ३ ॥ ४२ ॥

राग-धनाश्री

जयति जय सच्चिदानन्द व्यापक ब्रह्म, विग्रह व्यक्त लीलावतारी।
विकल ब्रह्मादि सुर सिद्ध सङ्कोच-बस, बिमल गुन गेह नर देह धारी ॥१॥
कोसलाधीस कल्यान-कोसलसुता, कुसल कैवल्य फल चारु चारी। वेद-बोधित कर्म-धर्म-धरनी-धेनु, विप्र-सेवक-साधु मोदकारी ॥ २ ॥
जयति रिखि-मख-पाल समन सज्जन साल, साप बस

कैवल्यफल = मोक्ष। साल = पीड़ा।

मुनिबधू पाप-हारी। भञ्जि भव-चाप दलि दाप भूपावली, सहित भृगुनाथ नतमाथभारी ॥ ३ ॥

धार्मिक धीर धुर बीर रघुबीर गुरु,-मातु-पितु-बन्धु बचनानुसारी। चित्रकूटाद्रि बिन्ध्याध्याद्रि दंडक-बिपिन, धन्यकृत पुन्य कानन-बिहारी ॥ ४ ॥

जयति पाकारिसुत काक करतूति फल,-दानि खनि गर्त गोपित बिराधा। दिब्य देवी बेष देखि लखि निसिचरी, जनु बिडम्बित करी बिस्व-बाधा ॥ ५ ॥

जयति खर त्रिसिर दूषन चतुर्दस सहस,-सुभट मारीच संहार कर्त्ता। गिद्ध सबरी भक्ति-बिबस करुनासिन्धु, चरित निरुपाधि त्रिबिधार्त्ति हर्त्ता ॥ ६ ॥

जयति मद अन्ध कुकबन्ध-बधि बालि बल,-सालि बध करन सुग्रीव राजा। सुभट मर्कट भालु कटक सङ्घट सजत, नमत पद रावनानुज निवाजा ॥ ७ ॥

जयति पाथोधि कृत सेतु कौतुक हेतु, काल मन अगम लइ ललकि लङ्का। सकुल सानुज सदल दलित दसकंठ रन, लोक लोकप किये रहित सङ्का ॥ ८ ॥

जयति सौमित्रि सीता सचिव सहित चलि, पुष्पकारूढ़ निज राजधानी। दासतुलसी मुदित अवधबासी सकल, राम भे भूप बैदेहि रानी ॥९॥४३॥

राज राजेन्द्र राजीव लोचन राम, नाम कलि कामतरु स्याम साली। अनय अम्भोधि कुम्भज निसाचर निकर, तिमिर घनघोर खर किरनमाली ॥ १ ॥

जयति मुनिदेव नरदेव दसरथ्थ के, देव मुनि बन्द्य किय अवधबासी। लोक नायक कोक सोक सङ्कट समन, भानुकुल कमलकानन बिकासी ॥२॥

दाप=गर्व, दम्भ। पाकारिसुत=जयन्त। गर्त=गड़हा। बिडम्बित=अपमानित। निरुपाधि=उपद्रव रहित। पाथोधि=समुद्र। ललकि=उत्साह के साथ। साली=युक्त। अनय=अन्याय। खर=तीक्ष्ण।

जयति सिङ्गार रस तामरस-दाम-द्युति,-देह गुन गेह बिस्वोपकारी। सकल सौभाग्य सौन्दर्य सुखमारूप, मनोभव कोटि गर्बापहारी ॥ ३ ॥
सुभग सारङ्ग सुनिखङ्ग सायक सक्ति, चारु चर्मासि वर वर्मधारी। धर्म धुर धार रघुबीर भुजबल अतुल, हेलया दलित भू भार भारी ॥ ४ ॥
जयति कलधौत मनि मुकुट कुंडल स्रवन, तिलक भल भाल बिधु-बदन सोभा। दिव्य भूषन बसन पीत उपबीत किय, ध्यान कल्यान भाजन न को भा ॥ ५ ॥
भरत सौमित्रि सत्रुघ्न सेवित सुमुख, सचिव सेवक सुखद सर्बदाता। अधम आरत दीन पतित पातक पीन, सकृत नतमात्र कहि पाहि पाता ॥ ६ ॥
जयति जय भुवन दस चारि जस जगमगत, पुन्यमय धन्य जय राम राजा। चरित सुरसरित कबि-मुख्य-गिरि-निःसरित, पिवत मज्जत मुदित सतसमाजा ॥ ७ ॥
जयति बरनास्रमाचार पर नारि नर, सत्य सम दम दया-दान-सीला। बिगत दुख दोष सन्तोष सुख सर्बदा, सुनत गावत राम-राज-लीला ॥८॥
जयति बैराग्य बिज्ञान बारान्निधे, नमत नर्मद पाप-ताप हर्त्ता। दासतुलसी चरन सरन संसय हरन, देहि अवलम्ब बैदेहि भर्त्ता ॥९॥४४॥

राग-गौरी।

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरन भव भय दारुनं। नव कञ्ज लोचन कञ्ज-मुख कर,-कञ्ज पद कञ्जारुनं ॥ १ ॥
कन्दर्प अगनित अमित छबि, नव नील नीरज सुन्दरं। पट पीत मानहुँ तड़ित रुचि सुचि, नौमि जनक-सुता बरं ॥ २ ॥
भजु दीनबन्धु दिनेस दानव दैत्य बंस निकन्दनं। रघुनन्द आनद कन्द कोसल,-चन्द दसरथ नन्दनं ॥ ३ ॥

तामरस = कमल। दाम = माला। हेलया = खेल ही में। कलधौत = सुवर्ण। सकृत = एक बार। कन्दर्प = कामदेव। कविमुख्य = वाल्मीक मुनि।

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु, उदार अङ्ग बिभूषनं। आजानु भुज सर चाप धर, संग्रामजित खर दूषनं ॥ ४ ॥
इति बदत तुलसीदास सङ्कर, सेष मुनि मन रञ्जनं। मम हृदय कञ्ज निवास करि, कामादि खल दल गञ्जनं ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग-रामकली।

राम जपु राम जपु राम जपु राम जपु, राम जपु मूढ़ मन बार बारं। सकल सौभाग्य सुख-खानि जिय जानि सठ, मानि बिस्वास बद बेद-सारं ॥ १ ॥
कोसला इन्द्र नव नील कञ्जाभ तनु, मदनरिपु कञ्ज-हृदि चञ्चरीकं। जानकीरवन सुखभवन भुवनैक-प्रभु, नम भज स्मर परम कारुनीकं ॥२॥
दनुज-बन-धूमध्वज पीन आजानुभुज,-दंड कोदंड बर चंड बानं। अरुन कर चरन मुख नयन-राजीव गुन,-अयन बहु मयन सोभा-निधानं ॥ ३ ॥
बासनावृन्द-कैरव-दिवाकर काम,-क्रोध-मद-कञ्ज-काननतुषारं। लोभ अति मत्त नागेन्द्र पञ्चाननं, बिप्र हित हरन संसार भारं ॥ ४ ॥
केसवं क्लेसहं केस बन्दित पद-द्वन्द्व मन्दाकिनी मूल-भूतं। सर्वदानन्द सन्दोह मोहापहं, घोर संसार पाथोधि पोतं ॥ ५ ॥
सोक-सन्देह पाथोद-पटलानिलं, पाप पर्वत कठिन कुलिस रूपं। सन्तजन कामधुकधेनु बिस्राम-प्रद, नाम कलि कलुष भञ्जन अनूपं ॥६॥
धर्म-कल्पमद्रुमं नाम हरिधाम पथ,-सम्बलं मूलमिदमेवमेकं। भक्ति बैराग्य बिज्ञान सम दान दम, नाम आधीन साधन अनेकं ॥ ७ ॥
तेन तप्तं हुतं दत्तमेवाखिलं, तेन सर्वं कृतं कर्म-जालं। येन श्रीराम-नामामृतं पानकृत,-मनिसमनवद्यमवलोक्य कालं ॥ ८ ॥
स्वपच खल भिल्ल जमनादि हरिलोक गत, नाम बल बिपुल मति

नम = नमस्कार कर। भज = सेवा कर। स्मर = स्मरण कर। पीन = पुष्ट, मोटा। तुषार = पाला। केस = शिव। सन्दोह = समूह। अनिल = पवन।

मलिन परसी। त्यागि सब आस संत्रास भव-पास असि,-निसित हरिनाम जपु दासतुलसी ॥ ९ ॥ ४६ ॥

ऐसी आरती राम की करहिं मन। हरन दुख द्वन्द गोबिन्द आनन्द घन ॥ १ ॥

अचर चर रूप हरि सर्बगत सर्बदा, बसत इति बासना धूप दीजै। दीप निज बोध गत क्रोध मद मोह तम, प्रौढ़ अभिमान चितबृत्ति छीजै ॥ २ ॥

भाव अतिसय बिसद प्रबर नैबेद्य सुभ, स्रीरमन परम सन्तोषकारी। प्रेम ताम्बूल गत सूल संसय सकल, बिपुल भवबासना-बीज हारी ॥३॥

असुभ-सुभ कर्म घृत-पूर्न दसबर्तिका, त्याग-पावक सतोगुनप्रकासं। भक्ति बैराग्य बिज्ञान दीपावली, अर्पि नीराजनं जगनिवासं ॥ ४ ॥ बिमल हृदि भवन कृत सान्ति परजङ्क सुभ, सयन बिस्राम स्रीराम राया। छमा करुना प्रमुख तत्र परिचारिका, यत्र हरि तत्र नहिं भेद-माया ॥ ५ ॥

आरती निरत सनकादि स्रुति सेष सिव, देवरिषि अखिल मुनि तत्व-दरसी। जो करइ सो तरइ परिहरइ काम सब, बदत इति अमल मति दासतुलसी ॥ ६ ॥ ४७ ॥

हरति आरति सकल आरती राम की।
दहनि दुख दोष निर्मूलनी काम की ॥ १ ॥
सुभग सौरभ धूप दीप बर मालिका।
उड़त अघबिहँग सुनि ताल करतालिका ॥२॥

सम्बल=खर्च। हुत=अग्नि। निसित=तीक्ष्ण, चोखी। दसवर्तिका=दसबत्ती, दशों इन्द्रियाँ। नीराजन=आरती, दीपदान। परिचारिका=दासी। सौरभ=सुगन्ध।

भगत हृदि भवन अज्ञान-तम हारिनी।
बिमल विज्ञानमय तेज बिस्तारिनी ॥ ३ ॥
मोह मद कोह कलि कञ्ज हिमजामिनी।
मुक्ति की दूतिका देह दुति दामिनी ॥ ४ ॥
प्रनतजन कुमुद बन इन्दुकर-जालिका।
तुलसि अभिमान महिषेस बहु कालिका ॥ ५ ॥ ४८ ॥

राग-धनाश्री।

दनुज बन दहन गुन गहन गोबिन्द नन्दादि आनन्ददाताबिनासी।
सम्भु सिव रुद्र सङ्कर भयङ्कर भीम, घोर तेजायतन क्रोध-रासी ॥ १ ॥
नान्त भगवन्त जगदन्त अन्तक त्रास, समन श्रीरमन भुवनाभिरामं। भूधराधीस जगदीस ईसान बिज्ञान घन ज्ञान कल्यान-धामं ॥ २ ॥
बामनाव्यक्त पावन परावर बिभो, प्रकट परमातमा प्रकृति स्वामी।
चन्द्रसेखर सूलपानि हर अनघ अज, अमित अवछिन्न बृषभेसगामी ॥३॥
नील जलदाभ तनु स्याम बहु काम छबि, राम राजीवलोचन कृपालं। कम्बुकर्पूर बपु धवल निर्मल मौलि,-जटा सुरतटिनि सित सुमन मालं ॥ ४ ॥
बसन किञ्जल्क धर चक्र सारङ्ग दर, कञ्ज कौमोदकी अति-बिसालं।
मार करि मत्त मृगराज त्रय नयन हर, नौमि अपहरन संसार-ज्वालं ॥५॥
कृष्न करुनाभवन दवन कालीय खल, बिपुल कंसादि निबंसकारी।
त्रिपुर मद भङ्ग कर मत्तगज-चर्म-धर, अन्धकोरग ग्रसन पन्नगारी ॥६॥

इन्दु=चन्द्रमा। कर—किरण। आलिका=समूह। अन्तक=यम, काल। परावर=चराचर। अवछिन्न=सब से अलग। सुरतटिनि=गंगा। सित=श्वेत। किञ्जल्क=कमल की केसर। दर=शंख। कौमोदकी=गदा। अन्धकोरग=अन्धक दैत्य रूपी सर्प।

ब्रह्म व्यापक अकल सकल पर परम हित, ज्ञान गोतीत गुन-वृत्ति हर्त्ता । सिन्धुसुत गर्व गिरि वज्र गौरीस भव, दच्छ मख अखिल बिध्वन्स-कर्त्ता ॥ ७ ॥

भक्तिप्रिय भक्तजन कामधुकधेनु हरि, हरन दुर्घट बिकट बिपति हारी । सुखद नर्मद बरद बिरज अनबद्यखिल, बिपिन आनन्द बीथिन्ह बिहारी ॥ ८ ॥

रुचिर हरिसङ्करी नाम मन्त्रावली, द्वन्ददुख हरनि आनन्द खानी । बिष्नु-सिव लोक सोपान सम सर्बदा, बदत तुलसीदास बिसद बानी ॥९॥४९॥

भानुकुल-कमल रबि कोटि कन्दर्प छबि, कालकलि व्यालमिव बैनतेयं । प्रबल भुजदंड परचंड कोदंड धर, तून बर बिसिख बलमप्रमेयं ॥ १ ॥

अरुन राजीव दल नयन सुखमा-अयन, स्यामतनु कान्ति बर बारिदाभं । तप्त काञ्चन बस्त्रसस्त्र बिद्या निपुन, सिद्ध सुर सेव्य पाथोजनाभं ॥ २ ॥

अखिल लावन्य-गृह बिस्व-बिग्रह परम, प्रौढ़ गुन गूढ़ महिमा-उदारं । दुर्द्धर्ष दुस्तरं स्वर्ग-अपबर्ग-पति भग्न संसार-पादप-कुठारं ॥ ३ ॥

सापबस मुनिबधू मुक्तकृत बिप्र हित, जज्ञ-रच्छन-दच्छ पच्छ-कर्त्ता जनक नृप सदसि सिव-चाप भञ्जन, उग्र भार्गव गर्व गरिमापहर्त्ता ॥४॥

गुरु गिरा गौरवं अमर दुस्त्यज राज्य, त्यक्त करि सहित सौमित्रि भ्राता । सङ्ग जनकात्मजा मनुजमनुसृत्य अज, दुष्ट बध निरत त्रैलोक्य त्राता ॥ ५ ॥

दंडकारन्य कृत पुन्य पावन चरन, हरन मारीच माया कुरङ्गं । बालि बल मत्त गजराज इव केसरी, सुहृद सुग्रीव दुख रासि भङ्गं ॥६॥

सिन्धुसुत=जलन्धर । बिरज=निर्मल । बैनतेय=गरुड़ । भग्न=टूटा हुआ । सदसि=सभा । भार्गव=परशुराम । अनुसृत्य=अनुसार ।

रिच्छ मर्कट बिकट सुभट उद्भट समर, सैल सङ्कास रिपु त्रासकारी।
बद्ध पाथोधि सुर निकर मोचन सकुल,-दलन दससीस भुज बीस भारी॥७॥
दुष्ट बिबुधारि सङ्घात अपहरन महि, भार अवतार कारन अनूपं।
अमल अनवद्य अद्वैत निर्गुन सगुन, ब्रह्म सुमिरामि नर-भूप रूपं॥८॥
सेष स्रुति सारदा सम्भु नारद सनक, गनत गुन अन्त नहिं तव चरित्रं। राम कामारि-प्रिय अवधपति सर्बदा, दासतुलसी त्रास-निधि बहित्रं॥ ९ ॥५०॥

जानकीनाथ रघुनाथ रागादि तम, तरनि तारुन्य तनु तेज धामं।
सच्चिदानन्द आनन्दकन्दाकरं, बिस्व बिस्राम रामाभिरामं॥१॥
नील नव बारिधर सुभग सुभ कान्तिकर, पीत कौसेय बर बसन धारी।
रत्न हाटक जटित मुकुट मंडित मौलि, भानु सतकोटि उद्योतकारी॥२॥
स्रवन कुंडल भाल तिलक भ्रू रुचिर अति, अरुन अम्भोज लोचन बिसालं। वक्त्र अवलोकि त्रैलोक्य सोकापहं, मार अरि हृदय-मानस मरालं॥ ३ ॥

नासिका चारु सुकपोल द्विज बज्र दुति, अधर बिम्बोपमा मधुर हासं। कंठ दर चिबुक बर बचन गम्भीर तर, सत्यसङ्कल्प सुर त्रास नासं॥ ४ ॥

सुमन सुबिचित्र नव तुलसिकादल जुतं, मृदुल बनमाल उर भ्राजमानं।
भ्रमत आमोद बस मत्तमधुकर निकर, मधुर तर मुखर कुर्बन्ति गानं॥ ५ ॥

सुभग स्रीबत्स केयूर कङ्कन हार, किङ्किनी रटनि कटि तट रसालं।
बाम दिसि जनकजासीन सिंहासनं, कनक मृदु बल्लिमिव तरु तमालं॥६॥
बृहद भुजदंड कोदंड मंडित बाम,-बाहु दच्छिन पानि बानमेकं।

उद्भट=प्रबल। सङ्कास=समान। सङ्घात=समूह। अनवद्य=निर्दोष। बहित्र=जहाज़। कौसेय=रेशमीवस्त्र। हाटक=सुवर्ण। उद्योतकारी=प्रकाश करनेवाले। अम्भोज=कमल। वक्त्र=मुख। बिम्बोपमा=कुन्दुरू के समान। मुखर=बोल। श्रीवत्स=विष्णु। केयूर=बिजायठ। कंकन=हरकौआ। किंकिनी=करधनी। रसाल=सुन्दर।

अखिल मुनि निकर सुर सिद्ध गन्धर्ब बर, नमत नर नाग अव-निप अनेकं ॥ ७ ॥

अनघ अवछिन्न सर्बज्ञ सर्बेस खलु, सर्वतोभद्र दातासमाकं। प्रनतजन खेद बिच्छेद बिद्या निपुन, नौमि श्रीराम सौमित्रि साकं ॥ ८ ॥

जुगल-पद-पद्म सुखसद्म पद्मालयं, चिह्न कुलिसादि सोभाति भारी। बिमल हनुमन्त हृदि परम मन्दिर सदा, दासतुलसी सरन सोकहारी ॥ ९ ॥ ५१ ॥

कोसलाधीस जगदीस जगदेक-हित, अमित गुन बिपुल बिस्तार लीला। गायन्ति तव चरित सुपबित्र स्रुति सेष, सम्भु सुक सनकादि मुनि मननसीला ॥ १ ॥

बारिचर बपुष धर भक्त निस्तार पर, धरनि कृत नाव महिमाति गुर्बी। सकल जज्ञांस मय उग्र बिग्रह क्रोड़, मर्दि दनुजेस उद्धरन उर्बी ॥ २ ॥

कमठ अति बिकट तनु कठिन पृष्ठोपरी, भ्रमत मन्दर कंडु सुख मुरारी। प्रगट कृत अमृत गो इन्दिरा इन्दु बृन्दारकावृन्द आनन्दकारी ॥ ३ ॥

मनुज मुनि सिद्ध सुर नाग त्रासक दुष्ट,-दनुज द्विजधर्ममरजाद-हर्त्ता। अतुल मृगराज बपु धरित बिद्दरित अरि, भक्त प्रहलाद अहलाद-कर्त्ता ॥ ४ ॥

छलन बलि कपट बपु रूप बामन ब्रह्म, भुवन परजन्त पद तीनि करनं। चरन नख नीर त्रैलोक्य पावन परम, बिबुध-जननी दुसह सोक हरनं ॥ ५ ॥

छत्रियाधीस करि निकर बर केसरी, परसुधर बिप्र ससि जलद रूपं। बीस भुजदंड दससीस खंडन चंड,-बेग सायक नौमि राम भूपं ॥ ६ ॥

अवनिप=राजा। सर्वतोभद्र=यज्ञ के प्रधान देव। सद्म=स्थान। वारिचर=मीन। गुर्वी=श्रेष्ठतर। क्रोड़=शूकर। उर्वी=धरती। कंडु=खाज। विबुधजननी=अदिति। ससि=खेती।

भूमि भर भार हर प्रगट परमातमा, ब्रह्म नर रूप धर भक्त हेतू।
वृष्णिकुल कुमुद राकेस राधारमन, कंस बंसाटवी धूमकेतू ॥ ७ ॥
प्रबल पाखंड महिमंडलाकुल देखि, निन्द्यकृत अखिल मख कर्म-जालं।
सुद्ध बोधैक घन ज्ञान गुन धाम अज, बुद्ध अवतार बन्दे कृपालं ॥८॥
कालकलि जनित मन मलिन मन सर्ब नर, मोह निसि निबिड़ जमनान्धकारं। बिष्नुजस पुत्र कल्की दिवाकर उदित, दासतुलसी हरन बिपति भारं ॥ ९ ॥ ५३ ॥

सर्व सौभाग्य-प्रद सर्वतोभद्रनिधि, सर्व सर्वेस सर्बाभिरामं। सर्ब हृदि कञ्ज मकरन्द मधुकर रुचिर, रूप भूपालमनि नौमि रामं ॥ १ ॥
सर्ब सुखधाम गुनग्राम बिस्रामप्रद, नाम सर्बास्पदमति पुनीतं।
निर्मलं सान्त सुबिसुद्ध बोधायतन, क्रोध मद हरन करुना निकेतं ॥२॥
अजित निरुपाधि गोतीतमव्यक्त बिभु, मेकमनवद्यमजमद्वितीयं।
प्राकृतं प्रगट परमातमा परम हित, प्रेरकानन्त बन्दे तुरीयं ॥ ३ ॥
भूधरं सुन्दरं श्रीवरं मदन-मद-मथन सौन्दर्य सीमातिरम्यं। दुःप्राप्य दुःप्रेक्ष्य दुस्तर्क्य दुःपार, संसार हर सुछम भाव गम्यं ॥ ४ ॥
सत्यकृत सत्यरत सत्यब्रत सर्बदा, पुष्ट सन्तुष्ट सङ्कष्टहारी।
धर्म वर्मनि ब्रह्मकर्मबोधैकद्विज, पूज्य ब्रह्मन्य जन प्रिय मुरारी ॥५॥
नित्य निर्मम नित्यमुक्त निर्मान हरि, ज्ञानघन सच्चिदानन्दमूलं। सर्ब रच्छक सर्ब भच्छकाध्यक्ष कूटस्थ गूढ़ार्चि भक्तानुकूलं ॥ ६ ॥
सिद्ध साधकं साध्य बाच्य बाचक रूप, मन्त्र जापक जाप्य सृष्टि स्रष्टा। परम कारन कञ्जनाभ जलदाभ तनु, सगुन निर्गुन सकल दृस्य द्रष्टा ॥ ७ ॥

वृष्निकुल=यदुवंश। वंसाटवी=बाँस का जंगल। धूमकेतु=अग्नि। सर्व=शिव। सर्बास्पद=सारी प्रतिष्ठा का देनेवाला। अव्यक्त=अप्रत्यक्ष। तुरीय=ब्रह्म। सुछम=समर्थ। नित्यमुक्त=सदा बन्धन से रहित। निर्मान=निरभिमान। कूटस्थ=सर्वोपरि। गूढ़ार्चि=बड़ी कठिन उपासना। स्रष्टा=ब्रह्मा। द्रष्टा=देखनेवाला।

ब्योम ब्यापक बिरज ब्रह्म बरदेस बैकुंठ बामन बिमल ब्रह्मचारी।
सिद्ध बृन्दारकावृन्द बन्दित सदा, खंडि पाखंड निर्मूलकारी ॥८॥

पूरनानन्द सन्दोह अपहरन सम्मोह अज्ञान गुन सन्निपातं। बचन मन कर्म गत सरन तुलसीदास, त्रास पाथोधि इव कुम्भजातं ॥९॥५३॥

बिस्व बिख्यात बिस्वेस बिस्वायतन, बिस्व-मरजाद ब्यालारिगामी। ब्रह्म बरदेस बागीस ब्यापक बिमल, बिपुल बळवान निर्बान-स्वामी ॥ १ ॥

प्रकृति महतत्व सब्दादि गुन देवता, ब्योम मरुदग्नि अमलाम्बु उर्बी। बुद्धि मन इन्द्रिय प्रान चित्तातमा, काल परमानु चिच्छक्ति गुर्बी ॥ २ ॥

सर्बमेवात्र त्वद्रूप भूपालमनि ब्यक्त अब्यक्त गतभेद बिष्नो। भुवन भवदङ्ग कामारि बंदित पद,-द्वन्द मन्दाकिनी-जनक जिष्नो ॥ ३ ॥
आदि मध्यान्त भगवन्त त्वं सर्बगत,-मीस पस्यन्ति जे ब्रह्मबादी। जथा पटतन्तु घट-मृत्तिका सर्प-स्रग, दारु-करि कनक कटकाङ्गदादी ॥ ४ ॥

गूढ़ गम्भीर गर्बघ्न गूढ़ार्थवित, गुप्त गोतीत गुरु ज्ञान ज्ञाता। ज्ञेय ज्ञान प्रिय प्रचुर गरिमागार, घोर संसार पर पार दाता ॥ ५ ॥
सत्यसङ्कल्प अतिकल्प कल्पान्त कृत, कल्पनातीत अहितल्प बासी। बनज लोचन बनजनाभ बनदाभ बपु, बनचरध्वज कोटि-रूपरासी ॥ ६ ॥
सुकर दु:कर दुराराध्य दुर्ब्यसन हर, दुर्ग दुर्द्धर्ष दुर्गार्त्तिहर्त्ता। बेदगर्भार्भकादभ्र गुन गर्ब अर्बाग पर गर्ब निर्बापकर्त्ता ॥ ७ ॥

बरदेस=बरदायकों के स्वामी। भवदङ्ग=आप का अंग। जिष्नो=विजयी। पटतन्तु=वस्त्र और सूत। स्रग=माला। कटकाङ्गदादी=कंकण विजायठ आदि। अतिकल्प=महाकल्प। अहितल्प=शेष की शय्या। सुकर=सुन्दर कर्त्ता। दुःकर=दुःसाध्य। दुराराध्य=कठिनाई से आराधन करने योग्य। दुर्ग=कठिन। वेदगर्भार्भकादभ्र=ब्रह्मा के पुत्र समूह। अर्बाग=पीछे। पर=श्रेष्ठ। निर्बापकर्त्ता=दूर करनेवाला।

भक्त अनुकूल भव सूल निर्मूल कर, तूल अघ नाम पावक समानं।
तरल तृष्णा तमी तरनि धरनी धरन, सरन भय हरन करुनानिधानं ॥८॥

बहुल बन्दारु वृन्दारकावृन्द पद,- द्वन्द मन्दार मालोरधारी। पाहि
मामीस सन्ताप-सङ्कुल-सदा, दासतुलसी प्रनत रावनारी ॥ ९ ॥ ५४ ॥

सन्त सन्ताप हर बिस्व बिस्राम कर, राम कामारि अभिरामकारी
सुद्ध बोधायतन सच्चिदानन्द घन सज्जनानन्दवर्द्धन खरारी ॥१॥
सील-समता-भवन बिषमतामति समन, राम-सीतारमन रावनारी।
खड्ग कर चर्म वर वर्म धर रुचिर कटि, तून सर सक्ति सारङ्गधारी ॥२॥
सत्यसन्धान निर्बान-प्रद सर्ब हित, सर्ब गुन-ज्ञान-बिज्ञान-साली। सघन
तम घोर संसार भर सर्बरी, नाम दिवसेस खर किरनमाली ॥ ३ ॥
तपन तीच्छन तरुन तीव्र तापघ्न तप,-रूप तनु भूप तम पर तपस्वी।
मान मद मदन मत्सर मनोरथ मथन, मोह-अम्भोधि-मन्दर मनस्वी ॥४॥
बेद बिख्यात बरदेस बामन बिरज, बिमल बागीस बैकुंठ स्वामी।
काम क्रोधादि मर्दन बिबर्धन छमा, सान्त-बिग्रह बिहगराज-गामी ॥५॥
परम पावन पाप पुञ्ज मुञ्जाटवी, अनल इव निमिष निर्मूल कर्त्ता।
भुवन भूषन दूषनारि भुवनेस भू-नाथ स्रुतिमाथ जय भुवन-भर्त्ता ॥६॥
अमल अबिचल अकल सकल सन्तप्त कलि,-बिकलता भञ्जनानन्द
रासी। उरगनायक-सयन तरुन पङ्कज-नयन, छीरसागर-अयन
सर्ब बासी ॥ ७ ॥
सिद्ध कबि कोबिदानन्ददायक पद,-द्वन्द मन्दात्म मनुजैर्दुरापं। जत्र
सम्भूत अतिपूत जल सुरसरी, दरसनादेव अपहरति पापं ॥ ८ ॥

बहुल=अधिकांश। बन्दारु=वन्दना करने वाले। भर=पूर्ण। सर्बरी=रात्रि। मनस्वी=यशेरब्रह्मचारी। मुंजाटवी=सरपत का वन।

नित्य निर्मुक्त संयुक्त-गुन निर्गनानन्त भगवन्त न्यामक नियन्ता। बिस्व पोषन भरन बिस्व कारन करन, सरन तुलसीदास त्रास-हन्ता ॥९॥५५॥

दनुज-सूदन दयासिन्धु दम्भापहन, दहन दुर्दोष दर्पापहर्त्ता। दुष्टता दमन दम-भवन दुःखौघ हर, दुर्ग दुर्बासना नास-कर्त्ता ॥१॥
भूमि भूषन भानुमन्त भगवन्त भव,-भञ्जनाभयद भुवनेस भारी। भावनातीत भव-बन्घ भव-भक्त-हित, भूमि-उद्धरन भूधरन-धारी ॥२॥
बरद बनदाभ बागीस बिस्वातमा, बिरज बैकुंठ-मन्दिर बिहारी। व्यापक व्योम बन्द्याङ्घ्रि पावन बिभो, ब्रह्मबिद्ब्रह्मचिन्तोपहारी ॥३॥
सहज सुन्दर सुमुख सुमन सुभ सर्बदा, सुद्ध सर्बज्ञ स्वच्छन्दचारी। सर्बकृत सर्बभृत सर्बजित सर्बहित, सत्यसङ्कल्प कल्पान्तकारी ॥४॥
नित्य निर्मोह निर्गुन निरञ्जन निजानन्द निर्बान निर्बानदाता निर्भरानन्द निःकम्प निःसीम निर्मुक्त निरुपाधि निर्मम बिधाता ॥५॥
महामङ्गल-मूल मोद-महिमायतन, मुग्ध-मधु-मथन मानद अमानी। मदन-मर्दन मदातीत माया रहित, मञ्जु मा नाथ पाथोज पानी ॥६॥
कमल-लोचन कला-कोस कोदंड धर, कोसलाधीस कल्यान-रासी। जातुधान प्रचुर मत्तकरि केसरी, भक्त मन पुन्य-आरन्य बासी ॥७॥
अनघ अद्वैत अनवद्य अव्यक्त अज, अमित अबिकार आनन्द सिन्धो। अचल अनिकेत अबिरल अनामय अनारम्भ अम्भोदनादघ्न-बन्धो ॥ ८ ॥
दासतुलसी खेद-खिन्न आपन्न इह, सोक सम्पन्न अतिसय सभीतं। प्रनत पालक राम परम करुना धाम, पाहि मामुर्बिपति दुर्बिनीतं ॥९॥५६॥

न्यामक=नियम करने वाला। २ नियन्ता=व्यवस्था करने वाला। दुर्ग=कठिन। कला कोस=कौतुक निधान। अनामय=आरोग्य। अनारम्भ=अनुष्ठान रहित। अम्भोद। नादघ्न=लक्ष्मणजी का क्रिया वाचक नाम। आपन्न=आपद्ग्रस्त। सम्पन्न=युक्त।

देहि सतसङ्ग निजअङ्ग श्रीरङ्ग भव-भङ्ग-कारन सरन-सोक-हारी। जेतुभवदङ्घ्रि-पल्लव-समाश्रित सदा, भक्तिरत बिगत-संसय मुरारी ॥१॥
असुर सुर नाग नर जच्छ गन्धर्ब खग, रजनिचर सिद्ध जे चापि अन्ने। सन्त संसर्ग त्रयबर्गपर-परमपद, प्राप्य निःप्राप्य गति त्वयि प्रसन्ने ॥ २ ॥
बृत्त बलि बान प्रहलाद मय ब्याध गज, गिद्ध द्विजबन्धु निजधर्म त्यागी। साधु-पद-सलिल निर्धूत कल्मष सकल, स्वपच जवनादि कैवल्य-भागी ॥ ३ ॥
सान्त निरपेच्छ निर्मम निरामय अगुन, सब्द ब्रह्मैक पर ब्रह्मज्ञानी। दच्छ-समदृक स्वदृक बिगत अति स्व-पर-मति, परम रति बिरति तव चक्रपानी ॥ ४ ॥
बिस्व उपकार हित ब्यग्रचित सर्बदा, त्यक्त मद मन्यु कृत पुन्य-रासी। जत्र तिष्ठन्ति तत्रैव अज सर्ब हरि, सहित गच्छन्ति छीराब्धि-बासी ॥ ५ ॥
बेद-पयसिन्धु-सुबिचार मन्दर महा, अखिल मुनिबृन्द निर्मथन कर्त्ता। सार सतसङ्गमुद्धृत्य इति निस्चितं, बदत श्रीकृष्न बैदर्भि-भर्त्ता ॥६॥
सोक सन्देह भय हर्ष तम तर्ष गन, साधु सद जुक्ति बिच्छेद-कारी। जथा रघुनाथ सायक निसाचर चमू, निचय निर्दलन पटु बेग भारी ॥७॥
जत्र कुत्रापि मम जन्म निजकर्म-बस, भ्रमत जग जोनि सङ्कट अनेकं। तत्र त्वद्भक्ति सज्जन समागम सदा, भवतु मे राम बिस्राममेकं ॥८॥
प्रबल भव जनित त्रय ब्याधि भेषज भक्ति, भक्त भैषज्यमद्वैत-

समाश्रित=सब प्रकार आसरेवाला। त्रयबर्ग=अर्थ धर्म, काम। बृत्त=वृत्रासुर। बान=बाणासुर। द्विजबन्धु=अजामिल। निर्धूत=धुलगये। निरपेच्छ=निस्पृह। निर्मम=ममता रहित। समदृक=समता की दृष्टि में कुशल। स्वदृक=स्वयं की निगाह। मन्यु=क्रोध। तर्ष=तृष्णा। निचय=समूह। भेषज=औषधी।

दरसी। सन्त भगवन्त अन्तर निरन्तर नहीं,-किमपि मति-विमल कह दासतुलसी ॥९॥५७॥

देहि अवलम्ब कर-कमल कमलारमन, दमन-दुख समन सन्ताप भारी। ग्रसन अज्ञान निसिपति विधुन्तुद गर्व, काम करि मत्त हरि दूषनारी ॥१॥

वपुष ब्रह्मांड सुप्रवृत्ति लङ्का दुर्ग, रचित मन दनुज मय रूप धारी। विविध कोसौघ अति रुचिर मन्दिर निकर, सत्वगुन प्रमुख त्रय कटक-कारी ॥ २ ॥

कुनप अभिमान सागर भयङ्कर घोर, विपुल अवगाह दुस्तर अपारं। नक्र रागादि सङ्कुल मनोरथ सकल, सङ्ग सङ्कल्प बीची विकारं ॥३॥

मोह दसमौलि तद्भ्रात अहँकार पाकारिजित काम विस्रामहारी। लोभ-अतिकाय-मत्सर महोदर दुष्ट, क्रोध पापिष्ठ विबुधान्तकारी ॥४॥

द्वेष दुर्मुख दम्भ-खर अकम्पन-कपट, दर्प-मनुजाद मद सूलपानी। अमित बल परमदुर्जय निसाचर निकर, सहित षड्वर्ग गो जातुधानी ॥५॥

जीव भवदङ्घ्रि सेवक विभीषन बसत, मध्य दुष्टाटवी ग्रसित चिन्ता। नियम जम सकल सुरलोक लोकेस लङ्केस-वस नाथ अत्यन्त भीता ॥ ६ ॥

ज्ञान अवधेस गृह गेहिनी भक्ति सुभ, तत्र अवतार भू भार हर्ता। भक्त सङ्कष्ट अवलोक पितु वाक्य कृत, गमन किय गहन बैदेहि-भर्त्ता ॥ ७ ॥

मोच्छ साधन अखिल भालु मर्कट विपुल, ज्ञान सुग्रीव कृत जलधि सेतू। प्रबल बैराग्य दारुन प्रभञ्जन-तनय, विषय बन भवनमिव धूमकेतू ॥ ८ ॥

विधुन्तुद=राहु। वपुष=शरीर। कोसौघ=बड़ा खजाना। कुनप=राक्षस। नक्र=नाक, घड़ियाल। बीची=लहर। षड्वर्ग=काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर। गो=इन्द्रिय। गृहगेहिनी=गृह भार्या।

दुष्ट दनुजेस निर्बंस कृत दास हित, बिस्व दुख हरन बोधैकरासी। अनुज निज जानकी सहित हरि सर्बदा, दासतुलसी हृदय कमलबासी ॥ ९ ।५८॥

दीन उद्धरन रघुबर्ज करुना भवन, समन सन्ताप पापौघहारी। बिमल बिज्ञान बिग्रह अनुग्रह रूप, भूप बर बिबुध नर्मद खरारी ॥ १ ॥
संसार कान्तार घोर गम्भीर घन, गहन तरु कर्म सङ्कुल मुरारी। बासना बल्लि खर कंटकाकुल बिपुल, निबिड़ बिटपाटवी कठिन भारी ॥ २ ॥
बिबिध चितबृत्ति खग निकर सेनोलूक, काक बक गिद्ध आमिष अहारी। अखिल खल निपुन छल छिद्र निरखत सदा, जोव जन पथिक मन खेद-कारी ॥ ३ ॥
क्रोध करि मत्तमृगराज कन्दर्प मद,-दर्प वृक भालु अति उग्रकर्मा। महिष मत्सर क्रूर लोभ सूकरसूर, फेरु छल दम्भ मार्जारधर्मा ॥४॥
कपट मर्कट बिकट ब्याघ्र पाखडमुख, दुखद मृग ब्रात उत्पातकर्त्ता। हृदय अवलोकि यह सोक सरनागतं, पाहि मा पाहि भो बिस्व भर्त्ता ॥५॥
प्रबल अहँकार दुर्घट महीधर महा, मोह गिरि गुहा निबिड़ान्धकारं। चित्त बेताल मनुजाद मन प्रेतगन, रोग भोगैाघ वृश्चिक बिकारं ॥६॥
बिषय सुख लालसा दंस मसकादि खल, झिल्लि रूपादि सब सर्प स्वामी। तत्र आक्षिप्त तव विषम माया नाथ, अन्ध मैं मन्द ब्यालाद-गामी ॥ ७ ॥
घोर अवगाह भव आपगा पाप जल,-पूर दुष्प्रेक्ष्य दुस्तर अपारा। मकर षड़बर्ग गो नक्र चक्राकुला, कूल सुभ असुभ दुख तीव्र धारा ॥ ८ ॥

कान्तार=बन। बेलि=लता। सेनोलूक=बाज और उल्लू पक्षी। वृक=भेड़िया। फेरु=सियार। ब्रात=समूह। वृश्चिक=बिच्छू। आक्षिप्त=गिरा वा ढकेला हुआ। दुष्प्रेक्ष्य=दुर्दर्शन। चक्राकुला=कच्छपों से युक्त।

सकल सङ्कट पोच सोच बस सर्बदा, दासतुलसी बिषम गहन ग्रस्तं । त्राहि रघुबंस-भूषन कृपाकर कठिन,-काल बिकराल कलि त्रास त्रस्तं ॥ ९ ॥-५९ ॥

नौमि नारायनं, नरं करुनायनं ध्यान पारायनं ज्ञान मूलं । अखिल संसार उपकार-कारन सदय,-हृदय तप निरत प्रनतानुकूलं ॥ १ ॥

स्याम नव तामरस दाम दुति बपुष छबि, कोटि मदनार्क अगनित प्रकासं । तरुन रमनीय राजीव लोचन ललित, बदन राकेस कर निकर हासं ॥ २ ॥

सकल सौन्दर्यनिधि बिपुल गुन धाम बिधि,-बेद बुध सम्भु सेबित अमानं । अरुन पद कञ्ज मकरन्द मन्दाकिनी, मधुप मुनिबृन्द कुर्बन्ति पानं ॥ ३ ॥

सक्र प्रेरित घोर मार मद भङ्ग कृत, क्रोधगत बोधरत ब्रह्मचारी ।
मारकंडेय मुनिबर्ज हित कौतुकी, बिनहिं कल्पान्त प्रभु प्रलय-कारी ॥४॥

पुन्य बन सैल सरि बदरिकास्रम सदासीन पद्मासनं एकरूपं ।
सिद्ध जोगीन्द्र बृन्दारकानन्द प्रद, भद्रदायक दरस अतिअनूपं ॥५॥

मान मन भङ्ग चित भङ्ग मद क्रोध लोभादि पर्बत दुर्ग भुवन-भर्त्ता ।
द्वेष मत्सर राग प्रबल प्रत्यूह प्रति, भूरि निर्दय क्रूरकर्म कर्त्ता ॥ ६ ॥

बिकट तर बक्र छुरधार प्रमदा तीब्र, दर्प कन्दर्प बर खड्ग धारा ।
धीर गम्भीर मन पीरकारक तत्र, के बराका बयं बिगत सारा ॥७॥

परम दुर्घट पन्थ खल असङ्गत साथ, नाथ नहिं हाथ बर बिरति यष्टी । दर्सनारत दासत्रासित मायापास, त्राहि हरि त्राहि हरि जानि कष्टी ॥८॥

दासतुलसी दीन धर्म सम्बल हीन, स्रमित अति खेद मतिमोह ग्रासी।

मदनार्क=कामदेव और सूर्य्य । प्रत्यूह=विघ्न, बाधा । प्रमदा=स्त्री । बराका=तुच्छ, गरीब । वयं=हमलोग ।

देहि अवलम्ब न बिलम्ब अम्भोज-कर, चक्रधर तेज बल सर्म रासो ॥ ९ ॥६०॥

सकल सुखकन्द आनन्द बन पुन्यकृत, बिन्दुमाधव द्वन्द बिपति हारी। यस्याङ्घ्रि पाथोज अज सम्भु सनकादि, सेष मुनिबृन्द अलि निलयकारी ॥ १ ॥

अमल मरकत स्याम काम सतकोटि छबि, पीतपट तड़ित इव जलद-नीलं। अरुन सतपत्र लोचन बिलोकनि चारु, प्रनतजन सुखद करुनाद्रि सीलं ॥ २ ॥

काल गजराज मृगराज दनुजेस बन, दहन पावक मोहनिसि दिनेसं। चारि भुज चक्र-कौमोदकी-जलज-दर, सरसिजोपरि जथा राजहंसं ॥३॥

मुकुट कुंडल तिलक अलक अलि-व्रात इव, भृकुटि द्विज अधर बर चारु नासा। रुचिर सुकपोल दर ग्रीव सुख सींव हरि, इन्दुकर कुन्दमिव मधुर हासा ॥ ४ ॥

उरसि बनमाल सुबिसाल नव मञ्जरी, भ्राज श्रीवत्सलाञ्छनमुदारं। परम ब्रह्मन्य अतिधन्य गतमन्यु अज, अमित बल बिपुल महिमा अपारं ॥ ५ ॥

हार केयूर कर कनक कङ्कन रतन,-जटित मनि-मेखला कटि प्रदेसं। जुगल पद नूपुरा मुखर कल हंसवत, सुभग सर्वाङ्ग सौन्दर्य बेसं ॥ ६ ॥

सकल सौभाग्य सञ्जुक्त त्रैलोक्य श्री, दच्छ दिसि रुचिर बारीस कन्या। बसत बिबुधापगा निकट तट सदन बर, नयन निरखन्ति नर तेति धन्या ॥ ७ ॥

अखिल मङ्गल भवन निबिड़ संसय समन, दमन बृजिनाटवी कष्ट

द्वन्द = कलह। यस्याङ्घ्र = जिनके चरण। निलयकारी = स्थान बनाने वाले। अलक = बाल श्रीवत्सलाञ्छ = भृगुलता चिंह। गतमन्यु = क्रोध रहित। मेखला = करधनी। निबिड़ = सघन। बृजिनाटवी = पाप का बन।

बिस्वधृत बिस्वहित अजित गोतीत सिव, बिस्व पालन-हरन बिस्व कर्त्ता ॥ ८ ॥

ज्ञान बिज्ञान बैराग्य ऐस्वर्जनिधि, सिद्ध अनिमादि दे भूरि दानं।
ग्रसत भव ब्याल अति त्रास तुलसीदास, त्राहि श्रीराम उरगारिजानं ॥ ९ ॥६१॥

राग-आसावरी।

इहइ परम फल परम बड़ाई।
नखसिख रुचिर बिन्दुमाधव छबि, निरखहिं नयन अघाई ॥१ ॥
बिसद किसोर पीन सुन्दर बपु, स्याम सुरुचि अधिकाई।
नीलकञ्ज बारिद तमाल मनि, इन्ह तनु तें दुति पाई ॥२॥
मृदुल चरन सुभ चिह्न पदज नख, अति अदभुत उपमाई।
अरुन नील पाथोज प्रसव जनु, मनिजुत दल समुदाई ॥ ३ ॥
जातरूप मनि जटित मनोहर, नूपुर जन सुखदाई।
जनु हर उर हरि बिबिध रूप धरि, रहे बर भवन बनाई ॥ ४ ॥
कटितट रटति चारु किङ्किनि रव, अनुपम बरनि न जाई।
हेम जलज कल कलिन मध्य जनु, मधुकर मुखर सुहाई ॥ ५ ॥
उर बिसाल भृगु चरन चारु अति, सूचत कोमलताई।
कङ्कन चारु बिबिध भूषन बिधि, रचि निज कर मन लाई ॥ ६ ॥
गजमनि माल बीच भ्राजत कहि,-जाति न पदिक निकाई।
जनु उडुगन-मंडल बारिद पर, नवग्रह रची अथाई ॥ ७ ॥
भुजगभोग भुजदंड कञ्ज दर, चक्र गदा बनिआई।
सोभा सींव ग्रीव चिबुकाधर, बदन अमित छबि छाई ॥ ८ ॥
कुलिस कुन्द-कुड़मल दामिनि दुति, दसनन्हि देखि लजाई।
नासा नयन कपोल ललित स्रुति, कुंडल भ्रू मोहि भाई ॥ ९ ॥

पदज=पाँवकी उँगली। प्रसव=उत्पन्न करना। जातरूप= सुवर्ण। हेम=सोना। जलज= कमल। पदिक=चौकी। अथाई=सभामण्डल। भुजगभोग=साँप का शरीर। कुड़मल=कली।

कुञ्चित कच सिर मुकुट भाल पर, तिलक कहउँ समुझाई।
अलप तड़ित जुग रेख इन्दु महँ, रहि तजि चञ्चलताई ॥ १० ॥
निर्मल पीत-दुकूल अनूपम, उपमा हिय न समाई।
बहु मनि जुत गिरि नील सिखर पर, कनक बसन रुचिराई ॥ ११ ॥
दच्छभाग अनुराग सहित इन्दिरा अधिक ललिताई।
हेमलता जनु तरु तमाल ढिग, नील निचोल ओढ़ाई ॥ १२ ॥
सत सारदा सेष स्तुति मिलि कै, सोभा कहि न सिराई।
तुलसिदास मतिमन्द द्वन्द रत, कहइ कवनि बिधि गाई ॥ १३ ॥६२॥

राग-जयतिश्री।

मन इतनोई है या तनु को परम फल। नखसिख-सुभग बिन्दुमाधव छबि, तजि सुभाउ अवलोकु एक पल ॥ १ ॥
तरुन अरुन अम्भोज चरन मृदु, नख दुति हृदय तिमिर-हारी।
कुलिस केतु जव जलज रेख बर, अंकुस मन गज बस-कारी ॥ २ ॥
कनक जटित मनि नूपुर मेखल, कटितट रटति मधुर बानी। त्रिबली उदर गँभीर नाभिसर, जहँ उपजे बिरञ्चि ज्ञानी ॥ ३ ॥
उर बनमाल पदिक अति सोभित, बिप्र-चरन चित कहँ करषै।
स्याम तामरस दाम बरन बपु, पीत बसन सोभा बरषै ॥ ४ ॥
कर कङ्कन केयूर मनोहर, देति मोद मुद्रिक न्यारी।
गदा कञ्ज दर चारु चक्र धर, नाग सुंड सम भुज चारी ॥ ५ ॥
कम्बु ग्रीव छबि सींव चिबुक द्विज, अधर अरुन उन्नत नासा।
नव राजीव नयन ससि-आनन, सेवक सुखद बिसद हासा ॥ ६ ॥
रुचिर कपोल स्रवन-कुंडल सिर, मुकुट सुतिलक भाल भ्राजै। ललित भृकुटि सुन्दर चितवनि कच, निरखि मधुपअवली लाजै ॥ ७ ॥
रूप सील गुन-खानि दच्छ दिसि, सिन्धु-सुता रत पद सेवा। जाकी कृपा कटाच्छ चहत सिव, बिधि मुनि मनुज दनुज देवा ॥ ८ ॥

दुकूल=वस्त्र। हेमलता=सुवर्ण वल्ली। निचोल=वस्त्र।

तुलसिदास भव त्रास मिटइ तब, जब मति एहि सरूप अटकै।
नाहिंत दीन मलीन हीन-सुख, कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ॥९॥६३॥

राग-वसन्त

बन्दउँ रघुपति करुनानिधान। जा तेँ छूटइ भव-भेद-ज्ञान ॥ १ ॥
रघुबंस-कुमुद सुखप्रद निसेस। सेबित पद-पङ्कज अज महेस ॥
निजभक्त हृदय पाथोज भृङ्ग। लावन्य वपुष अगनित अनङ्ग ॥ २ ॥
अति प्रबल मोह-तम मारतंड। अज्ञान गहन पावक प्रचंड ॥
अभिमान-सिन्धु कुम्भज उदार। सुर-रञ्जन भञ्जन भूमि भार ॥ ३ ॥
रागादि-सर्पगन पन्नगारि। कन्दर्प-नाग मृगपति मुरारि ॥
भव-जलधि पोत चरनारबिन्द। जानकीरमन आनन्द कन्द ॥ ४ ॥
हनुमन्त प्रेम बापी मराल। निष्काम कामधुक गो दयाल ॥
त्रैलोक्य-तिलक गुन-गहन राम। कह तुलसिदास बिस्राम धाम ॥५॥६४॥

राग-भैरव

राम राम रमु राम राम रटु, राम राम जपु जीहा।
राम नाम नव नेह मेह को, मन हठि होइ पपीहा ॥ १ ॥
सब साधन फल कूप सरित सर, सागर सलिल निरासा।
राम नाम रति स्वाति सुधा सुभ, सीकर प्रेम पियासा ॥ २ ॥
गरजि तरजि पाषान बरषि पबि, प्रीति परखि जिय जानै।
अधिक अधिक अनुराग उमग उर, पन परमिति पहिचानै ॥ ३ ॥
राम नाम गति राम नाम मति, राम नाम अनुरागी।
होइगे हैँ होइहैं जे आगे, ते त्रिभुवन बड़ भागी ॥ ४ ॥
एक अङ्ग-मग अगम गवन करि, बिलम न छिन छिन छाहैँ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि, निरुपधि नेम निबाहैँ ॥५॥६५॥

अटकै=लगै, उलझै। निसेस=चन्द्रमा। अज=ब्रह्मा। मारतंड=सूर्य्य। बापी=बावली। सीकर=जलकण, लघुबिन्दु। परमिति=सीमा। एक अङ्ग मग=एकांगी प्रीति। निरुपधि=निःस्वार्थ।

राम जपु राम जपु राम जपु बावरे।
घोर भव नीरनिधि नाम निज नाव रे ॥१॥
एकहि साधन सब रिधि सिधि साधि रे।
ग्रसे कलि-रोग-जोग-सञ्जम-समाधि रे ॥२॥
जग नभ-वाटिका रही है फलि फूलि रे।
धुआँ कैसो धवरहर देखि तू न भूलि रे ॥३॥
भलो जो है पोच जो है दाहिनो जो बाम रे
राम नामही सोँ अन्त सबही को काम रे ॥ ४ ॥
राम नाम छाड़ि जो भरोसो करै और रे।
तुलसी परोसो त्यागि माँगइ कूर कौर रे ॥ ५ ॥ ६६ ॥

राम नाम जपु जीव सदा सानुराग रे।
कलि न बिराग जोग जाग तप त्याग रे ॥ १ ॥६२॥
राम सुमिरन सब बिधिही को राज रे।
राम को बिसारिबो निषेध सिरताज रे ॥
राम नाम महामनि फनि-जग-जाल रे।
मनि लिये फनि जिअइ ब्याकुल बिहाल रे ॥ २ ॥
राम नाम कामतरु देत फल चारि रे।
कहत पुरान बेद पंडित पुकारि रे।
राम नाम प्रेम परमारथ को सार रे।
राम नाम तुलसी को जीवन अधार रे ॥ ३ ॥६७॥

राम राम राम जीव जौ लौँ तू न जपिहै।
तौलौँ जहँ जइहै तहँ तिहूँ ताप तपि है ॥ १ ॥
सुरसरि तीर बिनु नीर दुख पाइहै।
सुरतरु तरे तोहिं दारिद सताइहै ॥

धवरहर = स्तम्भ, मीनार। पोच = नीच, बुरा। निषेध = त्याग।

जागत वागत सपने न सुख सोइहै।
जनमि जनमि जुग जुग जग रोइहै ॥ २॥
छूटबे के जतन बिसेष बाँधो जायगो।
होइहै बिष भोजन जौं सुधा सानि खायगो ॥
तुलसी तिलोक तिहुँ काल तो से दीन को।
राम-नामही की गति जैसे जल मीन को ॥ ३ ॥६८॥

सुमिरु सनेह सोँ तू नाम राम-राय को। सम्बल निसम्बली को सखा असहाय को ॥ १ ॥
भाग है अभागेहू को गुन गुनहीन को। गाहक गरीब को दयाल दानि दीन को ॥ कुल अकुलीन को सुनेउ है बेद साखि है। पाँगुर को हाथ पाँय आँधरे को आँखि है ॥ २ ॥
माय बाप भूखे को अधार निराधार को। सेतु भवसागर को हेतु सुख-सार को ॥ पतित पावन राम नाम सोँ न दूसरो। सुमिरि सुभूमि भयउ तुलसी सो ऊसरो ॥ ३ ॥ ६९ ॥

भलो भली भाँति है जौं मेरे कहे लागिहै। मन राम-नाम सोँ सुभाय अनुरागिहै ॥ १ ॥
राम नाम को प्रभाउ जान जूड़ी-आगि है। सहित सहाय कलिकाल भीरु भागि है ॥ राग राम नाम सोँ बिराग जोग जागि है। बाम बिधि भालहूँ न कर्म-दाग दागिहै ॥ २ ॥
राम नाम मोदक सनेह सुधा पागिहै। पाइ परितोष तू न द्वार द्वार बागिहै ॥ राम नाम कामतरु जोइ जोइ माँगिहै। तुलसी स्वारथ परमारथउ न खाँगिहै ॥ ३ ॥७०॥

ऐसेहू साहेब की सेवा सोँ होत चोर रे। आपनी न बूझि न कहे को राँड़रोर रे ॥ १ ॥

बागत=डोलते हुए। मोदक=लड्डू। राँड़रोर=व्यर्थ का हल्ला। सम्बल=राहखर्च। निसम्बली=मार्ग व्यय से रहित। ऊसर=निरुपजाऊ भूमि।

मुनि मन अगम सुगम माय बाप सोँ। कृपा सिन्धु सहज सखा सनेही आप सोँ॥ लोक बेद बिदित बड़ो न रघुनाथ सोँ। सब दिन सब देस सबही के साथ सोँ॥ २॥

स्वामी सर्बज्ञ सोँ चलइ न चोरी चार की। प्रीति पहिचान यह रीति दरबार की॥ काय न कलेस लेस लेत मानि मन की। सुमिरे सकुचि रुचि जोगवत जन की॥ ३॥

रीझे बस होत खीझे देत निज धाम रे। फलत सकल फल कामतरु नाम रे॥ बेँचे खोटे दाम न मिलइ न राखे काम रे। सोऊ तुलसी निवाजेउ ऐसे राजा राम रे॥ ४॥ ७१॥

मेरो भलो कियो राम अपनी भलाई।
हैाँ तो साँइ-द्रोही पै सेवक-हित साँई॥
राम सोँ बड़ो है कवन मो सोँ कवन छोटो।
राम सोँ खरो है कवन मो सोँ कवन खोटो॥ १॥
लोग कहैँ राम को गुलाम हैाँ कहाओँ।
एतो बड़ो अपराध भो न मन बाओँ॥
पाथ माथे चढ़इ तृन तुलसी ज्योँ नीचो।
बोरत न बारि ताहि जानि आप सीँचो॥ २॥७२॥

जागु जागु जागु जीव जो है जग-जामिनी।
देह-गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी।
सोये सपने को सहइ संसृति सन्ताप रे।
बूड़ो मृग-बारि खायो जैँवरी को साँप रे॥ १॥

चार=सेवक, टहलुआ। खोटा=निकम्मा। बाओँ=टेढ़ा।

कहैँ बेद बुध तू तो बूझ मन माहिँ रे।
दोष दुख सपने को जागेही पै जाहिँ रे॥
तुलसी जागे तेँ जाइ तिहूँ ताप ताय रे।
राम नाम सुचि रुचि सहज सुभाय रे॥ २ ॥७३॥

राग-विभास।

जानकीस की कृपा जगावती सुजान जीव, जागि त्यागि मूढ़ता-नुरागु श्रीहरे। करि विचार तजि बिकार भजि उदार रामचन्द्र, भद्र-सिन्धु दीनबन्धु बेद बदत रे॥ १॥
मोह-मय कुहू-निसा बिसाल काल बिपुल सोय, खोय सो अनूप रूप स्वप्न जो परे। अब प्रभात प्रगट ज्ञान-भानु के प्रकास त्रास,-नास रोग मोह द्वेष निबिड़-तम टरे॥ २॥
मोह मद मान चोर भोर जानि जातुधान, काम क्रोध लोभ छोभ निकर अपडरे। देखत रघुबर प्रताप बीते सन्ताप पाप, ताप त्रिबिध प्रेम आप दूरही करे॥ ३॥
स्रवन सुनि गिरा गँभीर जागे अतिधीर बीर, बर बिराग तोष सकल सन्त आदरे। तुलसिदास प्रभु कृपाल निरखि जीव जन बिहाल, भञ्जेउ भवजाल परम मङ्गलाचरे॥ ४ ॥७४॥

राग-ललित।

खोटो खरो रावरो हैाँ रावरी सैाँ रावरे सोँ, झूठ क्योँ कहैाँगो जानो सबही के मन की। करम बचन हिये कहउँ न कपट किये, ऐसो हठ जैसे गाँठि पानी परे सन की॥ १॥
दूसरो भरोसो नाहिँ बासना उपासनाकी, बासव बिरञ्चि सुर नर मुनि गन की। स्वारथ के साथी सबै हाथी स्वान लेवा देई, काहू तौ न पीर रघुबीर दीन जन की॥ २॥

कुहूनिसा=अमावश्या की रात्रि।

साँप-सभा साबर लबारभये देव दिव्य, दुसह सासति कीजे आगे दै या तन की। साँचो परे पाऊँ पान पञ्च में परइ प्रमान, तुलसी चातक आस राम स्याम घन की ॥ ३ ॥७५॥

राम को गुलाम नाम रामबोला राखेउ राम, काम इहइ नाम द्वै हौं कबहूँ कहत हौं। रोटी-लूगा नीके राखइ आगेहू को बेद भाखइ, भलो होइहै तेरो ता तें आनद लहत हौं ॥ १ ॥
बाँधेउ हौं करम जड़ गरब-निगड़-गूढ़, सुनत दुसह हौं तो सासति सहत हौं। आरत अनाथ नाथ कोसलपाल कृपाल, लीन्हेउ छीनि दीन देखेउ दुरित दहत हौं ॥ २ ॥
बूझेउ ज्योंही कहेउँ मैं हूँ चेरो होइहौं रावरोजू, मेरो कोऊ कहूँ नाहिं चरन गहत हौं। माँजो गुरु पीठि अपनाइ गहि बाँह बोलि, सेवक सुखद सदा बिरद बहत हौं ॥ ३ ॥
लोग कहैं पोच सो न सोच न सकोच मेरे, ब्याह न बरेखी जाति पाँति न चहत हौं। तुलसी अकाज काज रामहीं के रीझे खीझे, प्रीति की प्रतीति मन मुदित रहत हौं ॥ ४ ॥ ७६ ॥

जानकीजीवन जग-जीवन जगत-हित, जगदीस रघुनाथ राजिव लोचन राम। बदन सरद-बिधु सुख सील श्री सदन, सहज सुन्दर तनु सोभा अगनित काम ॥ १ ॥
जगत सुपिता मातु-सुगुरु सुहित-मीत, सब को दाहिने दीनबन्धु काहू के न बाम। आरति हरन सरनद अतुलित दानि, प्रनतपाल कृपाल पतित पावन नाम ॥ २ ॥
बन्दित सकल बिस्व सेबित सकल सुर, आगम निगम कहैं रावरोई गुन ग्राम। इहइ जानि तुलसी तिहारो जन भयउ चहइ, न्यारे कै गनीबो जहाँ गने गरीब गुलाम ॥ ३ ॥७७॥

साबर=साबरमंत्र। निगड़=सीकड़। गूढ़=कठिन। बिरद=नामवरी। बहतहौं=पालन करता हूँ। बरेखी=बरच्छा।

राग-टोड़ी

दीन को दयाल दानि दूसरो न कोई। जाहि दीनता कहउँ मैं देखउँ दीन सोई॥ सुर मुनि नर नाग असुर साहब तौ घनेरे। तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नयन फेरे॥ १॥

त्रिभुवन तिहुँकाल बिदित बदत बेद चारी। आदि मध्य अन्त राम साहिबी तिहारी॥ तुम्हहिं माँगि माँगनो न माँगनो कहायो। सुनि सुभाव सील सुजस जाचन जन आयो॥ २॥

पाहन पसु ब्याध बिहँग अपने करि लीन्हे। महाराज दसरथ के रङ्क राय कीन्हे॥ तू गरीब को निवाज हौं गरीब तेरो। बारक कहिये कृपाल तुलसिदास मेरो॥ ३॥७८॥

तू दयाल दीन-हौं तू दानि हौं-भिखारी। हौं प्रसिद्ध पातकी तू पाप-पुञ्ज-हारी॥ नाथ तू अनाथ को अनाथ कौन मो सों। मो समान आरत नहिं आरति हर तो सों॥ १॥

ब्रह्म तू हौं जीव तू है ठाकुर हौं चेरो। तात मात गुरु सखा तू सब बिधि हित मेरो॥ तोहि मोहि नातो अनेक मानिये जो भावै। ज्यों त्यों तुलसी कृपाल चरन सरन पावै॥ २॥ ७९॥

और काहि माँगिये को माँगिबो निवारै। अभिमत दातार कौन दुख दरिद्र दारै॥ १॥

धरम-धाम राम काम कोटि रूप रूरो। साहेब सब बिधि सुजान दान खड्ग सूरो॥ सुसमय दिन दुइ निसान सब के द्वार बाजै। कुसमय दसरथ के दानि तैं गरीब निवाजै॥ २॥

सेवा बिनु गुन बिहीन दीनता सुनाये। जे जे तैं निहाल किये फूले फिरत पाये॥ तुलसिदास जाचक रुचि जानि दान दीजे। रामचन्द्र चन्द्र तू चकोर मोहि कीजे॥ ३॥८०॥

दारै=नाश करेगा। रूरो=सुन्दर।

दीनबन्धु सुखसिन्धु कृपाकर, कारुनीक रघुराई । सुनहु नाथ मन जरत त्रिबिध जर, करत फिरत बौराई ॥ १ ॥
कबहुँ जोग रत भोग निरत सठ, हठि बियोग बस होई ।
कबहुँ मोह-बस द्रोह करत बहु, कबहुँ दया अति सोई ॥ २ ॥
कबहुँ दीन मति-हीन रङ्क-तर, कबहुँ भूप-अभिमानी ।
कबहुँ मूढ़ पंडित बिडम्बरत, कबहुँ धरम रत-ज्ञानी ॥ ३ ॥
कबहुँ देख जग धनमय रिपुमय, कबहुँ नारिमय भासै ।
संसृति-सन्निपात दारुन दुख, बिनु हरि-कृपा न नासै ॥ ४ ॥
सञ्जम जप तप नेम धरम ब्रत, बहु भेषज समुदाई ।
तुलसिदास भव-रोग राम-पद, प्रेमहीन नहिँ जाई ॥ ५ ॥ ८१ ॥

मोह जनित मल लाग बिबिध बिधि, कोटिहु जतन न जाई ।
जनम जनम अभ्यास निरत चित, अधिक अधिक लपटाई ॥१॥
नयन मलिन पर नारि निरखि मन, मलिन बिषय सँग लागे ।
हृदय मलिन बासना मान मद, जीव सहज-सुख त्यागे ॥ २ ॥
पर-निन्दा सुनि स्रवन मलिन भये, बचन दोष पर गाये ।
सब प्रकार मल भार लाग निज, नाथ चरन बिसराये ॥३॥
तुलसिदास ब्रत ज्ञान दान तप, सुद्धि हेतु स्रुति गावै ।
राम-चरन अनुराग नीर बिनु, मल अति नास न पावै ॥ ४ ॥ ८२ ॥

राग-जयतिश्री ।

कछु होइ न आय गयउ जनम जाय ।
अति दुर्लभ तनु पाइ कपट तजि, भजे न राम मन बचन काय ॥१॥
लरिकाई बीती अचेत चित, चञ्चलता चौगुनी चाय ।
जोबन ज्वर जुबती कुपथ्य करि, भयो त्रिदोष भरि मदनबाय ॥२॥

आय = व्यर्थ ।

मध्य बयस धन हेतु गँवाई, कृषी बनिज नाना उपाय।
राम-बिमुख सुख लहेउ न सपनेहुँ, निसि बासर तयो तिहूँ ताय ॥३॥
सेये नहिं सीतापतिसेवक, साधु सुमति भलि भगति भाय।
सुने न पुलकि तन कहे न मुदित मन, किये जो चरित रघुबंस-राय ॥४॥
अब सोचत मनि बिनु भुजङ्ग ज्यों, बिकल अङ्ग दले जरा धाय।
सिर धुनि धुनि पछितात मीँजि कर, कोउ न मीत हित दुसह दाय ॥५॥
जिन लगि निज परलोक बिगारेउ, ते लजात होत ठाढ़े ठाय।
तुलसी अजहुँ सुमिरु रघुनाथहि, तरेउ गयन्द जा के एक नाय ॥६॥८३॥

तू पछितइहै मन मीँजि हाथ।
भयउ सुगम तोहि अमर अगम तनु, समुझि न क्यों खोवत अकाथ ॥१॥
सुख साधन हरि बिमुख बृथा जस, स्रम फल घृत हित मथे पाथ।
अस बिचारि तजि कुपथ कुसङ्गति, चलु सुपन्थ मिलु भले साथ ॥२॥
देखु राम-सेवक सुनु कीरति, रटहि नाम करि गान गाथ। हृदय
आनु धनु बान पानि प्रभु, लसे मुनिपट कटि कसे भाथ ॥३॥
तुलसिदास परिहरि प्रपञ्च सब, नाउ राम-पद-कमल माथ। जनि
डरपहि तो से अनेक खळ, अपनायउ जानकीनाथ ॥४॥८४॥

राग-धनाश्री

मन माधव को नेकु निहारहि।
सुनु सठ सदा रङ्क के धन ज्यों, छिन छिन प्रभुहि सँभारहि ॥१॥
सोभा सील ज्ञान गुन मन्दिर, सुन्दर परम उदारहि।
रञ्जन सन्त अखिल अघ गञ्जन, भञ्जन बिषय-बिकारहि ॥२॥
जौं बिनु जोग जज्ञ ब्रत सञ्जम, गयउ चहहि भव पारहि।
तौ जनि तुलसिदास निसि बासर, हरि-पद-कमल बिसारहि ॥३॥८५॥

नाय=नाम। अकाथ=व्यर्थ, वेमतलब। गाथ=चरित्र।

इहइ कहेउ सुत बेद चहूँ।
श्रीरघुबीर-चरन चिन्तन तजि, नाहिँ न ठौर कहूँ ॥१॥
जा के चरन बिरञ्चि सेइ सिधि,-पाई सङ्करहूँ।
सुक सनकादि मुकुत बिचरत तेउ, भजन करत अजहूँ ॥२॥
जद्यपि परम चपल श्री सन्तत, थिर न रहति कतहूँ।
हरि-पद पङ्कज पाइ अचल भइ, करम बचन मनहूँ ॥ ३ ॥
करुनासिन्धु भगत चिन्तामनि, सोभा सेवतहूँ।
अपर सकल सुर असुर ईस सब, खायउ उरग छहूँ ॥ ४ ॥
सरुचि कहेउ सो सत्य तात अति,-परुख बचन जबहूँ। तुलसिदास रघुनाथ बिमुख नहिँ, मिटइ बिपति कबहूँ ॥ ५ ॥८६॥

सुनु मन मूढ़ सिखावन मेरो। हरि-पद बिमुख लहेउ न काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो ॥ १ ॥
बिछुरे ससि रबि मन नयनन्ह तेँ, पावत दुख बहुतेरो। भ्रमत स्रमित निसि दिवस गगन महँ, तहँ रिपु राहु बड़ेरो ॥ २ ॥
जद्यपि अति पुनीत सुरसरिता, तिहुँ पुर सुजस घनेरो। तजे चरन अजहूँ न मिटत नित, बहिबो ताहू केरो ॥ ३ ॥
मिटइ न बिपत्ति भजे बिनु रघुपति, स्रुति सन्देह निबेरो। तुलसिदास सब आस छाड़ि के, होहु राम कर चेरो ॥ ४ ॥८७॥

कबहूँ मन बिस्राम न मान्यो। निसि दिन भ्रमत बिसारि सहज-सुख, जहँ तहँ इन्द्रिन्ह तान्यो ॥ १ ॥
जदपि बिषयसँग सहे दसह दुख, बिषम-जाल अरुझान्यो। तदपि न तजत मूढ़ ममता बस, जानतहूँ नहिँ जान्यो ॥ २ ॥
जनम अनेक कियेउ नाना बिधि, करम-कीच चित सान्यो। होइ न बिमल बिबेक-नीर बिनु, बेद पुरान बखान्यो ॥ ३ ॥

सुरुचि=ध्रुव की माता। सबेरो=आयु रहते।

निज हित नाथ पिता गुरु हरि सोँ, हरषि हृदय नहिँ आन्यो।
तुलसिदास कब तृषा जाइ सर,-खनतहि जनम सिरान्यो ॥ ४ ॥८८॥

मेरो मन हरिजू हठ न तजै। निसि दिन नाथ देउँ सिख बहु
बिधि, करत सुभाव निजै ॥ १ ॥
ज्योँ जुवती अनुभवति प्रसव अति,-दारुन दुख उपजै। होइ अनुकूल
बिसारि सूल सठ, पुनि खलु पतिहि भजै ॥ २ ॥
लोलुप भ्रमत गृहप ज्योँ जहँ तहँ, सिर पदत्रान बजै। तदपि अधम
बिचरत तेहि मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥ ३ ॥
हौँ हारेउँ करि जतन बिबिध बिधि, अतिसय प्रबल अजै।
तुलसिदास बस होइ तबहि जब, प्रेरक-प्रभु बरजै ॥ ४ ॥८९॥

ऐसी मूढ़ता या मन की। परिहरि रामभगति-सुरसरिता, आस
करत ओस कन की ॥ १ ॥
धूम समूह निरखि चातक ज्योँ, तृषित जानि मति घन की। नहिँ
तहँ सीतलता न पानि पुनि, हानि होत लोचन की ॥ २ ॥
ज्योँ गच काँच बिलोकि स्येन जड़, छाँह आपने तन की। टूटत
अति आतुर अहार बस, छत बिसारि आनन की ॥ ३ ॥
कहँ लोँ कहउँ कुचाल कृपानिधि, जानत हौ गति जन की।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की ॥ ४ ॥९०॥

नाचतही निसि दिवस मरेउ। तबही तेँ न भयउँ हरि थिर, जब
तेँ जिव नाम धरेउ ॥ १ ॥
बहु बासना बिबिध कञ्चुक, भूषन लोभादि भरेउ। चर अरु अचर
गगन जल थल महँ, कवन न स्वाँग करेउ ॥ २ ॥

अनुभवति=अनुभव करती है। प्रसव=सन्तानोत्पत्ति। खलु=निश्चय। गृहप=गृहस्थ। पदत्रान=जूता। पानि=जल। गच=चबूतरा। काँच=शीशा। स्येन=बाजपक्षी। छत=घाव। कंचुक=वस्त्र। स्वांग=नकल, भड़ैती।

देव दनुज मुनि नाग मनुज नहिँ, जाचत कोउ उबरेउ ।
मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख, काहू तौ न हरेउ ॥ ३ ॥
थके नयन पद पानि सुमति बल, सङ्ग सकल बिछुरेउ ।
अब रघुनाथ सरन आयउ जन, भव भय बिकल डरेउ ॥ ४ ॥
जेहि गुन तेँ बस होहु रीझि करि, सोहि सो सब बिसरेउ ।
तुलसिदास निज भवन द्वार प्रभु, दीजे रहन परेउ ॥ ५ ॥ ९१ ॥

माधव मो सम मन्द न कोऊ । जद्यपि मीन-पतङ्ग हीन मति, मोहि न पूजइ ओऊ ॥ १ ॥
रुचिर रूप आहार बस्य उन्ह, पावक लोह न जानेउ ।
देखत बिपति बिषय न तजत हौँ, तातेँ अधिक अयानेउ ॥ २ ॥
महा मोह सरिता अपार महँ, सन्तन फिरत बहेउ ।
श्रीहरि-चरन-कमल नौका तजि, फिरि फिरि फेन गहेउ ॥ ३ ॥
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति, ज्योँ भरि मुख पकरै ।
निज तालू-गत रुधिर पान करि, मन सन्तोष धरै ॥ ४ ॥
परम कठिन भव-ब्याल ग्रसित हौँ, त्रसित भयउँ अति भारी ॥
चाहत अभय भेक-सरनागत, खगपति नाथ बिसारी ॥ ५ ॥
जलचर वृन्द जाल अन्तर्गत, होत सिमिटि एक पासा ।
एकहि एक खात लालच बस, नहिँ देखत निज नासा ॥ ६ ॥
मेरे अघ सारद अनेक जुग, गनत पार नहिँ पावै ।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै ॥ ७ ॥ ९२ ॥

कृपा सो कहा बिसारी राम । जेहि करुना सुनि स्रवन दीन दुख, धावत हौ तजि धाम ॥ १ ॥
नागराज निज बल बिचारि हिय,-हारि चरन चित दीन्ह ।
आरत-गिरा सुनत खगपति तजि, चलत बिलम्ब न कीन्ह ॥ २ ॥

पतङ्ग=पाँखी । पूजइ=बराबरी पे । भेक=मेढक ।

दिति-सुत त्रास त्रसित निसि दिन, प्रहलाद प्रतिज्ञा राखी।
अतुलित बल मृगराज-मनुज तनु, दनुज हतेउ सुर साखी ॥३॥
भूप सदसि नृप बल बिलोकि प्रभु-राखु कहेउ नर-नारी।
बसन पूरि अरि दर्प दूर करि,-भूरि कृपा दनुजारी ॥ ४ ॥
एक एक रिपु तें त्रासित जन, तुम्ह राखेउ रघुबीर।
अब मोहि देत दुसह दुख बहु रिपु, कस न हरहु भव-भीर ॥ ५ ॥
लोभ ग्राह दनुजेस-क्रोध कुरुराज,-बन्धु खल मार।
तुलसिदास प्रभु यह दारुन दुख, भञ्जहु राम उदार ॥ ६ ॥ ९३ ॥

काहे तैं हरि मोहि बिसारो। जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो ॥ १ ॥
पतित पुनीत दीन-हित असरन,-सरन कहत स्रुति चारो।
हौं नहिं अधम सभीत दीन किधौं, बेदन्ह मृषा पुकारो ॥ २ ॥
खग गनिका गज ब्याध पाँति जहँ, तहँ हौं हूँ बैठारो।
अब केहि लाज कृपानिधान परसत पनवारो फारो ॥ ३ ॥
जौं कलिकाल प्रबल होतो अति, तुव निदेस तैं न्यारो।
तौ तजि रोस भरोस दोष गुन, तेहि भजते तजि गारो ॥ ४ ॥
मसक बिरञ्चि बिरञ्चि मसक सम, करहु प्रभाउ तिहारो।
अस सामर्थ्य अछत मोहि त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥ ५ ॥
नाहिं न नरक परत मो कहँ डर, जद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दासतुलसी प्रभु, नामहुँ पाप न जारो ॥ ६ ॥ ९४ ॥

तौ न मोर अघ अवगुन गनिहैं।
जौं जमराज काज सब परिहरि, इहइ ख्याल उर अनिहैं ॥ १ ॥
चलिहै छूटि पुञ्ज पापिन्ह के, असमञ्जस जिय जनिहैं।
देखि खलल अधिकार सुप्रभु सों, भूरि भलाई भनिहैं ॥२॥

दितिसुत=हिरण्यकशिपु। मृगराजमनुज=नृसिंह। नरनारी=द्रौपदी। कुरुराजबन्धु=दुःशासन। पनवारो=पत्तल। गारो=गर्व। चारा=वश, काबू। असमंजस=पशोपेश। खलल=बाधा।

हँसि करिहैं परतीति भगति की, भगत सिरोमनि मनिहैं।
ज्यौं त्यौं तुलसिदास कोसलपति, अपनायेहि पर बनिहैं ॥ ३ ॥ ९५ ॥

जौं जिय धरिहउ अवगुन जन के।
तौ क्यौं कटत सुकृत नख तें मो पै, बिपुल बृन्द अघ बन के ॥ १ ॥
कहिहै कवन कलुष मेरे कृत, करम बचन अरु मन के।
हारहिं कोटि सेष सारद स्रुति, गिनत एक एक छन के ॥ २ ॥
जौं चित चढ़इ नाम महिमा निज,-गुन-गन पावन पन के।
तौ तुलसिहि तारिहौ बिप्र ज्यौं, दसन तोरि जमगन के ॥ ३ ॥ ९६ ॥

जौं हरि जन के अवगुन गहते।
तौ सुरपति कुरुराज बालि सों, कत हठि बैर बेसहते ॥ १ ॥
जौं जप जोग जाग ब्रत बरजित, केवल प्रेम न चहते।
तौ कत सुर मुनिबर बिहाइ ब्रज, गोप-गेह बसि रहते ॥ २ ॥
जौं जहँ तहँ पन राखि भगत को, भजन प्रभाउ न कहते।
तौ कलि कठिन करम मारग जड़,-हम केहि भाँति निबहते ॥ ३ ॥
जौं सुत हित लिय नाम अजामिल के अघ अमित न दहते।
तौ जमभट साँसति-हर हम से, बृषभ खोजि खोजि नहते ॥ ४ ॥
जौं जग बिदित पतित-पावन अति, बाँकुर बिरद न बहते।
तौ बहु कलप कुटिल तुलसी से, सपनेहुँ सुगति न लहते ॥ ५ ॥ ९७ ॥

असि हरि करत दास पर प्रीति। निज प्रभुता बिसारि जन के बस, होत सदा यह रीति ॥ १ ॥
जिन्ह बाँधे सुर असुर नाग नर, प्रबल करम की डोरी।
सोइ अबिछिन्न ब्रह्म जसुमति हठि, बाँधेउ सकत न छोरी ॥२॥
जाकी माया बस बिरञ्चि सिव, नाचत पार न पायो। करतल ताल बजाइ ग्वाल,-जुबतिन्ह सोइ नाथ नचायो ॥ ३ ॥

साँसतिहर=साँसति रूपी हर। नहते=नाँधते, जोतते। बहते=फैलाते।

बिस्वम्भर श्रीपति त्रिभुवन-पति, बेद बिदित यह लीख। बलि सोँ कछु न चली प्रभुता बरु, होइ द्विज माँगी भीख ॥ ४ ॥

जाको नाम लिये छूटत भव जनम मरन दुख भार। अम्बरीष हित लागि कृपानिधि, सोइ जनमे दस बार ॥ ५ ॥

जोग बिराग ध्यान जप तप करि, जेहि खोजत मुनि-ज्ञानी। बानर भालु चपल पसु पाँवर, नाथ तहाँ रति मानी ॥ ६ ॥

लोकपाल जम काल पवन रबि, ससि सब आज्ञाकारी। तुलसिदास प्रभु उग्रसेन के, द्वार बेत कर धारी ॥ ७ ॥९८॥

बिरद गरीब-निवाज राम को। गावत बेद पुरान सम्भु सुक, प्रगट प्रभाव नाम को ॥ १ ॥

ध्रुव प्रहलाद बिभीषन कपि जदुपति पांडव सुदाम को। लोक सुजस परलोक सुगति इनमें है को राम काम को ॥ २ ॥

गनिका कोल किरात आदिकबि, इन्ह तें अधिक बाम को। बाजिमेध कब कियउ अजामिल, गज गायक कब साम को ॥ ३ ॥

छली मलीन हीन सबही अँग, तुलसी सोँ छीन छाम को। नाम नरेस प्रताप प्रबल जग, जुग जुग चालत चाम को ॥ ४ ॥९९॥

सुनत सीतापति सील सुभाउ। मोद न मन तन पुलक नयन जल, सो नर खेहर खाउ ॥ १ ॥

सिसुपन तें पितु मातु बन्धु गुरु, सेवक सचिव सखाउ। कहत राम बिधु बदन रिसौहैं, सपनेहुँ लखेउ न काउ ॥ २ ॥

खेलत सङ्ग अनुज बालक नित, जोगवत अनट अपाउ। जीति हारि चुचकारि दुलारत-देत दियावत दाउ ॥ ३ ॥

सिला साप सन्ताप बिगत भइ, परसत पावन पाउ। दई सुगति सो न हेरि हरष हिय, चरन छुये को पछिताउ ॥ ४ ॥

लीख=निशान। साम=सामवेद। छीनछाम=दुबला पतला। खेहर=धूल। अनट=अत्याचार। अपाउ=अन्याय।

भव-धनु भञ्जि निदरि भूपति, भृगुनाथ खाइ गये ताउ । छमि अपराध छमाय पाँय परि, इतो न अनत समाउ ॥ ५ ॥

कहेउ राज बन दियेउ नारि-बस, गरि गलानि गये राउ । ता कुमातु को मन जोगवत ज्यौं, निज तन मरम-कुघाउ ॥ ६ ॥

कपि सेवा बस भये कनौड़े, कहेउ पवन-सुत आउ । देबे को न कछू रिनियाँ हौं, धनिक तू पत्र लिखाउ ॥ ७ ॥

अपनायउ सुग्रीव बिभीषन, तिन्ह न तजेउ छल-छाउ । भरत सभा सनमानि सराहत, होत न हृदय अघाउ ॥ ८ ॥

निज करुना करतूति भगत पर, चपत चलत चरचाउ । सकृत प्रनाम प्रनत जस बरनत, सुनत कहत फिर गाउ ॥ ९ ॥

समुझि समुझि गुन ग्राम राम के, उर अनुराग बढ़ाउ । तुलसिदास अनयास राम-पद, पइहै प्रेम पसाउ ॥ १० ॥१००॥

जाउँ कहाँ तजि चरन तिहारे । काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥

कवन देव बरिआइ बिरद हित, हठि हठि अधम उधारे । खग मृग ब्याध पखान बिटप जड़, जवन कवन सुर तारे ॥ २ ॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज सब, माया बिबस बिचारे । तिन्ह के हाथ दासतुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥ ३ ॥१०१॥

हरि तुम्ह बहुत अनुग्रह कीन्हों । साधन-धाम बिबुध दुर्लभ तनु, मोहि कृपा करि दीन्हों ॥ १ ॥

कोटिहु मुख कहि जाइ न प्रभु के, एक एक उपकार ।
तदपि नाथ कछु और माँगिहउँ, दीजे परम उदार ॥ २ ॥

भवधनु=शिवजी का धन्वा । ताउ=रोष । समाउ=सहनशीलता । मरम=मर्मस्थल । कनौड़े=एहसानमन्द । धनिक=साहूकार । छलछाउ=छलबाजी । चपत=दबते हैं । पसाउ=प्रसन्नता ।

बिषय बारि मन मीन भिन्न नहिँ, होत कबहुँ पल एक।
ता तेँ सहिय बिपति अति दारुन, जनमत जोनि अनेक ॥ ३ ॥
कृपा डोरि बंसी पद-अङ्कुस, परम प्रेम मृदु चारो।
एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥ ४ ॥
है स्रुति बिदित उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै।
तुलसिदास यह जीव मोह रजु, जो बाँधइ सोइ छोरै ॥ ५ ॥१०२॥

यह बिनती रघुबीर गोसाँई।
और आस बिस्वास भरोसो, हरो जिय की जड़ताई ॥ १ ॥
चहउँ न सुगति सुमति सम्पति किछु, रिधि सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु रहित अनुराग नाथ-पद, बढ़उ अनुदिन अधिकाई ॥ २ ॥
कुटिल करम लेइ जाइ मोहि जहँ,-जहँ अपनी बरिआई।
तहाँ तहाँ जनि छोह छाड़िये, कमठ-अंड की नाँई ॥ ३ ॥
है जग मेँ जहँ लगि या तनु की, प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभुही सोँ, होहिँ सिमिटि एकठाईं ॥ ४ ॥१०३॥

जानकी जीवन की बलि जइहौँ।
मन कहइ सीय-राम-पद परिहरि, अब न कहूँ चलि जइहौँ ॥ १ ॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख,-प्रभु-पद-बिमुख न पइहौँ।
मन समेत या तनु के बासिन्ह, इहइ सिखावन दइहौँ ॥ २ ॥
स्रवनन्हि और कथा नहिँ सुनिहउँ, रसना और न गइहौँ।
रोकिहउँ नयन बिलोकत औरहि, सीस ईसही नइहौँ ॥ ३ ॥
नातो नेह नाथ सोँ करि सब,-नातो नेह बहइहौँ।
यह छरभार ताहि तुलसी जग जा को दास कहइहौँ ॥ ४ ॥१०४॥

अबलोँ नसानी अब न नसइहौँ।
राम-कृपा भव-निसा सिरानी, जागे फिरि न डसइहौँ ॥ १ ॥

सगाई=सम्बन्ध। छरभार=कुबोझ। डसइहौँ=बिछाऊँगा।

पायेउँ नाम चारु चिन्तामनि, उर कर तें न खसइहौं।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कञ्चनहिं कसइहौं ॥ २ ॥
परबस जानि हँसेउ निज इन्द्रिन्ह, इन्ह बस होइ न हँसइहौं।
मन मधुकर पन करि तुलसी रघुपति-पद-पदुम बसइहौं ॥ ३ ॥ १०५ ॥

राग-रामकली।

महाराज रामादरेउ धन्य सोई।
गरुअ गुन-रासि सर्बज्ञ सुकृती सुघर, सीलनिधि साधु तेहि सम न कोई ॥१॥
उपल केवट कोस भालु निसिचर सबरि, गीध सम दम दया दान हीने।
नामलिय रोम किय परम पावन सकल, तरत नर जासु गुन गान कीने ॥२॥
ब्याध अपराध की साध राखी कवन, पिङ्गला कौन मति भगति भेंई।
कवन धौं सोमजाजी अजामिल अधम, कवन गजराज धौं बाजपेई ॥३॥
पंडु-सुत गोपिका बिदुर कुबरी सबहिं, सोध किय सुद्धता लेस
कैसो। प्रेम लखि कृष्न किय आपने तिन्हहु को, सुजस संसार हरि-
हर को जैसो ॥ ४ ॥
कोल खल भिल्ल जमनादि खस राम कहि, नीच होइ ऊँच पद
को न पायो। दीन दुख दवन श्रीरवन करुना भवन, पतित पावन
बिरद बेद गायो ॥ ५ ॥
मन्द-मति कुटिल खल-तिलक तुलसी सरिस, भा न तिहुँलोक
तिहुँकाल कोऊ। नाम की कानि पहिचानि जन आपनो, ग्रसत कलि
ब्याल रखि सरन सोऊ ॥ ६ ॥ १०६ ॥

राग-बिलावल।

है नीको मेरो देवता कोसलपति राम।
सुभग सरोरुह लोचन सुठि सुन्दर स्याम ॥ १ ॥

उपल=अहल्या। पिङ्गला=वेश्या। सोमजाजी=सोमयज्ञ। बाजपेई=अश्वमेध यज्ञकरनेवाला।
खस=खासिया जाति के लोग। कानि=लाज। सुठि=अत्यन्त।

सिय समेत सोभित सदा, छबि अमित अनङ्ग। भुज बिसालसर-धनु धरे, कटि चारु निखङ्ग ॥ २ ॥
बलि पूजा चाहत नहीं, चाहत एक प्रीति । सुमिरत ही मानत भलो, पावन सब रीति ॥ ३ ॥
देइ सकल सुख दुख दहइ, आरतजनबन्धु । गुन गहि अघ अवगुन हरइ, अस करुना-सिन्धु ॥ ४ ॥
देस काल पूरन सदा, बद बेद पुरान । सब को प्रभु सब मेँ बसइ, सब की गति जान ॥ ५ ॥
को करि कोटिक कामना, पूजइ बहु देव । तुलसिदास तेहि सेइये, सङ्कर जेहि सेव ॥ ६ ॥ १०७ ॥

बीर महा अवराधिये, साधे सिधि होइ । सकल काम पूरन करइ, जानइ सब कोइ ॥ १ ॥
बेगि बिलम्ब न कीजिये, लीजे उपदेस । बीजमन्त्र जपिये सोई, जो जपत महेस ॥ २ ॥
प्रेम-बारि तरपन भलो, घृत सहज सनेह । संसय समिध अगिनि-छमा ममता-बलि-देह ॥ ३ ॥
अघ उचाटि मन बस करइ, मारइ मद मार । आकरषइ सुख सम्पदा, सन्तोष बिचार ॥ ४ ॥
जे एहि भाँति भजन किये, मिले रघुपति ताहि । तुलसिदास प्रभु पथ चढ़ेउ, जौं लेहु निबाहि ॥ ५ ॥ १०८ ॥

कस न करहु करुना हरे, दुख हरन मुरारि । त्रिबिध ताप सन्देह सोक, संसय भय हारि ॥ १ ॥
यह कलिकाल जनित मल, मति मन्द मलिन-मन । तेहि पर प्रभु नहिँ कर सँभार, केहि भाँति जिअइ जन ॥ २ ॥

निखंग=तरकस । बलि=भेंट । बद=कहते हैं । बीजमंत्र=रामनाम । समिध=यज्ञ की लकड़ी ।

सब प्रकार समरथ प्रभो, मैं सब बिधि हीन। यह जिय जानि द्रवउ नहीं, मैं करम-बिहीन ॥ ३ ॥
भ्रमत अनेक जोनि रघुपति, पति आन न मोर। दुख सुख सहउँ रहउँ सदा, सरनागत तोर ॥ ४ ॥
तुम्ह सम देव न कोउ कृपाल, समुझौं मन माहिं। तुलसिदास हरि तोषिये, सो साधन नाहिं ॥ ५ ॥ १०९ ॥

कहु केहि कहिय कृपानिधे, भव-जनित बिपति अति। इन्द्रिय सकल-बिकल सदा, निज निज सुभाउ रति ॥ १ ॥
जो सुख सम्पति सरग नरक, सन्तत सँग लागी। हरि परिहरि सोइ जतन करत, मन मोर अभागी ॥ २ ॥
मैं अति दीन दयाल-देव, सुनि मन अनुरागे। जौं न द्रवहु रघुबीर धीर, काहे न दुख लागै ॥ ३ ॥
जद्यपि मैं अपराध-भवन दुख हरन मुरारे। तुलसिदास कहँ आस इहइ, बहु पतित उधारे ॥ ४ ॥११०॥

केसव कहि न जाइ का कहिये। देखत तव रचना बिचित्र अति समुझि मनहिं मन रहिये ॥ १ ॥
सून भीति पर चित्र रङ्ग नहिं, कर बिनु लिखा चितेरे। धोये मिटइ न मरइ भीति दुख, पाइय एहि तनु हेरे ॥ २ ॥
रबि-कर-नीर बसइ अति दारुन, मकर रूप तेहि माहीं। बदन हीन सो ग्रसइ चराचर, पान करन जे जाहीं ॥ ३ ॥
कोउ कह सत्य झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबलकरि मानै। तुलसिदास परिहरइ तीनि भ्रम, सो आपन पहिचानै ॥ ४ ॥१११॥

केसव कारन कवन गोसाँई। जेहि अपराध असाध जानि मोहि तजेहु अज्ञ की नाँई ॥ १ ॥

पतित=पापी। सून=आकाश। चितेरा=मुसौवर। असाध=असाध्य।

परम पुनीत सन्त कोमल चित, तिन्हहिं तुम्हहिं बनिआई।
तौ कत बिप्र ब्याध गनिकहि तारेहु कछु रही सगाई ॥ २ ॥
काल करम गति अगति जीव की, सब हरि हाथ तुम्हारे।
सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरउँ न तुम्हहिं बिसारे ॥ ३ ॥
जौं तुम्ह तजहु भजउँ न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे।
मन बच करम नरक सुरपुर जहँ, तहँ रघुबीर निहोरे ॥ ४ ॥
जद्यपि नाथ उचित न होत अस,-प्रभु सौं करउँ ढिठाई।
तुलसिदास सीदत निसि-दिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥ ५ ॥ ११२ ॥

माधव अब न द्रवहु केहि लेखे। प्रनतपाल पन तोर मोर पन, जिअउँ कमल-पद देखे ॥ १ ॥
जब लगि मैं न दीन दयाल तैं, मैं न दास तैं स्वामी।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिं, जद्यपि अन्तरजामी ॥ २ ॥
तैं उदार मैं कृपिन पतित मैं, तैं पुनीत स्रुति गावै।
बहुत नात रघुनाथ तोहि मोहि, अब न तजे बनिआवै ॥ ३ ॥
जनक जननि गुरु बन्धु सुहृदपति, सब प्रकार हितकारी।
द्वैतरूप तमकूप परउँ नहिं, अस कछु जतन बिचारी ॥ ४ ॥
सुनु अदभ्र करुना बारिज लोचन मोचन भय भारी।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु, संसय टरइ न टारी ॥ ५ ॥ ११३ ॥

माधव मो समान जग माहीं। सब बिधि हीन मलीन दीन अति, लीन बिषय कोउ नाहीं ॥ १ ॥
तुम्ह सम हेतु रहित कृपाल आरत हित ईस न त्यागी। मैं दुख सोक बिकल कृपाल केहि कारन दया न लागी ॥ २ ॥
नाहिं न कछु अवगुन तुम्हार अपराध मोर मैं माना। ज्ञान भवन तनु दियेउ मोहि सो, पाइ न मैं प्रभु जाना ॥ ३ ॥

सीदत=दुखी होता है, खिन्न होता है। द्वैत=भेद भाव, दुबधा। अदभ्र=समूह।

बेनु करील श्रिखंड बसन्तहि, दूषन मृषा लगावै। सार रहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहहु किमि पावै ॥ ४ ॥
सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि, दृढ़ बिचार जिय मोरे। तुलसिदास यह मोह सृङ्खला छूटइ तुम्हरेहि छोरे ॥ ५ ॥ ११४ ॥

माधव मोह फाँस क्यों टूटै ॥ बाहर कोटि उपाय करिय, अभिअन्तर ग्रन्थि न छूटै ॥ १ ॥
घृत पूरन कराह अन्तर्गत, ससि प्रतिबिम्ब दिखावै। ईंधन अनल लगाइ कलप सत, अवटत नास न पावै ॥ २ ॥
तरु कोटर महँ बस बिहङ्ग तरु,-काटे मरइ न जैसे। साधन करिय बिचार हीन मन,-सुद्ध होइ नहिं तैसे ॥ ३ ॥
अन्तर मलिन बिषय मन अति तनु,-पावन करिय पखारे। मरइ न उरग अनेक जतन, बलमीक बिबिध बिधि मारे ॥ ४ ॥
तुलसिदास हरि गुरु करुना बिनु, बिमल बिबेक न होई। बिनु बिबेक संसार-घोर-निधि, पार न पावइ कोई ॥ ५ ॥ ११५ ॥

माधव असि तुम्हारि यह माया।
करि उपाय पचि मरिय तरिय नहिं, जब लगि करहु न दाया ॥ १ ॥
सुनिय गुनिय समुझिय समुझाइय, दसा हृदय नहिं आवै। जेहि अनु-भव बिनु मोह जनित भव,-दारुन बिपति सतावै ॥ २ ॥
ब्रह्म पियूष मधुर सीतल जौपै मन सो रस पावै। तौ कत मृगजल रूप बिषय कारन निसि बासर धावै ॥ ३ ॥
जेहि के भवन बिमल चिन्तामनि, सो कत काँच बटोरै। सपने परबस परइ जागि देखत केहि जाइ निहोरै ॥ ४ ॥

बेनु = बाँस। श्रीखंड = चन्दन। सुरभि = सुगन्ध। सृंखला = बन्धन, बेड़ी। फाँस = बेड़ी। अभिअन्तर = भीतर। प्रतिबिम्ब = परछाहीं। ईंधन = लकड़ी आदि। अवटत = चुरवत। कोटर = खोढ़रा। बालमीक = बिल, बाँबी। पियूष = जल।

ज्ञान भगति साधन अनेक सब, सत्य झूठ कछु नाहीं। तुलसिदास हरि कृपा मिटइ भ्रम, यह भरोस मन माहीं ॥ ५ ॥ ११६ ।

हे हरि कवन दोष तोहि दीजे।
जेहि उपाय सपनेहुँ दुर्लभ गति, सोइ निसि बासर कीजे ॥ १ ॥
जानत अर्थ अनर्थरूप तमकूप परब एहि लागे। तदपि न तजत स्वान अज खर ज्यों, फिरत विषय अनुरागे ॥ २ ॥
भूत द्रोह कृत मोह वस्य हित आपन मैं न बिचारा। मद मत्सर अभिमान ज्ञानरिपु, इन्ह महँ रहनि अपारा ॥ ३ ॥
वेद पुरान सुनत समुझत रघुनाथ सकल जग व्यापी। बेधत नहिं श्रीखंड बेनु इव, सार हीन मन पापी ॥ ४ ॥
मैं अपराध-सिन्धु करुनाकर, जानत अन्तरजामी। तुलसिदास भव ब्याल ग्रसित तव,-सरन उरगारिपु-गामी ॥ ५ ॥ ११७ ॥

हे हरि कवन जतन सुख मानहु।
ज्यों गज-दसन तथा मम करनी, सब प्रकार तुम्ह जानहु ॥ १ ॥
जो कछु कहिय करिय भव-सागर, तरिय बच्छ-पद जैसे। रहनि आन बिधि कहनि आन हरि,-पद सुख पाइय कैसे ॥२॥
देखत चारु मयूर बरन सुभ, बोल सुधा इव सानी। सविष उरग आहार निठुर अस, यह करनी वह बानी ॥३॥
अखिल जीव वत्सल निर्मत्सर, चरन-कमल अनुरागी। ते तव प्रिय रघुबीर धीरमति, अतिसय निज पर त्यागी ॥ ४ ॥
जद्यपि मम अवगुन अपार संसार जोग्य रघुराया। तुलसिदास निज गुन बिचारि, करुनानिधान करु दाया ॥ ५ ॥ ११८ ॥

हे हरि कवन जतन भ्रम भागै।
देखत सुनत बिचारत यह मन, निज सुभाउ नहिं त्यागै ॥ १ ॥

अर्थ = धन धान्य आदि। तमकूप = अन्धकूप। अज = छेरा, बकरा। खर = गदहा। गत = मृत जीव। उरगारिपु = गरुड़। मयूर = मुरैला। वत्सल = प्रिय, प्यारा।

भक्ति ज्ञान बैराग सकल साधन एहि लागि उपाई । कोउ भल कहउ देउ कछु कोऊ, असि बासना न जाई ॥ २ ॥
जेहि निसि सकल जीव सूतहिँ तव-कृपापात्र जन जागै । निज करनी बिपरीति देखि मोहि, समुझि महा भय लागै ॥ ३ ॥
जद्यपि भग्न मनोरथ बिधिबस, सुख इच्छित दुख पावै । चित्रकार कर-हीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ॥ ४ ॥
हृषीकेस सुनि नाउँ जाउँ बलि, अति भरोस जिय मोरे । तुलसिदास इन्द्रिय-सम्भव दुख, हरे बनिहि प्रभु तोरे ॥ ५ ॥ ११९ ॥

हे हरि कस न हरहु भ्रम भारी ।
जद्यपि मृषा सत्य भासइ जब लगि नहिँ कृपा तुम्हारी ॥ १ ॥
अर्थ अबिद्यमान जानिय संसृति नहिँ जाइ गोसाँई । बिनु बन्धन निज हठ सठ पर-बस, परेउ कीर की नाँई ॥ २ ॥
सपने ब्याधि बिबिध बाधा जनु, मृत्यु उपस्थिति आई । बैद अनेक उपाय करइ, जागे बिनु पीर न जाई ॥ ३ ॥
स्रुति गुरु साधु सुमृति सम्मत यह, दृस्य सदा दुखकारी । तेहि बिनु तजे भजे बिनु रघुपति, बिपति सकइ को टारी ॥ ४ ॥
बहु उपाय संसार तरन कहँ, बिमल गिरा स्रुति गावै । तुलसिदास मैं मोर गये बिनु, जिय सुख कबहुँ न पावै ॥ ५ ॥ १२० ॥

हे हरि यह भ्रम की अधिकाई ।
देखत सुनत कहत समुझत संसय सन्देह न जाई ॥ १ ॥
जौं जग मृषा ताप त्रय अनुभव, होत कहहु केहि लेखे । कहि न जाइ मृग-बारि सत्य भ्रम तेँ दुख होइ बिसेखे ॥ २ ॥
सुभग सेज सोवत सपने बारिधि बूड़त भय लागै । कोटिहु नाव न पार पाव सो, जबलगि आपु न जागै ॥ ३ ॥

बासना = ख्वाहिश । भग्न = पराजित, नष्ट । हृषीकेस = इन्द्रियों के स्वामी विष्णु । अविद्यमान = अनुपस्थित । सुमृति = स्मृति । दृस्य = खेल, संसार ।

अनबिचार रमनीय सदा संसार भयङ्कर भारी। सम सन्तोष दया बिबेक तँ, ब्यवहारी सुखकारी ॥ ४ ॥
तुलसिदास सब बिधि प्रपञ्च जग, जदपि झूठ स्रुति गावै। रघुपति भगति सन्त सङ्गति बिनु, को भव त्रास नसावै ॥ ५ ॥ १२१ ॥

मैं हरि साधन करइ न जानी।
जस आमय भेषज न कीन्ह तस, दोष कवन दरमानी ॥ १ ॥
सपने नृप कहँ घटइ बिप्र-बध, बिकल फिरइ अघ लागे। बाजिमेध सतकोटि करइ नहिं, सुद्ध होइ बिनु जागे ॥ २ ॥
स्रग महँ सर्प बिपुल भयदायक, प्रगट होइ अबिचारे। बहु आयुध धरि बल अनेक करि, हारिय मरइ न मारे ॥ ३ ॥
निज भ्रम तँ रबिकर-सम्भव-सागर अति भय उपजावै। अवगाहत बोहित नौका चढ़ि, कबहूँ पार न पावै ॥ ४ ॥
तुलसिदास जग आपु सहित जब लगि निर्मूल न जाई। तब लगि कोटि उपाय करिय पचि, मरिय तरिय नहिं भाई ॥ ५ ॥ १२२ ॥

अस कछु समुझि परत रघुराया।
बिनु तव कृपा दयाल दास हित, मोह न छूटइ माया ॥ १ ॥
बाक्यज्ञान अत्यन्त निपुन भव पार न पावइ कोई। निसि गृह-मध्य दीप की बातन्हि, तम निवृत्त नहिं होई ॥ २ ॥
जैसे कोउ एक दीन दुखित अति, असन बिना दुख पावै। चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै ॥ ३ ॥
षटरस बहु प्रकार ब्यञ्जन कोउ, दिन अरु रैन बखानै। बिनु बोले सन्तोष जनित सुख, खाइ सोई पै जानै ॥ ४ ॥
जबलगि नहिं निज हृदि प्रकास अरु बिषय आस मन माहीं। तुलसिदास तबलगि जग-जोनि भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीं ॥ ५ ॥ १२३॥

दरमानी=चिकित्सक, वैद्य। घटइ=लगै। स्रग=माला। अवगाहत=थहावत। बोहित=जहाज। असन=भोजन। ब्यंजन=भोज्य पदार्थ।

जौं निज मन परिहरइ बिकारा।
तौ कत द्वैत जनित संसृति दुख, संसय सोक अपारा ॥ १ ॥
सत्रु मित्र मध्यस्थ तीनि ये, मन कीन्हे बरिआई। त्यागब गहब उपेच्छनीय अहि,-हाटक-तृन की नाई ॥ २ ॥
असन बसन पसु वस्तु बिबिध बिधि, सब मनि महँ रह जैसे। सरग नरक चर अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे ॥ ३ ॥
बिटप मध्य पुत्रिका सूत्र महँ, कञ्चुक बिनहिं बनाये। मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रकटत अवसर पाये ॥४॥
रघुपति भगति बारिछालित चित, बिनु प्रयासहीं सूझै। तुलसिदास कह चिद्‌बिलास जग, बूझत बूझत बूझै ॥५॥ १२४॥

मैं केहि कहउँ बिपति अति भारी। श्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥१॥
मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चोरा। अति कठिन करहिं बरजोरा। मानहिं नहिं बिनय निहोरा ॥२॥
तम मोह लोभ अहँकारा। मद क्रोध बोधरिपु मारा ॥
अति करहिं उपद्रव नाथा। मर्दहिं मोहि जानि अनाथा ॥३॥
मैं एक अमित बटपारा। कोउ सुनइ न मोर पुकारा ॥
भागेहु नहिं नाथ उबारा। रघुनायक करहु सँभारा ॥४॥
कह तुलसिदास सुनु रामा। लूटहिं तसकर तव धामा ॥
चिन्ता यह मोहि अपारा। अपजस नहिं होइ तुम्हारा ॥५। १२५॥

मन मेरे मानहि सिख मेरी। जौं निज भगति चहहि हरि केरी ॥१॥
उरआनहि प्रभु कृत हित जेते। सेवहिं ते जे अपनपौ चेते ॥ दुख सुख अरु अपमान बड़ाई। सब सम लेखहि बिपति बिहाई ॥२॥
सुनु सठ काल-ग्रसित यह देही। जनि तेहि लागि बिदूषहि

उपेच्छनीय=न त्याग, न ग्रहण। पुत्रिका=कठपुतरी। कंचुक=वस्त्र। चिदविलास=चैतन्य रूप ईश्वर की माया का ज्ञान। बटपार=लुटेरा। तसकर=चोर। विदूषहि=विढ़ावे।

केही ॥ तुलसिदास बिनु असि मति आये । मिलहिँ न राम कपट लय लाये ॥३॥ १२६ ॥

मैँ जानी हरि-पद-रति नाहीँ । सपनेहुँ नहिँ बिराग मन माहीँ ॥१॥ जे रघुबीर चरन अनुरागे । ते सब भोग रोग सम त्यागे ॥ काम-भुजङ्ग डसत जब जाही । बिषय नींब कटु लगत न ताही ॥२॥ असमञ्जस अस हृदय बिचारी । बढ़त सोच नित नूतन भारी । जब कब राम-कृपा दुख जाई । तुलसिदास नहिँ आन उपाई ॥३॥१२७॥

सुमिरु सनेह सहित सीतापति । राम-चरन तजि नहिँ न आन गति ॥१॥ जप तप तीरथ जोग समाधी । कलि मति बिकल न किछु निरुपाधी ॥२॥ करतहु सुकृत न पाप सिराहीँ । रक्तबीज जिमि बाढ़त जाहीँ ॥३॥ हरनि एक अघ-असुर-जालिका । तुलसिदास प्रभु कृपा कालिका ॥४॥१२८॥

रसना तू राम राम, राम क्योँ न रटत । सुमिरत सुख सुकृत बढ़त अघ अमङ्गल घटत ॥१॥
बिनु स्रम कलि-लुष-जाल, कटु कराल कटत । दिन कर के उदय जथा, तिमिर-तोम फटत ॥२॥
जोग जाग जप बिराग, तप सुतीर्थ अटत । बाँधबे को भवगयन्द, रेनु की रजु बटत ॥३॥
परिहरि सुरमनि सुनाम, गुञ्जा लखि लटत । लालच लघु तेरो लखि, तुलसी तोहि हटत ॥४॥ १२९॥

राम राम राम राम, राम राम जपत । मङ्गल मुद उदित होत, कलिमल छल छपत ॥१॥
कहु के लहे फल रसाल, बबुर बीज बपत । हारहि जनि जनम जाय, गालगूल गपत ॥२॥

निरुपाधी निरुपद्रव । तिमिर तोम=घना अन्धकार। अटत=घूमता है। बटत=पूरता है। गुंजा=घुँघची । लटत=लट्टू होताहै । बपत=बोना है । गालगूल=व्यर्थबातें, अंडबंड । गपत=बकता है, गप मारता है ।

काल करम गुन सुभाव सब के सिर तपत। राम नाम महिमा की, चरचा चले चपत ॥३॥
साधन बिनु सिद्धि सकल,विकल लोग लपत। कलिजुग बर बनिज बिपुल, नाम नगर खपत ॥४॥
नाम सोँ प्रतीति प्रीति, हृदय सुथिर थपत। पावन किय रावन-रिपु, तुलसिहु से अपत ॥ ५ ॥ १३० ॥

प्रेम रामचरन-कमल, जनम लाहु परम। राम नाम लेत होत, सुफल सकल धरम ॥ १ ॥
जोग मख बिबेक बिरति, बेद बिदित करम। करिबे कहँ कटु कठोर, सुनत मधुर नरम ॥ २ ॥
तुलसी सुनि जानि बूझि, भूलहि जनि भरम। प्रभु को तू होहि जाहि, सबही की सरम ॥ ३ ॥ १३१ ॥

प्रीतम की प्रीति रहित, जीव जाय जियत। जेहि सुख सुख मानि लेत, सुख सो समुझ कियत ॥ १ ॥
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम, महि पताल बियत। तहँ तहँ तू बिषय सुखहि, चहत लहत नियत ॥ २ ॥
कत बिमोह लटो फटो, गगन मगन सियत। तुलसी प्रभु सुजस गाइ, क्योँ न सुधा पियत ॥ ३ ॥ १३२ ॥

फिरि फिरि हित प्रिय पुनीत, सत्य बचन कहत। सुनि मन गुनि समुझि क्योँ न, सुगम सुमग गहत ॥ १ ॥
छोट बड़ो, खोट खरो, जग जो जहँ रहत। अपने अपने को भलो, कहहु जो न चहत ॥ २ ॥
बिधि लगि लघु कीट अवधि, सुख सुखि दुख दहत। पसु लैाँ पसुपाल ईस, बाँधि छोरि नहत ॥ ३ ॥

चपत = छिपते हैं। लपत = लपकता है। बनिज = व्यापार। अपत = पापी। सरम = लाज। कियत = कितना। बियत = आकाश। नियत = निश्चित। लटो = खिन्न। पसुपाल = पशुरक्षक। ईस = मालिक। नहत = नाँधता है।

बिषय मुद निहार भार, सिर ज्योँ काँध बहत। योँ हीं जिय जानि मानि, सठ तू सासति सहत ॥४॥
पायेउ केहि घृत बिचारु, हरिन बारि महत। तुलसी तकु ताहि सरन, जातेँ सब लहत ॥ ५ ॥ १३३ ॥

बार बार देव द्वार, परि पुकार करत। आरति नति दीन कहे, सङ्कट प्रभु हरत ॥ १ ॥
लोकपाल सोक बिकल, रावन डर डरत। का सुनि सकुचे कृपाल नर सरीर धरत ॥ २ ॥
कौसिक मुनि-तीय जनक, सोच अनल जरत। साधन केहि सीतल भये, सो न समुझि परत ॥ ३ ॥
केवट खग सबरि सहज, चरन-कमल न रत। सनमुख तव होत नाथ, कुतरु सुफल फरत ॥ ४ ॥
बन्धु बैर कपि बिभीषन, गुरु गलानि गरत। सेवा केहि रीझि राम, कियउ सरिस भरत ॥ ५ ॥
सेवक भये पवनपूत, साहेब अनुहरत। जा को लिय नाम राम, सबहि सुढरढरत ॥ ६ ॥
जाने बिनु राम रीति, पचि पचि जग मरत। परिहरि छल सरन गये, तुलसिहु से तरत ॥ ७ ॥ १३४ ॥

राग सूहो-बिलावाल।

राम सनेही सोँ तैँ न सनेह कियो। अगम जो अमरनिहूँ सो तनु तोहि दियो ॥ १ ॥

हरिगीतिका-छन्द।

दिय सुकुल जनम सरीर सुन्दर, हेतु जो फल चारि को।
जो पाइ पंडित परम-पद पावत पुरारि मुरारि को ॥

निहार=देख। बहत=ढोता है। हरिनबारि=मृगजल, झूठा पानी। कौसिक=विश्वामित्र। मुनितीय=अहल्या। सुढरढरत=अच्छी तरह प्रसन्न होते हैं। सुकुल=सुन्दर विप्र कुल।

यह भरतखंड समीप सुरसरि, थल भलो सङ्गति भली।
तेरी कुमति कायर कलपबल्ली चहति विष फल-फली॥ १॥
अजहुँ समुझ चित देइ सुनु परमारथ। है हित सो जगहू जाहि तैँ स्वारथ॥ २॥

हरिगीतिका-छन्द।

स्वारथहि प्रिय स्वारथ सु काते, कवन बेद बखानई।
मन देखु खल अहि खेल परिहरि, सो प्रभुहि पहिचानई॥
पितु मातु गुरु स्वामी अपनपो, तिय तनय सेवक सखा।
प्रिय लगत जाके प्रेम तैँ, बिनु हेतु हित नहिँ तैँ लखा॥ २॥
दूरि न सो हितू हेरु हियेही है। छलहि छाड़ि सुमिरे छोह कियेही है॥ ३॥

हरिगीतिका-छन्द।

किये छोह छाया कमल कर की, भगत पर भज तेहि भजै।
जगदीस जीवन जीव को जो, साज सब सब को सजै॥
पुनि हरिहि हरिता बिधिहि बिधिता, सिवहि सिवता जो दई।
सो जानकीपति मधुर-मूरति, मोद-मय मङ्गल-मई॥ ३॥
ठाकुर अतिहि बड़ो सील सरल सुठि। ध्यान अगम सिवहू भैँटेउ केवट उठि॥ ४॥

हरिगीतिका-छन्द।

भरि अङ्क भैँटेउ सजल नयन सनेह सिथिल सरीर सोँ।
सुर सिद्ध मुनि कबि कहत कोउ न, प्रेम प्रिय रघुबीर सोँ॥
खग सबरि निसिचर भालु कपि किय, आपु से बन्दित बड़े।
ता पर तिन्हकि सेवा सुमिरि जिय, जात जनु सकुचनि गड़े॥ ४॥
स्वामी को सुभाउ कहेउँ जब उर आनिहै। सोच सकल मिटिहै राम भलो मानिहैँ॥५॥

कलपबल्ली = कल्पलता।

हरिगीतिका-छन्द।

भल मानिहइँ रघुनाथ हाथ जो, जोरि माथो नाइहै।
ततकाल तुलसीदास जीवन, जनम को फल पाइहै॥
जपि नाम करहि प्रनाम कहि गुन,-ग्राम रामहिँ धरि हिये।
बिचरहि अवनि अवनीस चरन सरोज मन मधुकर किये॥५॥१३५॥

जिय जब तैँ हरि तैँ बिलगानेउ। तब तैँ देह गेह निज जानेउ॥
माया बस स्वरूप बिसरायेउ। तेहि भ्रम तैँ नाना दुख पायेउ॥१॥

हरिगीतिका-छन्द।

पायउ जो दारुन दुसह दुख सुख लेस नहिँ सपनेहुँ मिल्यो।
भव सूल सोक अनेक जेहि तेहि पन्थ तू हठि हठि चल्यो॥
बहु जोनि जन्म जरा बिपति मतिमन्द हरि जानेउ नहीँ।
श्रीराम बिनु बिस्राम मूढ़ बिचारि लखु पायेउ कहीँ॥१॥

आनदसिन्धु मध्य तव बासा। बिनु जाने कस मरसि पियासा॥
मृग भ्रम बारि सत्य जिय जानी। तहँ तू मगन भयउ सुख मानी॥२॥

हरिगीतिका-छन्द।

तहँ मगन मज्जसि पान करि त्रयकाल जल नाहीँ जहाँ।
निज सहज अनुभव-रूप तव खल, भूलि अब आयउ तहाँ॥
निर्मल निरञ्जन निर्बिकार उदार सुख तैँ परिहस्यो।
निःकाज राज बिहाइ नृप इव, स्वप्न कारागृह परयो॥२॥

तैँ निज कर्म-डोरि दृढ़ कीन्ही। अपने करन्हि गाँठि गहि दीन्ही॥
तातैँ परबस परेउ अभागे। ता फल गरभ-बास दुख आगे॥३॥

हरिगीतिका-छन्द।

आगे अनेक समूह संसृति, उदर-गत जानेउ सोऊ।
सिर हेठ ऊपर चरन सङ्कट, बात नहिँ पूछइ कोऊ॥

अवनीस=अवनीपति रामचन्द्र। जरा=बुढ़ाई।

सोनित पुरीष जो मूत्र मल कृमि, कर्दमावृत सोवई ।
कोमल सरीर गँभीर बेदन, सीस धुनि धुनि रोवई ॥ ३ ॥

तैं निज कर्म-जाल जहँ घेरो । श्रीहरि सङ्ग तजेउ नहिँ तेरो ॥ बहु
बिधि प्रतिपालन प्रभु कीन्हो । परम कृपाल ज्ञान तोहि दीन्हो ॥ ४ ॥

हरिगीतिका-छन्द ।

तोहि दियेउ ज्ञान बिबेक जन्म अनेक की तब सुधि भई ।
तेहि ईस की हैाँ सरन जा की, बिषम-माया गुन-मई ॥
जेहि किये जीव निकाय बस रस,-हीन दिन दिन अति नई ।
सो करहु बेगि सँभार श्रीपति, बिपति महँ जेहि मति दई ॥ ४ ॥

पुनि बहु बिधि गलानि जिय मानी । अब जग जाइ भजउँ चक्रपानी ॥
ऐसहि करि बिचार चुप साधी । प्रसव पवन प्रेरेउ अपराधी ॥ ५ ॥

हरिगीतिका-छन्द ।

प्रेरेउ जो प्रसव प्रचंड मारुत, कष्ट नाना तैं सह्यो ।
सो ज्ञान ध्यान बिराग अनुभव, जातना-पावक दह्यो ॥
अति खेद ब्याकुल अल्प बल छन,-एक बोल न आवई ।
तव तीव्र कष्ट न जान कोउ सब,- लोग हरषित गावई ॥ ५ ॥

बाल-दसा जेते दुख पाये । अति अनीस नहिँ जाहिँ गनाये ॥
छुधा ब्याधि बाधा भइ भारी । बेदन नहिँ जानइ महँतारी ॥ ६ ॥

हरिगीतिका-छन्द ।

जननी न जानइ पीर सो केहि भाँति सिसु रोदन करै ।
सो करइ बिबिध उपाय जा तैं, अधिक तव छाती जरै ॥
कैामार सैसव अति किसोर अपार अघ को कहि सकै ।
ब्यतिरेक तोहि निर्दय महा खल, आन कहु को सहि सकै ॥ ६ ॥

सोनित=रक्त, खून । पुरीष=मैला । कर्दमावृत=कीचड़ में घिरा । चक्रपानी=विष्णु । जातना=सासति । अनीस=अनिष्ट । कौमार=कुमार अवस्था । सैसव=लड़कपन । किसोर=किशोरावस्था ।

जोबन जुवति सङ्ग रँग रात्यो। तब तू महा-मोह मद मात्यो॥
ता तेँ तजी धरम मरजादा। बिसरे ते सब प्रथम बिषादा॥ ७॥

हरिगीतिका-छन्द।

बिसरे बिषाद निकाय सङ्कट, समुझि नहिँ फाटत हियो।
फिरि गर्भगत आवर्त संसृति,-चक्र जेहि सोइ सोइ कियो॥
कृमि भस्म बिट परिनाम तनु तेहि, लागि जग बैरी भयो॥
परदार परधन द्रोह पर संसार बाढ़इ नित नयो॥ ७॥

देखतही आई बिरधाई। जो तैँ सपनेहुँ नाहिँ बुलाई॥
ता के गुन कछु कहे न जाहीँ। सो अब प्रगट देखु तनु माहीँ॥८॥

हरिगीतिका-छन्द।

सो प्रगट तनु जर्जर जरा बस, ब्याधि सूल सतावई।
सिर कम्प इन्द्रिय-सक्ति प्रतिहत, बचन काहु न भावई॥
गृहपालहू तैँ अति निरादर, खान पान न पावई।
ऐसिहू दसा न बिराग तहँ, तृष्ना-तरङ्ग बढ़ावई॥ ८॥

कहि को सकइ महा भव तेरे। जनम एक के कछुक कहे रे॥
खानि चारि सन्तत अवगाही। अजहुँ न करु बिचार मन माहीँ॥९॥

हरिगीतिका-छन्द।

अजहूँ बिचार बिकार तजि भजु, राम जन-सुख-दायकं॥
भव-सिन्धु दुस्तर जलरथं भजु, चक्र-धर सुर-नायकं॥
बिनु हेतु करुनाकर उदार अपार माया तारनं।
कैवल्यपति जगपति रमापति, प्रानपति गति-कारनं॥९॥

रघुपति भगति सुलभ सुखकारी। सो त्रय ताप सोक भय हारी॥
बिनु सतसङ्ग भगति नहिँ होई। ते तब मिलहिँ द्रवहिँ जब सोई॥१०॥

रात्यो=रं॰ ा गया। आवर्त=भँवर। चक्र=चक्कर। बिट=मैला। प्रतिहत=नष्ट।

हरिगीतिका-छन्द।

जब द्रवहिं दीनदयाल राघव साधु सङ्गति पाइये।
जेहि दरस परस समागमादिक, पाप रासि नसाइये॥
जिन्ह के मिले दुख सुख समान अमानतादिक गुन भये।
मद मोह लोभ बिषाद क्रोध सुबोध तैं सहजहिं गये॥१०॥

सेवत साधु द्वैत भय भागै। श्रीरघुबीर-चरन लय लागै॥
देह जनित बिकार सब त्यागै। तब फिरि निज सरूप अनुरागै॥११॥

हरिगीतिका-छन्द।

अनुराग सो निज रूप जो जग तैं बिलच्छन देखिये।
सन्तोष सम सीतल सदा दम, देहवन्त न लेखिये॥
निर्मल निरामय एकरस तेहि, हरष सोक न ब्यापई।
त्रयलोक पावन सो सदा जाकी दसा ऐसी भई॥११॥

जौं तेहि पन्थ चलइ मन लाई। तो हरि काहे न होहिं सहाई॥
जो मारग स्रुति साधु दिखावैं। तेहि मग चलत सबइ सुख पावैं॥१२॥

हरिगीतिका-छन्द।

पावइ सदा सुख हरि कृपा संसार आसा तजि रहै।
सपनेहुँ नहीं दुख द्वैत दरसन, बात कोटिक को कहै॥
द्विज देव गुरु हरि सन्त बिनु, संसार पार न पाइये।
यह जानि तुलसीदास त्रास हरन रमापति गाइये॥ १२॥१३६॥

राग-बिलावल।

जौ पै कृपा रघुपति कृपालु की, बैर और के कहा सरै।
होइ न बाँको बार भगत को, जौं कोउ कोटि उपाउ करै॥ १॥
तकइ नीच जो मीच साधु की, सो पाँवर तेहि मीच मरै।
बेद बिदित प्रहलाद कथा सुनि, को न भगति-पथ पाउ धरै॥२॥

द्वैत=भेदभाव, कलह। बिलच्छन=अद्भुत। निरामय=रोगरहित।

गज उधारि हरि थपेउ बिभीषन, ध्रुव अविचल कबहूँ न टरै।
अम्बरीष को साप सुरति करि, अजहुँ महामुनि ग्लानि गरै ॥ ३ ॥
सो न कहा जो कियेउ सुजोधन, अबुध आपने मान जरै।
प्रभु प्रसाद सौभाग्य विजय-जस, पांडवनै बरिआइ बरै ॥ ४ ॥
जो जो कूप खनैगो पर को, सो सठ फिरि तेहि कूप परै।
सपनेहुँ सुख न सन्त द्रोही कहँ, सुरतरु सो बिष फरनि फरै ॥ ५ ॥
है काके दुइ सीस ईस के, जो हठि जन की सीम चरै। तुलसिदास
रघुबीर बाहु बल, सदा अभय काहू न डरै ॥ ६ ॥ १३७ ॥

कबहुँ सो कर-सरोज रघुनायक, धरिहौ नाथ सीस मेरे।
जेहि कर अभय किये जन आरत, बारक बिबस नाम टेरे ॥ १ ॥
जेहि कर-कमल कठोर सम्भु-धनु, भञ्जि जनक संसय मेट्यो।
जेहि कर-कमल उठाइ बन्धु ज्यौं, परम प्रीति केवट भैंट्यो ॥ २ ॥
जेहि कर-कमल कृपाल गीध कहँ, पिंड देइ निज धाम दियो।
जेहि कर बालि बिदारि दासहित, कपि-कुल-पति सुग्रीव कियो ॥३॥
आयउ सरन सभीत बिभीषन, जेहि कर-कमल तिलक कीन्होँ।
जेहि कर गहि सर चाप असुर हति, अभय-दान देवन्ह दीन्हौँ ॥ ४ ॥
सीतल सुखद छाँह जेहि कर की, मेटति पाप ताप माया। निसि
बासर तेहि कर-सरोज की, चाहत तुलसिदास छाया ॥ ५ ॥ १३८ ॥

दीनदयाल दुरित दारिद दुख, दुनी दुसह तिहुँ ताप तई है।
देव दुआर पुकारत आरत, सब की सब सुख हानि भई है ॥ १ ॥
प्रभु के बचन बेद बुध सम्मत, मम मूरति महिदेव मई है।
तिन्ह की मति रिस राग मोह मद, लोभ लालची लीलि लई है ॥ २ ॥
राज समाज कुसाज कोटि कटु, कलपत कलुष कुचाल नई है।
नीति प्रतीति प्रीति परमित पति, हेतुबाद हठि हेरि हई है ॥ ३ ॥

सुजोधन=दुर्योधन। बरै=मिलै। दुनिया=संसार। तई=तपी, जली। हेतुबाद=नास्तिकता। हई=नाश किया।

आस्रम बरन धरम बिरहित जग, लोग बेद मरजाद गई है।
प्रजा पतित पाखंड पाप-रत, अपने अपने रङ्ग रई है ॥ ४ ॥
सान्ति सत्य सुभरीति गई घटि, बढ़ी कुरीति कपट कलई है।
सीदत साधु साधुता सोचति, खल बिलसत हुलसति खलई है ॥ ५ ॥
परमारथ स्वारथ साधन भये, अफल सकल नहिँ सिद्धि सई है।
कामधेनु धरनी कलि गोमर, बिबस बिकल जामति न बई है ॥ ६ ॥
कलि करनी बरनिये कहाँ लैाँ, करत फिरत बिनु टहल टई है।
ता पर दाँत पीसि कर मींजत, के जानइ चित कहा ठई है ॥ ७ ॥
त्योँ त्योँ नीच चढ़त सिर ऊपर, ज्योँ ज्योँ सील बस ढील दई है।
सरुख बरजि तरजिये तरजनी, कुम्हिलइहै कुम्हड़े की जई है ॥ ८ ॥
दीजे दाद देखि नाते। बलि, मही मोद मङ्गल रितई है।
भरे भाग अनुराग लोग कहैँ, राम अवधि चितवनि चितई है ॥ ९ ॥
बिनती सुनि सानन्द हेरि हँसि, करुना-बारि भूमि भिजई है।
राम राज भये। काज सगुन सुभ, राजा राम जगत-बिजई है ॥१०॥
समरथ बड़ो सुजान सुसाहेब, सुकृत सेन हारत जितई है।
सुजन सुभाव सराहत सादर, अनायास सासति बितई है ॥११॥
उथपे थपन उजारि बसावन, गई बहोर बिरद सदई है।
तुलसी प्रभु आरत आरति-हर, अभय-बाँह केहि केहि न दई है ॥१२॥१३९॥

ते नर नरक-रूप जीवत-जग, भव-भञ्जन पद बिमुख अभागी।
निसि-बासर रुचि पाप असुचिमन, खल मति मलिन निगमपथ त्यागी ॥१॥
नहिँ सतसङ्ग भजन नहिँ हरि के।, स्रवन न राम-कथा अनुरागी।
सुत बित दार भवन ममता निसि, सोवत अति न कबहुँ मति जागी ॥२॥
तुलसिदास हरि-नाम-सुधा तजि, सठ हठि पियत बिषय-बिष माँगी।
सूकर स्वान सृगाल सरिस जन, जनमत जगत जननि दुख लागी ॥३॥१४०॥

रई=रङ्गी। कलई=बनावटी। सीदत=दुखी होते। खलई=दुष्टता। सई=बरकत।
गोमर=कसाई। टई=कौड़ी। ठई=ठाना है। जई=बतिया। दाद=इन्साफ़।

रामचन्द्र रघुनायक तुम्ह सों, हौं बिनती केहि भाँति करौं।
अघ अनेक अवलोकि आपने, अनघ नाम अनुमानि डरौं ॥१॥
पर-दुख दुखी सुखी पर-सुख तें, सन्त-सील नहिं हृदय धरौं।
देखि आन की बिपति परम सुख, सुनि सम्पति बिनु आगि जरौं ॥२॥
भगति बिराग ज्ञान साधन कहि, बहु बिधि डहँकत लोग फिरौं।
सिव सरबस सुखधाम नाम तव, बेंचि नरक-प्रद उदर भरौं ॥३॥
जानतहूँ निज पाप जलधि जिय, जल सीकर सम सुनत लरौं।
रज सम पर अवगुन सुमेरु करि, गुन-गिरि सम रज तें निदरौं ॥४॥
नाना बेष बनाइ दिवस निसि, पर-बित जेहि तेहि जुगुति हरौं।
एकहु पल न कबहुँ अलोल चित, हित देइ पद-सरोज सुमिरौं ॥५॥
जौं आचरन बिचारहु मेरो, कलप कोटि लगि अवटि मरौं।
तुलसिदास प्रभु कृपा-बिलोकनि, गो-पद ज्यों भव-सिन्धु तरौं ॥६॥१४१॥

सकुचत हौं अति राम कृपा-निधि, क्यौं करि बिनय सुनावौं।
सकल धरम बिपरीत करत केहि,-भाँति नाथ मन भावौं ॥१॥
जानतहूँ हरि रूप चराचर, मैं हठि नयन न लावौं।
अञ्जन केस सिखा जुवती तहँ, लोचन-सलभ पठावौं ॥२॥
स्रवननि्ह को फल कथा तिहारी, यह समुझउँ समझावौं।
तिन्ह स्रवननि्ह पर दोष निरन्तर, सुनि सुनि भरि भरि तावौं ॥३॥
जेहि रसना गुन गाइ तिहारे, बिनु प्रयास सुख पावौं
तेहि मुख पर अपवाद भेक ज्यों, रटि रटि जनम नसावौं ॥४॥
करहु हृदय अति बिमल बसहिं हरि, कहि कहि सबहि सिखावौं।
हौं निज उर अभिमान मोह मद, खल-मंडली बसावौं ॥५॥
जो तनु धरि हरि-पद साधहिं जन, सो बिनु काज गँवावौं।
हाटक घट भरि धरेउ सुधा गृह, तजि नभ-कूप खनावौं ॥६॥

असुचि=अपवित्र। डहँकत=धोखा देता। रज=धूल। बित=धन। अलोल=स्थिर। अवटि=घुराकर। सिखा=अग्नि की ज्वाला।

मन क्रम बचन लाइ कीन्हे अघ, ते करि जतन दुरावों।
पर प्रेरित इरषा बस कबहुँक, किय कछु सुभ सो जनावों ॥७॥
बिप्र-द्रोह जनु बाँट परेउ हठि, सब सों बैर बढ़ावों।
ताहू पर निज मति बिलास सब, सन्तन्ह माँझ गनावों ॥८॥
निगम सेष सारद निहोरि जौं, अपने दोष कहावों।
तौ न सिरोहिं कल्प सत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावों ॥९॥
जौं करनी आपनी बिचारउँ, तौ कि सरन हौं आवों।
मृदुल सुभाउ सील रघुपति को, सो बल मनहिं दिखावों ॥१०॥
तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिं जेहि, सपनेहुँ तुम्हहिं रिझावों।
नाथ कृपा भव-सिन्धु धेनु-पद, सम सो जानि सिरावों ॥११॥ १४२ ॥

सुनहु राम रघुबीर गोसाँईं, मन अनीति रत मेरो।
चरन-सरोज बिसारि तिहारे, निसि दिन फिरत अनेरो ॥ १ ॥
मानत नहीं निगम अनुसासन, त्रास न काहू केरो।
भूलेउ सूल करम कोल्हुन्ह तिल, ज्यों बहु बारन्हि पेरो ॥ २ ॥
जहँ सतसङ्ग कथा माधव की, सपनेहुँ करत न फेरो।
लोभ मोह मद काम क्रोध रत, इन्ह सों नेह घनेरो ॥ ३ ॥
पर-गुन सुनत दाह-पर दूषन, सुनत हरष बहुतेरो।
आप पाप को नगर बसावत, सहि न सकत पर खेरो ॥ ४ ॥
साधन फल स्रुति सार नाम तव, भव-सरिता कहँ बेरो।
सो पर कर काकिनी लागि सठ, बेँचि होत हठि चेरो ॥ ५ ॥
कबहुँ कहूँ सङ्गति सुभाव तें, जाउँ सुमारग नेरो।
तब करि क्रोध सङ्ग कुमनोरथ, देत कठिन भटभेरो ॥ ६ ॥
इक हौं दीन मलीन हीन-मति, बिपति-जाल अति घेरो।
ता पर सहि न जाइ करुनानिधि, मन को दुसह दरेरो ॥ ७ ॥

सिरावों=शीतल होता हूँ। अनेरो=व्यर्थ। अनुसासन=आज्ञा। खरो=छोटा गाँव, पुरहाई। बेरो=नाव। काकिनी=कौड़ी। भटभेरो=धक्का देकर पीछे ढकेलना।

हारि परेउँ करि जतन बिबिध बिधि, ता तेँ कहत सबेरो।
तुलसिदास यह त्रास मिटइ जब,-करहु हृदय महँ डेरो ॥ ८ ॥१४३॥

सोधैाँ को जो नाम लाज तेँ, नहिँ राखेउ रघुबीर।
कारुनीक बिनु कारनही हरि, हरी सकल भव-भीर ॥ १ ॥
बेद बिदित जग बिदित अजामिल, बिप्रबन्धु अघ-धाम। घोर जमा-
लय जात निवारेउ, सुत हित सुमिरत नाम ॥ २ ॥
पसु पाँवर अभिमानसिन्धु गज, ग्रसेउ आइ जब ग्राह।
सुमिरत सकृत सपदि आयउ प्रभु, हरेउ दुसह उर दाह ॥३॥
ब्याध निषाद गिद्ध गनिकादिक, अगनित अवगुन-मूल।
नाम ओट तेँ राम सबन्हि की, दूर करी सब सूल ॥४॥
केहि आचरन घाटि हैाँ तिन्ह तेँ, रघुकुल-भूषन-भूप।
सीदत तुलसिदास निसि बासर, परेउ भाम तम-कूप ॥५॥१४४॥

राग-बिलावल

कृपासिन्धु जन दीन दुआरे, दाद न पावत काहे।
जब जहँ तुम्हहिँ पुकारत आरत, तब तिन्ह के दुख दाहे ॥ १ ॥
गज प्रहलाद पंडुसुत कपि सब के रिपु-सङ्कट मेँट्यो।
प्रनत बन्धु-भय बिकल बिभीषन, उठि सो भरत ज्योँ भैँट्यो ॥२॥
म तुम्हरो लेइ नाम ग्राम एक, उर आपने बसावोँ।
भजन बिबेक बिराग लोग मल, करम करम करि ल्यावोँ ॥३॥
सुनि रिस भरे कुटिल कामादिक, करहिँ जोर बरिआई।
तिन्हहिँ उजारि नारि अरि धन पुर, राखहिँ राम गोसाँई ॥४॥
सम सेवा छल दान दंड हैाँ, रचि उपाय पचि हारयोँ।
बिनु कारन को कलह बड़ो दुख, प्रभु सोँ प्रगटि पुकारयोँ ॥५॥

बिप्रबन्धु=अधम ब्राह्मण। यमालय=यमपुरी। सपदि=तुरन्त। करमकरम=धीरे धीरे।

सुर स्वारथी अनीस अलायक, निठुर दया चित नाहीं।
जाउँ कहाँ को बिपति निवारक, भव-तारक जग माहीं ॥६॥
तुलसी जदपि पोच तउ तुम्हरो, और न काहू केरो।
दीजै भगति-बाँह बैरक बलि, सुबस बसइ यह खेरो ॥७॥१४५॥

हौं सब बिधि राम रावरो, चाहत भयो चेरो। ठौर ठौर साहिबी होत है, ख्याल कालकलि केरो ॥१॥
काल करम इन्द्रिय-बिषय, गाहक गन घेरो। हौं न कबूलत बाँधि के, मोल करत करेरो ॥२॥
बन्दिछोर तव नाम है, बिरदैत बड़ेरो। मैं कहेउँ तब छल प्रीति कै, माँगेउ उर डेरो ॥३॥
नाम ओट अबलगि बचेउँ, मलजुग जग जेरो। अब गरीब न जमोगिये, पाइबो न हेरो ॥४॥
जेहि कौतुक बक स्वान को, प्रभु न्याव निबेरो। तेहि कौतुक कहिये कृपाल, तुलसी है मेरो ॥५॥१४६॥

कृपासिन्धु ता तेँ रहउँ निसि दिन मन मारे। महाराज लाज आपुही, निज जाँघ उघारे ॥१॥
मिले रहइँ मारेउ चहइँ कामादि सँघाती। मो बिनु रहइँ न मेरियइ, जारइँ छल छाती ॥२॥
बसत हिये हित जानि मैं, सब की रुचि पाली। कियेउ कथिक को दंड हौं जड़-कर्म कुचाली ॥३॥
देखी सुनी न आज लौं, अपनायत ऐसी। करहिँ सबइ सिर मेरेही, फिरि परइ अनैसी ॥४॥
बड़े अलेखी लखि परइँ, परिहरे न जाहीं। असमञ्जस मैं मगन हौं, लीजै गहि बाँहीं ॥५॥

निठुर = निर्दय। पोच = नीच। बैरक = झण्डा। खेरो = पुरवा, छोटागाँव। मलजुग = कलि। जेरे = ज़ेरेबार किया। जमोगिये = मोक़ाबिला कराइये। अपनायत = अपनता। अनैसी = अनिष्ट, बुराफल। अलेखी = अत्याचारी।

बारक बलि अवलोकिये, कौतुक जन जी को। अनायास मिटि जायगो, सङ्कट तुलसी को ॥६॥१४७

कहउँ कवन मुँह लाइ के, रघुबीर गोसाँई। सकुचत समुझत आपनी, सब साँइ-दोहाई ॥१॥

सेवत बस सुमिरत सखा, सरनागत सौंहों। गुन गन सीतानाथ के, चित करत न हौं हों ॥२॥

कृपासिन्धु बन्धु दीन के, आरत हितकारी। प्रनतपाल बिरदावली, सुनि जानि बिसारी ॥३॥

सेइ न धेइन सुमिरि के, पद-प्रीति सुधारी। पाइ सुसाहेब राम सों, भरि पेट बिगारी ॥४॥

नाथ गरीब-नेवाज हैं, मैं गही न गरीबी। तुलसी प्रभु निज ओर तें, बनि परइ सो कीबी ॥५॥१४८॥

कहाँ जाउँ कासों कहउँ, और ठौर न मेरे। जनम गँवायउँ तेरे ही, द्वार किङ्कर तेरे ॥१॥

मैं तो बिगारी नाथ सो, स्वारथ के लीन्हे। तोहि कृपानिधि क्यों बनइ, मेरी सी कीन्हे ॥२॥

दिन-दुरदिन दिन-दुरदसा, दिन-दुख दिन-दूषन। जौ लौं तू न बिलोकिहै, रघुबंस-बिभूषन ॥३॥

दई पीठि बिनु दीठि मैं, तू बिस्व-बिलोचन। तो सों तुहीं न दूसरो, नत-सोच-बिमोचन ॥४॥

पराधीन देव दीन हौं, स्वाधीन गोसाँई। बोलनहारे सों करइ, बलि बिनय कि झाँई ॥५॥

आपु देखि मोहि देखिये, जन जानिय साँचो। बड़ी ओट राम नाम की, जेहि लई सो बाँचो ॥६॥

धेइ=ध्यान करके। झाँई=परछाहीं।

रहनि रीति राम रावरी, नित हिय हुलसी है। ज्यों भावइ त्यों करु कृपा, तेरो तुलसी है ॥७॥१४९॥

रामभद्र मोहि आपनो, सोच है अरु नाहीं। जीव सकल सन्ताप के, भाजन जग माहीं ॥१॥
नातो बड़े समर्थ सों, एक ओर किधौं हूँ। तोकों मो से अति घने, मो कों एकइ तूँ ॥२॥
बड़ि गलानि हिय हानि है, सरबज्ञ सुसाँई। कूर कुसेवक कहत है, सेवक की नाँई ॥३॥
भलो पोच राम को कहइँ, मोहि सब नर-नारी। बिगरे सेवक स्वान सों, साहिब सिर गारी ॥४॥
असमञ्जस मन को मिटइ, सो उपाउ न सूझै। दीनबन्धु कीजै सोई, बनि परइ जो बूझै ॥५॥
बिरदावली बिलोकिये, तिन्ह मैं कोउ हौं हों। तुलसी प्रभु को परिहरेउ, सरनागत सौंहों ॥६॥ १५०॥

जौ पै चेराई राम की करते न लजातो। तौ तू दाम कुदाम ज्यों, कर कर न बिकातो ॥१॥
जपत जीह रघुनाथ को, नाम नहिं अलसातो। बाजीगर के सूम ज्यों, खल खेह न खातो ॥२॥
जौं तू मन मेरे कहे, राम काम कमातो। सीतापति सनमुख सुखी, सब ठाउँ समातो ॥३॥
राम सुहाते तोहि जौं, तू सबहि सुहातो। काल करम कुलि कारनी, कोऊ न कोँहातो ॥४॥
राम नाम अनुरागही, जिय जौं रतियातो। स्वारथ परमारथ पथी, तोहि सब पतियातो ॥५॥

चेराई = सेवकाई। खेह = धूल। कमातो = उपार्जन करना। रतियातो = प्रीति करता। सौंहों = सन्मुख, सामने।

सेइ साधु सुनि समुझि के, पर-पीर पिराते। जनम कोटि को काँदलो, हृद-हृदय थिराते ॥ ६ ॥
भव मग अगम अनन्त है, बिनु स्रमहिँ सिराते। महिमा उलटे नाम की, मुनि कियेउ किराते ॥७॥
अमर अगम तनु पाइ सो, जड़ जाय न जाते। होते मङ्गल-मूल तुव, अनुकूल बिधाते ॥ ८ ॥
जौँ मन प्रीति प्रतीति सोँ, राम नामहिँ राते। तुलसी राम प्रसाद तेँ, तिहुँ ताप न ताते ॥ ९ ॥ १५१ ॥

राम भलाई आपनी, भल कियेउ न काको। जुग जुग जानकि-नाथ को, जग जागत साको ॥ १ ॥
ब्रह्मादिक बिनती करी, कहि दुख बसुधा को। रबिकुल-कैरव-चन्द भो, आनन्द सुधा को ॥ २ ॥
कैासिक गरत तुषार ज्योँ, तकि तेज तिया को। प्रभु अनहित हित को दियेउ, फल कोप किया को ॥ ३ ॥
हरेउ पाप आप जाइ के, सन्ताप सिला को। सोच मगन काढ़े सहो, साहेब मिथिला को ॥ ४ ॥
रोष रासि भृगुपति घनी,-अहमिति ममता को। चितवत भाजन करि लियेउ, उपसम समता को ॥ ५ ॥
मुदित मानि आयसु चले, बन मातु पिता को। धरम धुरन्धर धीर धुर, गुन सीलजिता को ॥ ६ ॥
गुह गरीब गत ज्ञातिहू, जेहि जिउ न भखा को। पायेउ पावन प्रेम तेँ, सनमान सखा को ॥ ७ ॥
सदगति सबरी गीध की, सादर करता को। सोच सीँव सुग्रीव के, सङ्कट हरता को ॥ ८ ॥

काँदलो = गोहँड़िल। हृद = कुण्ड। थिराते = थिरा जाता। बसुधा = पृथिवी। तिया = ताड़का। सिला = अहल्या। उपसम = शान्ति।

राखि बिभीषन को सकइ, अस कालगहा को। आज ब्रिराजत राज होइ दसकंठ जहाँ को ॥ ९ ॥

बालिस बासी अवध को, बूझिये न खाको। ते पाँवर पहुँचे तहाँ, जहँ मुनि मन थाको ॥ १० ॥

गति न लहइ राम नाम सौं, अस बिधि सिरजा को। सुमिरत कहत प्रचारि के, बल्लभ-गिरजा को ॥ ११ ॥

अकनि अजामिल की कथा, सानन्द न भा को। नाम लेत कलि-कालहू, हरिपुरहि न गा को ॥ १२ ॥

राम नाम महिमा करइ, कामभूरुह आको। साखी बेद पुरान है, तुलसी तनु ताको ॥ १३ ॥१५२॥

मेरे रावरियै गति है, रघुपति बलिजाउँ। निडर नीच निरगुन निरधन कहँ, जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ ॥ १ ॥

हैं घर घर भव भरे मुसाहिब, सूझत सबहि आपनो दाउँ।
बानर-बन्धु बिभीषन हित बिनु, कोसलपाल कहूँ न समाउँ ॥ २ ॥
प्रनतारति भञ्जन जन रञ्जन, सरनागत पबि-पञ्जर नाउँ।
कीजै दास दासतुलसी अब, कृपासिन्धु बिनु मोल बिकाउँ ॥३॥१५३॥

देव दूसरो कौन दीन को दयाल। सील-निधान सुजान-सिरोमनि, सरनागत प्रिय प्रनतपाल ॥ १ ॥

को समरथ सरबज्ञ सकल प्रभु, सिव सनेह मानस मरालु।
को साहेब किय मीत प्रीति बस, खग निसिचर कपि भील भालु ॥२॥
नाथ हाथ माया प्रपञ्च सब, जीव दोष गुन करम काल। तुलसिदास भल पोच रावरो, नेकु निरखि कीजै निहाल ॥३॥१५४॥

कालगहा=काल से पकड़ा। बालिस=मूर्ख। खाको=ख़ाक भी। सिरजा=उपजाया। अकनि=सुनकर। कामभूरुह=कल्पवृक्ष। आको=मन्दार, अकौवा। मुसाहिब=मालिक। पबि-पंजर=वज्र का पिँजड़ा। निहाल=प्रसन्न।

राग-सारङ्ग

विस्वास एक राम नाम को। मानत नहीं प्रतीति अनत ऐसो सुभाउ मन बाम को ॥१॥
पढ़िबो परेउ न छठो छ-मत रिग,-जजुर अथरबन साम को।
ब्रत तीरथ तप सुनि सहमत पचि,-मरइ करइ तनु छाम को ॥ २ ॥
करम-जाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित दाम को।
ज्ञान बिराग जाग जप तप भये, लोभ मोह मद काम को ॥ ३ ॥
सब दिन सब लायक गायक भये, रघुनायक गुन-ग्राम को।
बैठे नाम कामतरु तर डर, कवन घोर घन घाम को ॥४॥
को जानइ को जइहै जमपुर, को सुरपुर पर-धाम को। तुलसिहि बहुत भलो लागत जग, जीवन राम-गुलाम को ॥५॥१५५॥

कलि नाम कामतरु राम को। दलनिहार दारिद दुकाल दुख, दोष घोर घन घाम को ॥१॥
नाम लेत दाहिनो होत मन, बाम बिधाता बाम को।
कहत मुनीस महेस महातम, उलटे सीधे नाम को ॥ २ ॥
भलो लोक परलोक तासु, जाको बल ललित ललाम को।
तुलसी जग जानियत नाम तेँ, सोच न कूच मुकाम को ॥ ३ ॥१५६॥

सेइये सुसाहेब राम सो। सुखद सुसील सुजान सूर सुचि, सुन्दर कोटिक काम सो ॥ १ ॥
सारद सेष साधु महिमा कह, गुन गन गायक साम सो। सुमिरि सप्रेम नाम जासों रति, चाहत चन्द्र-ललाम सो ॥२॥
गमन बिदेस कलेस लेस नहिँ, सकुचत सकृत प्रनाम सो। साखी ताको बिदित बिभोषन, बैठो अबिचल धाम सो॥३॥

बाम टेढ़ा। लूठी=भाग्य। छाम=दुर्बल। दाम=द्रव्य। परधाम=बैकुंठ। ललित=सुन्दर। ललाम=रत्न। कूच=चलना। मुकाम=रहना। साम=सामवेद। चन्द्रललाम=शिव।

टहल सहल जन महल महल, जागत चारौं जुग जाम सो। देखत दोष न खीझत रीझत, सुनि सेवक गुन-ग्राम सो ॥ ४ ॥
जाके भजे तिलोक तिलक भे, त्रिजगजोनि तन तामसो। तुलसी ऐसे प्रभुहि भजइ नहिँ, ताहि बिधाता बाम सो ॥ ५ ॥ १५७ ॥

राग-नट।

कैसे देउँ नाथहि खोरि। काम-लोलुप भ्रमत मन हरि, भगति परिहरि तोरि ॥ १ ॥
बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि। देत सिख सिखयो न मानत, मूढ़ता असि मोरि ॥२॥
किये सहित सनेह जे अघ, हृदय राखे चोरि। सङ्ग बस किय सुभ सुनाये, सकल लोक निहोरि ॥ ३ ॥
करउँ जो कछु धरउँ सचि पचि, सुकृत सिला बटोरि। पइठि उर बरबस दयानिधि, दम्भ लेत अँजोरि ॥ ४ ॥
लोभ मनहिँ नचाव कपि ज्यौं, गरे आसा डोरि। बात कहउँ बनाइ बुध ज्यौं, बर बिराग निचोरि ॥ ५ ॥
इतो पै तुम्हरो कहावत, लाज अँचई घोरि। निलजता पर रीझि रघुबर, देहु तुलसिहि छोरि ॥ ६ ॥१५८॥

है प्रभु मेरोई सब दोस। सीलसिन्धु कृपाल नाथ अनाथ आरत पोस ॥ १ ॥
बेष बचन बिराग मन अघ,-अवगुनन्हि को कोस। राम प्रीति प्रतीति पोली, कपट करतब ठोस ॥ २ ॥
राग रङ्ग कुसङ्गही सोँ, साधुसङ्गति रोस। चहत केहरि जसहि सेइ सृगाल ज्यौं खरगोस ॥ ३ ॥

त्रिगजोनि=तिर्य्यक्योनि, पशुपक्षी आदि। तामसो=तामसी शरीर, राक्षस। सिला=शीलावृत्ति। अँजोरि=उजाला करके। पोस=पालक। पोली=पोपला। ठोस=मजबूत।

सम्भु सिखवन रसनहूँ नित, राम नामहिँ घोस। दम्भहू कलि नाम कुम्भज, सोच सागर सोस ॥ ४ ॥

मोद मङ्गल मूल अति अनुकूल निज निरजोस। राम नाम प्रभाव सुनि तुलसिहि परम सन्तोस ॥ ५ ॥ १५९ ॥

मैँ हरि पतितपावन सुने। मैँ पतित तुम्ह पतितपावन, दोउ बानक बने ॥ १ ॥

व्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमन्हि भने। और अधम अनेक तारे, जात का पहिँ गने ॥ २ ॥

जानि नाम अजान लीन्हे, नरक जमपुर मने। दासतुलसी सरन आयउ, राखि ले आपने ॥ ३ ॥ १६० ॥

राग-मलार।

तो सोँ प्रभु जौपै कहूँ कोउ होतो। तो सहि निपट निरादर निसि दिन, रटि लटि अस घटि को तो ॥१॥

कृपा सुधा जलदानि मानिबो, कहउँ सो साँच निसोतो।
स्वाति सनेह सलिल सुख चाहत, चित चातक को पोतो ॥२॥

काल करम बस मन कुमनोरथ, कबहुँ कबहुँ कछु भोतो।
ज्यौँ मुदमय बसि मीन बारि तजि, उछरि भभरि लेइ गोतो ॥ ३ ॥

जितो दुराव दासतुलसी उर, क्यौँ कहि आवत ओतो।
तेरे राज राय दसरथ के, लयउँ बयो बिनु जोतो ॥ ४ ॥ १६१ ॥

राग-रामकली।

ऐसो को उदार जग माहीँ। बिनु सेवा जो द्रवइ दीन पर, राम सरिस कोउ नाहीँ ॥ १ ॥

जो गति जोग बिराग जतन करि, नहिँ पावत मुनि-ज्ञानी।
सो गति दई गीध सबरी कहँ, प्रभु न अधिक करि मानी ॥ २ ॥

घोस=उच्चारण, घोषित। सोस=सोखनेवाला। निरजोस=ठीक निश्चय। घटि=घटता, खिन्न होता। निसोत=निखालिस। पोतो=बच्चा। भभरि=डरकर। दुराव=छिपाव, कपट।

जो सम्पति दससीस अरपि के, रावन सिव पहँ लीन्ही।
सोइ सम्पदा बिभीषन कहँ अति, सकुच सहित हरि दीन्ही ॥३॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख, जौं चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम काम सब पूरन, करहिं कृपानिधि तेरो ॥ ४ ॥१६२॥

एकइ दानि-सिरोमनि साँचो। जेहि जाचेउँ सो जाचकता बस, फिरि बहु नाच न नाँचो ॥१॥
सब स्वारथी असुर सुर नर मुनि, कोउ न देत बिनु पाये। कोसलपाल कृपाल कलपतरु, द्रवत सकृत सिर नाये ॥२॥
हरिहु अवर अवतार आपने, राखी बेद बड़ाई। लेइ चिउरा निधि दई सुदामहिं, जद्यपि बाल-मिताई ॥ ३ ॥
कपि सबरी सुग्रीव बिभीषन, को नहिं कियेउ अजाची। अब तुलसिहि दुख देत दयानिधि, दारुन आस पिसाची ॥ ४ ॥१६३॥

राग-सोरठ

जानत प्रीति रीति रघुराई। नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह सगाई ॥ १ ॥
नेह निबाहि देह तजि दसरथ, कीरति अचल चलाई। ऐसेहु पितु तें अधिक गीध पर, ममता गुन गरुआई ॥ २ ॥
तिय बिरही सुग्रीव सखा लखि, प्रान प्रिया बिसराई। रन परे बन्धु बिभीषनही को, सोच हृदय अधिकाई ॥ ३ ॥
घर गुरु गृह प्रिय-सदन सासुरे, भइ जब जहँ पहुनाई। तब तहँ कहि सबरी के फलन की, रुचि माधुरी न पाई ॥ ४ ॥
सहज सरूप कथा मुनि बरनत, रहत सकुचि सिर नाई। केवट मीत कहे सुख मानत, बानर-बन्धु बड़ाई ॥५॥
प्रेम कनौड़ो राम सरिस प्रभु, त्रिजग त्रिकाल न भाई। तेरो रिनी कहेउ कपि सों असि, मानिहि को सेवकाई ॥६॥

सकृत=एक बार। निधि=सम्पत्ति। हाते=नाश। पहुनाई=मेहमानी।

तुलसी राम सनेह सील लखि, जौं न भगति उर आई। तौ तोहि जनमि जाय जननी जड़, तन तरुनता गँवाई ॥७॥१६४॥

रघुबर रावरि इहइ बड़ाई। निदरि गनी आदर गरीब पर, करत कृपा अधिकाई ॥१॥

थके देव साधन करि सब सपनेहुँ नहिं दियेउ दिखाई। केवट कुटिल भालु कपि कौनप, कियेउ सकल सँग-भाई ॥२॥

मिलि मुनिबृन्द फिरे दंडकबन, सो रचउ न चलाई। बारहि बार गीध सबरी की, बरनत प्रीति सुहाई ॥३॥

स्वान कहे तें कियेउ पुर बाहिर, जती गयन्द चढ़ाई। सिय निन्दक मतिमन्द प्रजा रज, निज-नय नगर बसाई ॥४॥

एहि दरबार दीन को आदर, रीति सदा चलि आई। दीन-दयाल दीन तुलसी की, काहु न सुरति कराई ॥५॥१६५॥

ऐसे राम दीन-हितकारी। अति कोमल करुनानिधान बिनु कारन पर उपकारी ॥१॥

साधन हीन दीन निज-अघ बस, सिला भई मुनि नारी। गृह तें गवनि परसि पद-पावन, घोर साप तें तारी ॥२॥

हिंसा-रत निषाद तामस बपु, पसु समान बनचारी। भेंटेउ हृदय लगाइ प्रेम-बस, नहिं कुल जाति बिचारी ॥३॥

जद्यपि द्रोह कियेउ सुरपति-सुत, कहि न जाइ अति भारी। सकल लोक अवलोकि सोक-हत, सरन गये भय टारी ॥४॥

बिहँग-जोनि आमिष अहार पर, गीध कवन ब्रतधारी। जनक समान क्रिया ताकी निज,-कर करि बात सँवारी ॥५॥

अधम जाति सबरी जोषित सठ, लोक बेद तें न्यारी। जानि प्रीति देइ दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उधारी ॥६॥

जाय=व्यर्थ। तरुनता=जवानी। गनी=अमीर। कौनप=राक्षस। रज=रजक, धोबी। आमिष=मास। जोषित=स्त्री।

कपि सुग्रीव बन्धु भय ब्याकुल, आयेउ सरन पुकारी। सहि न सके जन को दारुन दुख, हतेउ बालि सहि गारी ॥७॥
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर, कवन भजन अधिकारी। सरन गयउ आगे होइ लीन्हेउ, भेंटेउ भुजा पसारी ॥८॥
असुभ होइ जिन्ह के सुमिरन तेँ, बानर रीछ बिकारी। बेद बिदित पावन भये ते सब, महिमा नाथ तिहारी ॥९॥
कहँ लगि कहउँ दीन अगनित, जिन्ह की तुम्ह बिपति निवारी। कलिमल ग्रसित दासतुलसी पर, काहे कृपा बिसारी ॥१०॥१६६॥

रघुपति भगति करत कठिनाई। कहत सुगम करनी अपार जानइ सो जेहि बनिआई ॥१॥
जो जेहि कला कुसल ताकहँ सो सुलभ सदा सुखकारी। सफरी सनमुख जल-प्रबाह सुरसरी बहइ गज भारी ॥२॥
ज्योँ सर्करा मिलइ सिकता महँ, बल तेँ नहिँ बिलगावै। अति रसज्ञ सूछम पिपीलिका, बिनु प्रयासही पावै ॥३॥
सकल दृस्य निज उदर मेलि सोवइ, निद्रा तजि जोगी। सोइ हरि-पद अनुभवइ परम-सुख अतिसय द्वैत बियोगी ॥४॥
सोक मोह भय हरषत दिवस निसि, देस कोल तहँ नाहीँ। तुलसिदास एहि दसा हीन, संसय निर्मूल न जाहीँ ॥५॥१६७॥

जोपै राम-चरन-रति होती। तो कत त्रिबिध सूल निसि बासर, सहते बिपति निसोती ॥१॥
जोँ सन्तोष-सुधा निसि बासर, सपनेहुँ कबहुँक पावै। तो कत बिषय बिलोकि झूठ जल, मन कुरङ्ग ज्योँ धावै ॥२॥
जोँ श्रीपति महिमा बिचारि उर, भजते भाव बढ़ाये। तो कत द्वार द्वार कूकर ज्योँ, फिरते पेट खलाये ॥३॥

सफरी=छोटी मछली। जलप्रबाह=जलधारा। सर्करा=चीनी। पिपीलिका=चिउँटी दृस्य=खेल, तमाशा, संसार। निसोती=केवल

जे लोलुप भये दास आस के, ते सबही के चेरे । प्रभु बिस्वास आस जीती जिन्ह, ते सेवक हरि केरे ॥४॥
नहिँ एकहु आचरन भजन को, बिनय करत हौँ ताते । कीजै कृपा दासतुलसी पर, नाथ नाम के नाते ॥ ५ ॥ १६८ ॥

जौँ मोहि राम लागते मीठे ।
तौ नवरस षटरस रस अनरस, होइ जाते सब सीठे ॥ १ ॥
बञ्चक बिषय बिबिध तनु धरि, अनुभवे सुने अरु डीठे । यह जानतहूँ हिय अपने सपने न अघाइ उबीठे ॥ २ ॥
तुलसिदास प्रभु सोँ एकहि बल, बचन कहत अति ढीठे । नाम की लाज मानि करुनाकर, केहि न दियेउ करि चीठे ॥३॥१६९॥

यौँ मन कबहूँ तुम्हहिँ न लागेउ ।
ज्यौँ छल छाड़ि सुभाय निरन्तर, रहत बिषय अनुरागेउ ॥ १ ॥
ज्यौँ चितई पर नारि सुने पातक प्रपञ्च घर घर के । त्यौँ न साधु सुरसरि तरङ्ग निरमल गुन-गन रघुबर के ॥ २ ॥
ज्यौँ नासा सुगन्ध-रस बस रसना षट-रस रति मानी । राम प्रसाद माल जूठन लगि, त्यौँ न ललकि ललचानी ॥३॥
चन्दन चन्दबदनि भूषन पट, ज्यौँ चह पाँवर परसेउ । त्यौँ रघुपति-पद-पदुम परस कहँ, तनु पातकी न तरसेउ ॥४॥
ज्यौँ सब भाँति कुदेव कुठाकुर, सेयेउ बचन हियेहूँ । त्यौँ न राम सुकृतज्ञ जे सकुचत, सकृत प्रनाम कियेहूँ ॥५॥
चञ्चल चरन लोभ लगि लोलुप, द्वार द्वार जग बागे । राम-सीय आस्रमन्हि चलत त्यौँ, भयेउ न स्रमित अभागे ॥६॥
सकल अङ्ग पद बिमुख नाथ, मुख नाम की ओट लई है । है तुलसिहि परतीति एक प्रभु,-मूरति कृपामई है ॥७॥१७०॥

लोलुप=लालची। सीठे=सीठी, साररहीन। चीठे=परवाना, सरकार। बागे=घूमे।

कीजे मो को जमजातना-मई ।
तुम्ह तौ राम सदा सुचि साहेब, मैं सठ पीठि दई ॥ १ ॥
गर्भबास दस मास पालि पितु-मातु रूप हित कीन्होँ । जड़हि बिबेक सुसील खलहि, अपराधिहि आदर दीन्होँ ॥ २ ॥
कपट करउँ अन्तरजामिहु सोँ, अघ ब्यापकहि दुरावोँ । ऐसेहु कुमति कुसेवक पर, रघुपति न कियेउ मन बावोँ ॥ ३ ॥
उदर भरउँ किङ्कर कहि बेचेउँ,-बिषयन्हि हाथ हियो है । मो से बञ्चक को कृपाल छल छाड़ि के छोह कियो है ॥ ४ ॥
पल पल के उपकार रावरे, जानि बूझि सुनि नीके । भिदेउ न कुलि-सहु तेँ कठोर चित, कबहुँ प्रेम सिय पी के ॥ ५ ॥
स्वामी की सेवक-हितता सब, कछु निज साँइ-दोहाई । मैं मति तुला तौलि देखेउँ भइ, मेरिहि दिसि गरुआई ॥ ६ ॥
एतेहु पर हित करत नाथ मम, करि आये अरु करिहैं । तुलसी अपनी ओर जानियत, प्रभुहि कनौड़ो भरिहैं ॥ ७ ॥ १७१ ॥

कबहुँक हैाँ एहि रहनि रहैाँगो ।
श्रीरघुनाथ कृपाल कृपा तें, सन्त सुभाव गहैाँगो ॥१॥
जथा लाभ सन्तोष सदा काहू सोँ कछु न चहैाँगो । पर हित निरत निरन्तर मन क्रम, बचन नेम निबहैाँगो ॥२॥
परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहैाँगो । बिगत मान सम सीतल मन पर गुन नहिँ दोष कहैाँगो ॥३॥
परिहरि देह जनित चिन्ता दुख,-सुख सम बुद्धि सहैाँगो । तुलसिदास प्रभु एहि पथ रहि, अबिचल हरिभगति लहैाँगो ॥४॥१७२॥

नाहिँ न आवत आन भरोसो ।
एहि कलिकाल सकल साधन तरु, है स्रम फलनि फरोसो ॥१॥

वञ्चक=ठग । भिदेउ=चुभेउ । तुला=तराजू । कनौड़ो=एहसानमन्द । परुष=कठोर ।

तप तीरथ उपवास दान मख, जो जेहिं रुचइ करो सो। पायेहि पै जानिबो करम फल, भरि भरि बेद परोसो ॥२॥
आगम-बिधि जप जाग करत नर, सरत न काज खरो सो। सुख सपनेहुँ न जोग सिधि साधन, रोग बियोग धरो सो ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ मोह मिलि, ज्ञान बिराग हरो सो। बिगरत मन सन्यास लेत जल,-नावत आम घरो सो ॥ ४ ॥
बहु मत सुनि बहु पन्थ पुरानन्हि, जहाँ तहाँ झगरो सो। गुरु कहे राम भजन नीको मोहि, लगत राजडगरो सो ॥ ५ ॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि,-फिरि पचि मरइ मरो सो। राम नाम बोहित भव-सागर, चाहइ तरन तरो सो ॥ ६ ॥१७३॥

राग-सोरठी।

जाके प्रिय न राम-बैदेही। तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥ १ ॥
तजेउ पिता प्रहलाद बिभीषन बन्धु भरत महँतारी। बलि गुरु तजेउ नाह ब्रजबनितन्ह, भे जग मङ्गलकारी ॥ २ ॥
नातो नेह रामके मनियत, सुहृद सुसेब्य जहाँ लैाँ। अञ्जन कहा आँखि जेहि फूटइ, बहुतक कहउँ कहाँ लैाँ ॥ ३ ॥
तुलसी सोइ आपनो सकल बिधि, पूज्य प्रान तेँ प्यारो। जा सोँ होइ सनेह राम सोँ एतो मतो हमारो ॥ ४ ॥१७४॥

जैापै रहनि राम सोँ नाहीं। तैा नर खर कूकर सूकर सम, जाय जियत जग माहीं ॥ १ ॥
काम क्रोध मद लोभ नींद भय, भूख प्यास सबही के। मनुज-देह सुर साधु सराहत, सो सनेह सिय पी के ॥ २ ॥
सूर सुजान सपूत सुलच्छन, गनियत गुन गरुआई। बिनु हरिभजन इनारुन के फल, तजत नहीं करुआई ॥ ३ ॥

आम=कच्चा। घरो=घड़ा। राजडगर=शाही सड़क। करुआई=तिताई।

कीरति कुल करतूति भूति भलि, सील सरूप सलोने।
तुलसी प्रभु अनुराग रहित जस, सालन साग अलोने ॥ ४ ॥ १७५ ॥

राखेउ राम से स्वामि सों, नीच नेह न नातो। एते अनादर होतहू तोहि ते नहिं हातो ॥ १ ॥
जोरे नित नाते नये, नेह फोकट फीके। देह के दाहक भलेही, बने गाहक जी के ॥ २ ॥
अपने अपने को सबै, लोग चाहत नीको। मूल दूनहुँ को दयाल, दूलह प्रिय सी को ॥ ३ ॥
जीवहु के जीवननाथ, प्रानहुँ के प्यारे। सुखहू के सुख राम, सो तैं निपट बिसारे ॥ ४ ॥
किये हैं करैंगे औसि, तो से खल को भलो। ऐसे सुसाहेब राम सों, तू क्यों कुचाल चलो ॥ ५ ॥
तुलसी तेरी भलाई, जौपै अजहूँ सूझै। राँड़उ राउत होत है, रन फिरि के जूझै ॥ ६ ॥१७६॥

जौं तुम्ह त्यागहु हौं नहिं त्यागों। परिहरि पाँय काहि अनुरागों ॥१॥
सुखद सुप्रभु तुम्ह सों जग माहीं। स्रवन नयन मन गोचर नाहीं ॥
हौं जड़ जीव ईस रघुराया। तुम्ह मायापति हौं बस माया ॥२॥
हौं तो कुजाचक स्वामि सुदाता। हौं कपूत तुम्ह हित पितु माता ॥
जौपै कहूँ कोउ बूझत बातो। तौ तुलसी बिनु मोल बिकातो ॥ ३ ॥१७७॥

भयहु उदास राम मेरे आस रावरी। आरत स्वारथी सब कहैं बात बावरी ॥ जीवन को दानी घन कहा ताहि चाहिये। नेम प्रेम के निबाहे चातक सराहिये ॥१॥
मीन ते न लाभ लेस पानी पुन्य पीन को। जल बिनु थल कहाँ मीचु

भूति=ऐश्वर्य। सलोने=सुन्दर। सालन=कढ़ी। अलोने=बिना नोन का। हातो=नाश किया। राँड़उ=कादर भी। राउत=बहादुर। चातक=पपीहा।

बिन मीन को । बड़ेहि की ओट बलि बाँचि आये छोटे हैं । चलत खरे के सङ्ग जहाँ तहाँ खोटे हैं ॥ २ ॥
एही दरबार भलो दाहिनेहू बाम को । मो को सुखदायक भरोसो राम नाम को । कहत नसानी होइहै हिये माहिँ नीकी है । जानत कृपानिधान तुलसी के जी की है ॥ ३ ॥ १७८ ॥

राग-बिलावल ।

कहाँ जाउँ कासौं कहउँ कैान सुनै दीन की । त्रिभुवन तुहीं गति सब अङ्गहीन की ॥ १ ॥
जग जगदीस घर घरनि घनेरे हैं । निराधार को आधार गुन गन तेरे हैं ॥ गजराज काज खगराज तजि धायो को । मो से दोस कोस पोसे तो से माय जायो को ॥ २ ॥
मो से कूर कायर कपूत कौड़ी आध को । कियेउ बहु मोल तू करैया गीध स्राध को । तुलसी की तेरेही बनाये बलि बनैगी । प्रभु की बिलम्ब अम्ब दोष दुख जनैगी ॥ ३ ॥ १७९ ॥

बारक बिलोकि बलि कीजे मोहि आपनो । राय दसरथ के तू उथपन थापनो ॥ १ ॥
साहेब सरनपाल सबल न दूसरो । तेरो नाम लेतही सुखेत होत ऊसरो ॥ बचन करम तेरे मेरे मन गड़े हैं । देखे सुने जाने मैं जहान जेते बड़े हैं ॥ २ ॥
कौन कियो सनमान समाधान सीला को ॥ भृगुनाथ सारिखो जितैया कैान लीला को ॥ मातु पितु बन्धु हित लोक बेद पाल को । बोल को अचल नत करत निहाल को ॥ ३ ॥
सङ्गही सनेह बस अधम असाध को । गीध सबरी को कहो करी है सराध को ॥ निराधार को अधार दीन को दयालु को । मीत कपि केवट रजनिचर भालु को । ॥ ४ ॥

रङ्क निरगुनी नीच जे जे तैं निवाजे हैं। महाराज सुजन समाज ते बिराजे हैं॥ साँची बिरदावली न बढ़ि कहि गई है। सीलसिन्धु ढील तुलसी की बार भई है॥ ५ ॥१८०॥

राग-सोरठी।

केहू भाँति कृपासिन्धु मेरी ओर हेरिये। मो को और ठौर न सुटेक एक तेरिये॥ १॥

सहस सिला तैं अति जड़ मति भई है। कासोँ कहउँ कवने गति पाहनहिं दई है॥ पद राग जाग चहउँ कौसिक ज्योँ कियो है। कलिमल दल देखि भारी भीति भियो है॥ २॥

करम कपीस बाली बली त्रास त्रसेउ हैाँ। चाहत अनाथनाथ तेरी बाँह बसेउ हैाँ॥ महा मोह रावन बिभीषन ज्योँ हयो है। त्राहि तुलसीस त्राहि तिहूँ ताप तयो है॥ ३ १८१॥

नाथ गुन-गाथ सुनि होत चित चाउ सो। राम रीझबे की जानो भगति न भाउ सो॥ १॥

करम सुभाउ काल ठाकुर न ठाउँ सो। सुधन न सुतन न सुमन सुआउ सो॥ जाचोँ जल जाहि कहइ अमिय पिआउ सो। कहा कहउँ काहू सोँ न बढ़त हियाउ सो॥ २॥

बाप बलिजाउँ आप करिये उपाउ सो। तेरेही निहारे परइ हारेहू सुदाउ सो॥ तेरेही सुझाये सूझइ असुझ सुझाउ सो। तेरेही बुझाये बूझइ अबुझ बुझाउ सो॥ ३॥

नाम अवलम्ब- अम्बु दीन मीनराउ सो। प्रभु सो बानइ कहे जीह जरि जाउ सो॥ सबइ भाँति बिगरी है एक सुबनाउ सो। तुलसी सुसाहेबहि दियेउ है जनाउ सो॥ ४॥ १८२॥

राग=प्रेम। भियो=उत्पन्न हुआ। असुझ=न सूझने वाला। मीनराउ=पहिना।

राग-असावरी।

राम प्रीति की रीति आप नीके जनियत है।
बड़े की बड़ाई करै छोटे की छोटाई दूरि, ऐसी बिरदावली सुबेद मनियत है ॥ १ ॥
गीध को कियेउ सराध भीलनी के खाये फल, सोऊ साधुसभा भली भाँति भनियत है। रावरे आदरे लोक बेदहू आदरी अति, जोग ज्ञानहूँ तें ताहि गरू गनियत है ॥ २ ॥
प्रभु की कृपा कृपाल कठिन कलिहु काल, महिमा समुझि उर माहिँ अनियत है। तुलसी पराये बस भये रस अनरस, दीनबन्धु द्वारे हरि हठ ठनियत है ॥ ३ ॥ १८३ ॥

राम नाम के जपे पै जाइ जिय की जरनि।
कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये, जैसे तम नासबे को चित्र के तरनि ॥ १ ॥
करम कलाप परिताप पाप साने सब, ज्योँ सुफूल फूलइ रूख फोकट फरनि। दम्भ लोभ लालच उपासना बिनासि नीके, सुगति साधन भई उदर भरनि ॥ २ ॥
जोग न समाधि निरुपाधि न बिराग ज्ञान, बचन बिसेष बेष कहूँ न करनि। कपट कुपथ कोटि कहनि रहनि खोटि, सकल सराहैँ निज निज आचरनि ॥ ३ ॥
मरत महेस उपदेस हैँ कहा करत, सुरसरि तीर कासी धरम धरनि। राम नाम को प्रताप हर कहैँ जपइँ आप, जुग जुग जानै जग बेदहू बरनि ॥ ४ ॥
मति राम नामही सोँ रति राम नामही सोँ, गति राम नामही की

सराध=पिंडदान। अपाय=लँगड़ा। तरनि=सूर्य्य। कलाप=समूह। फोकट=व्यर्थ। करनि=करनी।

बिपति हरनि। राम नाम सों प्रतीति प्रीति राखे कबहुँक, तुलसी ढरैंगे राम आपनी ढरनि ॥ ५ ॥ १८४ ॥

लाज न लागत दास कहावत।
सो आचरन बिसारि सोच तजि जो हरि तुम्ह कहँ भावत ॥ १ ॥
सकल सङ्ग तजि भजत जाहि मुनि, जप तप जोग बनावत। मो सम मन्द महा खल पाँवर, कवन जतन तेहि पावत ॥ २ ॥
हरि निरमल मल-ग्रसित हृदय असमञ्जस मोहि जनावत। जेहि सर काक कङ्क बक सूकर, क्यों मराल तहँ आवत ॥ ३ ॥
जाको सरन जाइ कोबिद दारुन त्रय ताप बुझावत। तहूँ गये मद मोह लोभ अति, सरगहु मिटत न सावत ॥ ४ ॥
भव-सरिता कहँ नाव सन्त यह, कहि औरन्हि समुझावत। हौं तिन्ह सों हरि परम बैर करि, तुम्ह सों भलो मनावत ॥ ५ ॥
नाहिंन और ठौर मो कहँ ता तैं हठि नातो लावत। राखु सरन उदार चूड़ामनि, तुलसिदास गुन गावत ॥ ६ ॥ १८५ ॥

कवन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय, मानि जानि डरिये ॥ १ ॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये। जाते बिपति जाल निसि दिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये ॥ २ ॥
जानतहूँ मन बचन करम पर-हित कीन्हे तरिये। सो बिपरीत देखि पर-सुख बिनु कारनहीं जरिये ॥ ३ ॥
स्रुति पुरान सबको मत यह, सतसङ्ग सुदृढ़ धरिये। निज अभिमान मोह इरिषा बस, तिन्हहिं न आदरिये ॥४॥
सन्तत सोइ प्रिय मोहि सदा जा तैं भव-निधि परिये। कहउँ अब नाथ कवन बल तैं, संसार-सोक हरिये ॥ ५ ॥

कङ्क=चिल्होर। मराल=हंस। कोबिद=बिद्वान। सावत=सवतिया डाह।

जब कब निज करुना सुभाव तेँ, द्रवहु तो निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिँ, कत पचि पचि मरिये ॥६॥१८६॥

ताही ते आयउँ सरन सवेरे।
ज्ञान बिराग भगति साधन किछु, सपनेहुँ नाहिँ नमेरे ॥१॥
लोभ मोह मद क्रोध बोधरिपु, रहत रैन दिन घेरे।
तिन्हहिँ मिले मन भयउ कुपथ-रत, फिरइ तुम्हारेहि फेरे ॥२॥
दोष-निलय यह बिषय सोक-प्रद, कहत सन्त स्रुति टेरे।
जानतहूँ अनुराग तहाँ अति, सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥३।
बिष पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम्ह सम ईस कृपाल परम हित, पुनि न पाइहउँ हेरे ॥४॥
अस जिय जानि रहउँ सब तजि, रघुबीर भरोसे तेरे।
तुलसिदास यह बिपति बागुरा, तुम्ह सोँ बनिहि निबेरे ॥५॥१८७॥

मैं तोहि अब जानेउँ संसार।
बाँधि न सकहि मोहि हरि के बल, प्रगट कपट आगार ॥१॥
देखतही कमनीय कछू नाहिंन पुनि किये बिचार।
ज्योँ कदली तरु मध्य निहारत, कबहुँ न निसरइ सार ॥२॥
तेरे लिये जनम अनेक मैं, फिरत न पायउँ पार।
महा मोह मृग-जल सरिता महँ, बोरेउ बारहि बार ॥३॥
सुनु खल छल बल कोटि किये बस, होहिँ न भगत उदार।
सहित सहाय तहाँ बसु अब जेहि, हृदय न नन्दकुमार ॥४॥
तासोँ करइ चातुरी जो नहिँ, जानइ मरम तुम्हार।
सो परिमरइ डरइ रजु अहि तेँ, बूझइ नहिँ ब्यवहार ॥५॥
निज हित सुनु सठ हठ न करहि जौँ, चहहि कुसल परिवार।
तुलसिदास प्रभु के दासन्ह तजि, भजहि जहाँ मद मार ॥६॥१८८॥

निलय=स्थान। बागुरा=फन्दा, जाल। निबेरे=छुड़ाये। आगार=स्थान। सार=हीर परिमरइ=मरेगा, प्राण विसर्जन करेगा।

राग-गौरी ।

राम कहत चलु राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे ।
नाहिंत भव-बेगारि परिहउ पुनि, छूटब अति कठिनाई रे ॥१॥
बाँस पुरान साज सब अटकठ, सरल तिकोन खटोला रे ।
हमहिं दिहल करि कुटिल करमचँद, मन्द मोल बिनु डोला रे ॥२॥
बिषय कहार मार मद माँते, चलहिं न पाँव बटोरा रे ।
मन्द बलन्द अभेरा दलकन, पाइय दुख झकझोरा रे ॥३॥
काँट कुराय लपेटन लोटन, ठाँवहिं ठाँव बझाऊ रे ।
जस जस चलिय दूर तस तस निज-बास न भेंट लगाऊ रे ॥४॥
मारग अगम सङ्ग नहिं सम्बल, नाउँ गाउँ कर भूला रे ।
तुलसिदास भव त्रास हरहु अब, होहु राम अनुकूला रे ॥ ५ ॥१८९॥

राग-असावरी ।

सहज सनेही राम सों, तैं किये न सहज सनेह ।
ता तें भव भाजन भयउ, सुनु अजहुँ सिखावन एह ॥१॥
ज्यों मुख मुकुर बिलोकिये, अरु चित न रहइ अनुहारि ।
त्यों सेवतहु निरापने, ये मातु पिता सुत नारि ॥२॥
देइ सुमन तिल बासि के, पुनि खरि परिहरि रस लेत ।
स्वारथ हित भूतल भरे, इमि मन मेचक तनु सेत ॥३॥
करि बीतेउ अब करत है, करिबे हित मीत अपार ।
कतहुँ न कोउ रघुबीर सों, नित नेह निबाहनिहार ॥४॥
जासों सब नाते फुरइ, तासों न करी पहिचानि ।
ता तें कछु समुझेउ नहीं, मन कहा लाभ कह हानि ॥५॥

अटकठ = टेढ़ामेढ़ा । करमचँद = कर्म रूपी बढ़ई । मन्द = नीचा । बलन्द ऊँचा । अभेरा = टक्कर । दलकन = झकझोर की धमक । कुराय = कुराह । लपेटन = लपटनेवाले झाड़ । लोटन = लपने वाली लता । निजबास = अपना स्थान । सम्बल = राहख़र्च । मुकुर = आइना । अनुहारि = आकृति । निरापनें = बेगाने । खरि = खली । मेचक = काला ।

साँचो जानेउ झूठ कै, झूठे कहँ साँचो जानि।
को न गयउ को न जात है, को न जइहै करि हित-हानि ॥६॥
बेद कहेउ बुध कहत हैं, अरु हौं हूँ कहत हौं टेरि। तुलसी प्रभु साँचो हितू, तू हिय की आँखिन्ह हेरि ॥ ७ ॥ १९० ॥

एक सनेही साँचिलो, जग केवल कोसलपाल।
प्रेम कनौड़ो राम सों, प्रभु नहिं दूसरो दयाल ॥ १ ॥
तनु साथी सब स्वारथी, हैं सुर ब्यवहार सुजान। आरत अधम अनाथ को, हित को रघुबीर समान ॥ २ ॥
नाद निठुर समचर सिखी, तिमि सलिल सनेह न सूर। ससि सरोग दिनकर बड़े, सुठि पयद प्रेमरस कूर ॥ ३ ॥
जाको मन जा सों बँधो, ता कहँ सुखदायक सोइ। सरल सील साहेब सदा, सीतापति सरिस न कोइ ॥ ४ ॥
सुनि सेवा सहि को करइ, परिहरइ को दूषन देखि। केहि दिवान दिन दीन को, आदर अनुराग बिसेखि ॥ ५ ॥
खग सबरी पितु मातु ज्यौं, माने कपि को किय मीत। केवट भेँटेउ भरत ज्यौं, ऐसो को पतित-पुनीत ॥ ६ ॥
देइ अभागहि भाग को, को राखइ सरन सभीत। बेद बिदित बिरदावली, कबि कोबिद गावत गीत ॥ ७ ॥
कैसउ पाँवर पातकी, जेहि लई नाम की ओट। गाँठी बाँधेउ राम सो, परखेउ न फेरि खर खोट ॥ ८ ॥
मन मलीन कलि किलबिषी, हैं सुनत जासु कृत काज। सो तुलसी किय आपनो, रघुबीर गरीब-निवाज ॥ ९ ॥ १९१ ॥

जौपि जानकीनाथ सों, भयो नातो नेह न नीच।
स्वारथ पर-मारथ कहा, कलि कुटिल बिगोयो बीच ॥ १ ॥

प्रेम कनौड़ो=प्रेम का दबैल। नाद=राग। समचर=समान आचरण। सिखी=अग्नि। कूर=निर्दय। सहि=सही, ठीक। दिवान=दरबार। किलबिषी=पापी। बिगोयो=नष्ट भ्रष्ट किया।

धरम बरन आस्त्रमन्हि के, पइयत पोथिही पुरान। करतब बिनु बेष बिलोकिये, ज्यों सरीर बिनु प्रान ॥ २ ॥
बेद बिदित साधन सबइ, सुनियत दायक फल चारि। राम प्रेम बिनु जानिबो, जस सर सरिता बिनु बारि ॥ ३ ॥
नाना पथ निरबान के, नाना बिधान बहु भाँति। तुलसी तू मेरे कहे, जपु राम नाम दिन राति ॥ ४ ॥ १९२ ॥

अजहुँ आपने राम के, करतब समुझत हित होइ।
कहँ तू कहँ कोसलधनी, तोसि कहा कहत सब कोइ ॥ १ ॥
रीझि निवाजेउ कबहिं तू, कब खीझि दियेउ तोहि गारि। दरपन बदन निहारि के, सुबिचारि मानि हिय हारि ॥ २ ॥
बिगरी जनम अनेक की, सुधरत पल लगइ न आधु। पाहि कृपा-निधि प्रेम सोँ, कहे को न राम किय साधु ॥ ३ ॥
बालमीक केवट कथा, कपि भील भालु सनमान। सुनि सनमुख जो न राम सोँ, तेहि को उपदेसइ ज्ञान ॥ ४ ॥
का सेवा सुग्रीव की, का प्रीति रीति निरबाहु। तासु बन्धु बधि ब्याध ज्यों, सो सुनत सोहात न काहु ॥ ५ ॥
भजन बिभीषन को कहा, फल कहा दियेउ रघुराज। राम गरीब-नेवाज को, बड़ि बाँह बोल की लाज ॥ ६ ॥
जपहि नाम रघुनाथ को, चरचा न दूसरी चालु। सुमुख सुखद साहेब सुधी, समरथ कृपाल नतपालु ॥ ७ ॥
सजल नयन गदगद-गिरा, गहबर मन पुलक सरीर। गावत गुन गन राम के, केहि की न मिटी भव-भीर ॥ ८ ॥
प्रभु कृतज्ञ सरबज्ञ हैं, परिहरु पाछिली गलानि। तुलसी तोसोँ रामसोँ, कछु नइ न जान पहिचानि ॥ ९ ॥ १९३ ॥

निरबान=मोक्ष। गहबर=मगन, लवलीन।

जौं अनुराग न राम सनेही सों । तौ लह्यो लाहु कहा नर देही सों ॥ १ ॥
जो तनु धरि परिहरि सब सुख भय, सुमति राम अनुरागी ।
सो तनु पाइ अघाइ कियेउ अघ,-अवगुन अधम अभागी ॥ २ ॥
ज्ञान बिराग जोग जप तप मख, जग मुद मग नहिं थोरे ।
राम प्रेम बिनु नेम जाय जस, मृगजल-जलधि हिलोरे ॥ ३ ॥
लोक बिलोकि पुरान बेद सुनि, समुझि बूझि गुरु ज्ञानी ।
प्रीति प्रतीति राम-पद-पङ्कज, सकल सुमङ्गल खानी ॥ ४ ॥
अजहुँ जानि जिय मानि हारि हिय, होइ पलक महँ नीको ।
सुमिरु सनेह सहित सीतापति, मानि मतो तुलसी को ॥ ५ ॥ १९४ ॥

बलि जाउँ हौं राम गोसाँई । कीजै कृपा आपनी नाँई ॥ १ ॥
परमारथ सुरपुर साधन सब, स्वारथ सुखद भलाई ।
कलि सकोप लोपी सुचाल निज, कठिन कुचाल चलाई ॥ २ ॥
जहँ जहँ चित चितवत हित तहँ नित, नव बिषाद अधिकाई ।
रुचि भावती भभरि भागहि, समुहाहिं अमित अनभाई ॥ ३ ॥
आधि मगन मन ब्याधि बिकल तन, बचन मलीन झुठाई ।
एतेहु पर तुम्ह सों तुलसी की, सकल सनेह सगाई ॥ ४ ॥ १९५ ॥

काहे को फिरत मन करत जतन बहु, दुख न मिटै बिमुख रघुकुल बीर । कीजै जौं कोटि उपाइ त्रिबिध ताप न जाइ, कहेउ भुजा उठाइ मुनिबर कीर ॥ १ ॥
सहज टेव बिसारि तुहीं धौं देखै बिचारि, मिलै न मथत बारि घृत बिनु छीर । समुझि तजहि भ्रम भजहि पद जुगम, सेवत सुगम गुन गहन गँभीर ॥ २ ॥

हिलोरे=लहर, तरंग । लोपी=लुप्त कर दिया । अनभाई=न सुहाने वाली । आधि=चिन्ता । कीर=शुकदेवमुनि ।

आगम निगम ग्रन्थ रिषि मुनि सुर सन्त, सबही को एक मत सुनु मतिधीर। तुलसीदास पियास मरै पसु बिनु प्रभु, जदपि रहै निकट सुरसरि तीर॥ ३॥ १९६॥

नाहिंन चरन रति ताही तें सहौं बिपति, कहत सकल स्रुति मुनि मतिधीर। बसै जो ससि उछङ्ग स्वादित सुधा कुरङ्ग ताहि को निरखि भ्रम रबिकर नीर॥ १॥
सुनिय नाना पुरान मिटत नहीं अज्ञान, पढ़िय न समुझिय जिमि खग कीर। बझत बिनहिं पास सेमर सुमन आस, करत चरित तेइ फल बिनु हीर॥ २॥
कछु न साधन सिधि जानो न निगम बिधि, नहिं जप तप बस मन न समीर। दासतुलसी भरोस परम करुना कोस, प्रभु हरिहैं बिषम तव भव-भीर॥ ३॥ १९७॥

मन पछितइहै अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरि-पद भजु, करम बचन अरु ही ते॥ १॥
सहसबाहु दसबदन आदि नृप, बचे न काल बली ते। हम हम करि धन धाम सँवारेउ, अन्त चले उठि रीते॥ २॥
सुत बनितादि जानि स्वारथ रत, न करु नेह सबही ते। अन्तहु तोहि तजहिंगे पाँवर, तू न तजइ अबही ते॥ ३॥
अब नाथहि अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते। बुझइ न काम अगिनि तुलसी कहुँ, बिषय-भोग बहु घी ते॥ ४॥ १९८॥

काहे को फिरत मूढ़ मन धायो।
तजि हरि-चरन-सरोज सुधा-रस, रबि-कर-जल लय लायो॥ १॥
त्रिजग देव नर असुर अपर जग जोनि सकल भ्रमि आयो।
गृह बनिता सुत बन्धु भये बहु, मातु पिता जिन्ह जायो॥ २॥

उछङ्ग=गोदी। स्वादित=स्वाद पाये हुए। कुरङ्ग=मृग। पास=बन्धन। हीर=सार। समीर=पवन। सहसबाहु=सहस्रार्जुन।

जा तैं निरय-निकाय निरन्तर, सो इन्ह तोहि सिखायो । तव हित होइ कटइ भव-बन्धन, सो मग तौ न बतायो ॥ ३ ॥
अजहुँ बिषय कहँ जतन करत जद्यपि बहु बिधि डहँकायो । पावक-काम भोग घृत तैं सठ, कैसे परत बुझायो ॥ ४ ॥
बिषय हीन दुख मिलइ बिपति अति, सुख सपनेहुँ नहिँ पायो ।
उभय प्रकार प्रेत पावक ज्योँ, धन दुख प्रद स्रुति गायो ॥ ५ ॥
छिन छिन छीन होत जीवन दुरलभ तनु बृथा गँवायो । तुलसिदास हरि भजहि आस तजि, काल-उरग जग खायो ॥ ६ ॥ १९९ ॥

तांबे सोँ पीटि मनहुँ तनु पायो ।
नीच मीच जानत न सीस पर, ईस निपट बिसरायो ॥ १ ॥
अवनि रवनि धन धाम सुहृद सुत, को न इन्हहिँ अपनायो । काके भये गये सँग काके, सब सनेह छल छायो ॥ २ ॥
जिन्ह भूपन्ह जग जीति बाँधि जम, अपनी बाँह बसायो । तेउ काल कलेऊ कीन्हे, तू गिनती कब आयो ॥ ३ ॥
देखु बिचारि सार का साँचो, कहा निगम निज गायो । भजहि न अजहुँ समुझि तुलसी तेहि, जेहि महेस मन लायो ॥ ४ ॥ २०० ॥

लाभ कहा मानुष तनु पाये ।
काय बचन मन सपनेहुँ कबहुँक, घटत न काज पराये ॥ १ ॥
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन, आवत बिनहिँ बोलाये । तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन, समुझत नहिँ समुझाये ॥ २ ॥
पर-दारा पर-द्रोह मोह बस, किये मूढ़ मनभाये । गरभबास दुख रासि जातना, तीव्र बिपति बिसराये ॥ ३ ॥
भय निद्रा मैथुन अहार सब के समान जग जाये । सुर-दुर्लभ तनु धरि न भजे हरि, मद अभिमान गँवाये ॥ ४ ॥

निरय = नरक । प्रेत पावक = प्रेताग्नि ।

गई न निज पर बुद्धि सुद्ध होइ, रहे न राम लय लाये। तुलसिदास बीते एहि अवसर, का पुनि के पछिताये ॥ ५ ॥ २०१ ॥

काज कहा नर तनु धरि सारयो।
पर उपकार सार स्रुति को सो, धोखेहु मैं न बिचारयो ॥ १ ॥
द्वैतमूल भय सूल सोक फल, भव-तरु टरइ न टारयो। राम-भजन तीछन कुठार लेइ, सो नहिं काटि निवारयो ॥ २ ॥
संसय-सिन्धु नाम बोहित भजि, निज आतमा न तारयो। जनम अनेक बिबेक-हीन बहु,-जोनि भ्रमत नहिं हारयो ॥ ३ ॥
देखि आन की सहज सम्पदा, द्वेष अनल मन जारयो। सम दम दया दीनपालन सीतल हिय हरि न सँभारयो ॥ ४ ॥
प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति मैं-,मन क्रम बचन बिसारयो। तुलसि-दास एहि त्रास सरन राखिहि जेहि गीध उधारयो ॥ ५ ॥ २०२ ॥

श्रीहरि गुरु पद-कमल भजहि मन तजि अभिमान। जेहि सेवत पाइय हरि, सुख-निधान भगवान ॥ १ ॥
परिवा प्रथम प्रेम बिनु, राम मिलन अति दूर। जद्यपि निकट हृदय निज, रहे सकल भरपूर ॥ २ ॥
दुइज द्वैत-मत छाड़ि चरहि महिमंडल धीर। बिगत मोह माया मद, हृदय सदा रघुबीर ॥ ३ ॥
तीज त्रिगुन पर परम पुरुष श्रीरमन मुकुन्द। गुन सुभाव त्यागे बिना, दुरलभ परमानन्द ॥ ४ ॥
चौथ चारि परिहरहु, बुद्धि मन चित अहँकार। बिमल बिचार परम-पद, निज सुख सहज उदार ॥ ५ ॥
पाँचइ पाँच परस रस, सब्द गन्ध अरुरूप। इन्ह कर कहा न कीजिये, बहुरि परब भव-कूप ॥ ६ ॥

छठि षड़बरग करिय जय, जनकसुता-पति लागि। रघुपति कृपा बारि बिनु, नहिं बुझाइ लोभागि ॥ ७ ॥

सातइँ सप्तधातु निरमित तनु, करिय बिचार। तेहि तनु केर एक फल, कीजिय पर उपकार ॥ ८ ॥

आठइँ आठ प्रकृति पर, निरबिकार श्रीराम। केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिँ बहु काम ॥ ९ ॥

नवमी नवद्वार-पुर, बसि न आपु भल कोन। ते नर जोनि अनेक भ्रमत दारुन दुख दीन ॥ १० ॥

दसइँ दसहु कर संजम, जौं न करिय जिय जानि। साधन बृथा होइ सब, मिलहिँ न सारँग-पानि ॥ ११ ॥

एकादसी एक मन, बस कैसहुँ करि जाइ। सो ब्रत कर फल पावइ, आवागमन नसाइ ॥ १२ ॥

द्वादसि दान देहु अस, अभय होइ त्रय लोक। परहित-निरत सुपारन, बहुरि न व्यापइ सोक ॥ १३ ॥

तेरसि तीनि अवस्था, तजहु भजहु भगवन्त। मन क्रम बचन अगोचर, व्यापक व्याप्य अनन्त ॥ १४ ॥

चौदसि चौदह भुवन अचर चर रूप गोपाल। भेद गये बिनु रघुपति, अति न हरहिँ जग-जाल ॥ १५ ॥

पूनो प्रेम-भगति-रस, हरि रस जानहिँ दास। सम सीतल गत-मान ज्ञान-रत बिषय-उदास ॥ १६ ॥

त्रिबिध सूल होली जारिय खेलिय अस फागु। जौं जिय चहसि परम सुख, तौ एहि मारग लागु ॥१७॥

कुठारु=टँगारा। षड़बरग=काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर। व्यापक=व्यापने वाला। पूनो=पूर्णिमा। प्रेमभगति रस=प्रेम लक्षण भक्ति का आनन्द।

स्रुति पुरान बुध सम्मत, चाँचरि चरित मुरारि।
करि बिचार भव तरिय, परिय न कबहुँ जमधारि ॥१८॥
संसय समन दमन दुख, सुखनिधान हरि एक।
साधु कृपा बिनु मिलहिँ नहिँ, करिय उपाय अनेक ॥१९॥
भव-सागर कहँ नाव सुद्ध सन्तन्ह के चरन।
तुलसीदास प्रयास बिनु, मिलहिँ राम दुख हरन ॥२०॥२०३।

जौँ मन लागइ राम-चरन अस।
देह गेह सुत बित कलत्र महँ, मगन होत बिनु जतन किये जस ॥१॥
द्वन्द-रहित गत-मान ज्ञान-रत, विषय बिरत खटाइ नाना कस।
सुखनिधान सुजान कोसलपति, होइ प्रसन्न कहु क्यों न होहिँ बस ॥२॥
सर्ब भूत हित निर्व्यलीक चित, भक्ति प्रेम दृढ़ नेम एकरस।
तुलसिदास यह होइ तबहिँ जब, द्रवइ ईस जेहि हते सीसदस ॥३॥२०४॥

जौँ मन भजेउ चहइ हरि सुरतरु।
तौ तजि बिषय बिकार सार भजु, अजहूँ जो मैं कहउँ सोइ करु ॥१॥
सम सन्तोष बिचार बिमल अति, सतसङ्गति चारिहु दृढ़ करि धरु।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद, राग द्वेष निसेष करि परिहरु ॥२।
स्रवन कथा मुख नाम हृदय-हरि, सिर प्रनाम सेवा कर अनुसरु।
नयनन्हि निरखि कृपा-समुद्र हरि, अग जग रूप भूप सीताबरु ॥ ३ ॥
इहइ भगति बैराग ज्ञान यह, हरितोषन यह सुभ ब्रत आचरु।
तुलसिदास सिव मत मारग यह, चलत सदा सपनेहुँ नाहिँन डरु ॥४॥२०५॥

नाहिँन और सरन लायक कोउ, श्रीरघुपति सम बिपति निवारन।
काको सहज सुभाव दास बस, काहि प्रनत पर प्रीति अकारन ॥१॥
जन गुन अलप गनत सुमेरु करि, अवगुन कोटि समूह बिसारन।
परम कृपाल भगत-चिन्तामनि, बिरद पुनीत पतित जन तारन ॥२॥

चाँचरि=चञ्चरी राग, फाग धमार आदि। जमधारि=यमदूतों का समुदाय। खटाइ=खटाऊ, टिकनेवाला। कस=व्यक्ति। निर्व्यलीक=कपट रहित। निसेष=शेष रहित।

सुमिरत सुलभ दास दुख सुनि हरि, चलत तुरत पटपीत सँभार न।
साखि पुरान निगम आगम सब, जानत द्रुपदसुता अरु बारन ॥३॥
जाको जस गावत कबि कोबिद, जिनके लोभ मोह मद मार न।
तुलसिदास तजि आस सकल भजु, कोसलपति मुनिबधू उधारन ॥४॥२०६॥

भजिबे लायक सुखदायक रघुनायक सरिस सरनप्रद नाहिँन।
आनँदभवन दवन दुख दोषन्हि, रमारमन गुन गनत सिराहिँ न ॥१॥
आरत अधम कुजाति कुटिल खल, पतित सभीत कहूँ जे समाहिँ न।
सुमिरत नाम बिबसहू बारक, पावत सो पद जहँ सुर जाहिँ न ॥२॥
जेहि पद-कमल लुब्ध मुनि मधुकर, बिरति जे परम सुगतिहु लोभाहिँ न। तुलसिदास सठ तेहि न भजसि कस, कारुनीक जो अनाथहि दाहिन ॥ ३ ॥ २०७ ॥

राग-कल्याण।

नाथ सोँ कवन बिनती कहि सुनावौँ। त्रिबिधि अनगनित अवलोकि अघ आपने, सरन सनमुख होत सकुचि सिर नावौँ ॥ १ ॥
बिरचि हरिभगत को बेष बर टाटिका, कपट दल हरित पल्लवनि छावौँ। नाम लगि लाइ लासा ललित बचन कहि, ब्याध ज्योँ बिषय बिहँगनि बझावौँ ॥ २ ॥
कुटिल सतकोटि मम रोम पर वारियहि, साधु गनती मेँ पहिलेहि गनावौँ। परम बर्बर खर्बगर्ब-पर्बत चढ़ो, अज्ञ सरबज्ञ-जन-मनि जनावौँ ॥ ३ ॥
साँच किधौँ झूठ मोहि कहत कोउ कोउ राम, रावरो हौँहु तुम्हरो कहावौँ। बिरद की लाज करि दासतुलसिहि देव, लेहु अपनाइ जनि देहु धावौँ ॥ ४ ॥ २०८ ॥

बारन=हाथी। मुनिबधू=अहल्या। टाटिका=टट्टी। लगि=लग्गी। बर्बर=बकवादी। खर्ब=तुच्छ, नीच। जनमनि=जन शिरोमणि।

नाहिंनै नाथ अवलम्ब मोहि आन की। करम मन बचन पन सत्य करुनानिधे, एक गति राम भवदीय पदत्रान की ॥ १ ॥
कोह मद मोह ममतायतन जानि मन, बात नहिं जात कहि ज्ञान बिज्ञान की। काम सङ्कल्प उर निरखि बहु बासनहिं, आस नहिं एकहू आँक निरबान की ॥ २ ॥
बेद बोधित करम धरम बिनु अगम अति, जदपि जिय लालसा अमरपुर जान की। सिद्ध सुर मनुज दनुजादि सेवत कठिन, द्रवहिं हठजोग दिय भोग बलि प्रान की ॥ ३ ॥
भगति दुरलभ परम सम्भु सुक मुनि मधुप, प्यास पद-कञ्ज मकरन्द मधु पान की। पतितपावन सुनत नाम बिस्राम कृत, भ्रमत पुनि समुझि चित ग्रन्थि अभिमान की ॥ ४ ॥
नरक अधिकार मम घोर संसार तम,-कूप कहि भूप मोहि सक्ति आपान की। दासतुलसी सोउ त्रास नहिँ गनत मन, समुझि गुह गीध गज ज्ञाति हनुमान की ॥५॥ २०९ ॥

और कहँ ठैार रघुबंस-मनि मेरे। पतितपावन प्रनतपाल असरन सरन, बाँकुरे बिरद बिरदैत केहि केरे ॥ १ ॥
समुझि जिय दोष अतिरोष करि राम जेहि, करत नहिँ कान बिनती बदन फेरे। तदपि हौं निडर होइ कहउँ करुनासिन्धु, क्यौँ बरहि जात सुनि बात बिनु हेरे ॥ २ ॥
मख्य रुचि होत बसबे को पुर रावरे, राम तेहि रुचिहि कामादि गन घेरे। अगम अपबर्ग अरु स्वर्ग सुकृतैक फल, नाम बल क्यौँ बसउँ जमनगर नेरे ॥ ३ ॥
कतहुँ नहिँ ठाउँ कहँ जाउँ कोसलनाथ, दीन बित-हीन हौं बिकल

भवदीय = आप के। पदत्रान = जूता। ज्ञाति = जाति। बरहिजात = बराया जाता है। अपबर्ग = मोक्ष।

बिनु डेरे। दासतुलसिहि बास देहु अब करि कृपा, बसत गज गीध ब्याधादि जेहि खेरे ॥ ४ ॥ २१० ॥

कबहुँ रघुबंस-मनि सो कृपा करहुगे। जेहि कृपा ब्याध गज बिप्र खल नर तरे, तिन्हहिं सम मानि मोहि नाथ उद्धरहुगे ॥१॥
जोनि बहु जनमि किय करम खलु त्रिबिधि बिधि, अधम आचरन कछु हृदय नहिँ धरहुगे। दीन हित अजित सरबज्ञ समरथ प्रनत,-पाल चित मृदुल निज गुनन्हि अनुसरहुगे ॥ २ ॥
मोह मद मान कमादि खलमंडली, सकुल निर्मूल करि दुसह दुख हरहुगे। जोग जप ज्ञान बिज्ञान तेँ अधिक अति,-अमल दृढ़ भक्ति दै परम सुख भरहुगे ॥ ३ ॥
मन्द जन मौलि मनि सकल साधन हीन, कुटिल मन मलिन जिय जानि जौँ डरहुगे। दासतुलसी बेद बिदित बिरदावली, बिमल जस नाथ केहि भाँति बिस्तरहुगे ॥ ४ ॥ २११ ॥

राग-केदारा।

रघुपति बिपति दवन।
परम कृपाल प्रनत प्रतिपालक, पतित पवन ॥ १ ॥
कूर कुटिल कुल हीन दीन अति, मलिन जवन। सुमिरत नाम राम पठये सब, अपने भवन ॥ २ ॥
गज पिङ्गला अजामिल से खल, गनइ कवन। तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्ह गति, सीय-रवन ॥ ३ ॥२१२॥

हरि सम आपदा हरन।
नहिं कोउ सहज कृपाल दुसह दुख सागर तरन ॥ १ ॥
गज निज बल अवलोकि कमल गहि, गयउ सरन।
दीन बचन सुनि चलेउ गरुड़ तजि सुनाभधरन ॥ २ ॥

खेरे=पुरवा, छोटा ग्राम। पवन=पवित्र। सुनाभधरन=चक्रधारी विष्णु।

द्रुपदसुता को लगेउ दुसासन, नगन करन। हा हरि पाहि कहत पूरे पट, बिबिध बरन ॥ ३ ॥

इहइ जानि सुर नर मुनि कोबिद, सेवत चरन।। तुलसिदास प्रभु को न अभय किय, नृग उद्धरन ॥ ४ ॥ २१३ ॥

राग-कल्याण।

ऐसी कौन प्रभु की रीति।
बिरद हेतु पुनीत परिहरि, पाँवरन्हि पर प्रीति ॥ १ ॥
गई मारन पूतना कुच, कालकूट लगाइ।
मातु की गति दई ताहि, कृपाल जादवराइ ॥२॥
काम मोहित गोपिकन्ह पर, कृपा अतुलित कीन्ह।
जगतपिता बिरञ्चि जिन्ह के, चरन की रज लीन्ह ॥३॥
नेम सों सिसुपाल दिनप्रति, देत गनि गनि गारि।
कियेउ लीन सो आपु में हरि, राजसभा मँझारि ॥४॥
ब्याध चित देइ चरन मारेउ, मूढ़मति मृग जानि।
सो सदेह स्वलोक पठयेउ, प्रगट करि निज बानि ॥५॥
कवन तिन्ह की कहइ जिन्ह के, सुकृत अरु अघ दोउ।
प्रगट पातक रूप तुलसी, सरन राखेउ सोउ ॥६॥२१४॥

श्रीरघुबीर की यह बानि।
नीचहू सों करत नेह, सुप्रीति मन अनुमानि ॥१॥
परम अधम निषाद पाँवर, कवन ताकी कानि।
लियेउ सो उर लाइ सुत ज्यों, प्रेम की पहिचानि ॥२॥
गिद्ध कवन दयाल जो बिधि रचेउ हिंसा सानि।
जनक ज्यों रघुनाथ ताको, दियेउ जल निज पानि ॥३॥

बिरद=नामवरी। कालकूट=विष, ज़हर। कानि=मर्यादा।

प्रकृति मलिन कुजाति सबरी, सकल अवगुन खानि।
खात ताके दिये फल अति,-रुचि बखानि बखानि ॥४॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन, सरन आयेउ जानि।
भरत ज्यौं उठि ताहि भेंटत, देह दसा भुलानि ॥५॥
कवन सुभग सुसील बानर, जिन्हहिं सुमिरत हानि।
किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि ॥६॥
राम सहज कृपाल कोमल, दीन हित दिनदानि।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी, कुटिल कपट न ठानि ॥७॥२१५॥

हरि तजि और भजिये काहि।
नाहिंनै कोउ राम सौं, ममता प्रनत पर जाहि ॥१॥
कनककसिपु बिरञ्चि को जन, करम मन अरु बात। सुतहि दुखवत बिधि न बरजेउ, काल के घर जात ॥२॥
सम्भु सेवक जान जग बहु,-बार दिय दससीस। करत राम बिरोध सो सपनेहु न हटकेउ ईस ॥३॥
और देवन्ह की कहउँ कहा, स्वारथहि के मीत। कबहुँ काहु न राखि लियेउ कोउ सरन गये सभीत ॥४॥
को न सेवत देत सम्पति, लोकहू यह रीति। दासतुलसी दीन पर एक रामही की प्रीति ॥५॥२१६॥

जौपै दूसरो कोउ होय।
तौ हौं बारहि बार प्रभु कत, दुख सुनावउँ रोय ॥१॥
काहि ममता दीन पर केहि,-पतित पावन नाम।
पाप-मूल अजामिलहि को, दियेउ अपनो धाम ॥२॥
रहे सम्भु बिरञ्चि सुरपति, लोकपाल अनेक।
सोक-सरि बूड़त करीसहि, दई काहु न टेक ॥३॥

करीसहि=गजेन्द्रको। टेक=सहारा।

बिपुल भूपति सदसि महँ नर, नारि कहि प्रभु पाहि।
सकल समरथ रहे काहु न, बसन दीन्होँ ताहि ॥४॥
एक मुख क्योँ कहउँ करुनासिन्धु के गुन गाथ।
भगत हित धरि देह काह न, कियेउ कोसलनाथ ॥५॥
आपु से कहुँ सैाँपिये मोहि, जोपै अधिक घिनात।
दासतुलसी और बिधि क्योँ, चरन परिहरि जात ॥६॥२१७॥

कबहुँ दिखाइहैा हरि चरन।
समन सकल कलेस कलिमल, सकल मङ्गल करन ॥१॥
सरद भव सुन्दर तरुन तर, अरुन बारिज बरन।
लच्छि लालित ललित करतल, छबि अनूपम धरन ॥२॥
गङ्गजनक अनङ्ग अरि प्रिय, कपट बटु बलि छरन।
बिप्र तिय नृग बधिक के दुख, दोष दारुन दरन ॥३॥
सिद्ध सुर मुनिबृन्द बन्दित, सुखद सब कहँ सरन।
सकृत उर आनत जिन्हहिँ जन, होत तारन तरन ॥४॥
कृपासिन्धु सुजान रघुपति, प्रनत आरति हरन।
दरस आस पियास तुलसीदास चाहत मरन ॥५॥२१८॥

द्वारे मोरही को आज।
रटत ररिहा आरि और न कैारही के काज ॥१॥
कलि कराल दुकाल दारुन, सब कुभाँति कुसाज।
नीच जन मन ऊँच जैसे, कोढ़हू की खाज ॥२॥
हहरि हिय मैं सदय बूझेउँ, जाइ साधु-समाज।
मोहु से कहुँ कतहुँ कोउ तिन्ह, कहेउ कोसलराज ॥३॥
दीनता दारिद दलन को, कृपा बारिद बाज।
दानि दसरथ राय के, बानइत मैं सिरताज ॥४॥

लच्छि=लक्ष्मी। ररिहा=ररा, मंगन। आरि=अड़कर। सदय=दया युक्त। नरनारि=द्रौपदी।

जनम को भूखो भिखारी, हौँ गरीब-निवाज ।
पेट भरि तुलसिहि जँवाइय, भगति सुधा सुनाज ॥५॥२१९॥

करिय सँभार कोसलराय । और ठौर न और गति, अवलम्ब नाम बिहाय ॥ १ ॥

बूझि अपनी आपनो हित आप बाप न माय । राम राउर नाम गुरु सुर, स्वामि सखा सहाय ॥ २ ॥

राम राज न चलइ मानस-मलिन के छलछाय । कोपि तेहि कलि-काल कायर, मुयेहि घालत घाय ॥ ३ ॥

लेत केहरि को बयर ज्यौँ, भेक हति गोमाय । त्यौँ हि राम-गुलाम जानि, निकाम देत कुदाय ॥ ४ ॥

अकनि या के कपट करतब, अमित अनय अपाय । सुखी हरिपुर बसत होत परीछितहि पछिताय ॥ ५ ॥

कृपासिन्धु बिलोकिये जन मन की साँसति साय । सरन आयउ देव दीन,-दयाल देखन पाय ॥ ६ ॥

निकट बोलि न बरजिये बलिजाउँ हनिय न हाय । देखिहैँ हनुमान गोमुख-नाहरनि के न्याय ॥ ७ ॥

अरुन मुख भ्रू बिकट पिङ्गल नयन रोष कषाय । बीर सुमिरि समीर को घटिहै चपल चित चाय ॥ ८ ॥

बिनय सुनि बिहँसे अनुज सौँ, बचन के कहि भाय । भलि कही कहे लखनहूँ हँसि, बने सकल बनाय ॥ ९ ॥

दई दीनहि दाद सो सुनि, सुजन सदन बधाय । मिटे सङ्कट सोच पोच प्रपञ्च पाप निकाय ॥ १० ॥

सुनाज=सुन्दर अन्न । मानस मलिन=कलि । छलछाय=छलबाज़ी । गोमाय=सियार । कुदाय =दुख, पीड़ा । अनय=अनीति । अपाय=उपद्रव । साय=दुर्दशा । कषाय=गेरुआ रंग । दाद=इन्साफ ।

पेखि प्रीति प्रतीति जन पर, अगुन अनघ अमाय। दासतुलसी कहत मुनिगन, जयति जय उरुगाय ॥ ११ ॥ २२० ॥

कृपाही को पन्थ चितवत, दीन हौं दिन राति। होइ धौं केहि काल दीनदयाल जानि न जाति ॥ १ ॥
सगुन ज्ञान बिराग भगति, सुसाधनन्हि की पाँति। भजी बिकल बिलोकि कलि अघ,-अवगुनन्हि की थाति ॥ २ ॥
अति अनीति कुरीति भइ भुइँ, तरनिहूँ तें ताति। जाउँ कहँ बलि-जाउँ कहुँ नहिं ठाउँ मति अकुलाति ॥ ३ ॥
आपु सहित न आपनो कोउ, बाप कठिन कुभाँति। स्याम घन सींचिये तुलसी, सालि सफल सुखाति ॥ ४ ॥ २२१ ॥

बलिजाउँ और का सों कहौं। सदगुनसिन्धु स्वामि सेवक हित, कहूँ न कृपानिधि सों लहौं ॥ १ ॥
जहँ जहँ लोभ लोल लालच बस, निज हित चित चाहनि चहौं।
तहँ तहँ तरनि तकत उलूक ज्यों, भटकि कुतरु कोटर गहौं ॥ २ ॥
काल सुभाउ करम बिचित्र फल, दायक सुनि सिर धुनि रहौं।
मो कहँ सकल सदा एकहि रस, दुसह दाह दारुन दहौं ॥ ३ ॥
उचित अनाथ होइ दुख भाजन, भयउँ नाथ किङ्कर न हौं।
अब रावरो कहाइ न बूझिय, सरनपाल सासति सहौं ॥ ४ ॥
महाराज राजीव बिलोचन, मगन पाप सन्ताप अहौं।
तुलसी प्रभु जब कब जेहि तेहि बिधि, राम निबाहे निरबहौं ॥ ५ ॥ २२२ ॥

आपनो कबहुँ करि जानिहौ।
राम गरीबनिवाज राजमनि, बिरद लाज उर आनिहौ ॥ १ ॥
सीलसिन्धु सुन्दर सब लायक, समरथ सदगुन खानि हौ।
पाले हौ पालत पालहुगे, प्रनत प्रेम पहिचानिहौ ॥ २ ॥

अमाय=कपट रहित। उरुगाय=विष्णु। थाति=धरोहर। सालि=धान। सफल=फल-युक्त, फला हुआ। भटकि=भ्रम में पड़ कर। कोटर=खोढ़रा। राजमनि=राजाओं के शिरोभूषण।

बेद पुरान कहत जग जानत, दीनदयाल दिनदानि हौ।
कहि आवत बलिजाउँ मनहुँ मम, बार बिसारे बानि हौ ॥ ३ ॥
आरत दीन अनाथन्ह के हित, मानत लौकिक कानि हौ।
है परिनाम भलो तुलसी को, सरनागत भय भानिहौ ॥ ४ ॥ २२३ ॥

रघुबरहि कबहुँ मन लागिहै।
कुपथ कुचाल कुमति कुमनोरथ, कुटिल कपट कब त्यागिहै ॥ १ ॥
जानत गरल अमिय बिमोह बस, अमिय गनत करि आगि है।
उलटी रीति प्रीति अपने की, तजि प्रभु पद अनुरागिहै ॥ २ ॥
आखर अरथ मञ्जु मृदु मोदक, राम प्रेम पगि पागिहै।
अस गुन गाइ रिझाइ स्वामि सोँ, पइहै जो मुँह माँगिहै ॥ ३ ॥
तू एहि बिधि सुख-सेज सोइहै, जरनि जीव की भागिहै।
राम प्रसाद दासतुलसी उर, रामभगति जुग जागिहै ॥ ४ ॥ २२४ ॥

भरोसो और आइहै उर ताके।
कै कहुँ लहइ राम सोँ साहेब, कै अपनो बल जाके ॥ १ ॥
कै कलिकाल कराल न सूझत, मोह मार मद छाके। कै सुनि स्वामि सुभाव न रह चित, जो हित सब अँग थाके ॥ २ ॥
हौँ जानत सब भाँति अपनपो, प्रभु सोँ सुनेउँ न साके।
उपल भील खग मृग रजनीचर, भल भये करतब काके ॥ ३ ॥
मो को भयेउ नाम सुरतरु सोँ, राम कृपाल कृपा के।
तुलसी सुखी निसोच राज ज्योँ, बालक माय बबा के ॥ ४ ॥ २२५ ॥

भरोसो जाहि दूसरो सो करो।
मो को राम को नाम काम-तरु, कलि कल्यान फरो ॥ १ ॥
करम उपासन ज्ञान बेद मत, सब सब भाँति खरो। मोहि तो सावन के अन्धहि ज्योँ, सूझत रङ्ग हरो ॥ २ ॥

कानि=लाज। परिनाम=अन्त। जागिहै=फैलेगा। साके=सामर्थ्यवान। बबा=बाप, पिता।

चाटत रहेउँ स्वान पातरि ज्यौं, कबहुँ न पेट भरो। सो हौं सुमिरत नाम सुधारस, पेखत परसि धरो ॥ ३ ॥
स्वारथ औ परमारथहू को, नहिं कुञ्जरोनरो। सुनियत सेतु पयोधि पखानन्हि, करि कपि कटक तरो ॥ ४ ॥
प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ, ताको काज सरो। मेरे माय बाप दोउ आखर, हौं सिसु अरनि अरो ॥ ५ ॥
सङ्कर साखि जो राखि कहउँ कछु, तौ जरि जीह गरो। अपनो भलो राम नामहिं तैं, तुलसिहि समुझि परो ॥ ६ ॥ २२६ ॥

नाम राम रावरो हित मेरे। स्वारथ परमारथ साथिन्ह सों, भुज उठाइ कहउँ टेरे ॥ १ ॥
जननि जनक तजे जनमि करम बिनु, बिधि सिरजेउ अवडेरे।
मोहु से कोउ कोउ कहत राम को, सो प्रसङ्ग केहि केरे ॥ २ ॥
फिरे ललात बिनु नाम उदर लगि, दुखहु दुखित मोहि हेरे।
नाम प्रसाद लहत रसाल-फल, अब हौं बबुर बहेरे ॥ ३ ॥
साधत साधु लोक परलोकहि, सुनियत जतन घनेरे।
तुलसी के अवलम्ब नाम को, एक गाँठि कइ फेरे ॥ ४ ॥ २२७ ॥

प्रिय राम नाम तैं जाहि न रामो। ताको भलो कठिन कलिकालहु, आदि मध्य परिनामो ॥ १ ॥
सकुचत समुझि नाम महिमा मद, मोह लोभ कोह कामो।
राम नाम जप निरत सुजन पर, करत छाँह घोर घामो ॥ २ ॥
नाम प्रभाव सही जो कहइ कोउ, सिला सरोरुह जामो।
जो सुनि सुमिरि भाग्य भाजन भइ, सुकृत सील भील-भामो ॥ ३ ॥
बालमीकरु अजामिल के कछु, हुतो न साधन सामो।
उलटे पलटे नाम महातम, गुञ्जनि जितो ललामो ॥ ४ ॥

अरनि=हठ करके। अरो=अड़ा हूँ। अवडेरे=अभागा, फजीहत भोगनेवाला। सरोरुह=कमल। भीलभामो=शबरी। सामो=सामग्री। गुंजा=घुँघुची। ललाम=रत्न।

राम तेँ अधिक नाम करतब जेहि, किये नगर गत गामो।
भयउ बजाइ दाहिने जो जपि, तुलसिदास से बामो ॥ ५ ॥ २२८ ॥

गरैगो जीह जैा कहउँ और को हैाँ। जानकिजीवन जनम जनम जग, ज्यायो तिहारेहि कैार को हैाँ ॥ १ ॥
तीनि लोक तिहुँ काल न देखत, सुहृद रावरे जोर को हैाँ।
तुम्ह सोँ छल करि जनम जनम किमि, होइहैाँ नरक घोर को हैाँ ॥२॥
कहा भयउ मन मिलि कलिकालहि, कियेउ भैाँतुवा भैाँर को हैाँ।
तुलसिदास सीतल नित एहि बल, बड़े ठिकाने ठैार को हैाँ ॥३॥२२९॥

अकारन को हित और को है। बिरद गरीबनिवाज कैान को, भैाँह जासु जन जोहै ॥ १ ॥
छोटे बड़े चहत सब स्वारथ, जो बिरञ्चि बिरचो है। कोल कुटिल कपि भालु पालिबो, कैान कृपालहि सोहै ॥ २॥
काको नाम अनख आलस कहे, अघ अवगुननिह बिछोहै।
किय तुलसी से सेवक संग्रह, सठ सब दिन साँइदोहै ॥ ३ ॥ २३० ॥

और मेरे को है काहि कहिहैाँ। रङ्क राज ज्योँ मन को मनोरथ, जेहि सुनाइ सुख लहिहैाँ ॥ १ ॥
जमजातना जोनि सङ्कट सब, सहे दुसह अरु सहिहैाँ।
मो को अगम सुगम तुम्हको प्रभु, तउ फल चारि न चहिहैाँ ॥ २ ॥
खेलन को खग मृग तरु किङ्कर, होइ राउर हैाँ रहिहैाँ।
एहि नाते नरकहु सचु या बिनु, परमपदहु दुख दहिहैाँ ॥३॥
इतनी जिय लालसा दास के, कहत पानही गहि हैाँ।
दीजै बचन कि हृदय आनिये, तुलसी पन निरबहिहैाँ ॥४॥२३१॥

जोर = बराबरी। भैाँतुवा = भैाँती, सन बटने वाला काठ का यंत्र। अकारन = बिना मतलब। जोहै = देखे। सचु = आनन्द।

दीनबन्धु दूसरो कहँ पावौं।
को तुम्ह बिनु पर पीर पाइहै, केहि दीनता सुनावौं ॥१॥
प्रभु अकृपाल कृपाल अलायक, जहँ जहँ चितहि डोलावौं।
इहइ समुझि सुनि रहउँ मौनही, कहि भ्रम कहा गँवावौं ॥२॥
गोपद बुड़िबे जोग करम करि, बातन्हि जलधि थहावौं।
अति लालची काम किङ्कर मन, मुख रावरो कहावौं ॥३॥
तुलसी प्रभु जिय की जानत सब, अपनो कछुक जनावौं।
सोइ कीजै जेहि भाँति छाड़ि छल, द्वार परो गुन गावौं ॥४॥२३२॥

मनोरथ मन को एकहि भाँति।
चाहत मुनि मन अगम सुकृत फल, मनसा अघ न अघाति ॥१॥
करम भूमि कलि जनम कुसङ्कट, मति बिमोह मद माँति।
करत कुजोग कोटि क्यों पइयत, परमारथ पथ साँति ॥२॥
सेइ साधु गुरु सुनि पुरान स्रुति, बूझेउँ राग बजे ताँति।
तुलसी प्रभु सुभाव सुरतरु सों, ज्यों दरपन मुख काँति ॥३॥२३३॥

जनम गयो बादिहि बर बीति।
परमारथ पाले न परेउ कछु, अनुदिन अधिक अनीति ॥१॥
खेलत खात लरिकपन गो चलि, जुवा जुबति लियो जीति।
रोग बियोग सोग स्रम सङ्कुल, बड़ि बय बृथहि अतीति ॥२॥
राग रोष इरिषा बिमोह बस, रुची न साधु समीति।
कहे न सुने गुन गन रघुबर के, भइ न राम-पद प्रीति ॥३॥
हृदय दहत पछितात अनल इव, सुनत दुसह भव-भीति।
तुलसी प्रभु तें होइ सो कीजिय, समुझि बिरद की रीति ॥४॥२३४॥

ऐसहि जनम समूह सिराने।
प्राननाथ रघुनाथ से प्रभु तजि, सेवत पाय बिराने ॥१॥

मनसा=इच्छा। कुसंघट=बुरासङ्ग। अतीति=बीत गयी। समीति=मंडली।

जे जड़ जीव कुटिल कायर खल, केवल कलिमल साने।
सूखत बदन प्रसंसत तिन्ह कहँ, हरि तैं अधिक करि माने ॥२॥
सुख हित कोटि उपाय निरन्तर, करत न पाय पिराने।
सदा मलीन पन्थ के जल ज्यौं, कबहुँ न हृदय थिराने ॥३॥
यह दीनता दूरि करिबे कहँ, अमित जतन उर आने।
तुलसी चित चिन्ता न मिटइ बिनु, चिन्तामनि पहिचाने ॥४॥२३५॥

जौं जिय जानकीनाथ न जाने।
तौ सब करम धरम स्रमदायक, ऐसहि कहत सयाने ॥१॥
जे सुर सिद्ध मुनीस जोगबिद, बेद पुरान बखाने।
पूजा लेत देत पलटे सुख, हानि लाभ अनुमाने ॥२॥
काको नाम धोखे हूँ सुमिरत, पातक पुञ्ज सिराने।
बिप्र बधिक गज गीध कोटि खल, कवन के पेट समाने ॥३॥
मेरु से दोष दूरि करि जन के, रेनु से गुन उर आने।
तुलसिदास तेहि सकल आस तजि, भजहि न अजहुँ अजाने ॥४॥२३६॥

काहे न रसना रामहिं गावहि।
निसि दिन पर अपबाद बृथा कत, रटि रटि राग बढ़ावहि ॥१॥
नर-मुख सुन्दर मन्दिर पावन, बसि जनि ताहि लजावहि।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत, रबि-कर-जल कहँ धावहि ॥२॥
काम-कथा कलि-कैरव चन्दिनि, सुनत स्रवन दै भावहि।
तिन्हहिं हटकि कहि हरि कल कीरति, करन कलङ्क नसावहि ॥३॥
जातरूप मति युक्ति रुचिर मनि, रचि रचि हार बनावहि।
सरन सुखद रबिकुल-सरोज-रबि, राम नृपहि पहिरावहि ॥४॥
बाद बिबाद स्वाद तजि भजि हरि, सरस चरित चित लावहि।
तुलसिदास भव तरहि तिहूँ पुर, तू पुनीत जस पावहि ॥५॥२३७॥

करन=कर्ण, कान। जातरूप=सोना। सरस=रसीला।

आपनो हित रावरे सोँ जैा सूझै।
तौ जन तन पर अछत सीस सुधि, क्यौँ कबन्ध ज्यौँ जूझै ॥ १ ॥
निज अवगुन गुन राम रावरे, लखि सुनि मति मन रूझै।
रहनि कहनि समुझनि तुलसी की, को कृपाल बिनु बूझै ॥ २ ॥ २३८ ॥

जाको हरि दृढ़ करि अङ्ग करयो।
सोइ सम सील पुनीत बेद बिद, बिद्या गुनन्हि भरयो ॥ १ ॥
उतपति पंडु-सुतन्ह की करनी, सुनि सतपन्थ डरयो।
ते त्रयलोक पूज्य पावन जस, सुनि सुनि लोक तरयो ॥ २ ॥
जो निज धरम बेद बोधित सो, करत न कछु बिसरयो।
बिनु अवगुन कृकलास कूप मज्जत कर गहि उधरयो ॥ ३ ॥
ब्रह्म-बिसिख ब्रह्मांड दहन छम, गरभ न नृपति जरयो।
अजर अमर कुलिसहु नाहिंन बध, सो पुनि फेन मरयो ॥ ४ ॥
बिप्र अजामिल अरु सुरपति तेँ, कहा जो नहिँ बिगरयो।
उनको कियेउ सहाय बहुत उर, को सन्ताप हरयो ॥ ५ ॥
गनिका अरु कदरज तेँ जग महँ, अघ न करत उबरयो।
तिनको चरित पबित्र जानि हरि, निज हृदि भवन धरयो ॥ ६ ॥
केहि आचरन भलो मानहु प्रभु, सो नहिँ समुझि परयो।
तुलसिदास रघुनाथ कृपा को, जोवत पन्थ खरयो ॥ ७ ॥ ॥ २३९ ॥

सोइ सुकृती सुचि साँचो जाहि राम तुम्ह रीझै।
गनिका गीध बधिक हरिपुर गये, लेइ करसो प्रयाग कब सीझे ॥१॥
कबहुँ न डगेउ निगम-मग तेँ पग, नृग जग जोन जिते दुख पाये।
गज धैाँ कवन दिछित जेहि सुमिरत, लेइ सुनाभ बाहन तजि धाये ॥२॥

रूझै=उलझै। बोधित=बतलाये। कृकलास=गिरगिट। उधरयो=उद्धार किया। ब्रह्मबिशिख=ब्रह्मास्त्र। छम=समर्थ। नृपति=परीक्षित। कदरज=कदर्य, पापी। करसी=उपली, कंडा। सीझे=आँच में तपना। सुनाभ=सुदर्शन चक्र।

सुर मुनि बिप्र बिहाइ बड़े कुल, गोकुल जनम गोप गृह लीन्होँ।
बाँऔँ दियेउ बिभव कुरुपति को, भोजन जाइ बिदुर घर कीन्होँ ॥३॥
मानत भलो भाव भगतिहि तेँ, कछुक रीति पारथहि जनाई।
तुलसी सहज सनेह राम-बस, और सबइ जल की चिकनाई ॥ ४ ॥ २४० ॥

तब तुम्ह मोहू से सठन्हि हठि गति देते।
कैसहुँ नाम लियेउ कोउ पाँवर, सुनि सादर आगे होइ लेते ॥ १ ॥
पाप खानि जिय जानि अजामिल, जमगन तमकि तये तेहि भे ते।
लियेउ छड़ाइ चले कर मीजत, पीसत दाँत गये रिस रेते ॥ २ ॥
गौतमतिय गज गीध बिटप कपि, है नाथहि निक मालुम ते ते।
जिन्ह जिन्ह काज समाज साधु तजि, कृपासिन्धु तब उठि तहँ गे ते ॥ ३ ॥
अजहुँ अधिक आदर एहि द्वारे, पतित पुनीत होत नहिँ केते।
मेरे पासङ्गहु न पूजिहइँ, होइ गये हैँ होनेहुँ खल जेते ॥ ४ ॥
हैाँ अबलैाँ करतूति तिहारी, चितवत हुतो न रावरे चेते। अब तुलसी पूतरो बाँधिहै, सहि न जात मोपै परिहास एते ॥ ५ ॥ २४१ ॥

तुम्ह सम दीनबन्धु न दीन कोउ, मो सम सुनहु नृपति रघुराई।
मो सम कुटिलमौलिमनि नहिँ जग, तुम्ह सम हरि न हरन कुटिलाई ॥१॥
हैाँ मन बचन करम पातक रत, तुम्ह कृपाल पतितन्ह गति दाई। हैाँ अनाथ तुम्ह प्रभु अनाथ-हित, चित यह सुरति कबहुँ नहिँ जाई ॥२॥
हैाँ आरत आरति नासन तुम्ह, कीरति निगम पुरानन्हि गाई।
हैाँ सभीत तुम्ह हरन सकल भय, कारन कवन कृपा बिसराई ॥ ३ ॥
तुम्ह सुखधाम राम स्रम भञ्जन, हैाँ अति दुखित त्रिबिध स्रम पोई।
यह जिय जानि दासतुलसी कहँ, राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥४॥२४२॥

तमकि=क्रोध करके। तये=ताप देकर। भे ते=भयभीत। रेते=खाली। बिटप=अर्जुन वृक्ष। पूतरो=पुतरा। परिहास=निन्दा।

इहइ जानि चरनन्हि चित लायो।
नाहिंन नाथ अकारन को हित, तुम्ह समान, पुरान स्रुति गायो॥ १॥
जननि जनक सुत दार बन्धु जन, भये बहुत जहँ जहँ हौं जायो।
सब स्वारथ हित प्रीति कपट चित, काहू नहिं हरिभजन सिखायो॥२॥
सुर मुनि मनुज दनुज अहि किन्नर, मैं तनु धरि सिर काहि न नायो।
जरत फिरत त्रयताप पापबस, काहु न हरि करि कृपा जुड़ायो॥ ३॥
जतन अनेक किये सुख कारन, हरि-पद बिमुख सदा दुख पायो।
अब थाकेउँ जलहीन नाव ज्यौं, देखत बिपतिजाल जग छायो॥ ४॥
मो कहँ नाथ बूझिये यह गति, सुखनिधान निज पति बिसरायो।
अब तजि रोष करहु करुना हरि, तुलसिदास सरनागत आयो॥५।२४३॥

ऐहि तैं मैं हरि ज्ञान गँवायो।
परिहरि हृदय-कमल रघुनाथहि, बाहेर फिरत बिकल भय धायो॥१॥
ज्यौं कुरङ्ग निज अङ्ग रुचिर मद, अति मतिहीन मरम नहिं पायो।
खोजत गिरि तरु लता भूमि बिल, परम सुगन्ध कहाँ तैं आयो॥२॥
ज्यौं सर बिमल बारि परिपूरन, ऊपर कछु सेवार तृन छायो।
जारत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत एहि बिधि तृषा बुझायो॥३॥
ब्यापित त्रिबिध ताप तन दारुन, ता पर दुसह दरिद्र सतायो।
अपने धाम नाम सुरतरु तजि, बिषय बबूर बाग मन लायो॥४॥
तुम्ह सम ज्ञान निधान मोहि सम, मूढ़ न आन पुरानन्हि गायो।
तुलसिदास प्रभु यह बिचारि जिय, कीजै नाथ उचित मन भायो॥ ५॥ २४४॥

मोहि मूढ़ मन बहुत बिगोयो।
या के लिये सुनहु करुनानिधि, मैं जग जनम जनम दुख रोयो॥ १॥

दारा=स्त्री। मद=कस्तूरी। बिगोयो=नष्ट भ्रष्ट किया।

सीतल मधुर पियूष सहज सुख, निकटहि रहत दूरि जनु खोयो ।
बहु भाँतिन्ह स्रम करत मोह बस, बृथहि मन्दमति बारि बिलोयो ॥२॥
करम कीच जिय जानि सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो ।
तृषावन्त सुरसरि बिहाइ सठ, फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ॥३॥
तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब, मैं निज दोष कछू नहिं गोयो ।
डासतही गइ बीति निसा सब, कबहुँ न नाथ नींद भरि सोयो ॥४॥२४५॥

लोक बेदहू बिदित बात सुनि समुझिय, मोह तैं बिकल मति थिति न लहति । छोटे बड़े खोटे खरे मोटेऊ दूबर राम, रावरे निबाहे सबही की निबहति ॥ १ ॥
होती जो आपने बस रहती एकहि रस, दुनी न हरष सोक सासति सहति । चहति जो जोई जोई लहति सो सोई सोई, केहू भाँति काहू की न लालसा रहति ॥ २ ॥
करम सुभाव काल गुन दोष जीव जग, माया तैं सो सभै भौंह चकित चहति । ईसनि दिगीसनि जोगीसनि मुनीसनिहूँ, छोड़ति छोड़ाये तैं गहाये तैं गहति ॥ ३ ॥
सतरञ्ज को सो साज काठ को सबै समाज, महाराज बाजी रची प्रथम न हति । तुलसी प्रभु के हाथ हारिबो जीतिबो नाथ, बहु बेष बहु मुख सारदा कहति ॥४॥२४६॥

राम जपु जीह जानि प्रीति सोँ प्रतीति, मानि राम नाम जपे जइहै जिय की जरनि । राम नाम सोँ रहनि राम नाम की कहनि, कुटिल कलिमल सोक सङ्कट हरनि ॥ १ ॥
राम नाम के प्रभाउ पूजियत गनराउ, किये न दुराउ कही आपनी करनि । सेतु भवसागर को कासिहू सुगति हेतु, जपत सादर सम्भु सहित घरनि ॥ २ ॥

बिलोयो=मथा । थिति=स्थिरता । सासति=दुर्दशा । लालसा=अभिलाषा । हति=हार, मात ।

वालमीक व्याध होइ अगाध अपराध निधि, मरा मरा जपे पूजे मुनि अमरनि। रोकेउ बिन्ध्य सोखेउ सिन्धु घटजहु नाम बल, हारेउ हिय खारो भयेउ भूसुर डरनि ॥ ३ ॥

नाम महिमा अपार सेष सुक बार बार, मति अनुसार बुध बेदहू बरनि। नाम रति कामधेनु तुलसी को कामतरु, राम नाम है बिमोह तिमिर तरनि ॥ ४ ॥ २४७ ॥

पाहि पाहि राम पाहि रामभद्र रामचन्द्र, सुजस स्रवन सुनि आयेउँ हौं सरन। दीनबन्धु दीनता दरिद्र दाह दोष दुख, दारुन दुसह दुर दुरित दरन ॥ १ ॥

जब जब जग जाल व्याकुल करम काल, सब खल भूप भये भूतल भरन। तब तब तनु धरि भूमि भार दूर करि, थापे सुर मुनि साधु आस्रम बरन ॥ २ ॥

बेद लोक सब साखी काहू की रती न राखी, रावन की बन्दि लागे अमर मरन। ओक देइ बिसोक किये लोकपति लोकनाथ, रामराज भयेउ धर्म चारिहू चरन ॥ ३ ॥

सिला गुह गीध कपि भील भालु रातिचर, ख्यालही कृपाल कीन्हे तारन तरन। पील उद्धरन सीलसिन्धु ढील देखियत, तुलसी पै चाहत गलानिही गरन ॥ ४ ॥२४८॥

भली भाँति पहिचाने साहेब जहाँ लौं जग, जूड़े होत थोरेही औ थोरेही गरम। प्रीति न प्रतीति नीतिहीन रीति के मलीन, मायाधीन सब किये कालहू करम ॥ १ ॥

दानव दनुज बढ़े महामूढ़ मूढ़ चढ़े, जीते लोकनाथ नाथ बलनि भरम। रीझि रीझि दिये बर खीझि खीझि घाले घर, आपने निवाजे की न काहू के सरम ॥ २ ॥

तिमिर=अन्धकार। तरनि=सूर्य्य। दुर=कठिन। रती=प्रतिष्ठा, कृतता। ओक=स्थान। सिला=अहल्या। पील=हाथी।

सेवा सावधान तू सुजान समरथ साँचो, सद्गुन धाम राम पावन परम। सुमुख सुरुख एकरस एकरूप तोहि, बिदित बिसेष घट घट के मरम ॥ ३ ॥
तो सोँ नतपाल न कृपाल न कँगाल मो सोँ, दया मेँ बसत देव सकल धरम। राम कामतरु छाँह चाहइ रुचि मन माँह, तुलसी बिकल बलि कलि कुधरम ॥ ४ ॥ २४९ ॥

बार बार प्रभुहि पुकारि के खिझावतो न, जोपै मो को होतो कहूँ ठाकुर ठहर। आलसी अभागे मो से तैँ कृपाल पाले पोसे, राजा मेरे राजाराम अवध सहर ॥ १ ॥
सेये न दिगीस न दिनेस न गनेस गौरि, हित कै न माने बिधि हरिहू न हर। राम नामहीँ सोँ जोग छेम नेम प्रेम पन, सुधा सोँ भरोसो एहु दूसरो जहर ॥ २ ॥
समाचार साथ के अनाथ नाथ का सोँ कहउँ, नाथही के हाथ सब चोरऊ पहर। निज काज सुरकाज आरत के काज राम, बूझिये बिलम्ब कहा करत गहर ॥ ३ ॥
रीति सुनि रावरी प्रतीति प्रीति रावरे सोँ, डरत हौँ देखि कलिकाल को कहर। कहेही बनैगी कै कहाये बलिजाउँ राम, तुलसी तू मेरो हारि हिये न हहर ॥ ४ ॥ २५० ॥

रावरो सुभाव गुन सील महिमा प्रभाव, जानेउ हर हनूमान लखन भरत। जिनके हिये सुथल रामप्रेम-सुरतरु, लसत सरस सुख फूलत फरत ॥ १ ॥
आपु माने स्वामी कै सखा सुभाय भाय पति, ते सनेह सावधान रहत डरत। साहेब सेवक रीति प्रीति परमिति नीति, नेम को निबाह एक टेक न टरत ॥ २ ॥

गहर=देरी। कहर=अत्याचार। हहर=डर।

सुक सनकादि प्रहलाद नारदादि कहैं, राम की भगति बड़ी बिरति निरत। जाने बिनु भगति न जानिबो तिहारे हाथ, समुझि सयाने नाथ पगनि परत॥ ३॥

छमत बिमत न पुरान मत एक पथ, नेति नेति नेति नित निगम करत। औरन की कहा चली एकइ बात भले भली, राम नाम लिये तुलसीहू से तरत॥ ४॥ २५१॥

बाप आपने करत मेरी घनी घटि गई।
लालची लबार की सुधारिये बारक बलि, रावरी भलाई सबही को भली भई॥ १॥

रोग बस तनु कुमनोरथ मलिन मन, पर अपवाद मिथ्यावाद बानो हई। साधन की ऐसी बिधि साधन बिना न सिधि, बिगरी बनावइ कृपानिधि की कृपा नई॥ २॥

पतित पावन हित आरत अनाथनि को, निराधार को अधार दीनबन्धु दई। इनमैं एकउ न भयो बूझि न जूझे न जयो, ताही ते त्रिताप तयो लुनियत बई॥ ३॥

स्वाँग सूधो साधु को कुचाल कलि तैं अधिक, परलोक फीकी मति लोक रङ्ग रई। बड़े कुसमाज राज आज लौं जो पाये दिन, महाराज केहू भाँति नाम ओट लई॥ ४॥

राम नाम को प्रताप जानियत नीके आप, मो को गति दूसरी न बिधि निरमई। खीझिबे लायक करतब कोटि कोटि कटु, रीझिबे लायक तुलसी की निलजई॥ ५॥ २५२॥

विरति=वैराग्य। निरत=तत्पर। छमत=छओं शास्त्र का मत। विमत=भिन्न सिद्धान्त। अपवाद=परनिन्दा। मिथ्यावाद=झूठ बोलना। हई=नष्ट हुई। दई=ईश्वर, दिया। लुनियत=लवता हूँ। बई=बोई हुई। रई=रंगी। निरमई=बनाया। कटु=अनिष्ट।

राम राखिये सरन राखि आये सब दिन।
बिदित त्रिलोक तिहुँ काल न दयाल दूजो, आरत प्रनतपाल को है प्रभु बिन॥१॥
लाले पाले पोषे तोषे आलसी अभागी अघो, नाथ पै अनाथनि सों भये न उरिन। स्वामी समरथ ऐसो हौं तिहारो जैसो तैसो, काल चाल हेरि होत हिये घनी घिन॥२॥
रीझि खीझि बिहँसि अनख क्यों हूँ एक बार, तुलसी तू मेरो बलि कहियत किन। जाहि सूल निर्मूल होहिं सुख अनुकूल, महाराज राम रावरी सों तेही छिन॥३॥२५३॥

राम रावरो नाम मेरो मातु पितु है।
सुजन सनेही गुरु साहेब सखा सुहृद, राम नाम प्रेम पन अविचल बितु है॥१॥
सतकोटि चरित अपार दधिनिधि मथि, लियेउ काढ़ि बामदेव नाम घृतु है। नाम को भरोसो बल चारिहु फल को फल, सुमिरिय छाड़ि छल भलो कृतु है॥२॥
स्वारथ साधक परमारथ दायक नाम, राम नाम सारिखो न और हितु है। तुलसी सुभाय कही साँचियै परैगी सही, सीतानाथ नाम चितहू को चितु है॥३॥२५४

राम रावरो नाम साधु सुरतरु है। सुमिरे त्रिबिधि घाम हरत पूरत काम, सकल सुकृत सरसिजहू को सरु है॥१॥
लाभहू को लाभ सुखहू को सुख सरबस, पतित पावन डरहू को डरु है। नीचहू को ऊँचहू को रङ्कहू को रायहू को, सुलभ सुखद आपनो सो घरु है॥२॥

घिन=नफ़रत। सों=सौगन्ध। बितु=सम्पत्ति। कृतु=कर्म।

बेदहू पुरानहू पुरारिहू पुकारि कहेउ, नेम प्रेम चारि फलहू को फरु है। ऐसे राम नाम सोँ न प्रीति न प्रतीति मन, मेरे जान जानिबो सो नर खरु है ॥३॥
नाम सोँ न मातु पितु मीत हित बन्धु गुरु, साहेब सुभी सुसील सुधाकरु है। नाम सोँ निबाह नेहु दीन को दयाल देहु, दासतुलसी को बलि बड़ो बरु है ॥४॥२५५॥

कहे बिनु रहेउ न परत कहे राम रस न रहत। तुम्ह से सुसाहेब की ओट जन खोटो खरो, काल की करम की कुसासति सहत ॥१॥
करत बिचार सार पइयत न कहूँ कछु, सकल बड़ाई सब कहाँ तेँ लहत। नाथ की महिमा सुनि समुझि आपनी ओर,-हेरि हारि के हहरि हृदय दहत ॥२॥
सखा न सुसेवक न सुतिय सुप्रभु आपु, माय बाप तुहीं साँचो तुलसी कहत। मेरी तो थोरी है सुधरैगी बिगरियो बलि, राम रावरी सोँ रही रावरी चहत ॥३॥२५६॥

दीनबन्धु दूरि किये दीन को न दूसरो सरन। आप को भलो है सब आपने को कोऊ कहूँ, सब को भलो है राम रावरे चरन ॥१॥
पाहन पतङ्ग पसु कोल भील निसिचर, काँच तेँ कृपानिधान किये सुबरन। दंडक पुहुमि पाय परसि पुनीत भई, उकठे बिटप लागे फूलन फरन ॥२॥
पतित पावन नाम बामहू दाहिनो देव, दुनी न दुसह दुख दूषन दरन। सीलसिन्धु तो सोँ ऊँचो नीचियो कहत सोभा, तो सोँ तुहीं तुलसी की आरति हरन ॥३॥२५७॥

जानि पहिचानि मैं बिसारे हैाँ कृपानिधान, एते मान ढीठ हैाँ उलटि देत खोरि हैाँ। करत जतन जा सोँ जोरिबो को जोगीजन, ता सोँ क्यों हूँ जुरी सो अभागो बैठो तोरि हैाँ ॥१॥

खरु=गदहा। सुभी=कल्याणकारी। सुधाकरु=चन्द्रमा। पाहन=अहल्या। पतंग=गीध। पुहुमि=धरती। उकठे=सूखे।

मो से दोस कोस कोऊ भूमिकोस दूसरो न, आपनी समुझि सूझि आयेउँ टकटोरि हौं। गाड़ी के स्वान की नाँई माया मोह की बड़ाई, छिनहिं तजत छिन भजत बहोरि हौं ॥२॥

बड़ो साँइदोही न बराबरी मेरी को कोऊ, नाथ की सपथ किये कहत करोरि हौं। दूर कीजै द्वार तें लबार लालची प्रपञ्ची, सुधा सोँ सलिल सूकरी ज्यों गहड़ोरिहौं ॥३॥

राखिये नीके सुधारि नीच के डारिये मारि, दुहूँ ओर की बिचारि अब न निहोरिहौं। तुलसी कही है साँची रेख बार बार खाँची, ढील किये नाम महिमा की नाव बोरिहौं ॥ ४ ॥२५८॥

रावरी सुधारो जो बिगारी बिगरैगी मेरी, कहउँ बलि बेद की न लोक कहा कहैगो। प्रभु को उदास भाव जन को पाप प्रभाव, दुहूँ भाँति दीनबन्धु दीन दुख दहैगो ॥ १ ॥

मैं तो दियेउँ छाती पबि लियेउ कलिकाल दबि, सासति सहत परबस को न सहैगो। बाँकी बिरदावली बनैगी पालेही कृपाल, अन्त मेरो हाल हेरि यों न मन रहैगो ॥ २ ॥

करमी धरमी साधु सेवक बिरति रत, आपनी भलाई थल कहा को न लहैगो। तेरे मुँह फेरे मो से कायर कपूत कूर, लटे लटपटेनि को कौन परिगहैगो ॥ ३ ॥

काल पाइ फिरत दसा दयाल सबही की, तोहि बिनु मोहि कबहूँ न कोऊ चहैगो। बचन करम हिये कहउँ राम सौंह किये, तुलसी पै नाथ के निबाहे निबहैगो ॥ ४ ॥ २५९ ॥

साहेब उदास भये दास खास खीस होत, मेरी कहा चली है बजाइ जाइ रहेउ हौं। लोक में न ठाउँ परलोक को भरोसो कौन, हौं तो बलिजाउँ राम नामही तें लहेउ हौं ॥ १ ॥

कोस=भण्डार। गहड़ोरिहौं=गन्दा करूँगा। पबि=वज्र। लटपटे=गँवार। खीस=बरबाद।

करम स्वभाव काल काम कोह लोभ मोह, ग्राह अति गहनि गरीब गाढ़े गहेउ हौं। छोरिबे को महाराज बाँधिबे को कोटि भट, पाहि प्रभु पाहि तिहुँ ताप पाप दहेउ हौं ॥ २ ॥
रीझि बूझि सब की प्रतीति प्रीति एही द्वार, दूध को जरो पियत फूँकि फूँकि महेउ हौं। रटत रटत लटेउ जाति पाँति भाँति घटेउ, जूठन को लालची चहउँ न दूध नहेउ हौं ॥ ३ ॥
अनत चहेउँ न भलो सुपथ सुचाल चलो, नीके जिय जानि इहाँ भलो अनचहेउँ हौं। तुलसी समुझि समुझायो मन बार बार, आपनो सो नाथहू सोँ कहि निरबहेउ हौं ॥ ४ ॥२६०॥

मेरी न बनै बनाये मेरे कोटि कलप लौँ, राम रावरे बनाये बनै पल पाउ मैँ। निपट सयाने हौ कृपानिधान कहा कहउँ, लिये बेर बदलि अमोल मनि आउ मैँ ॥ १ ॥
मानस मलीन करतब कलिमल पीन, जीहहू न जपेउ नाम बकेउ आउबाउ मैँ। कुपथ कुचाल चलो भयेउ न भूलिहू भलो, बालदसाहू न खेलेउ खेलत सुदाउ मैँ ॥ २ ॥
देखीदेखा दम्भ तेँ की सङ्ग तेँ भई भलाई, प्रगट जनाइ कियेउ दुरित दुराउ मैँ। राग रोष दोष पोषे गोगन समेत मन, इन्हकी भगति कीन्ही इन्हहीं को भाउ मैँ ॥ ३ ॥
आगिली पाछिली अबहूँ की अनुमानही तेँ, बूझियत गति कछु कीन्हे तौ न काउ मैँ। जग कहइ राम को प्रतीति प्रीति तुलसीहू, झूठे साँचे आसरो साहेब रघुराउ मैँ ॥ ४ ॥२६१॥

कहेउ न परत बिनु कहे न रहेउ परत, बड़ो सुख कहत बड़े सोँ बलि दीनता। प्रभु की बड़ाई बड़ी आपनी छोटाई छोटी, प्रभु की पुनीतता आपनी पाप पीनता ॥ १ ॥

ग्राह=मगर। महेउ=माठा। नहेउ=दूधमलाई। पाउ=चतुर्थांश। आउ=आयु, उमर। आउबाउ=अंडबंड। गोगन=इन्द्रिय समुदाय।

दुहूँ ओर समुझि सकुचि सहमत मन, सनमुख होत सुनि स्वामी समीचीनता। नाथ गुन गाथ गाये हाथ जोरि माथ नाये, नीचऊ नेवाजे प्रीति रीति की प्रबीनता ॥ २ ॥
एही दरबार है गरब तें सरब हानि, लाभ जोग छेम को गरीबी मिसकीनता। मोटो दसकन्ध सोँ न दूबरो बिभीषन सोँ, बूझि परी रावरे की प्रेम पराधीनता ॥३॥
इहाँ की सयानप अयानप सहस सम, सूधी सतिभाय कहे मिटति मलीनता। गीध सिला सबरी की सुधि सब दिन किये, होयगी न साँई सोँ सनेह हित हीनता ॥४॥
सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु, सुमिरत होत कलिमल छल छीनता। करुनानिधान बरदान तुलसी चहत, सीतापति भक्ति-सुरसरि मन-मीनता ॥५॥२६२॥

नाथ नीके कै जानबी ठीक जन जीय की। रावरो भरोसो नाह के सुप्रेम नेम लिये, रुचिर रहनि रुचि गति मति तीय की ॥१॥
दुकृत सुकृत बस सबही सोँ सङ्ग परेउ, परखी पराई गति आपनेहू कीय की। मेरे भले को गोसाँई भलो पोच सोच कहा, किये कहउँ सौंह खाँचि साँची सियपीय की ॥२॥
ज्ञानहू गिरा के स्वामी बाहर अन्तरजामी, इहाँ क्यों दुरैगो बात मुख की औ हीय की। तुलसी तिहारो तुम्हहीं पै तुलसी के हित, राखि के कहे तें कछु होइहौं माखो घीय की ॥३॥२६३॥

मेरो कहेउ सुनि पुनि भावइ तोहि करि सो। चारिहू त्रिलोचन बिलोकु तू तिलोक महँ, तेरो तिहुँ काल कहूँ को है हित हरि सो ॥१॥
नये नये नेह अनुभये देह गेह बसि, परखे प्रपञ्ची प्रेम परत उघरि सो। सुहृद समाज दगाबाजिही को सौदा सूत, जब जाको काज तब मिलइ पाय परि सो ॥२॥

पीनता=पुष्टता। मिसकीनता=दीनता। हीनता=कमी। अनुभये=अनुभव किया। सौदा-सूत=लेन देन।

बिबुध सयाने पहिचाने कैधौं नाहीं नीके, देत एकगुन लेत कोटिगुन भरि सो। करम धरम स्रमफल रघुबर बिनु, राख को सो होम है ऊसर को सो बरिसो ॥ ३ ॥

आदि अन्त बीच भलो भलो करइ सबही को, जा को जस लोक बेद रहेउ है बगरि सो। सीतापति सारिखो न साहेब सीलनिधान, कैसे कल परइ सठ बैठो है बिसरि सो ॥ ४ ॥

जीव को जीवन प्रान प्रान को परमहित, प्रीतम पुनीत कृत नीच न निदरि सो। तुलसी तो को कृपाल कियेउ जो कोसलपाल, चित्रकूट को चरित चेतु चित धरि सो ॥ ५ ॥२६४॥

तन सुचि मन रुचि मुख कहउँ जन हौं सिय पी को। केहि अभाग जानउँ नहीं, जो न होइ नाथ सोँ नातो नेह न नीको ॥ १ ॥

जल चाहत पावक लहउँ, बिष होत अमी को। कलि कुचाल सन्तन्ह कही, सो सही मोहि कछु फहम न तरनि तमी को ॥२॥

जानि अन्ध अञ्जन कहइ, बन-बाघिन घी को। सुनि उपचार बिकार को, सुबिचार करउँ जब तब बुधि बल हरइ ही को ॥३॥

प्रभु सोँ कहत सकुचात हौं, परउँ जनि फिरि फीको। निकट बोलि बलि बरजिये, परिहरइ ख्याल अब तुलसिदास जड़ जी को ॥४॥२६५॥

ज्यौं ज्यौं निकट भयेउ चहउँ कृपाल त्यौं त्यौं दूरि परेउ हौं। तुम्ह चहुँ जुग रस एक राम, हौं हूँ रावरो जद्यपि अघ अवगुनन्हि भरेउ हौं ॥१॥

बीच पाइ नीच बीचही नल छरनि छरेउ हौं। हौं सुबरन कुबरन कियेउ, नृप तें भिखारि करि सुमति तें कुमति करेउ हौं ॥२॥

अगनित गिरि कानन फिरेउँ, बिनु आगि जरेउ हौं। चित्रकूट गये मैं लखी, कलि की कुचाल सब अब अपडरनि डरेउ हौं ॥३॥

बगरि = फैलि। फहम = समझ। उपचार = उपाय, तदबीर।

माथ नाइ नाथ सों कहउँ, हाथ जोरि खरेउ हौं। चीन्हो चोर जिय मारिहै, तुलसी सो कथा सुनि प्रभु सों कहि निबरेउ हौं ॥४॥२६६॥

पन करिहउँ हठि आजु तें, राम द्वार परेउ हौं। तू मेरो बिनु कहे न उठिहउँ, जनम भरि प्रभु की सौंह करि निबरेउ हौं ॥१॥
देइ देइ धका जमभट थके, टारे न टरेउ हौं। उदर दुसह सासति सही, बहु बार जनमि जग नरक निदरि निकरेउ हौं ॥२॥
हौं माचल लेइ छाड़िहउँ, जेहि लागि अरेउ हौं। तुम्ह दयाल बनिहै दिये, बलि बिलम न कीजे जात गलानि गरेउ हौं ॥३॥
प्रगट कहत जौं सकुचिये, अपराध भरेउ हौं। तौ मन मैं अपनाइये, तुलसिहि कृपा करि कलि बिलोकि हहरेउ हौं ॥४॥२६७॥

तुम्ह अपनायो तब जानिहउँ, जब मन फिरि परिहै। जेहि सुभाय बिषयन्हि लगेउ, तेहि सहज नाथ सों नेह छाँड़ि छलि करिहै ॥१॥
सुत की प्रीति प्रतीति मीत की, नृप ज्यों डर डरिहै। अपनो सो स्वारथ स्वामी सों, बहु बिधि चातक ज्यों एक टेक न टरिहै ॥२॥
हरषिहै अति आदरे, निदरे न जरिमरिहै। हानि लाभ दुख सुख सबइ, सम चित अनहित कलि कुचाल परिहरिहै ॥३॥
प्रभु गुन सुनि मन हरषिहै, नीर नयनन्हि ढरिहै। तुलसिदास भयेउ राम को, बिस्वास प्रेम लखि आनद उमगि उर भरिहै ॥४॥२६८॥

राम कबहुँ प्रिय लागिहौ जैसे नीर मीन को। सुख जीवन ज्यों जीव को मनि ज्यों फनि को हित ज्यों धन लोभ लीन को ॥१॥
ज्यों सुभाय प्रिय नागरी, नागर नबीन को। त्यों मेरे मन लालसा, करिये करुनाकर पावन प्रेम पीन को ॥२॥
मनसा को दाता कहइ, स्रुति प्रभु प्रबीन को। तुलसिदास को भावतो, बलि जाउँ दयानिधि दीजै दाद दीन को ॥३॥२६९॥

निबरेउ = छुट्टी पाया। माचल = मचलने की चीज़। अरेउ = अड़ा हूँ। नागर = नवयुवक।

कबहुँ कृपा करि रघुबीर मोहू चितइहौ। भलो बुरो जन आपनो, जिय जानि दयानिधि अवगुन अमित बितइहौ ॥१॥
जनम जनम हौं मन जितेउ, अब मोहि जितइहौ। हौं सनाथ होइ हौं सही, तुम्हहू अनाथपति जौं लघुतहि न भितइहौ ॥२॥
बिनय करहुँ अपभयहु तें, तुम्ह परम हितै हौ। तुलसिदास कासों कहइ, तुम्हहीं सब मेरे प्रभु गुरु मातु पितै हौ ॥३॥२७०॥

जैसो हौं तैसो राम रावरो जन जनि परिहरिये। कृपासिन्धु कोसलधनी, सरनागत पालक ढरनि आपनी ढरिये ॥१॥
हौं तो बिगरायल और को, बिगरो न बिगरिये। तुम्ह सुधारि आये सदा, सब की सबही बिधि अब मेरियौ सुधरिये ॥२॥
जग हँसिहै मेरे संग्रहे, कत एहि डर डरिये। कपि केवट कीन्हे सखा, जेहि सील सरल चित तेहि सुभाउ अनुसरिये ॥३॥
अपराधी तउ आपनो, तुलसी न बिसरिये। टूटी बाँह गरे परइ, फूटेहू बिलोचन पीर होत हित करिये ॥४॥२७१॥

तुम्ह जनि मन मैलो करो लोचन जनि फेरो। सुनहु राम बिनु रावरे, लोकहू परलोकहू कोउ न कहूँ हित मेरो ॥१॥
अगुन अलायक आलसी, जानि अधम अनेरो। स्वारथ के साथिन्ह तजेउ, तिजरा को सो टोटक अवचट उलटि न हेरो ॥२॥
भक्ति हीन बेद बाहिरो, लखि कलिमल घेरो। देवनहू देव परिहरेउ, अन्याव न तिन्हको मैं अपराधी सब केरो ॥३॥
नाम की ओट पेट भरत हौं, पै कहावत चेरो। जगत बिदित बात होइ परी, समुझिये धौं अपने लोक की बेद बड़ेरो ॥४॥
होइहै जब तब तुम्हहिं तें, तुलसी को भलेरो। दीन दिनहु दिन बिगरिहै, बलिजाउँ बिलम किये अपनाइये सबेरो ॥५॥२७२॥

भितइहौ=डरोगे। अनेरो=बेकाम। तिजरा=अँतरिया ज्वर। अवचट=अचक्का।

तुम्ह तजि हौं कासौं कहउँ और को हित मेरे। दीनबन्धु सेवक सखा, आरत अनाथ पर सहज छोह केहि केरे ॥१॥
बहुत पतित भवनिधि तरे, बिनु तरनी बिनु बेरे। कृपा कोप सति-भायहू, धोखेहु तिरछेहु राम तिहारेहि हेरे ॥२॥
जो चितवनि सौंधी लगइ, चितइये सबेरे। तुलसिदास अपनाइये, कीजै न ढील अब जीवन अवधि नित नेरे ॥३॥२७३॥

जाउँ कहाँ ठौर है कहँ देव दुखित दीन को। को कृपाल स्वामि सारिखो, राखइ सरनागत सब अँग बल हीन को ॥१॥
गनिहिं गुनिहिं साहेब चहइँ, सेवा समीचीन को। अधम अगुन आलसिन को, पालिबो फबि आयेउ रघुनायक नबीन को ॥२॥
मुख कहा कहउँ बिदित है, जी की प्रभु प्रबीन को। तिहुँ काल तिहुँ लोक मैं, एक टेक रावरी तुलसी से मन मलीन को ॥३॥२७४॥

द्वार द्वार दीनता कही काढ़ि रद परि पाहूँ। हैं दयाल दुनी दसौं दिसा, दुख दोष दलन छम कियेउ न सम्भाषन काहूँ ॥१॥
त्वच तजत कुटिलकीट ज्यौं, तजेउ मातु पिताहूँ। काहेको रोष दोष काहि धौं, मेरेही अभाग मो सौं सकुचत सब छुइ छाहूँ ॥२॥
दुखित देखि सन्तन्ह कहेउ, सोचइ जनि मन माहूँ। तो से पसु पाँवर पातकी, परिहरे न सरन गये रघुबर ओर निबाहूँ ॥३॥
तुलसी तिहारो भये सुखी भयेउ, प्रीति प्रतीत बिनाहूँ। नाम की महिमा सील नाथ को, मेरो भलो बिलोकि अब तैं सकुचाहुँ सिहाहूँ ॥४॥२७५॥

कहा न कियेउँ कहाँ गयेउँ सीस काहि न नायो। राम रावरो बिनु भये जन, जनमि जनमि जग दुख दसहूँ दिसि पायो ॥१॥

सौंधी=सीधी गनिहिं=अमीर को। पाहूँ=पास। त्वच=केचुली। कुटिलकीट=सर्प।

आस बिबस खास दास होइ नीच प्रभुनि जनायो। हाहा करि दीनता
कही द्वार द्वार बार बार परी न छार मुहँ बायो ॥२॥
असन बसन बिन बावरो, जहँ तहँ उठि धायो। महो मान प्रिय प्रान
तें, तजि खोलि खलन्ह आगे खिन खिन पेट खलायो ॥३॥
नाथ हाथ कछु नहिं लगेउ, लालच-ललचायो। साँच कहउँ नाच कौन
सो, जो न मोहि लोभ लघु निलज नचायो ॥४॥
स्रवन नयन मग मन लगेउ, सब थल पतितायो। मूँड़ मारि हिय
हारि के, हित हेरि हहरि अब चरन सरन तकि आयो ॥५॥
दसरथ के समरथ तुहीं, त्रिभुवन जस गायो। तुलसी नमत अवलोकिये,
बलि बाँह बोल देइ बिरदावली बुलायो ॥६॥२७६॥

राम राय बिनु रावरे मेरो को हित साँचो। स्वामि सहित सब
सों कहउँ, सुनि गुनि बिसेष कोउ रेख दूसरी खाँचो ॥१॥
देह जीव जोग के सखा, मृषा टाँचन्ह टाँचो। किये बिचार सार
कदली ज्यों, मनि कनक सङ्ग लघु लसत बीच बिच काँचो ॥२॥
विनयपत्रिका दीन की, बाप आपही बाँचो। हिये हेरि तुलसी
लिखी, सो सुभाय सही करि बहुरि पूछिये पाँचो ॥३॥२७७॥

पवन सुवन रिपुदवन भरत लाललखन दीन की। निज निज अव-
सर सुधि किये, बलिजाउँ दास आस पूजिहै खास खीन की ॥१॥
राज द्वार भली सब कहैं, साधु समीचीन की। सुकृत सुजस साहेब
कृपा, स्वारथ, परमारथ गति भये गति बिहीन की ॥२॥
समय सँभारि सुधारबो, तुलसी मलीन की। प्रीति रीति समुझाइबी,
नतपाल कृपालहि परिमिति पराधीन की ॥३॥२७८॥

मारुति मन रुचि भरत की लखि लखन कही है। कलिकालहु
नाथ नाम सों, प्रतीति प्रीति एक किङ्कर की निबही है ॥१॥

हाहा=हाय हाय। पतितायो=गिराया। मूँड़मारि=सिर पीटकर। टाँचन्ह=टाँकी। पाँचो=पञ्च। खीन=छिन्न, दुर्बल। समीचीन=प्राचीन=यथार्थ। नतपाल=दीनपाल। परिमित=सीमा।

सकल सभा सुनि लेइ उठी, जानि रीति रही है । कृपा गरीब-निवाज को, देखत गरीब की साहेब बाँह गही है ॥२॥
बिहँसि राम कहेउ सत्य है, सुधि मैं हूँ लही है । मुदित माथ नावत बनी, तुलसी अनाथ की परी रघुनाथ सही है ॥३॥२७९॥

सुभमस्तु-मंगलमस्तु

—o—

रामभक्ति अरु मुक्ति प्रद, हरनि कलुष भव त्रास ।
विनय-पत्रिका सम सबहि, गावत "वीर" सुपास ॥

इतिशम्



१ लेइउठी=बोलउठी । २ सही=हस्ताक्षर ।

संतबानी पुस्तकमाला

[जीवन-चरित्र हर महात्मा के उन की बानी के आदि में दिया है]

दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर...	।≡)॥
दरिया साहिब (बिहार) के चुने हुए पद और साखी	।-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी	।≡)
भीखा साहिब की शब्दावली	॥=)॥
गुलाल साहिब की बानी	॥।=)
बाबा मलूकदास जी की बानी	।)॥
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासा	-)
यारी साहिब की रत्नावली	=)
बुल्ला साहिब का शब्दसार	।)
केशवदास जी की अमीघूँट	-)॥
धरनीदास जी की बानी	।=)
मीरा बाई की शब्दावली	॥)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश	।≡)॥
दया बाई की बानी	।)
संतबानी-संग्रह, भाग १ [साखी] ... ... [प्रत्येक महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित]	१॥)
संतबानी-संग्रह भाग २ [शब्द] ... ... [ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित जो पहले भाग में नहीं हैं]	१॥)
	कुल ३३।-)
अहिल्या बाई	≡)
दुःख का मीठा फल	॥।=)
कर्मफल	॥।)
प्रेम तपस्या	॥)
विनय पत्रिका (सचित्र और सटीक)	२॥)
विनय कोश	२)
सचित्र द्रौपदी	॥।)
लोक परलोक हितकारी (चौथा छापा, सचित्र)	॥।=)

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी शामिल नहीं है वह इस के ऊपर लिया जाएगा। कृपा कर अपना पता साफ़ साफ़ लिखिए।

मिलने का पता—

मैनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।